अखिल भारत

चरखा-संघ का इतिहास

(उदय से विलय तक)

श्रीकृष्णदास जाजू

श्री अ० वा० सहस्रबुद्धे

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, काशी

प्रकाशक :
मन्त्री, अखिल भारत सर्व
राजघाट, काशी

(संशोधित तथा परिवर्धित)
पहली बार : मार्च, १९५० : १,०००
दूसरी बार : फरवरी, १९६२ : २,०००
कुल प्रतियाँ : ३,०००
मूल्य : पाँच रुपया

मुद्रक :
विश्वनाथ भार्गव,
मनोहर प्रेस, जतनबर, वाराणसी

प्रकाशकीय

अखिल भारत चरखा संघ सन् १९५३ में सर्व-सेवा-संघ में विलीन हुआ। सन् १९५२ तक चरखा-संघ के कार्य और इतिहास की दृष्टि से दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं—एक में स्थापना से लेकर १९४८ तक का इतिहास था और दूसरी में आगे के तीन साल का विवरण था।

चरखा संघ गांधीजी की रचनात्मक प्रवृत्तियों का मूल आधार या स्रोत रहा। उसके द्वारा देश को अनेक प्रयोगों और प्रवृत्तियों का दर्शन हुआ। स्व० जाजूजी ने चरखा संघ का जो इतिहास प्रकाशित किया था, वह केवल चरखा-संघ का ही इतिहास नहीं था, उसमें गांधीजी की संपूर्ण मानवीय भावनाओं का ऊहापोह और रचनात्मक गतिविधियों का आरोह-अवरोह भी था। इसीके संदर्भ में आगे चलकर तीन साल का विवरण श्री अण्णा साहब ने प्रकाशित किया।

अब इस बात को आठ-नौ साल बीत गये। दोनों पुस्तकें अप्राप्य हो गयीं। लेकिन उनकी महत्ता तो आज भी ज्यों-की-त्यों है। वे ऐतिहासिक महत्त्व रखती हैं। अतः गांधीजी की रचनात्मक प्रवृत्तियों के मर्म और चरखा-संघ की गतिविधियों के संदर्भ में वर्तमान स्थिति को समझनेवालों की सुविधा के लिए दोनों पुस्तिकाएँ एक जिल्द में प्रकाशित की जा रही हैं।

इसमें श्री धीरेनभाई का वह लेख भी परिशिष्ट में जोड़ दिया है, जो विलय से संबद्ध है। इससे पाठक तत्कालीन परिस्थिति को भी समझ सकेंगे।

विलय के पश्चात् खादी-कार्य को लेकर जो कुछ कार्य या प्रस्ताव आदि हुए हैं, उनका उल्लेख भी कर दिया गया है। सर्व-सेवा-संघ की खादी-ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य समिति अब खादीसंबंधी कार्य का संचालन करती है। उस समिति के कार्यालय-मंत्री श्री ति० न० आत्रेय ने इस पुस्तक के संबंध की तैयारी में जो योग दिया है, उसके लिए हम आभारी हैं।

राजघाट, काशी
३० जनवरी, १९६२

—प्रकाशक

सत्य की उपासना

गाधीजी ने कई बार लिखा है और कहा है कि सत्य ही ईश्वर है तथा उन्होंने हमारे सामने चरखे को सत्य और अहिसा के प्रतीक के रूप में रखा है। प्रायः सभी सत्य की महिमा गाते हैं, पर व्यवहार मे उसका दर्शन बहुत कम होता है। स्थूल असत्य तो कुछ टालने की कोशिश की जाती है, पर हमारे व्यवहार मे, अदर एक बाहर एक, असल एक दिखावा दूसरा, अपने दोष ढाँकने की और अपने मे नही है वे गुण बताने की कोशिश, ऐसे जो असख्य असत्य चलते रहते हैं उनकी ओर ध्यान क्वचित् ही जाता है। सूक्ष्म वाचिक असत्य का जॉन रस्किन ने नीचे लिखे शब्दो मे, जो गाधीजी की कुटिया मे दीवार पर एक कागज पर लिखे टगे रहते थे, बहुत मार्मिक वर्णन किया है। हम इन सब बातो का मनन करे और अपना आचरण सत्यमय बनाने की सदा कोशिश करते रहे।

"The essence of lying is in self-deception, not in words, a lie may be told by silence, by equivocation, by the accent on a syllable, by a glance of the eye attaching a peculiar significance to a sentence, and all these lies are worse and baser by many degrees than a lie plainly worded"

"असत्य बोलने की मुख्य बात आत्मवचना मे है, न कि शब्दो मे। असत्य बोला जा सकता है—मौन से, कूट भाषा से, एक शब्द पर जोर देने से, वाक्य को विशेष अर्थ मिले ऐसे ऑख के इशारे से। यह सब असत्य स्पष्ट शब्दो मे कहे गये असत्य की अपेक्षा कई गुने अधिक बुरे और नीच हैं।"

—कृष्णदास जाजू

हमारा आगे का काम

चरखा सघ के इतिहास मे पिछले तीन वर्ष (१९५०,५१ और ५२) अलग पड जाते है । सन् १९४६ की चरखा-जयन्ती के वक्त गाधीजी ने अपने सदेश मे कहा था कि खादी का एक युग समाप्त हुआ है, अब खादी को यह बताना है कि गरीब अपने पैरो पर खडे रह सके। चरखा-जयन्ती के निमित्त गाधीजी का यह आखिरी सदेश था। खादी के बदलते युग के लिए उन्होने चरखा-सघ के और देश के सामने अपने कुछ सुझाव भी रखे थे।

शहरो की खादी की आवश्यकता की पूर्ति करना चरखा सघ का काम है, यह जानते हुए भी गाधीजी ने अप्रैल १९३४ के ट्रस्टी मडल की सभा में इस बात पर जोर दिया था कि खादी आदोलन का असली मकसद शहरो मे खादी बेचना और उसके जरिये राहत देना ही नही है, बल्कि उसके जरिये देहाती भाइयो तथा कारीगरो को वस्त्र स्वावलम्बन की ओर अग्रसर करना तथा उनका जीवन सुसस्कृत, समृद्ध एव स्वय-पूर्ण बनाना है।

इस विचार के अनुसार चरखा-सघ की नीति तथा कार्य मे मूलभूत फर्क करना अत्यावश्यक हुआ। हस्त व्यवसाय का उत्पादन बेचने के लिए नही, वरन् निजी इस्तेमाल के लिए ही हो, यह बात इसमे से फलित होती है। इसका अमल करने की दृष्टि मे खादी-कामगारो के लिए खुद बनायी हुई खादी का इस्तेमाल करना आवश्यक है। उनके इस्तेमाल के उपरान्त बची हुई खादी उस देहात के अन्य लोगो मे खपनी चाहिए। देहात की आवश्यकता-पूर्ति के बाद बची हुई खादी उसी ताल्लुके मे या उसी प्रान्त में भेजी जा सकती है। प्रान्त सबसे बडी इकाई माना जाय कि वहाँ इस प्रकार बनी हुई खादी का वितरण किया जा सकता है।

खादी के इस्तेमाल मे इस तरह क्रमिक स्वावलम्बन का विकास किया जाय। समाज के एक घटक के नाते हर कुटुम्ब को अपने वस्त्र की और हर प्रान्त को अपने कपडे की जरूरत खुद ही पूरी करनी चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति की दृष्टि से इस प्रकार कदम उठाने चाहिए, जिससे देहाती भाइयो के जीवन पर अच्छी छाप पडे और परिणामतः उनका चारित्र्य, बुद्धि और कार्य-कुशलता बढे। खादी-कार्यकर्ताओ को देहाती भाइयो के जीवन से समरस होना चाहिए और उनका जीवन सर्वाङ्गीण बनाने के लिए प्रयत्न करने चाहिए।

यह दृष्टि सामने रखकर आज की हालत मे ऊपर लिखे अनुसार काम करना हो, तो मोटे तौर पर देश मे तीन तरह के क्षेत्र पाये जाते हैं .

(१) परम्परागत कताई की जाती है ऐसे अकाल-पीडित क्षेत्रो में तथा आर्थिक दृष्टि से निचले दर्जे के क्षेत्रो मे आज भी शहरो मे बेचने के लिए खादी उत्पादित की जाती है। कुछ परिमाण मे कातनेवाले तथा बुननेवाले आज भी खादी इस्तेमाल करने लगे है, पर यह ज्ञान-पूर्वक करने की शक्ति उनमे नही आयी है। उनके मुख्य उद्योग यानी खेती को जब तक उन्नतावस्था प्राप्त नही होती, तब तक उनका जीवन आज से ज्यादा समृद्ध तथा सम्पन्न कदापि नहीं हो सकता। अतः इस क्षेत्र मे खादी के साथ-साथ खेती तथा अन्य नैसर्गिक साधनो का विकास करके उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने का विचार किया गया, तो धीरे-धीरे हम उस उद्देश्य तक पहुँच सकेंगे। यह जब तक सिद्ध नही होता, तब तक आज का जो काम है, उसे उसी स्थिति मे हमे चालू रखना पडेगा।

(२) जिन प्रदेशो मे मध्यमवर्गीय किसान अपना खेती का काम होशियारी से कर रहा है, वहाँ वह सुशिक्षित तथा सुधरा हुआ दिखायी पडेगा। खेती के उद्योग पर ही जिनका आर्थिक जीवन कुछ अंश मे स्थिर हो गया है, ऐसे परिवारो ने सामूहिक जीवन की तथा ग्राम स्वावलम्बन की दृष्टि अपनायी, तो वस्त्र-स्वावलम्बन का काम बढने के लिए ऐसे क्षेत्र ज्यादा से-ज्यादा अनुकूल हैं, ऐसा मानने मे कोई हर्ज नहीं है। इस प्रकार

के कुछ क्षेत्रों में आज भी हम वस्त्र स्वावलम्बन का कार्य कर रहे हैं। पर इस कार्य में भी हम अब तक सामूहिक जीवन की कल्पना पैदा नहीं कर सके हैं। हमें इस दिशा में कुछ प्रयत्न करना चाहिए।

(३) भारत में जहाँ-जहाँ आदिवासी लोग बसे हुए हैं तथा जो-जो क्षेत्र पिछड़े हुए हैं, जहाँ सर्वांगीण विकास करने की आवश्यकता है। ऐसे सभी प्रदेशों में खादी-काम करना हो, तो वहाँ की तालीम को हमें अपने हाथ में लेना होगा। परिश्रम पर चलनेवाले 'शैक्षणिक परिश्रमालय' जैसी कुछ योजनाएँ बनानी होंगी। उस क्षेत्र की नैसर्गिक संपत्ति का, खेती आदि का उपयुक्त रीति से किस प्रकार इस्तेमाल किया जाय, यह हमें लोगों को सिखाना होगा तथा अन्न-वस्त्र और मूलभूत आवश्यकताओं के लिए हमें 'स्वावलम्बी बस्तियों' के रूप में गाँवों की रचना करनी होगी, इस दृष्टि से काम करना पड़ेगा।

जहाँ कहीं हमारा खादी-काम चल रहा है या आगे चलेगा, उन क्षेत्रों को इन तीन प्रकार से जाँच करके वहाँ के लिए उपयुक्त खादी-कार्य का अधिक सुनिश्चित आयोजन हम अगले साल में कर सकें तो जिस व्यापक और विविध दिशा में हमने काम शुरू किया है, वह ज्यादा कारगर और फलदायी होगा। ऐसा भी संभव है कि कुछ क्षेत्रों में ऊपर लिखे तीनों प्रकारों से मिला-जुला आयोजन भी हमें करना पड़े। लेकिन यहाँ तो संक्षेप में इसका उल्लेख इसलिए किया जा रहा है कि उस दृष्टि से विचार करने की ओर और हमारे आयोजनों में इस दृष्टि का खयाल रखने की ओर ध्यान आकृष्ट हो। अधिक तफसील का विचार हमें आगे करना होगा।

यह सब करते वक्त स्थानीय लोगों की कर्तृत्व-शक्ति जाग्रत होकर वे कार्य-प्रवण बनें तथा अपने गाँव का काम अपने को ही करना है—इस प्रकार की वृत्ति गाँव में बढ़े, ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए। ऐसा हुआ, तभी प्रथम वैचारिक क्रांति करके एक नयी अर्थ व्यवस्था हम

आज के चरखा-सघ के काम मे से मुल्क के सामने रख सकेगे व मार्ग-दर्शन भी कर सकेगे। ऐसा करने पर ही चरखा द्वारा क्राति करने की साधना हमारे हाथो हो सकेगी। ये सब प्रवृत्तियाँ चलाते वक्त पूज्य गाधीजी ने कहा था, उसके अनुसार अहिंसक आर्थिक समाज-रचना का चरखा प्रतीक है और सब ग्रामोद्योगो को सूर्य-मडल के ग्रहो के नाते स्थान है, यह बात भी हमें हरदम अपने सामने रखनी होगी।

चरखा-सघ के कार्यकर्ताओ से, खादी-काम करनेवाले अन्य कार्य-कर्ताओ से और सभी खादी-प्रेमियो से अनुरोध है कि वे इस विवरण को अच्छी तरह पढे और आगे काम के बारे अधिक विचार करें।

—अ० वा० सहस्त्रबुद्धे
मंत्री, अ० भा० चरखा-संघ

सेवाग्राम, वर्धा
१-६-'५२

अनुक्रम

१. अध्याय : चरखे की तात्त्विक मीमांसा

२. अध्याय : चरखे का पुनरुज्जीवन

३. अध्याय : खादी-काम : चरखा-संघ के जन्म के पूर्व

४. अध्याय : अखिल भारत चरखा-संघ का विधान

५. अध्याय : चरखा-संघ के प्राण

६. अध्याय : खादी का राहत का युग

अध्याय १ चरखे की तात्त्विक मीमांसा

चरखा गाधीजी की मौलिक उपज है। उसकी मीमांसा उनके लेखन पर से ही करना उचित होगा। खादी-आन्दोलन के सिलसिले में उन्होंने 'यंग इण्डिया' और 'हरिजन' में समय-समय पर कई लेख लिखे थे। खादी विषयक उनकी बहुतेरी लिखित सामग्री इन दो साप्ताहिक पत्रों में मिलती है। यहाँ उनके ही शब्दों में खादी सम्बन्धी विविध बातों का विवरण देने का प्रयत्न किया गया है। जैसे-जैसे लेख प्रकाशित हुए थे, उसी समयानुक्रम से यहाँ उनके आवश्यक अंश उद्धृत किये जायँगे, ताकि खादी के अनेक पहलुओं का समय-समय पर कैसे विकास होता गया, इसका पता चल सके। कहीं कुछ विषयों के लेख एक जगह दिये गये हैं। बहुतेरे मूल लेख अंग्रेजी में हैं। उनका संकलन 'इकनॉमिक्स ऑफ खादी' नामक पुस्तक में किया गया है। भाषा की दृष्टि से मूल का आनन्द तो इसमें कहाँ मिलेगा, तथापि मूलानुगामी अनुवाद करने की ही कोशिश रही है। जिस समय मूल लेख लिखे गये थे, उस समय की परिस्थिति की तुलना में आज की परिस्थिति बहुत कुछ बदल गयी है। अतः उनके कुछ अंश आज अप्रासंगिक प्रतीत होंगे। इस विवरण में शायद सुसम्बद्धता भी कम पायी जाय। कई जगह पुनरुक्ति भी मिलेगी। तथापि आशा है कि विषय समझने में कठिनाई नहीं रहेगी।

सन् १९०९ में लिखी हुई गाधीजी की 'हिन्द स्वराज्य' पुस्तक

प्रख्यात है। आगे चलकर उन्होंने जो बाते विशद रूप से और विस्तार से देश के सामने रखी, उनका बीज उस किताब मे है। उसके कल-कारखाने के अध्याय मे चरखे का मूल मिलता है। उन्होंने लिखा है :

"श्री रमेशचन्द्र दत्त का लिखा हुआ हिन्दुस्तान का आर्थिक इतिहास पढकर मुझे रुलाई आ गयी थी। कल-कारखानो की बाढ ने हिन्दुस्तान को चौपट कर दिया। मेनचेस्टर ने हमे जो नुकसान पहुँचाया है, उसकी तो कोई हद ही नही। हिन्दुस्तान की कारीगरी, जो लगभग नष्ट ही हो गयी है, वह मेनचेस्टर की ही करतूत है। कले आधुनिक सभ्यता की खास निशानी है और मुझे तो यह साफ दिखाई दे रहा है कि यह महापाप है। बबई की मिलो मे जो मजदूर काम करते है, वे पूरे गुलाम बन गये हैं। उनमे जो स्त्रियाँ काम करती है, उनकी दशा देखकर तो किसीका भी जी काँप उठेगा। जो कल-कारखानो से मालामाल हो गये है, वे दूसरे धनवानो से अच्छे होगे, ऐसी कोई सम्भावना नही है। अमेरिका के रॉकफेलर से भारतीय रॉकफेलर अच्छा होगा, यह समझना भूल है। अतः देश मे मिले बढने पर खुश होने का कोई कारण नही है। मिल-मालिको का हम तिरस्कार नही करते। यह तो सभव नही है कि वे एकाएक मिले छोड देगे, लेकिन उनसे हम यह प्रार्थना जरूर कर सकते हैं कि वे उन्हे और न बढाये। परन्तु मिल-मालिक ऐसा करें या न करे, लोग खुद ही कल-कारखानो मे बनी चीजो का इस्तेमाल करना बन्द कर सकते है। यह भी सभव नही कि ये बाते सभी आदमी एक साथ करने लगेगे। पहले इरादा पक्का करने की जरूरत है, फिर उसके अनुसार काम होगा। पहले एक ही आदमी ऐसा करेगा, फिर दस, उसके बाद सौ, इस तरह बढते जायँगे। समाज मे बडे आदमी यानी नेता लोग जो करते हैं, उसीका फिर दूसरे लोग भी अनुसरण करने लगते है। हमे इस इतजार मे बैठे रहने की जरूरत नही है कि दूसरे हमारा साथ देगे, तभी हम अपने सोचे हुए काम को करेगे। हमे तो कोई बात समझ मे आते ही उसके अनुसार करने लग जाना चाहिए।"

सन् १९२४ में इस विषय का एक प्रश्नोत्तरी में नीचे लिखे अनुसार ज्यादा स्पष्टीकरण हुआ :

प्रश्न : क्या आप सब यंत्रों के खिलाफ हैं ?

उत्तर : यंत्रों के खिलाफ मैं कैसे हो सकता हूँ, जब कि मैं यह जानता हूँ कि यह शरीर भी एक नाजुक यंत्र ही है। चरखा भी एक यंत्र है और दांत-कुरेदनी भी तो एक यंत्र ही है। मैं मशीनों के विरुद्ध नहीं हूँ, लेकिन मशीनरी के पीछे दीवाना होने के खिलाफ हूँ। लोग ऐसी मशीनों के पीछे दीवाने हो रहे हैं जिनसे मेहनत बच जाय, कम मजदूरों से काम चल जाय। लेकिन एक तरफ हजारों आदमी बेकार पड़े हैं और भूख से तड़प-तड़पकर गली-गली में प्राण दे रहे हैं और दूसरी ओर कम-से-कम मजदूर लगाने का प्रयत्न जारी है। मैं भी समय और मेहनत बचाने का पक्षपाती हूँ, लेकिन कुछ थोड़े से आदमियों की नहीं, वरन सबकी। मैं भी सम्पत्ति को केन्द्रस्थ करना चाहता हूँ लेकिन थोड़े से हाथों में नहीं, सबके हाथों में। आजकल तो मशीनरी थोड़े से लोगों की सहायता करती है और वे इस सहायता से लाखों आदमियों की पीठ पर सवार हो जाते हैं। मशीनों की तह में मजदूरों की तकलीफ बचाने की उपकार-बुद्धि नहीं है, लालच का भाव काम कर रहा है। सबसे अधिक खयाल हमें मनुष्य का करना चाहिए। मशीनें आदमियों के अवयवों को पंगु बनानेवाली न हों। विवेकपूर्वक मैं कुछ अपवाद करूँगा। सीने की सिंगर मशीन ले लीजिये। अब तक जितने उपयोगी आविष्कार हुए हैं, उनमें इसकी भी गिनती है।

प्रश्न : ये मशीनें बनाने का भी तो एक कारखाना होगा और उसमें इंजन याने ताकत से चलनेवाली मशीन ही होगी।

उत्तर : हाँ जरूर, मैं भी अपने को समाजवादी मानता हूँ और यह कहने का साहस रखता हूँ कि ऐसे कारखानों को राष्ट्र की सम्पत्ति बनाकर उनका संचालन सरकार के हाथ में देना चाहिए। मजदूर की

मेहनत बचाना हमारा लक्ष्य होना चाहिए, न कि लालच। मैं ऐसी मशीन का स्वागत करूँगा, जो खराब और टेढ़े तकुओं को सीधा कर सके।

प्रश्न : सीने की मशीन या तकुआ सीधा करने की मशीन को अपवाद मानने लगेंगे, तो अपवादों की यह शृंखला कहाँ खतम होगी?

उत्तर : जहाँ मशीन व्यक्ति की सहायता बन्द करके उसके व्यक्तित्व पर ही आक्रमण करने लगेगी।

प्रश्न : तब साइकिल, मोटर आदि को भी अपवाद मानना चाहिए?

उत्तर : नहीं, क्योंकि वे मनुष्य की प्राथमिक जरूरतें पूरी नहीं करतीं। मोटर की चाल से दूर-दूर जाना मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर, सूई मनुष्य-जीवन की बहुत बड़ी जरूरत है।

आदर्श के तौर पर तो मैं सभी मशीनों को नापसन्द करूँगा, मैं अपने इस शरीर तक का भी, अगर वह मेरी मुक्ति का सहायक न हो, नाश चाहूँगा और आत्मा के विशुद्ध और पूर्ण मोक्ष की तलाश करूँगा। उस दृष्टिकोण से मैं सभी मशीनों को नामंजूर करूँगा। लेकिन वे तो रहेंगी, क्योंकि शरीर की तरह वे भी अनिवार्य हैं। जैसा मैं पहले कह आया हूँ, यह शरीर भी तो एक बढ़िया मशीन है। लेकिन यदि यह शरीर आत्मा की उच्चतम उड़ान में रुकावट डाले, तो इसे भी अस्वीकार कर देना चाहिए। मेरा खयाल है कि किसी भी व्यक्ति का इस स्थापना से सैद्धान्तिक मतभेद नहीं होगा। जहाँ तक मनुष्य का शरीर आत्मा की उन्नति में सहायता देता है, वहीं तक उसकी उपयोगिता है। मशीन की भी ठीक यही हालत है।

स्वदेशी

१४-२-'१६

स्वदेशी हमारी वह भावना है कि जो हमारे लिए सीमा बाँधती है कि हम अधिक दूर को छोड़कर आसपास की चीजों का इस्तेमाल करें

और पड़ोसियों की सेवा करें। आर्थिक क्षेत्र में मुझे उन्हीं चीजों का उपयोग करना चाहिए जो मेरे नजदीक के पड़ोसियों ने बनायी हैं और उनके बनाने के उद्योगों में जो कुछ कमी होगी, वह दूर कर उनको पूर्ण और कुशल बनाना चाहिए। ' हाथ-करघे का उद्योग मरने की दशा में है। बुनकरों के कई परिवार एक समय के इस समृद्ध और सम्मानित धंधे से हट गये हैं। अगर हम स्वदेशी का अनुसरण करें, तो हमारी आवश्यकताएँ पूरी कर सकें ऐसे अपने पड़ोसियों को ढूँढ़ना और जिन्हें वे पूरी करने के लिए क्या करना चाहिए, यह मालूम नहीं है, उनको सिखाना हमारा कर्तव्य हो जाता है। स्वदेशी में भारत का हरएक गाँव बहुत कुछ स्वावलम्बी बनेगा और वह दूसरे गाँवों से ऐसी ही आवश्यक चीजें अदला-बदली में लेगा, जो वहाँ नहीं बन सकतीं। ऐसा कई बार कहा गया है कि भारत में स्वदेशी नहीं चल सकती। जो लोग यह आक्षेप करते हैं, वे स्वदेशी को जीवन-धर्म की दृष्टि से नहीं देखते हैं। उनके लिए स्वदेशी केवल एक ऐसा ढंग का काम है, जो उसमें कुछ स्वार्थ-त्याग करना पड़े, तो न करने में हर्ज नहीं। पर ऊपर लिखी व्याख्या की स्वदेशी एक ऐसा धार्मिक आचरण है कि जिसे व्यक्तियों की शारीरिक तकलीफों की परवाह न करते हुए निभाना ही चाहिए। स्वदेशीवाला जिन चीजों को आज वह जरूरी समझता है, ऐसी सैकड़ों चीजों के बिना निभाना सीख लेगा। इसके अलावा जो स्वदेशी को अशक्य मानकर उसे रद्द करना चाहते हैं, वे भूलते हैं कि स्वदेशी एक लक्ष्य है, जहाँ हमें लगातार प्रयत्न करके पहुँचना है। हम उस लक्ष्य की ओर ही बढ़ते हैं, यद्यपि हम प्रारम्भ में स्वदेशी को कुछ नियत चीजों तक ही सीमित करते हैं और देश में अभी जो आवश्यक चीजें नहीं बनती हैं, उन विदेशी चीजों का इस्तेमाल थोड़े-से समय के लिए तात्कालिक समझकर सहन कर लेते हैं। स्वदेशी पर एक और आक्षेप है। ये आक्षेपक स्वदेशी को एक अत्यन्त स्वार्थी सिद्धान्त मानते हैं और कहते हैं कि नैतिक सभ्यता में उसका समर्थन नहीं हो सकता। पर मेरा

कहना यह है कि स्वदेशी ही एक ऐसा मत है, जो नम्रता और प्रेम से मेल रखता है। जब मैं अपने परिवार की भी सेवा ठीक से नही कर सकता, तो समस्त भारत की सेवा करने को चल निकलना धृष्टता ही है। बेहतर यह है कि मै अपना प्रयास अपने परिवार के लिए केन्द्रित करूँ और यह मान लूँ कि उनके द्वारा मै सारे देश की और सारी मानव-जाति की सेवा कर रहा हूँ। कृति का गुण-दोष उसका हेतु निश्चित करेगा। ऐसा हो सकता है कि अपनी करनी से दूसरो की जो हानि होगी, उसकी परवाह न करके मै अपने परिवार की सेवा करूँ। मिसाल के तौर पर मै कोई काम स्वीकार कर लूँ, जिसमे मै लोगो से पैसा ऐठ सकूँ और सम्पन्न होकर अपने परिवार की कई गैरवाजिब मॉगे पूरी कर सकूँ। इसमे मै न तो परिवार की सेवा करता हूँ और न राष्ट्र की ही। मुझे यह मान लेना चाहिए कि मेरे और मेरे अवलम्बितो के निर्वाह के लिए काम करने के वास्ते ईश्वर ने मुझे हाथ-पैर दिये है। इस दशा मे मै अपना और अपने अधीन रहनेवालो का जीवन एकदम सादा बना लूँगा। इस तरह मै दूसरे किसीको हानि न पहुँचाते हुए अपने परिवार की सेवा कर लूँगा। अगर हरएक अपना जीवन इस प्रकार से बिताये, तो हम एक आदर्श राष्ट्र बना लेते हैं। जीवन की इस योजना मे दूसरे सब देशो को छोड़-कर केवल भारत की सेवा करता दीखता हुआ भी मै किसी दूसरे देश को हानि नहीं पहुँचाता हूँ। मेरा स्वदेश-प्रेम दूसरो को बाहर रखने का और अन्दर लेने का, दोनो प्रकार का है। बाहर रखने का इस मानी मे कि मै नम्रतापूर्वक अपना ध्यान अपनी जन्मभूमि के लिए ही मर्यादित करता हूँ और अन्दर लेने का इस मानी मे कि मेरी करनी स्पर्धा की या विरोधी भाव की नहीं है।

अक्तूबर १९१७

हम अब तक यह नहीं समझे हैं कि स्वराज्य प्राय. केवल स्वदेशी के जरिये मिल सकता है। अगर हमे अपनी भाषा के लिए आदर न हो, अपने कपड़े नापसन्द हो, हमारी पोशाक से हमे घृणा हो, चोटी रखने मे

हमें शर्म आती है, हमारा भोजन हमें अरुचिकर लगता है, हमारा हवा-पानी अच्छा नहीं है, हमारी संगति के लिए हमारे लोग फूहड़ और अयोग्य हैं, हमारी सभ्यता सदोष और विदेशी सभ्यता आकर्षक है, सारांश, अगर हमें हरएक देशी बात बुरी और हरएक विदेशी बात प्रिय लगती है तो मैं नहीं जानता कि हमारे लिए स्वदेशी के क्या मानी हैं। मुझे ऐसा लगता है कि स्वराज्य की कदर के पहले हममें स्वदेशी के लिए केवल प्रेम ही नहीं, बल्कि आतुरता होनी चाहिए। हमारी हरएक कृति पर स्वदेशी की छाप होनी चाहिए।

१०-१२-१९

भारत को जिस सच्चे सुधार की जरूरत है, वह है सही मानी की स्वदेशी। हमारी तुरन्त की समस्या यह है कि हमें खाना और कपड़ा कैसे मिले? सन् १९१८ में कपड़ा-खरीदी में हमने साठ करोड़ रुपये देश के बाहर भेजे। अगर इस पैमाने पर हम विदेशी कपड़ा खरीदना चालू रखें, तो हम बदले में कोई दूसरा काम दिये बिना अपने बुनकरों और कत्तिनों को हर वर्ष उतनी रकम से वंचित रखते हैं। इस दशा में कोई आश्चर्य नहीं है कि कम-से-कम जनता के दसवें हिस्से को अधभूखी रहना पड़ता है और बाकी में से बहुतों को कम खुराक पर निभाना पड़ता है। हमारे बुजुर्ग विदेशी बाजारों का माल खरीद किये बिना ही थोड़े प्रयास से अपने कामलायक कपड़ा बना लिया करते थे। भारत के किसान का निस्तार ग्रामोद्योग के बिना नहीं होगा। जमीन की उपज से वह अपना निर्वाह नहीं कर सकता। उसे कोई पूरक धन्धा चाहिए। कताई सबसे आसान, कम खर्च का और उत्तम धन्धा है। मैं जानता हूँ कि इसके मानी हैं हमारे मानस में क्रांति होना और चूँकि यह क्रान्ति है, इसलिए मेरा दावा है कि स्वराज्य का रास्ता स्वदेशी की राह से है। जो देश सालाना साठ करोड़ रुपये बचाकर इतनी बड़ी रकम अपनी कत्तिनों और बुनकरों को उनके घर बैठे बाँट सकता है, उसे संगठन और उद्यम की वह शक्ति प्राप्त हो जायगी, जो उसे अपने विकास के लिए दूसरा कोई भी आवश्यक

कार्यक्रम सफल करने को समर्थ बना देगी। कुछ विचारक कहते हैं, उत्तरदायी राज्य-पद्धति मिलने तक ठहरे, बाद मे हम हमारी स्त्रियो के काते बिना और बुनकरो के बुने बिना ही भारत के उद्योग-धन्धो को सरक्षण दे देगे। मेरा कहना है कि इस विचार मे दोहरा दोष है। एक, भारत संरक्षक-कर की राह नही देख सकता और सरक्षण कपडे की कीमत भी नही घटा सकेगा। दूसरे, केवल सरक्षण करोडो भूखो को लाभ नहीं पहुँचा सकता। उनकी मदद तो कताई-उद्योग द्वारा उन्हे फिर से बहाल करके उनकी आमदनी मे कुछ बढती होने पर ही हो सकती है। इसलिए सरक्षण कर रहे या न रहे, हमे हाथ-कताई का पुनरुज्जीवन करना होगा और हाथ-बुनाई को बढावा देना होगा। मिलो की सख्या बढाने से भी समस्या हल नही होगी। वे इतना समय लेगी कि परदेश को जानेवाली हमारी सम्पत्ति का प्रवाह रोक नही सकेगी और साठ करोड रुपये हमारे घरो मे बाँट नही सकेगी। वे केवल पैसा और श्रम कुछ जगह केन्द्रित करके ज्यादा गडबड-घोटाला करेगी।

२४-५-'२३

कुछ लोग मानते है कि स्वराज्य मिलने पर विदेशी माल पर रोक लगाने से स्वदेशी पूरी सफल हो जायगी। पर उस दशा मे वह स्वदेशी नही रहेगी। वह जबरन कुछ अच्छा करा लेने जैसी बात होगी। सच्ची स्वदेशी राष्ट्र का अजेय सरक्षण है, जिसका सपादन तब ही हुआ मानना चाहिए, जब उसका पालन राष्ट्रीय कर्तव्य के नाते हो। चाहे वह साध्य हो या साधन, उसके बिना स्वराज्य एक निर्जीव प्रेत-सा रहेगा और अगर स्वदेशी स्वराज्य की आत्मा है, तो खादी स्वदेशी का सारसर्वस्व है।

२१-४-'२०

इसमे स्त्री-जाति की इज्जत का सवाल भी है। जिनका मिल-उद्योग से सम्बन्ध है, वे जानते है कि मिल मे काम करनेवाली स्त्रियो के लिए मोह और धोखे को जगह है। उनको चरखा दीजिये, ताकि किसी भी स्त्री को अपने घर मे कातने के अलावा दूसरा काम खोजने की गरज न पडे।

खेती के बाद सबसे अधिक महत्त्व का धन्धा कताई है। इसके सम्बन्ध से स्वदेशी के मानी हैं, सम्पत्ति का समान वितरण। कताई खेती की पूरक है, इसलिए वह हमारे बढ़ते हुए दारिद्र्य की समस्या को हल करने में अनायास मदद कर सकती है। इस प्रकार कताई सचमुच हमारी वह कामधेनु बन जाती है, जो हमारी सब आवश्यकताएँ पूरी करती है और हमारे कई मुश्किल सवाल हल कर देती है। जो धन्धा हमारी इज्जत का रक्षण करता है और हमें जीवन-निर्वाह देता है, उसे चलाना हमारा धार्मिक कर्तव्य हो जाता है। स्वदेशी के मानी ऐसा सम्पूर्ण संगठन बनाना है, जिसमें हरएक अंग दूसरे के साथ पूरे मेलजोल से काम करे। अगर हम ऐसा संगठन निर्माण करने में सफल हों, तो न केवल स्वदेशी की सफलता निश्चित है, वरन सच्चा स्वराज्य अपने-आप हमारे पास आ जाता है।

२८-७-'२०

सन् १७९८ और १८१४ के बीच एक अंग्रेज द्वारा की गयी आर्थिक जाँच के आँकड़े बताते हैं कि हमारे लाखों स्त्री-पुरुष और बच्चे अपनी फुरसत के समय में हर रोज कताई करके सालाना करोड़ों रुपये कमाते थे। हमारे गृह-उद्योग आज की शोकजनक दशा में कैसे आये, यह खुली बात है। उस कथा को यहाँ दोहराने की जरूरत नहीं है। हम नहीं चाहते कि हम अपनी राजनीतिक और आर्थिक पुनर्रचना वैसी करें, जो पश्चिम को अभी उथल-पुथल कर रही है, निरंतर झगड़ों से तथा पूँजी और श्रम के बीच कटुता और वैमनस्य लाकर समाज को तोड़-फोड़ रही है। हम स्वदेशी द्वारा सच्चा राजनीतिक और आर्थिक संजीवन करना चाहते हैं। स्वदेशी की समस्या हमारी अस्सी प्रतिशत जन संख्या का सवाल है। जिनको वर्षभर में छह महीने से अधिक का समय लाचारी में बेकारी में बिताना पड़ता है और वर्षभर दीन, अधभूखे और अधनंगे रहना पड़ता है। उनके लिए फुरसत के समय के लिए उपयुक्त काम ढूँढ़ना ही चाहिए। हमें उनको राष्ट्र की सच्ची संपत्ति और शक्ति बनाना है। यह काम केवल शुद्ध स्वदेशी ही कर सकती है।

१-९-'२१

हमे यह भय न रखना चाहिए कि स्वदेशी की भावना का सम्पूर्ण विकास होने से हममे सकुचितता या अलगाव बढेगा। दूसरो का रक्षण करने के पहले हमे खुद को अपने नाश से बचाना होगा। आज भारत दूसरो के इच्छानुसार हलचल करनेवाले एक निर्जीव पुतले से अधिक कुछ नही है। उसे आत्म-शुद्धि से अर्थात् आत्म-सयम और स्वार्थत्याग से सजीव होने दो और फिर देखोगे कि वह खुद के लिए और मानव-जाति के लिए वरदान-रूप हो जायगा। स्वदेशी की दृष्टि से खादी पहनने-वाला उस मनुष्य की तरह है, जो अपने फेफडे का उपयोग करता है। हरएक को स्वाभाविक और जरूरी काम करना ही चाहिए, चाहे दूसरे उसकी आवश्यकता और उपयुक्तता मे विश्वास न कर भले ही न करे।

१२-३-'२५

मेरी स्वदेशी की व्याख्या छिपी नहीं है। निकट के पडोसी को नुकसान पहुँचाकर मुझे दूर के पडोसी की सेवा नही करनी चाहिए। इसमे न द्वेष है, न दड। वह किसी भी अर्थ मे सकुचित नहीं है, क्योंकि मेरे विकास के लिए जिस चीज की जरूरत है, वह मै जगत् के किसी भी प्रदेश से खरीद लूँगा। अगर कोई चीज मेरे विकास मे बाधक है अथवा निसर्गतः जिनकी सँभाल मेरे जिम्मे है उनको हानि पहुँचाती है, तो वह कितनी ही सुन्दर और अच्छी क्यो न हो, मै उसे किसीसे भी नहीं खरीदूँगा। मै जगत् के हरएक प्रदेश से अच्छा और उपयुक्त साहित्य खरीद करता हूँ। मै इग्लैड के ऑपरेशन के शस्त्र, ऑस्ट्रिया की पिन और पेन्सिल और स्विट्जरलैड की घडियाँ खरीदता हूँ। लेकिन मै इग्लैड या जापान या जगत् के किसी भी प्रदेश से सुन्दर-से-सुन्दर एक इच भी कपडा नही खरीदूँगा, क्योकि वहाँ के कपडे ने भारत के करोडो लोगो को हानि पहुँचायी है और वह अब भी अधिकाधिक हानि पहुँचा रहा है। भारत के करोडो गरीब गरजू लोगो द्वारा कता और बुना हुआ कपडा न खरीदकर विदेशी कपडा, चाहे वह गुण मे खादी से बढिया क्यो न हो,

खरीद करना मेरे लिए पाप है। इसलिए मेरी स्वदेशी मुख्यतः खादी के इर्द-गिर्द केन्द्रित होकर भारत में जो कुछ भी चीज बनायी जा सकती है या बनती है, वहाँ तक पहुँचती है। मेरी राष्ट्रीयता मेरी स्वदेशी जितनी ही व्यापक है। मैं भारत का उत्थान इसलिए चाहता हूँ कि उसका लाभ सारे जगत् को मिले। मैं भारत को दूसरे देशों के नाश पर ऊँचा नहीं करना चाहता। इसलिए अगर भारत मजबूत और समर्थ बन जाय, तो वह जगत् को अपनी सम्पन्न कला की चीजें और स्वास्थ्यकर मसाले भेजेगा। अफीम या दूसरी नशे की चीजें भेजने से इनकार करेगा, चाहे उनके व्यापार से भारत को कितना ही आर्थिक लाभ क्यों न हो।

१७-७-'२६

प्रश्न आप खादी पर जोर देते हैं, स्वदेशी पर क्यों नहीं? क्या स्वदेशी एक सिद्धान्त नहीं है कि जिसकी खादी केवल तफसील ही है?

उत्तर : मैं खादी को तफसील नहीं मानता। स्वदेशी एक तात्त्विक शब्द है। खादी स्वदेशी की व्यावहारिक, प्रत्यक्ष और केन्द्रीय बात है। खादी के बिना स्वदेशी निर्जीव, प्रेत जैसी है। केवल खादी ही स्वदेशी कपडा है। देश के करोड़ों लोगों के लिए स्वदेशी का अर्थ है, श्वास लेने की वायु की तरह स्वदेशी में खादी ही मुख्य चीज है। स्वदेशी की कसौटी स्वदेशी के नाम पर इस्तेमाल की गयी चीज की व्यापकता में न होकर स्वदेशी वस्तु के बनाने में हाथ बटानेवालों की व्यापकता पर है। इस तरह मिल का कपडा एक संकुचित अर्थ में ही स्वदेशी है। क्योंकि उसे बनाने में भारत के करोड़ों में से इने-गिने लोग ही काम कर सकते हैं। खादी बनाने में तो करोड़ों लग सकते हैं।

स्वदेशी का कानून

१८-६-'३१

स्वदेशी आज के जमाने का एक बड़ा कानून है। सृष्टि-नियमों की तरह आध्यात्मिक कानून भी बनाने नहीं पड़ते, वे अपने-आप चलते हैं।

लेकिन अज्ञान या अन्य कारणो से मनुष्य कई बार उनकी लापरवाही या उल्लघन करता है। उस दशा मे अपना आचरण स्थिर करने के लिए व्रतो की आवश्यकता होती है। जो स्वभाव से शाकाहारी है, उसे अपनी निरामिषता दृढ करने के लिए व्रतो की आवश्यकता नही रहती। क्योकि मास देखने से ही उसके मन मे लालसा की जगह घृणा ही पैदा होगी। स्वदेशी का कानून मनुष्य के मूल स्वभाव मे भरा पड़ा है। पर हम आज वह भूल गये है। इसलिए स्वदेशी के व्रत की जरूरत है। उसके आखिरी और आध्यात्मिक अर्थ मे स्वदेशी के मानी है, मनुष्य की आत्मा का सासारिक बधन से मुक्ति पाना, क्योकि यह भौतिक कलेवर उसका स्वाभाविक या स्थायी धाप नही है, वह उसकी प्रगति मे रुकावट है, वह उसके दूसरे जीवो से एकता का अनुभव करने मे उसके आडे आता है, इसलिए स्वदेशी का उपासक सारी सृष्टि से आत्मीयता स्थापित करने के प्रयत्न मे भौतिक देह के बधन से मुक्त होना चाहता है।

अगर स्वदेशी का यह अर्थ सही है, तो उसका उपासक अपने प्रथम कर्तव्य के नाते अपने निकट के पडोसियो की सेवा मे लग जायगा। इसमे दूसरे छूट जायँ या उनकी हानि भी हो, पर यह हानि केवल बाहर से दीखनेवाली होगी। उसके पडोसियो की शुद्ध सेवा, उसके स्वरूप के कारण ही, दूरवालो की कुसेवा कभी नही हो सकती। बल्कि बात उलटी है। 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे।' यह अचूक सिद्धान्त हृदयगम करने लायक है। इसके विपरीत जो व्यक्ति 'दूर के दृश्य' से मोहित होकर पृथ्वी के छोर तक सेवा करने को दौडता है, उसकी महत्त्वाकाक्षा विफल होती है। इतना ही नही, वह पडोसियो के प्रति अपने कर्तव्य से च्युत होता है। एक व्यावहारिक उदाहरण लीजिये। जहाँ मै रहता हूँ, वहाँ कुछ व्यक्ति मेरे पडोसी है, कुछ रिश्तेदार और कुछ आश्रित हैं। स्वभावतः वे सब समझते है और यह समझने का उन्हे अधिकार है कि उनका मुझ पर हक है, वे मुझसे सहायता और सहारे की आशा रखते है। मान लीजिये,

अब मैं उन सबको एकाएक छोडकर दूर जगह के लोगों की सेवा करने को चल निकलता हूँ। मेरा यह निर्णय मेरे पड़ोसियों और अवलंबितों के नन्हे-से जगत् को अस्त-व्यस्त कर देगा, जब कि बहुत संभव है कि मेरी यह शूरवीरता नयी जगह के वातावरण में गड़बड़ी ही पैदा करे। इस प्रकार स्वदेशी के सिद्धान्त का भंग करने का पहला फल यह होगा कि निकट के पड़ोसियों के प्रति मेरी दोषपूर्ण लापरवाही होगी और जिनकी मैं सेवा करना चाहता था, उनकी अचेती कुसेवा होगी। 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।' गीता जो बात स्वधर्म के बारे में कहती है, वह स्वदेशी पर भी उतनी ही लागू होती है। क्योंकि स्वदेशी निकट के अड़ोस-पड़ोस पर लागू होनेवाला स्वधर्म है।

बुराई तभी होती है, जब हम स्वदेशी का सिद्धान्त गलत रीति से समझ लेते हैं। जैसे, अगर मैं परिवार के लाड-प्यार के लिए भले-बुरे साधनों से पैसा बटोरने लगूँ, तो वह स्वदेशी का विपर्यास होगा। स्वदेशी का कानून मुझसे इससे ज्यादा कोई अपेक्षा नहीं रखता कि मैं अपने परिवार की वाजिब माँग न्याय्य साधनों से ही पूरी करूँ। ऐसा करने के प्रयत्न में व्यापक व्यवहार का नीतिधर्म प्रकट हो जायगा। स्वदेशी का व्यवहार किसीको हानि नहीं पहुँचा सकता। अगर हानि पहुँचाता है, तो वह स्वधर्म नहीं, बुरा स्वार्थ है।

ऐसे मौके आ सकते हैं कि स्वदेशी के उपासक को व्यापक सेवा की वेदी पर अपने परिवार का बलिदान करना पड़े। अपनी प्रसन्नता से किया हुआ ऐसा अपना लय परिवार की सबसे ऊँचे दरजे की सेवा होगी। स्वदेशी में स्वार्थ के लिए स्थान नहीं है। अगर उसमें स्वार्थ है, तो वह उस दरजे का स्वार्थ है, जो श्रेष्ठ परोपकार से भिन्न नहीं है। शुद्ध स्वरूप की स्वदेशी विश्व-सेवा का मूल है।

इस विचारधारा के अनुसरणस्वरूप स्वदेशी का सिद्धान्त समाज पर लागू करने में मैंने उसके एक आवश्यक और महत्त्व के अंग के रूप में खादी को पाया। मैंने अपने से प्रश्न किया : "अभी भारत के करोड़ों

लोगो को जरूरी हो, जो आसानी से समझ मे आ सके, जो आसानी से की जा सके, जो साथ ही करोडो अधभूखे देशवासियो को जिन्दा रहने मे मदद कर सके, ऐसी कौन-सी सेवा हो सकती है ?" उत्तर मिला कि खादी और चरखे को व्यापक बनाने से ही ये शर्ते पूरी हो सकती है।

यह मान लेना बडा भ्रम होगा कि स्वदेशी का कर्तव्य केवल थोडा-सा सूत कात लेने और खादी पहन लेने से समाप्त हो जाता है। समाज के प्रति स्वदेशी धर्म का पालन करने मे खादी पहला और अनिवार्य कदम है। ऐसे कई लोग है, जो खादी पहनते है, लेकिन दूसरी सब बातो मे अनाप-शनाप विदेशी चीजो का इस्तेमाल करते रहते है। वे स्वदेशी का पालन करनेवाले नही माने जा सकते। वे केवल फैशन का अनुसरण करते हैं। स्वदेशी का उपासक अपने इर्द-गिर्द का ध्यानपूर्वक अध्ययन करेगा, यथाशक्य स्थानीय चीजो को, चाहे वे हलके दर्जे की हो या महँगी हो, पसन्द करके अपने पडोसियो की मदद करने की कोशिश करेगा, उनकी त्रुटियो को सुधारने की कोशिश करेगा, उनके दोषो के कारण उनको छोडकर विदेशी चीजे नही लेगा।

स्वदेशी मे भी किसी दूसरी अच्छी बात की तरह अति करने से बुराई आ सकती है। हमे इस धोखे से बचना चाहिए। विदेशी चीजो का, वे केवल विदेशी हैं, इसलिए त्याग करना और जिन चीजो के बनाने की देश मे अनुकूलता नही है, उन पर राष्ट्र का समय और पैसा बरबाद करना, दोषपूर्ण मूर्खता और स्वदेशी-तत्त्व की अवहेलना होगी। स्वदेशी का सच्चा उपासक परदेशी लोगो के प्रति कभी बुरा भाव नही रखेगा। वह कोई काम जगत् के किसीके भी विरोध मे करने को प्रेरित नही होगा। स्वदेशी द्वेष का सप्रदाय नही है। वह निःस्वार्थ सेवा का भाव है, जिसकी जड मे शुद्ध अहिसा अर्थात् प्रेम है।

मिल और चरखा

२१-७-'२०

ऐसे कुछ मित्र हैं, जो इस बडी कला (कताई) के पुनरुज्जीवन के

प्रयत्न पर हँसते हैं। वे मुझे स्मरण दिलाते हैं कि मिलों के, सिलाई मशीनों के या टाइपराइटरों के इस जमाने में एक बार फेंके हुए चरखे को फिर से जिलाने की आशा रखना पागलपन ही है। यह मित्र भूलते हैं कि सिलाई मशीन के कारण सूई अब तक लुप्त नहीं हुई है और टाइपराइटर के रहते हुए भी हाथ-कलम की करामात कायम है। जैसे होटलों के साथ घरेलू भोजनालय भी चलता है, वैसे ही मिल के साथ चरखा न चलने का कोई कारण नहीं दीखता।

२८-७-'२०

प्रश्न : प्रश्न यह नहीं है कि यन्त्र-करघे के मुकाबले में हाथ-करघा टिक सकेगा या नहीं अथवा वह करोड़ों को अन्न या कपड़ा दे सकता है या नहीं। असल मुद्दा यह है कि देश को आर्थिक और राजनीतिक शक्ति कौन दे सकता है? हाथ-करघा या मिल-करघा? हाथ-उद्योग या यन्त्र-उद्योग?

उत्तर : प्रश्न पर से यह स्पष्ट नहीं होता कि इस देश की आर्थिक और राजनीतिक शक्ति के बारे में प्रश्नकर्ता की कल्पना क्या है। यद्यपि उनके लिखने से यह अर्थ निकल सकता है, तथापि मैं यह नहीं मानता कि वे सचमुच में मानते हैं कि हमारे अधभूखे और अधनंगे करोड़ों स्त्री-पुरुष, बाल-बच्चों को अन्न और वस्त्र दिये बिना वह ताकत हासिल हो सकती है। इस यन्त्रोद्योग के जमाने में भी देश की आर्थिक और राजनीतिक शक्ति उसके शक्तिशाली पुरुषों पर निर्भर रहेगी, न कि शक्तिशाली यन्त्रों पर। हम हमारी राष्ट्रीय शक्ति का संगठन करना चाहते हैं। यह केवल उत्पत्ति के उत्तम तरीके अपनाने से नहीं होगा, बल्कि उत्पत्ति और वितरण दोनों के उत्तम तरीकों से होगा। कपड़े की उत्पत्ति दो तरह से हो सकती है। एक, नयी मिलें खड़ी करके तथा हरएक मिल की उत्पत्ति बढ़ाकर। दूसरे, हाथ-करघे बढ़ाकर और उनको सुधारकर। यह सब काम साथ-साथ चल सकते हैं। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रोफेसर राधाकमल

मुकर्जी ने कहा है कि यह खयाल गलत है कि हाथ-करघे और मिल-करघे मे स्पर्धा है।

१८-८-'२०

'लीडर' पत्र मानता है कि मैं मिल के सूत और मिल के कपड़े की जगह हाथ-कता सूत और हाथ-बुना कपडा लाकर प्रगति की घडी के कॉटे उलटे फेर रहा हूँ। मै ऐसा कुछ नही कर रहा हूँ। मेरा मिलो से झगडा नहीं है। मेरा कहना बिलकुल सीधा-सादा है। भारत को सालभर मे प्रतिव्यक्ति करीब १३ गज कपडा चाहिए। मेरे खयाल से अभी वह इसके आधे से भी कम कपडा बनाता है। आवश्यकता की पूरी कपास भारत मे पैदा होती है। हमारा देश रूई की लाखो गाँठे जापान और लकाशायर को भेजकर उसका बहुतेरा हिस्सा बने-बनाये कपडे के रूप मे वापस लाता है, जब कि उसकी आवश्यकता का पूरा कपडा और सूत, हाथ-कताई और हाथ-बुनाई से पैदा करने की उसकी ताकत है। भारत के मुख्य धधे खेती को कुछ पूरक धधा चाहिए। करोडो के लिए हाथ-कताई ही एक ऐसा काम हो सकता है।

८-९-'२०

जैसे प्रत्येक घर अनायास अपना भोजन पकाता है, वैसे ही हरएक घर को अपना सूत तैयार कर लेना चाहिए और जैसे कि हर घर मे रसोडो चलते हुए भी होटल अच्छी दशा मे चल रहे है, वैसे ही कपड़े के बारे मे मिलें हमारी ज्यादा जरूरत पूरी करती रहेगी। जैसे, किसी अकस्मात् घटना से सब होटल बन्द हो जायॅ, तो भी हमारे खानगी रसोडो के कारण हमे फाका नहीं करना पडेगा, वैसे ही बाहर से रोक लगने पर हमारी सब मिले बन्द हो जायॅ, तो भी घरेलू कताई के कारण हमे नगा नही रहना पड़ेगा।

१८-१-'२१

हमे जितना चाहिए, उतना पूरा कपड़ा मिले अभी नही बनाती हैं

और जल्दी बना भी नहीं सकेंगी। शायद लोगों को मालूम नहीं होगा कि अब भी बुनकर मिलों की अपेक्षा अधिक कपड़ा बुनते हैं। विदेशी कपड़े का बहिष्कार सफल करने का उपाय सूत की उत्पत्ति बढ़ाना ही है और यह हाथ-कताई से ही हो सकता है। लोगों को अपने फैशन के विचार दुरुस्त करने होंगे और फिलहाल महीन कपड़ों का, जो सदा नहीं पहने जाते हैं, इस्तेमाल स्थगित करना होगा। उनको निर्मल सफेद खादी में कला और सुन्दरता देखना और उसके खुरदरेपन और असमानता की कद्र करना सीखना चाहिए।

६-७-'२१

हमारे बुनकर आज प्राय विदेशी सूत बुनते हैं। अर्थात् वे विदेशी कतवैयों का सहारा दे रहे हैं। मैं उसकी भी परवाह नहीं करता, अगर हम उसके बदले कुछ दूसरा काम करते होते। जब कताई प्राय जबरन बंद कर दी गयी, तब उसकी जगह गुलामी और आलस्य के सिवा और कुछ नहीं आया। हमारी मिलें हमारी सूत की आवश्यकता पूरी नहीं कर सकती हैं। वे पूरी करें, तो भी उन पर जबरदस्ती किये बिना वे कीमतें कम नहीं रखेंगी। वे खुले-आम पैसा कमाने के लिए हैं वे देश की आवश्यकता के अनुसार कीमतों का नियंत्रण नहीं करेंगी।

२३-७-'२४

प्रश्न : अगर हाथ कती और हाथ-बुनी खादी-कपास की, ऊनी या रेशमी चलनी है, तो राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था में मिल के कपड़े का क्या स्थान है?

उत्तर अगर करोड़ों देहाती चरखे का संदेश पायें, समझ ले और मान लें, तो हमारे यहाँ की आर्थिक व्यवस्था में विदेशी या देशी किसी भी मिल के कपड़े के लिए स्थान नहीं है। और अगर मिल का कपड़ा सम्पूर्णतया हट जाय, तो देश की दशा बेहतर ही होगी। इस कथन का मशीनरी से अथवा विदेशी कपड़े के बहिष्कार से कोई वास्ता नहीं है। वह केवल भारत की आम जनता की आर्थिक दशा का सवाल है। लेकिन हमारे

बचाव के लिए, कोई अदृश्य शक्ति द्वारा आम जनता को तुरन्त स्वर्गीय आश्रयस्थान-स्वरूप चरखे की ओर ले जाने का चमत्कार हुए बिना, आगामी कुछ वर्षो तक तो भी भारत के मिलो को खादी की पूर्ति मे चलाना होगा।

२२-५-'२४

जैसे किसी भी हालत मे विदेशी कपड़े का इस्तेमाल होना ही नही चाहिए, वैसे ही हमारी मिलो मे बने हुए कपडे का भी उपयोग नही करना चाहिए। इन दो मनाइयो मे मुझे भेद करना चाहिए। विदेशी कपडे का बहिष्कार सदा के लिए अत्यन्त जरूरी है। राष्ट्र के द्वारा देशी मिल के कपडे का बहिष्कार सदा के लिए करने की बात नही है। केवल भारत की मिले मौजूदा कपडे की मॉग पूरी नही कर सकती हैं, जब कि चरखा और करघा कर सकता है। पर चरखे से बनी हुई खादी अब तक लोकप्रिय और व्यापक नही बनी है। वह वैसी तब ही बन सकती है कि जब भारत के समझदार लोग उसे अपनाना शुरू करेगे। इसलिए उनको कपडे मे केवल खादी का ही उपयोग करना चाहिए। हमारी मिलो को हमारे सहारे की जरूरत नही है। उनका माल काफी चलता है। इसके अलावा उन पर राष्ट्र का कोई काबू नही है। वे परोपकारी सस्थाएँ नही हैं। वे खुले-आम स्वार्थ के लिए है। भारत का किसान शायद जगत् मे सबसे अधिक मेहनती है, पर आल्सी भी है। परिश्रम और आलस दोनो उस पर लादे गये हैं। खेतो से उपज लेने के लिए उसे काम करना ही पडता है। 'ईस्ट-इडिया कपनी' ने हाथ-कताई को मारकर उसे पूरा काम न रहने के समय मे आलसी बना दिया है। अब हम उसके सामने प्रत्यक्ष मिसाल रखेगे, तब ही वह फिर से चरखा लेगा, केवल उपदेश का उस पर असर नही होगा।

२६-६-'२४

एक मित्र ने सुझाया—हाथ-कताई की जगह मशीन-कताई चलाओ। हर तालुके मे एक कताई-मिल खडी करो। मुनाफा राष्ट्र का हो। केवल देशप्रेमी ही यह मिले चलाये, देश की सेवा के लिए, न कि मुनाफे के

लिए। बुना हुआ कपड़ा केवल उस-उस ताल्लुके में ही जाने दो। इस प्रकार समय और किराया बच जायगा। प्रारंभ में एक ताल्लुके से शुरुआत करनी चाहिए।

यह मित्र भूलते हैं कि चरखा जिन करोड़ों भूखों को अधिक आमदनी की आवश्यकता है उनको काम और थोड़ी आमदनी देने के लिए है। हर घर में करघा बैठाना संभव नहीं है। सूत्र यह है कि हर गाँव में करघा और हर घर में चरखा। अगर हर ताल्लुके में कताई-मिल खड़ी करेंगे, तो थोड़ों के द्वारा बहुतों के शोषण का राष्ट्रीकरण होगा। ताल्लुका मिल में सबको काम नहीं दे सकेंगे, इसके अलावा दो हजार ताल्लुकों के लिए आवश्यक यंत्र-सामग्री बाहर से लानी होगी और मिल चलाने लायक व्यवस्थापकों को सिखाना होगा। चरखों की तरह मिलें एकाएक नहीं बढ़ सकतीं। एकाध चरखा असफल रहे, तो उसकी गिनती नहीं होगी, लेकिन ताल्लुका-मिल डूब जाय, तो ताल्लुकेभर के लोगों में खलबली मच जायगी।

१७-७-'२४

एक महाशय लिखते हैं—व्यापक रूप में खादी को अपनाने से एक बड़ी संख्या के मिल-मालिकों को और उनसे भी बहुत बड़ी संख्या के शेयर-होल्डरों को, जिन्होंने भविष्य में आराम से रहने की दृष्टि से अपनी सारी बचत शेयरों में डाल रखी है, भयानक हानि होगी और उनको संकट में उतरना होगा। अप्रतिष्ठित और जो किसी प्रकार अपना पेट भर सकते हैं, ऐसे छोटे दरजे के बड़ी संख्या के लोगों की आर्थिक स्थिति सुधारने के इस प्रयत्न में बहुत से ऊँचे और मध्यम वर्ग के लोगों का नाश होगा। विदेशी कपड़े का बहिष्कार खुशी से करिये, लेकिन मिल के कपड़े का और खादी का इस्तेमाल ऐच्छिक रखिये।

मैं चाहता हूँ कि लेखक का भय सच्चा निकले। तब वह देखेगा कि मिलों का और शेयर-होल्डरों का आशंकित नाश उनकी खुद की और भारत की मुक्ति का द्वार होगा। वह तब देखेगा कि भारत में एक नये

बचाव के लिए, कोई अदृश्य शक्ति द्वारा आम जनता को तुरन्त स्वर्गीय आश्रयस्थान-स्वरूप चरखे की ओर ले जाने का चमत्कार हुए बिना, आगामी कुछ वर्षो तक तो भी भारत के मिलो को खादी की पूर्ति मे चलाना होगा।

२२-५-'२४

जैसे किसी भी हालत मे विदेशी कपडे का इस्तेमाल होना ही नही चाहिए, वैसे ही हमारी मिलो मे बने हुए कपडे का भी उपयोग नही करना चाहिए। इन दो मनाइयो मे मुझे भेद करना चाहिए। विदेशी कपडे का बहिष्कार सदा के लिए अत्यन्त जरूरी है। राष्ट्र के द्वारा देशी मिल के कपडे का बहिष्कार सदा के लिए करने की बात नही है। केवल भारत की मिले मौजूदा कपडे की माँग पूरी नही कर सकती हैं, जब कि चरखा और करघा कर सकता है। पर चरखे से बनी हुई खादी अब तक लोकप्रिय और व्यापक नही बनी है। वह वैसी तब ही बन सकती है कि जब भारत के समझदार लोग उसे अपनाना शुरू करेगे। इसलिए उनको कपडे मे केवल खादी का ही उपयोग करना चाहिए। हमारी मिलो को हमारे सहारे की जरूरत नही है। उनका माल काफी चलता है। इसके अलावा उन पर राष्ट्र का कोई काबू नही है। वे परोपकारी सस्थाएँ नही हैं। वे खुले-आम स्वार्थ के लिए हैं। भारत का किसान शायद जगत् मे सबसे अधिक मेहनती है, पर आलसी भी है। परिश्रम और आलस दोनो उस पर लादे गये हैं। खेतो से उपज लेने के लिए उसे काम करना ही पडता है। 'ईस्ट-इडिया कपनी' ने हाथ-कताई को मारकर उसे पूरा काम न रहने के समय मे आलसी बना दिया है। अब हम उसके सामने प्रत्यक्ष मिसाल रखेगे, तब ही वह फिर से चरखा लेगा, केवल उपदेश का उस पर असर नहीं होगा।

२६-६-'२४

एक मित्र ने सुझाया—हाथ-कताई की जगह मशीन-कताई चलाओ। हर तालुके मे एक कताई-मिल खडी करो। मुनाफा राष्ट्र का हो। केवल देशप्रेमी ही यह मिले चलाये, देश की सेवा के लिए, न कि मुनाफे के

लिए। बुना हुआ कपडा केवल उस-उस ताल्लुके मे ही जाने दो। इस प्रकार समय और किराया बच जायगा। प्रारभ मे एक ताल्लुके से शुरुआत करनी चाहिए।

यह मित्र भूलते हैं कि चरखा जिन करोडो भूखो को अधिक आमदनी की आवश्यकता है, उनको काम और थोडी आमदनी देने के लिए है। हर घर मे करघा बैठाना सभव नही है। सूत्र यह है कि हर गाँव मे करघा और हर घर मे चरखा। अगर हर ताल्लुके मे कताई-मिल खडी करेगे, तो थोडो के द्वारा बहुतो के शोषण का राष्ट्रीकरण होगा। ताल्लुका मिल मे सबको काम नही दे सकेगे, इसके अलावा दो हजार ताल्लुको के लिए आवश्यक यत्र-सामग्री बाहर से लानी होगी और मिल चलाने लायक व्यवस्थापको को सिखाना होगा। चरखो की तरह मिले एकाएक नही चल सकती। एकाध चरखा असफल रहे, तो उसकी गिनती नही होगी, लेकिन ताल्लुका-मिल डूब जाय, तो ताल्लुकेभर के लोगो मे खलबली मच जायगी।

१७-७-'२४

एक महाशय लिखते है—व्यापक रूप मे खादी को अपनाने से एक बडी सख्या के मिल-मालिको को और उनसे भी बहुत बडी सख्या के शेयर-होल्डरो को, जिन्होने भविष्य मे आराम से रहने की दृष्टि से अपनी सारी बचत शेयरो मे डाल रखी है, भयानक हानि होगी और उनको सकट मे उतरना होगा। अप्रतिष्ठित और जो किसी प्रकार अपना पेट भर सकते हैं ऐसे छोटे दरजे के बडी सख्या के लोगो की आर्थिक स्थिति सुधारने के इस प्रयत्न से बहुत से ऊँचे और मध्यम वर्ग के लोगो का नाश होगा। विदेशी कपडे का बहिष्कार खुशी से करिये, लेकिन मिल के कपडे का और खादी का इस्तेमाल ऐच्छिक रखिये।

मै चाहता हूँ कि लेखक का भय सच्चा निकले। तब वह देखेगा कि मिलो का और शेयर-होल्डरो का आशकित नाश उनकी खुद की और भारत की मुक्ति का द्वार होगा। वह तब देखेगा कि भारत मे एक नये

जीवन का सचार हुआ है और मध्यम-वर्ग अपना पोषण आज की तरह
भूखे किसान से न लेकर सपन्न किसान से ले रहा है । थोडा सोचने से
मालूम हो जायगा कि मिलो को हटाने लायक चरखे की स्थापना होने के
लिए, मिल-मालिको, शेयर-होल्डरो और डायरेक्टरो को लोगो से पूरा
सहयोग करना पडेगा । लेखक को इस विचार से सात्वना मिलेगी कि
देशी मिलो के कपडे को धक्का पहुँचने के पहले चरखे को साठ करोड
रुपये के विदेशी कपडे को हटाना है । लेकिन पहले लिखे मुताबिक
हममे से हरएक को देशी मिल के कपडे को भी छोडकर केवल खादी
पर ही जोर देना चाहिए । हमारी मिलो को मेरे या और किसीके सहारे
की जरूरत नही है । उनकी खुद की एजेन्सियाँ हैं और उनके अपने
विज्ञापन के विशेष तरीके है । काग्रेसजनो के लिए मिल का कपडा
पहनना ऐच्छिक रखने का परिणाम होगा खादी-उद्योग को मारना । हम
जितना दे सकते हैं, उतना सारा सरक्षण खादी को ही देने की जरूरत है ।
तभी वह बाजार मे चल सकेगी ।

अगर मध्यमवर्ग नीचे के वर्गो के लिए खुशी से हानि सहन करे, तो
वह उसके द्वारा किये गये शोषण की, देर से क्यो न हो, पर कुछ भर-
पाई करने जैसा होगा । अगर आवश्यकता हो, तो जिनकी गरीबी पर देशी
मिलो की सपत्ति बढी है, उनके लिए मिलो को भी हानि सहन
करनी चाहिए ।

७-८-'२४

एक महाशय लिखते हैं—खादी आज मिल के कपडे की अपेक्षा बहुत
महँगी है और उसकी कीमत के हिसाब से उसके ज्यादा टिकने मे सशय
है । आज जिन पर भावना का असर है और जो पैसा बचा सकते हैं, वे
ही खादी का शौक कर सकते हैं । यह खादी के लिए बाउन्टी है । पर
केवल बाउन्टी से क्या हो सकेगा ? अगर उत्पत्ति की पद्धति मे दोष है, तो
खादी असफल रहेगी । आपके कहने का ठीक अर्थ यह है कि चरखे का
उद्देश्य वस्त्र के बारे मे देहात को स्वावलम्बी बनाना है, अर्थात् हर घर

को अपने लिए कातना चाहिए। पर क्या यह कहा जा सकता है कि इस दिशा में उत्पत्ति बढ़ रही है? कितने देहात स्वावलम्बी हो गये हैं या होने जा रहे हैं? अभी खादी की खपत भावना को अपील करने से ज़रूर हो रही है, जो कि सदा के लिए ठीक नहीं समझी जा सकती है।

खादी दिखने में महँगी है, केवल गजों की कीमत में। दूसरे कपड़े से खादी की तुलना करना गलत है। खादी का सस्तापन अपनी रुचि बदलने में है। कपड़ा पहनने में खादी शोभा की जगह उपयुक्तता लाती है। जगत् में भावना एक बड़ी भारी शक्ति है। आज की दशा में खादी को बाउन्टी देना जरूरी है। जो काम राज-सत्ता को करना चाहिए, पर वह नहीं करती है वह काम लोगों की स्वदेशी भावना से होना चाहिए। वस्त्र-स्वावलम्बन तब सफल होगा कि जब हम, जो जनता की सेवा करना चाहते हैं, चरखे की आवश्यकता महसूस करेंगे और उसके बने माल के लिए अपना चाव बढ़ायेंगे।

४-७-'२९

प्रश्न विदेशी कपड़े के बहिष्कार के आंदोलन में स्वदेशी मिलों से मदद क्यों नहीं माँगी जाती? कांग्रेस के कार्यकर्ता खादी के साथ स्वदेशी मिलों को भी प्रत्यक्ष प्रोत्साहन क्यों न दें और उनका विज्ञापन क्यों न करें?

उत्तर : मिल के कपड़े के साथ खादी नहीं चलायी जा सकती। खादी और मिल के बीच पसन्दगी करने को कहें, तो हमें सखेद कबूल करना चाहिए कि अज्ञानी बहुसंख्य लोग दीखने में महँगी, मोटी और मिलने में मुश्किल खादी की अपेक्षा सस्ते और सहल मिलनेवाले मिल के कपड़े को ही पसन्द करेंगे। इसलिए कांग्रेस-कार्यकर्ता अपनी शक्तिभर मिल के कपड़े को छोड़कर खादी का ही प्रचार करें।

९-२-'२४

मैंने मदुरा में सुना कि कुछ कपड़े के व्यापारी मिल के सूत से बुना हुआ कपड़ा खादी के नाम से चला रहे हैं। सच्ची खादी का इस्तेमाल,

श्रीमानो द्वारा किये गये गरीबो के शोषण के बदले मे अपने-आप की हुई थोडी-सी भरपाई है, जो कुल मिलाकर बडे परिमाण की भी हो सकती है। यह काम मिल के कपडे से कभी नहीं बन सकता, चाहे सब मिलें राष्ट्रीय भी क्यो न की जाय। मिलो का उद्योग राष्ट्रीय ट्रस्ट की तरह शुद्धता और कुशलता से चलाया जाय, तो भी उसके द्वारा सपत्ति का स्वय वितरण नही होगा और बडी तादाद मे श्रमजीवियो को बेकार होना पडेगा। खादी मे हरएक घर मे चरखा होने पर भी मजदूर को उजाड नहीं होना पडता और उसके श्रम से बननेवाली चीज का अपने-आप वितरण हो जाता है। इसलिए मेरे पास खादी और मिल के कपडे मे कोई तुलना ही नहीं है, वे एक-दूसरे के पास रखे ही नहीं जा सकते, क्योंकि वे एक जाति के नही हैं। खादी मे मिल के कपडे की सफाई, विभिन्नता या बाजार के हिसाब से सस्ताई कभी नही आ सकेगी। उनमे से हरएक का नाप अलग-अलग है। खादी मानवीय मूल्यो का प्रतिनिधित्व करती है, मिल का कपडा केवल धातु के मूल्य का।

पुरुष और चरखा

१८-१-'२१

मै देशभर के सब विद्यार्थियो को सुझाने का साहस करता हूँ कि वे एक वर्ष के लिए अपनी मामूली पढाई स्थगित करके अपना समय हाथ-कताई से सूत तैयार करने मे लगाये।

प्रश्न : अगर सूत बनाने की इतनी बडी जरूरत है, तो हरएक गरीब आदमी को मजदूरी देकर वह क्यो न बनवा लिया जाय?

उत्तर : बढई-काम, बुनाई आदि की तरह हाथ-कताई न कभी धन्धा था और न आज भी है। अग्रेजो के जमाने के पहले भारत मे कताई भारत की स्त्रियो के लिए एक सम्मानित और फुरसत के समय का धन्धा रहा। अब थोडे समय मे स्त्रियो मे उस कला का पुनरुज्जीवन करना मुश्किल है। लेकिन विद्यार्थियो के लिए इस राष्ट्र की पुकार का अमल करना

सरल और आसान है। कोई भी यह कहकर इस काम की अवहेलना न करे कि वह पुरुषो की या विद्यार्थियो की प्रतिष्ठा के खिलाफ है।

यह कला स्त्रियो मे ही सीमित इसलिए रही कि उनको फुरसत ज्यादा थी। वह मधुर, सगीतमय और कम श्रम की होने के कारण स्त्रियो का उस पर एकाधिकार हो गया। वह सगीत की तरह पुरुषो के लिए भी उतनी ही मधुर है। हाथ-कताई मे स्त्रियो के शील का सरक्षण, अकाल का बीमा और कीमते घटाना—ये गुण छिपे हुए हैं। उसमे स्वराज्य का रहस्य भी छिपा है। हाथ-कताई का पुनरुज्जीवन करना, विदेशी कारखाने-वालो के शैतानी प्रभाव के मोह मे पडकर हमने जो पाप किया है, उसका कम-से-कम प्रायश्चित्त है। विद्यार्थी लोग हाथ-कताई को उसका सम्मानित दर्जा दिला सकेगे। वे खादी को फैशनमन्द बनाने मे मदद करेगे। क्योकि सुयोग्य माता-पिता अपने बालको के हाथो से कते हुए सूत का कपडा पहनने से इनकार नही करेगे।

११-८-'२७

आक्षेप—हट्टे-कट्टे पुरुषो को स्त्रियो की तरह चरखे पर बैठाना बहुतेरे लोगो की नजर मे बेहूदा दिखता है। सदियो से जिस काम का सबंध स्त्रियो से जुडा है, वह हम पुरुष नही ले सकते। हम यह आग्रह नही रखते, अगर हमारा इस बात मे विश्वास हो जाता कि स्त्रियो ने तो यह काम उठा लिया है और अब पुरुषो की ज्यादा मदद की जरूरत है। विदेशी कपडे का इस्तेमाल पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियाँ ही अधिक करती हैं। इसलिए स्त्रियो के बदले पुरुषो को कातने और खादी पहनने के लिए कहना सवाल को गलत तरीके से हल करने जैसा है।

उत्तर : भारत की स्त्रियो की आज की दशा मे उन्हे समझाने का मौका सामान्यत. पुरुषो को नही मिलता। यह भी समझ लेना चाहिए कि स्त्रियाँ पुरुषो की सम्मति के बिना कोई काम नही कर सकती। मै ऐसे कई उदाहरण बता सकता हूँ कि जहाँ पुरुषो ने स्त्रियो को चरखे और खादी को अपनाने से मना किया है। तीसरे, पुरुष जो शोध और फेरबदल कर

सकते हैं, वे स्त्रियाँ नही कर सकती। अगर कताई का आंदोलन स्त्रियो तक ही सीमित रहता तो पिछले चार वर्षों मे चरखे मे जो सुधार हुए हैं और कताई का जो संगठन हुआ है, वह कदापि नही होता। चौथे, यह कहना गलत है कि कोई एक धंधा केवल पुरुष या केवल स्त्री के लिए ही अंकित है। कताई मरदाना धंधा क्यो नही? जो बात भारत की आर्थिक और आध्यात्मिक उन्नति करेगी, वह पुरुषो के लायक क्यो नही? 'स्पिनिंग जेनी' का आविष्कार करनेवाला पुरुष ही था। सूई का काम मुख्यत. स्त्रियो का ही है, लेकिन जगत् के बडे-बडे दर्जी पुरुष ही हैं। सीने की मशीन का आविष्कार पुरुष ने ही किया था। अगर हमे करोड़ो के सम्मिलित प्रयत्न से अपना कपडा तैयार कर लेना है, तो राजनीतिज्ञ, कवि, राजा, महाराजा, पंडित, गरीब, पुरुष, स्त्री, हिंदू, मुसलमान, क्रिश्चियन, पारसी, यहूदी सबको धर्म-भावना से देश के लिए आधा घंटा कातने के लिए देना होगा।

विदेशी कपड़े की होली

१-९-'२१

(इस समय विदेशी कपडा जलाने का आन्दोलन चल रहा था और स्वदेशी पर जोर दिया जा रहा था।)

एक मित्र ने आक्षेप किया—हम जिस बडे सुन्दर जगत् में हैं, उसको भूलते हुए से दीखते हैं और स्वार्थपूर्वक भारत पर ही केन्द्रित हो रहे हैं। मुझे लगता है कि यह बात हमको फिर से पुरानी बुरी स्वार्थी राष्ट्रीयता की ओर ले जायगी।

उत्तर : अनुभव बतलाता है कि बिना हिचक या अंदेशे के कीमती चीजे भी नष्ट कर देनी चाहिए, अगर वे हमारी नैतिक प्रगति को रोकती हैं। अगर प्लेग के जंतुओ का असर हो गया हो, तो क्या कीमती चीजें जला देना हमारा कर्तव्य नही होगा? अगर सारी विदेशी चीजो पर जोर दिया जाता, तब तो यह आन्दोलन जातीय, प्रादेशिक तथा दोषभरा होता।

यहाँ तो जोर सब विदेशी कपडे पर है। इस मर्यादा के कारण जमीन-आसमान का-सा अन्तर हो जाता है। मै इग्लैड की घड़ियाँ अथवा जापान की सुन्दर लाखकाम की चीजे नही रोकना चाहता, पर मुझे योरप की अच्छी-से-अच्छी शराब तो नष्ट करनी ही चाहिए। लोगो के बुरे विकार बडे भारी प्रयत्न से ही काबू मे रखे जा सकते हैं। आम जनता के दिलो मे दुर्भावना भरी है, क्योकि वे कमजोर हैं और अपनी कमजोरी हटाने के उपाय भी नहीं जानते। मै इस मनुष्य के प्रति दुर्भावना को वस्तुओ के प्रति बदल रहा हूँ। विदेशी कपडे का प्रलोभन, विदेशी राज्य, दारिद्र्य और सबसे बुरी बात—कई घरो मे निर्लज्जता लाया है। धन्धा खो जाने के कारण काठियावाड के कई बुनकर बबई मे भगी बन गये है। उनमे से बहुत से शारीरिक और नैतिक दृष्टि से नष्ट हो गये हैं। क्या हमे ऐसे कपडे का नाश नहीं करना चाहिए? भारत के लिए विदेशी कपडा शरीर मे विजातीय द्रव्य के समान है। शरीर-स्वास्थ्य के लिए जैसे विजातीत द्रव्य निकाल डालना जरूरी है, वैसे ही भारत की भलाई के लिए विदेशी कपडा नष्ट करना जरूरी है।

२७-१०-'२१

प्रश्न : क्या आप यह स्पष्ट करेगे कि जब देश मे बहुत से लोग अधनगे रहते हैं और आगामी ठढ का विचार करके काँप रहे हे, कपडे की होली करने मे आध्यात्मिक या दूसरी भलाई क्या है?

उत्तर . इसमे भलाई है। क्योकि मै जानता हूँ कि उनका अध-नगापन हमारे हिंदुस्तान के जीवन के इस मूलगामी नियम की गुनाहभरी लापरवाही के कारण है कि घर पकी रोटी की तरह हमे केवल हाथ-कते सूत का ही कपडा पहनना चाहिए। अपना छोडा हुआ विदेशी कपडा मै उनको दूँ, तो वह केवल वेदना की मुद्दत बढायेगा। पर विदेशी कपडे का आखिरी टुकडा जल जाने तक यह होली की गर्मी कायम रहेगी, तो वह सदा के लिए टिकेगी और बाद मे आनेवाला हरएक ठढकाल देश को अधिकाधिक जीवन-शक्ति देता रहेगा।

पंछिया

२९-९-'२१

जो गरीबी के कारण खादी नही खरीद सकते है, उनको मै कहूँगा कि वे केवल पछिया पहनकर सतोष मान ले। हमारी आबोहवा मे, गरमी के मौसम मे शरीर को रक्षा के लिए इससे ज्यादा कपडे की जरूरत नही है। पोशाक के तर्ज की हम फिक्र न करे। भारत ने पुरुषो के लिए सारा शरीर ढँकना कभी सस्कृति की निशानी नही मानी है। मै यह सलाह मेरी जिम्मेदारी का खयाल करके दे रहा हूँ। दूसरो के लिए उदाहरण-रूप तारीख ३१ अक्तूबर तक मै अपनी टोपी और कुरता छोड दूँगा और केवल पछिया पहनकर तथा शरीर के रक्षण के लिए आवश्यक हो तब चद्दर ओढकर काम चलाऊँगा। मै यह बदल इसलिए कर रहा हूँ कि जो बात मै खुद नही कर सकता, वह करने की दूसरो को सलाह देने मे मैने सदा सकोच किया है। और इसलिए भी कि जो विदेशी कपडा छोड देने पर नया कपडा नही ले सकते है, उनके लिए रास्ता खुला हो जाय। मै मेरे लिए यह त्याग शोक की निशानी के रूप मे भी आवश्यक मानता हूँ। मेरे प्रान्त मे नगे सिर और खुले शरीर रहना शोक का चिह्न है। मुझे अधिकाधिक प्रतीत हो रहा है कि हम शोक की दशा मे हैं, क्योकि वर्ष का अन्त नजदीक आ रहा है और अब तक हमे स्वराज्य नही मिला है। मै यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मै अपने साथी कार्यकर्ताओ से कुरता टोपी का इस्तेमाल छोड देने की अपेक्षा नही रखता हूँ, अगर वे अपने काम के लिए ऐसा करना आवश्यक न समझे।

३०-४-'२४

सन् १९२१ मे जब मौलाना महम्मद अली और मै दक्षिण के दौरे पर जा रहा था, तो वाल्टेयर स्टेशन पर मौलाना गिरफ्तार कर लिये गये। बेगम महम्मद अली, जो हमारे साथ थी, उनसे बिछुड गयी। मुझे बहुत बुरा लगा। वे अपना वियोग बहादुरी से सहन करके मद्रास की सभाओ मे

शामिल होती रही। मैं उनको मद्रास में छोड़कर मदुरा तक गया। रास्ते में हमारे डब्बे में काफी भीड़ थी, पर लोग इस घटना से बिलकुल लापरवाह से थे। प्राय बिला-अपवाद के उनकी पोशाक विदेशी शौकीन कपड़े की थी। उनमें से कुछ से मैंने बातचीत की और उनको खादी के लिए कहा, क्योंकि अलीबन्धुओं को छुड़ाने के लिए मेरे पास खादी के सिवा दूसरा कोई मार्ग खुला नहीं था। उन्होंने सिर हिलाते हुए कहा, हम बहुत गरीब हैं खादी खरीद नहीं सकते, वह बहुत महँगी है। इस कथन का तथ्यांश मैं समझ गया। मेरे अंग पर कुरता, टोपी और पूरी धोती थी। इन लोगों का कहना तो अर्धसत्य ही था, पर लाचारी से नंगे रहनेवाले लाखों लोग, जो चार इंच चौड़ी और प्राय. उतनी ही फुट लम्बी लँगोटी पहनते हैं, अपने खुले शरीर से नंगा सत्य बता रहे थे। मैं उनको इसके सिवाय दूसरा ठीक उत्तर क्या दे सकता था कि मैं सभ्यता सँभालते हुए इंच-इंच कपड़ा त्याग दूँ और इस प्रकार अपने को अध-नंगों के ज्यादा-से-ज्यादा नजदीक लाऊँ। यह मैंने मदुरा सभा के दूसरे दिन ही कर डाला।

यहाँ लँगोटी की सभ्यता का सवाल नहीं है। मेरे लिए पछिया अपनाना अत्यन्त आवश्यक बात थी। पर जहाँ तक लँगोटी का मतलब सादापन है, वह हिन्दी सभ्यता का प्रतिनिधित्व करे।

खुला बनाम संरक्षित व्यापार

१५-७-'०४

मैं कट्टर संरक्षित व्यापार को माननेवाला हूँ। खुला व्यापार चाहे इंग्लैंड के लिए भला हो, जो अपनी बनायी चीजें दूसरे असहाय लोगों पर लाद सकता है और अपनी आवश्यकताएँ बाहर की अति सस्ती चीजों से पूरी करने की इच्छा रखता है। पर खुले व्यापार ने भारत के किसान का नाश कर डाला है, क्योंकि उसने उसके गृह-उद्योगों को प्राय मिटा डाला है। इसके अलावा कोई भी नया धन्धा संरक्षण के बिना विदेशी व्यापार का मुकाबला नहीं कर सकता।

नैतिक अर्थशास्त्र

१३-१०-'२१

मुझे यह कबूल करना चाहिए कि मै अर्थ और नीति मे बडा या कुछ भी भेद नही करता हूँ। जो अर्थशास्त्र व्यक्ति की या राष्ट्र की नैतिक भलाई पर आघात करता है, वह अनैतिक अतः पापमय है। जब मै जानता हूँ कि अगर मै पडोस के कतवैयो और बुनकरो द्वारा बुना हुआ कपडा पहनूँ, तो मुझे कपडा मिलने के साथ-साथ मै उनको भी अन्न-वस्त्र दे सकता हूँ तो मेरे लिए विदेशी सुन्दर कपडा पहनना पाप है। यह जानकर कि एक बार धन्धा छूट जाने के कारण मेरे पडोसी फिर से आसानी से चरखा नही लेगे, खुद मुझे वह चलाना चाहिए और इस रीति से उसका प्रचार करना चाहिए। मेरा विदेशी कपडा जलाने मे मै अपनी शर्म जला रहा हूँ। मेरे विनय ने मुझे यह घोषित करने से रोका है कि असहयोग, अहिसा और स्वदेशी का सन्देश सारे जगत् के लिए है। जब वह सन्देश जहाँ दिया जा रहा है, वही फल नही देता है, तो बाहर विफल होगा।

२७-१०-'२१

प्रश्न : क्या यह अर्थशास्त्र का नियम गलत है कि मनुष्य को अपनी चीज सबसे अच्छे और सस्ते बाजार मे खरीदना चाहिए?

उत्तर : आधुनिक अर्थशास्त्रियो ने जो कुछ अत्यन्त निर्दय सूत्र लिखे है, उनमे से यह एक है। हम अपने मानवीय सम्बन्ध सदा ऐसे स्वार्थी विचारो से चलाते भी नही। अंग्रेजी खदान का मालिक अंग्रेज मजदूर को ज्यादा मजदूरी देता है, जब कि दूसरे देश के मजदूर वहाँ सस्ते मिल सकते हैं। यह मेरे लिए पाप होगा कि मै ज्यादा वेतनवाले मेरे ईमानदार नौकर को इसलिए बरखास्त कर दूँ कि उतना ही ईमानदार दूसरा अधिक कुशल नौकर सस्ता मिल सकता है। जो अर्थशास्त्र नैतिक और भावनात्मक विचारो को छोड देता है, वह उन मोम के पुतलो की तरह है, जो दिखने मे जिन्दे दिखते हैं, पर जिनमे जान नही रहती।

२६-१०-'२४

वह अर्थशास्त्र गलत है, जो नैतिक मूल्यों को छोड देता है या उनकी लापरवाही करता है। अहिंसा को अर्थशास्त्र के क्षेत्र में लागू करने के मानी ये हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की व्यवस्था में नैतिक मूल्यों को दाखिल करने का विचार करना ही चाहिए। मै कबूल करता हूँ कि मेरी आकांक्षा इससे बिलकुल कम नही है कि भारत के प्रयत्न से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध नैतिक आधार पर रखे जायें। मै यह बात मानने को इनकार करता हूँ कि मनुष्य-स्वभाव सदा नीचे की ओर ही झुकता है। हाथ-कताई और खादी के द्वारा विदेशी कपडे के बहिष्कार की सफलता मे केवल अव्वल दर्जे का राजनीतिक परिणाम लाना ही नहीं है, बल्कि भारत के गरीब-से-गरीब स्त्री-पुरुष को अपनी शक्ति का भान कराना और भारत की स्वातन्त्र्य की लडाई मे हिस्सेदार बनाना है।

१७-९-'२७

मेरा दावा है कि चरखे और खादी का सदेश बडा आध्यात्मिक सदेश है और चूँकि वह इस देश के लिए आध्यात्मिक सदेश है, उसमे महान् आर्थिक और राजनीतिक परिणाम भी भरे पडे है। चूँकि धर्म को किसी काम का होने के लिए उसमे अर्थ की शक्ति होनी चाहिए। अर्थ मे भी किसी काम के लायक होने के लिए धर्म और अध्यात्म होना चाहिए। इसलिए इस धर्ममिश्रित अर्थशास्त्र की योजना मे शोषक के लिए स्थान नही है।

२७-१०-'२७

आज का जागतिक व्यापार न्याय्य विचारो पर आधारित नहीं है। उसका सूत्र है—'Buyer beware' खरीददार सावधान रहे। खादी के अर्थशास्त्र का सूत्र है—'सबके लिए न्याय।' इसलिए वह आज की आत्मनाशी स्पर्धा-पद्धति को नही मानता।

शैतान का जाल

६-८-२५

प्रश्न : क्या भारत चाहे, तो भी अपने को अलग रखकर यंत्रोद्योगो के पंजे से बच सकता है ?

उत्तर : इस खादीप्रेमी भाई की बहस शैतान की उस पुरानी युक्ति की तरह है। वह सदा आधे रास्ते तक हमारे साथ जाकर फिर एकाएक उलटकर इशारा करता है कि अब आगे जाने मे अर्थ नही है और आगे की प्रगति की अशक्यता बताता है। वह सद्‌गुणो की तारीफ करता है, पर साथ ही कहता है कि वे हासिल करना मनुष्य के भाग्य मे नहीं हैं। जो मुश्किल यह मित्र महसूस करते हैं, वह हरएक सुधारक के सामने हरदम रहती हैं। क्या समाज मे असत्य और दंभ घर नही कर बैठे हैं ? फिर भी जो सत्य की अंतिम विजय मे विश्वास रखते हैं, वे यश की पूरी आशा रखकर उसमे डटे रहते हैं। अलबत्ता यंत्रीकरण प्रकृति के वेग की तरह है, लेकिन मनुष्य प्रकृति का नियंत्रण कर सकता है और उसके वेगो को जीत भी सकता है। यंत्रीकरण मे अल्पसंख्यो द्वारा बहुसंख्यो का नियंत्रण करने के सिवा और अधिक क्या है। उसमे न कोई आकर्षण है और न अनिवार्यता। अगर बहुमत इन अल्प संख्यो की बात को न करना ठान ले, तो इस अल्पमत की बुराई करने की शक्ति नष्ट हो जाती है। मानवीय स्वभाव मे श्रद्धा रखना अच्छी बात है। हम आशा रखें कि योरप भी इस अनैतिक यंत्रीकरण से छुटकारा पाने का रास्ता ढूँढ निकालेगा। वह शायद फिर से बिल्कुल पुराने सादेपन पर न आये, लेकिन ऐसी पुनर्रचना जरूर होगी कि जिसमे ग्राम-जीवन का प्रभुत्व रहे और भौतिक तथा पशुबल आध्यात्मिक बल के अधीन। इसके अलावा हिन्दुस्तान मे जो अवस्था है, वह योरप मे नही है। इसलिए यह नही मान सकते कि जो बात योरप को लागू होती है, वह भारत को भी लागू हो।

प्रत्येक राष्ट्र की अपनी-अपनी खासियत और व्यक्तित्व रहता है। मेरा दावा है कि योरप की तरह भारत में यंत्रीकरण करना असंभव है। भारत जगत् के उन थोड़े-से राष्ट्रों में से एक है कि जिसने खुद बेदाग रहते हुए कई अन्य सभ्यताओं को विलीन होते देखा है। भारत अपनी कई पुरानी संस्थाएँ कायम रख सका है, हालाँकि उनमें वहम और गलतियाँ आ घुसी हैं। परन्तु साथ ही अब तक वह अपनी गलतियों और वहमों को निकाल फेंकने की अपनी अंगभूत शक्ति बताता भी रहा है।

चरखा क्यों ?

६-२-'२१

'सर्वेंट ऑफ इंडिया' ने कताई का मजाक उड़ाया है। कताई स्त्रियों के शील का संरक्षण अवश्य करती है, क्योंकि जो स्त्रियाँ आज सड़कों पर काम करती हैं, जिनकी कि इज्जत का खतरा रहता है, उनको वह अपना संरक्षण करने के लिए समर्थ बनाती है। मुझे ऐसा कोई दूसरा धन्धा नहीं दीखता, जो लाखों स्त्रियाँ कर सकें। इस मजाक करनेवाले लेखक को मैं जानकारी देता हूँ कि कई स्त्रियाँ वापस अपने पवित्र घरों में आकर कातने लगी हैं और कहती हैं कि यही एक ऐसा धंधा है कि जिसमें इतनी अधिक बरकत है। मेरा दावा है कि उसमें एक संगीत-वाद्य का भी गुण है, क्योंकि भूखी और नंगी स्त्री पियानो के साथ नाचने से इनकार कर देगी, पर मैंने स्त्रियों को आनन्द और उल्लास से चरखा चलाते देखा है, क्योंकि वे जानती हैं कि वे उस देहाती औजार से अपना अन्न-वस्त्र प्राप्त कर सकती हैं। चरखा हिन्दुस्तान के लिए कामधेनु है।

२०-४-'२१

हमें यह समझ लेना है कि भारत की प्राणशक्ति नष्ट होने का तथा बार-बार अकाल पड़ने का कारण फौजी प्रहार उतना नहीं है कि जितना यह कताई का पूरक धंधा नष्ट होना है।

२९-६-'२१

एक लेखक ने सुझाया है कि कताई-काम इस प्रकार चलाया जाय कि कातनेवाले उकता न जायें। उकताने का भय नही है, क्योंकि उनके लिए वह निर्वाह का जरिया है और ऐसा काम है कि जिसके वे पहले से ही आदी है। वह इसलिए बद हुआ कि उनके सूत की मॉग नही रही। अगर शहरवालो ने यह काम लहर या फैशन के तौर पर अपनाया होगा, तो उनका उकता जाना सभव है। अगर पाठशालाओ मे वह शास्त्र शुद्ध पद्धति से ऐसे अध्यापको द्वारा चलाया जाय कि जो भारत के साढे सात लाख देहातो मे शिक्षा देने के लिए चरखे को उत्तम साधन मानते है, तो विद्यार्थियो के उकताने का भय नही है, इतना ही नहीं, बल्कि इस आशा के लिए बहुत कुछ स्थान है कि हमारा देश अधिक कर बैठाये बिना तथा शराब जैसे अनैतिक जरिये से मिले हुए पैसे का आधार लिये बिना व्यापक शिक्षा के खर्च का सवाल हल कर सके। विदेश से आनेवाले पूरे कपडे की भर्ती करने के लिए हमारे यहॉ पर्याप्त बुनकर और करघे हैं। उनमे से लाखो अभी जापान और मॅनचेस्टर का महीन सूत बुनने मे लगे हुए है। हमे उनका उपयोग हाथ-सूत बुनने में कर लेना चाहिए। उसके लिए देश को महीन और निकम्मी मसलिन की रुचि मे दुरुस्ती करनी होगी। जिस मसलिन से अग ढका नही जाता, उलटे दीखता है, उसे बुनने मे मुझे कोई कला नही दीखती। हमारे कला के खयालात बदलने चाहिए। इसलिए हमे एक ओर शोकीन लोगो को मोटे कपडे मे सतोप मानने के लिए कहना होगा और दूसरी ओर कातने-वालो को महीन और ज्यादा समान सूत कातना सिखाना होगा।

११-८-'२१

पहले की तरह चरखा विधवा का प्यारा साथी होना चाहिए। अगर भारत की सब खुशहाल स्त्रियॉ नियत तादाद मे रोजाना सूत काते, तो वे सूत सस्ता कर सकेंगी और अपेक्षाकृत बहुत जल्दी ही सूत सुधार सकेंगी। इस प्रकार भारत का नैतिक और आर्थिक बचाव मुख्यतः स्त्रियो के हाथ

है। भारत का भविष्य उनकी गोद में है, क्योंकि भावी पीढ़ी का संगोपन उनके हाथ है। वे भारत के बच्चों को सादे, ईश्वर का भय खानेवाले और शूर स्त्री-पुरुष बना सकती हैं, अथवा ऐसे कमजोर भी बना सकती हैं कि जो जीवन के तूफानों का मुकाबला करने में अयोग्य साबित हो तथा विदेशी शौकीनी चीजों के आदी कि जिन्हें वे बाद के जीवन में मुश्किल से छोड़ सकें।

२१-१०-'२१

प्रश्न अगर मुझे अन्न के लिए काम करने की जरूरत नहीं है, तो फिर मैं क्यों कातूँ?

उत्तर क्योंकि जो मेरी चीज नहीं है वह मैं खा रहा हूँ। मैं अपने देशबंधुओं के शोषण पर जी रहा हूँ। आपकी जेब में आनेवाले प्रत्येक पैसे का मूल शोधेंगे, तो आप मेरे कथन की सच्चाई समझ लेंगे।

३-११-२१

कदाचित् बहुत थोड़े कार्यकर्ताओं के खयाल में यह आया होगा कि हाथ-कताई की प्रगति के मानी, जगत ने आज तक नहीं देखा ऐसा सबसे बड़ा खुद होकर किया हुआ सहकार है, अर्थात् उसमें बड़े व्यापक क्षेत्र में बिखरे हुए और अपनी रोजमर्रा की रोटी के लिए काम करनेवाले करोड़ों मनुष्यों का सहयोग है। करोड़ों के समझ-बूझकर किये हुए सहयोग के बिना व्यापक हाथ कताई असंभव है। चरखे की फिर से स्थापना करने के लिए कुशल प्रयत्न, ईमानदारी और बड़े पैमाने पर सहकार की आवश्यकता है। अगर भारत इस सहकार का संपादन कर सकता है, तो कौन इनकार करेगा कि देश इसी एक बात से स्वराज्य मिला लेगा।

१२-६-'२४

एक मित्र लिखते हैं—मैं देखता हूँ कि खादी के गुण के बारे में मतभेद नहीं है, पर मुश्किल तब खड़ी होती है कि जब खादी-प्रसार के आन्दोलन का संबंध आपके इस कथन से जोड़ा जाता है कि वह सविनय कानून-भंग की तैयारी के लिए आवश्यक है। अगर वह अलग रहे

और असहयोग आन्दोलन की एक कलम न रहे, तो उसका समर्थन अधिक होगा।

मैंने कई बार समझाने की कोशिश की है कि सविनय प्रतिकार करनेवालों को छोड़कर दूसरा कोई भी खादी के संबंध से सविनय कानून-भंग करने का विचार न करे। सविनय कानून-भंग का खादी से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। खादी के जन्म के पहले भी मैंने कई सविनय कानून-भंग की लड़ाइयों का नेतृत्व किया है। अफ्रीका की तथा भारत की ऐसी कई लड़ाइयों में खादी का संबंध नहीं आया। पर वे स्वराज्य स्थापित करने के लिए नहीं थीं। स्वराज्य के लिए किये जानेवाले सविनय कानून-भंग के लिए मैंने खादी को दो कारणों से अपरिहार्य माना है। एक, हमारे देश में खादी व्यापक हुए बिना मैं स्वराज्य असंभव मानता हूँ। दूसरे, वह आम जनता में अनुशासन लाने के लिए बहुत बड़ी सहायक है कि जिसके बिना व्यापक सविनय कानून-भंग अशक्य है। ऐसे कुछ अंग्रेज हैं कि जो खादी का इस्तेमाल करते हैं, पर वे इस बात से इनकार करेंगे कि उनकी सविनय कानून-भंग से या असहकार से कुछ भी सहानुभूति है।

२६-६-'२४

चरखे के दो पहलू हैं। एक रौद्र और दूसरा भद्र। उसके रौद्र पहलू से हम अपने स्वतंत्र राष्ट्रीय जीवन के लिए जिस विदेशी कपड़े के बहिष्कार की जरूरत है, उसे पूरा कर सकते हैं। उसका कल्याण-स्वरूप इसमें है कि वह देहाती को नया जीवन और आशा देता है, करोड़ों भूखों के मुँह में रोटी दे सकता है, हमें देहातियों के संपर्क में ला सकता है और उनसे हमारी आत्मीयता बढ़ा सकता है।

२१-८-'२४

आक्षेप : किसान को कोई फुरसत नहीं है। जो कुछ फुरसत है, वह उसे चाहिए। अगर वह चार महीने खाली रहता है, तो इसका कारण यह है कि उसने आठ महीने हद से ज्यादा काम कर लिया है। अगर उसे

चार महीने चरखे पर काम करना पड़े, तो उसकी बाकी आठ महीने काम करने की शक्ति साल-ब-साल घटती जायगी।

उत्तर : ऐसा दीखता है कि आक्षेपक को भारत के किसान का अनुभव कम है, और न वह समझ सका है कि चरखा कैसे चलेगा और सचमुच में आज कैसा चल रहा है। चरखा चलाने में कठोर कष्ट नहीं करना पड़ता। कड़े काम के बाद वह एक आनन्ददायक बदल और खेल-सा है। वे बीच-बीच में थोड़ा-थोड़ा समय कातेंगे। अगर श्रम करनेवालों में से बहुसंख्य लोग औसत रोजाना आध घंटा समय देंगे, तो वे अपने और दूसरों के लिए पूरे इतना सूत कात लेंगे।

कताई का दावा यह है—

(१) जिन्हें फुरसत है और कुछ पैसों की आवश्यकता है, उनको वह एक बहुत सहल धंधा देती है।

(२) हजारों कताई जानते हैं।

(३) वह आसानी से सीखी जा सकती है।

(४) पूँजी नाममात्र की लगती है।

(५) चरखा आसानी से और सस्ता बन सकता है। हममें से बहुतेरे नहीं जानते कि एक खपरे के टुकड़े और बाँस की खपच्ची से भी कताई हो सकती है।

(६) लोगों को उससे घृणा नहीं है। अकाल या कम पाक में वह तुरन्त राहत दे सकती है।

(७) विदेशी कपड़ा खरीदने में जो सम्पत्ति देश के बाहर बही जा रही है, उसे केवल वही रोक सकती है।

(८) इससे बचनेवाले करोड़ों रुपये गरीबों में वह अपने-आप बाँट देती है।

(९) उसकी थोड़ी-सी भी सफलता लोगों को उतना लाभ तुरन्त दे देती है।

(१०) लोगों में सहयोग लाने में वह उत्तम शक्तिशाली साधन है।

४-९-'२४

हम इतने कमजोर हैं कि हम कम-से-कम काम करना चाहते हैं। वह कम-से-कम काम क्या हो सकता है ?

मै चरखे को छोडकर और किसी बात की कल्पना नही कर सकता। काम ऐसा चाहिए कि जो आसान हो और सबसे हो सके। विद्वान् और अपढ, भले और बुरे, जवान और बूढे, स्त्री और पुरुष, लडके और लडकियाँ, मजबूत और कमजोर, चाहे जिस धर्म के हो, सब कर सके। असरकारक होने के लिए वह सबके लिए एक ही हो। चरखा यह सब शर्तें पूरी करता है। इसलिए जो रोजाना आधा घटा कातते हैं, वे जनता की उत्तम सेवा करते हैं। चरखा हमारे लिए सार्वजनिक मिलापी जीवन की नींव है। उसके बिना किसी स्थायी सार्वजनिक जीवन की रचना करना असभव है। वही एक ऐसी स्पष्ट कडी है कि जो हमे देश के छोटे-से-छोटे व्यक्ति से अटूट बधन से जोडती है और उनमे आशा पैदा करती है। चरखा केवल छोटे-बडो को जोडने की ही कडी न रहेगी, बल्कि वह भिन्न-भिन्न राजनीतिक दलो के बीच की भी कडी होगी। वह सब दलो के लिए एक सामान्य वस्तु होगी, चाहे वे अन्य सब बातो मे मतभेद रखे, पर कम-से-कम इसमे सहमत हो सकते हैं।

२६-१२-'२४

कुछ आक्षेपक कहते है, चरखा उत्तेजक नहीं है, वह स्त्रियो का काम है, उसके मानी हैं कि मध्ययुग मे जाना। वह शास्त्रीय ज्ञान के, जिसका कि यत्र प्रतीक है, प्रभावशाली दौड के खिलाफ व्यर्थ प्रयास है।

मेरी राय मे भारत की आवश्यकता उत्तेजन न होकर ठोस काम है। करोडो के लिए ठोस काम ही उत्तेजन है और साथ ही पुष्टिदायक भी।

८-१-'२५

एक अमेरिकन लेखक लिखते हैं कि भविष्य उन राष्ट्रो के हाथ होगा जो शरीर-श्रम मे विश्वास रखते हैं। कुछ राष्ट्र नित-नये बढनेवाले निर्जीव यन्त्रो की पूजा से उकता रहे हैं। हम अपने शरीररूपी जिन्दे

यत्र पर जग चढने देकर उसका नाश कर रहे हैं और उसका स्थान निर्जीव यत्र को दे रहे हैं। यह एक ईश्वर का नियम है कि शरीर से पूरा काम लेकर उसका पूरा उपयोग करना चाहिए। चरखा शरीर-यत्र का अर्थात् शरीर-श्रम का शुभ चिह्न है।

एक मित्र कहते हैं कि मै लोगो के पोशाक की पसदगी मे दस्तन्दाजी कर रहा हूँ। यह बिलकुल सही है। हरएक राष्ट्रसेवक का कर्तव्य है कि वह आवश्यक हो, तब वैसा करे। मिसाल के लिए, अगर हमारा देश पतलून पहनना ठान ले, तो मै उसके खिलाफ आवाज उठाऊँगा। वह हमारी आबोहवा से बिल्कुल बेमेल है। हरएक हिन्दुस्तानी का कर्तव्य है कि वह विदेशी कपडे के इस्तेमाल के खिलाफ आवाज उठाये। यह विरोध वास्तव मे कपडा विदेशी होने के कारण नही है, पर उसके पीछे-पीछे जो दरिद्रता आती है, उस कारण से है।

२८-५-'२५

आक्षेप : कताई श्रम और समय की बरबादी है। उसमे श्रम-विभाग के सिद्धान्त का खयाल नही किया गया है।

उत्तर . क्या मै आपको दिनभर कातने के लिए कहता हूँ? क्या मै उसे मुख्य धधे के रूप मे लेने के लिए कहता हूँ? तब फिर इसमे श्रम-विभाग के सिद्धान्त का भग कहाँ है? क्या अपने देशवासियो के लिए भ्रातृभावना रखना बरबादी है? कातने से हम उनके प्रति हमारा प्रेम साबित करते हैं। अगर हम काते, तो हम उनको आलस्य छोडने के लिए प्रेरणा देते है। "

प्रश्न . क्या आप रेलगाडी की जगह बैलगाडी लाना चाहते है? अगर नही, तो फिर चरखे से मिलो को हटाने की बात कैसे?

उत्तर : मै रेल की जगह बैलगाडी नही लाना चाहता। मै चाहूँ, तो भी वैसा कर नहीं सकूँगा। तीस करोड बैलगाडियाँ स्थल के अन्तर का नाश नही कर सकतीं। पर चरखे मिलो का स्थान ले सकते है। रेल गति का प्रश्न हल करती है। मिलो के मामले मे उत्पत्ति का प्रश्न है, जिसमे

चरखा कामयाब हो सकता है, अगर काफी काम करनेवाले हो, जैसे कि भारत मे हैं।

मै ऐसे कई लोगो को जानता हूँ कि जो कातते समय ईश्वर का ध्यान करते हैं। जो यज्ञरूप कातते है, वे कातने की क्रिया को उदात्त और अच्छी बातो से सपन्न करते है। ढाके मे मेरे मौनवार के दिन कुछ गवैये मुझे सितार सुनाने आये। सोमवार मेरे लिए केवल मौन का ही दिन नही है, उस रोज मै पत्र-सपादन का भी काम करता हूँ। मै उनको निराश नहीं करना चाहता था, इसलिए मैने लिख दिया कि सितार बजाते समय मै कातता रहूँगा। उन्होने खुशी से मजूर कर लिया। नतीजा यह निकला कि मैं उस समय मे मामूली से ज्यादा अच्छा कात सका। सगीत के कारण मेरा हाथ ज्यादा स्थिर रहा। मै सदा बिना आवाज के चरखे का उपयोग करता हूँ, इसलिए वह सगीत के आनन्द मे बाधक नही हुआ। उलटे उसने सगीत सुनने का आनन्द बढाया और सगीत ने कातने का, और उनमे से किसीने भी मेरे ईश्वर के ध्यान मे दखल नही दी। हाथ, कान और हृदय पूरे मेल से काम करते रहे। जिन्हे विश्वास न हो, वे खुद अनुभव ले देखे।

२०-७-'२५

आक्षेप : कताई के बदले खेती पर जोर देना चाहिए।

उत्तर : भारत मे खेती मरने की दशा मे नही है। उसमे सुधार की आवश्यकता है, पर खेती का सुधार राष्ट्रीय सरकार के द्वारा ही शक्य है। खेती के सुधार का व्यक्तिगत प्रयत्न आम जनता पर असर नही करेगा।

२०-८-'२५

चरखा स्वराज्य ला सकता है, यह प्रस्ताव अगर ठीक न दिखे, तो हम दूसरी रीति से कहे—बिना चरखे के और तदगभूत सब बातो के स्वराज्य नही। इसलिए समझदार अर्थशास्त्री, यह जानकर कि बाकी सब बाते उसके पीछे आ जायँगी, अपना ध्यान केवल चरखे पर ही केन्द्रित करेगा। सपत्ति का बाहर ढोया जाना इतनी बडी बात नही है कि

जितना दारिद्र्य है और दारिद्र्य भी इतनी बडी बात नहीं है कि जितना आलस्य है, जो कि पहले हम पर लादा गया था और अब उसने आदत का रूप धारण कर लिया है। पैसे का बहाव बन्द हो जाय, दारिद्र्य तो केवल ऊपर का चिह्न है, लेकिन आलस्य सब बुराई का मूल और महाकारण है। अगर वह मूल नष्ट किया जा सके, तो बहुत सी बुराइयाँ बिना अधिक प्रयास के दुरुस्त हो सकती हैं। भूखे राष्ट्र में कोई आशा या उत्साह नहीं रहता। सब सुधारों के बारे में वह यही कहता है कि इससे क्या लाभ? करोडों की इस निराशा में आशा केवल जीवनदायी चरखे से ही आ सकती है।

५-११-'२७

आक्षेप . चरखे से राष्ट्र में मृत्यु के समान समानता आयेगी।

उत्तर सच तो यह है कि चरखे का उद्देश्य भारत के करोडों लोगों को सबके हितों की मूलभूत और जिन्दी एकता महसूस कराना है। कोई भी दो मनुष्य, एक साथ जनमे हुए भी, बिलकुल समान नहीं होते, तथापि सारी मानव-जाति में बहुत कुछ समानता है ही। आकार की असमानता के अन्दर सबको व्याप्त करनेवाला जीव समान है। विभिन्नता में एकता है। भिन्न-भिन्न धंधों के पीछे भी धंधे रूपी समानता तो है ही। क्या मानव-जाति के बहुसंख्यों के लिए खेती समान नहीं है? इसी प्रकार थोडे समय पहले ही कताई सब दूर समान थी। राजा और किसान दोनों के लिए अन्न और वस्त्र चाहिए। दोनों को ही अपनी प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए श्रम करना चाहिए, राजा चाहे वह प्रतीक या यज्ञ के रूप में करे, अगर उसे खुद से और अपने लोगों से ईमानदारी से पेश आना है, तो उसके लिए वह अनिवार्य है। चरखे के इर्दगिर्द, अर्थात् जिन लोगों ने अपना आलस्य हटाकर सहयोग का मूल्य समझ लिया है उनके बीच में, राष्ट्रीय सेवक मलेरिया प्रतिबंधक उपाय, सफाई गाँव के झगडे आपस में निपटाना, गौरक्षण, नसल का सुधार आदि सैकडों हितकर प्रवृत्तियाँ चलायेगा। जहाँ जहाँ चरखा अच्छी तरह

प्रतिष्ठित हो गया है, वहाँ भलाई की ऐसी कई प्रवृत्तियाँ देहातियो और कार्यकर्ताओ की शक्ति के अनुसार चल भी रही ह।

२७-५-'२६

प्रश्न : क्या कताई कला है? वह बच्चो को उकताने लायक एक-सी क्रिया नही है क्या?

उत्तर : अब तक मिला हुआ सब सबूत बताता है कि कताई एक मधुर कला है और उसकी प्रक्रिया बहुत आनन्ददायक है। भिन्न-भिन्न नम्बर का सूत कातने के लिए केवल यान्त्रिक रीति से हाथ चलाना काफी नहीं है। जो कला की दृष्टि से कातते हैं, वे उस आनन्द को जानते हैं, जो वे आवश्यक नम्बर का सूत निकालने मे अँगुलियो और आँखो के अचूक मार्ग-दर्शन से मिलाते हें। कला मे शान्ति देने का गुण होना चाहिए। कताई अशान्त मन को शान्ति देती है।

आक्षेप : कताई के जरिये आध्यात्मिक लाभ होता है कहना कितना हास्यास्पद है?

उत्तर : मै अपने आध्यात्मिक विकास के लिए चरखे को एक साधन मानता हूँ। पर दूसरो को तो मै उसकी सिफारिश स्वराज्य मिलाने और देश की आर्थिक दशा सुधारने के लिए एक शक्तिशाली शस्त्र के रूप में करता हूँ। जो ब्रह्मचर्य की इच्छा रखते हे, उनको मै चरखा बताता हूँ। यह तुच्छ समझने लायक बात नही है, क्योकि इसमे अनुभव बोल रहा है। जो अपने विकारो का दमन करना चाहता है, उसे शान्त होना चाहिए, उसके अन्दर का सारा क्षोभ मिटना चाहिये। चरखे की गति इतनी शान्त और सौम्य है, कि जिन्होने उसे पूरी श्रद्धा से चलाया है, उनके विकार शान्त हुए पाये गये हैं। उसे चलाकर मै अपना क्रोध शान्त कर सका हूँ। मेरे कहने का यह मतलब नही है कि कातना बद कर देने पर भी बाकी सारे दिन शाति बनी रहेगी। क्योकि मनुष्य के विकार हवा से भी अधिक वेगवान् रहते हे। उनका पूरा दमन करने के लिए अटूट धीरज की जरूरत है। मेरा दावा इतना ही है कि निश्चलता लाने मे चरखा एक

शक्तिशाली साधन है। कोर्ट पूछेगा, फिर माला क्यों नही? मेरा उत्तर यह है कि माला मे वह गुण है, पर चरखे मे उससे दूसरे गुण अधिक हैं। मैंने उसे फल-मूल खाकर हिमालय की गुफा मे रहनेवाले किसी एकान्त-वासी के लिए नही बतलाया है। मैने वह मेरे जैसे ही उन अनेक लोगो के सामने रखा है कि जो इस कर्म-भूमि मे रहते हुए देश की सेवा करना चाहते हैं, साथ ही ब्रह्मचर्य का पालन भी।

१०-६-'२६

प्रश्न : क्या कताई मे सहयोग है? क्या वह लोगो को केवल वैयक्तिक दृष्टि रखनेवाले स्वकेन्द्रित नही बनाती और एक को दूसरे से अलग नही रखती?

उत्तर. बिलकुल संक्षिप्त और निश्चित उत्तर यही दे सकता हूँ कि किसी सुसगठित खादी-केन्द्र मे जाइये, देखिये और परीक्षा कर लीजिये। वहाँ आप पायेंगे कि सहयोग के बिना कताई सफल नही हो सकती। प्रारंभ से ही सहकार चाहिए। जैसे कताई लोगो को स्वावलम्बी बनाती है, वैसे ही वह हर कदम पर आपस मे अवलंबन रखने की जरूरत महसूस कराती है। मामूली कत्तिन को अपनी आवश्यकता से अधिक सूत के लिए तैयार बाजार की जरूरत है। वह अपना सूत बुन नही सकती। कई लोगो के सहयोग के बिना उसको अपने सूत के लिए बाजार नही मिल सकता। केन्द्र चलानेवालो को कत्तिनो के लिए कपास का सग्रह रखना पड़ता है। ओटनेवाले उसे ओटते है, कदाचित् केन्द्र मे ही फिर वह धुननेवालो को दिया जाता है। वे उसकी पूनियाँ बनाकर ला देते है। तब वे कत्तिनो को दी जाती है जो हर हफ्ते अपना सूत ला देती है और बदले मे नयी पूनियाँ और मजदूरी ले जाती है। यह सूत बुनने के लिए बुनकरों को दिया जाता है और खादी के रूप मे केंद्र मे वापस आता है। वह खादी पहननेवालो को अर्थात् आम जनता को बेचनी पड़ती है। इस प्रकार जाति, रंग और धर्म का भेद न करते हुए बड़ी तादाद मे सब लोगो से केन्द्रवालो को हरदम जिन्दा मानव-संपर्क रखना

पड़ता है। केन्द्र चलानेवालों को मुनाफा नहीं करना पड़ता। उनको अत्यन्त गरजू लोगों की चिन्ता के सिवा दूसरी कोई चिन्ता नहीं है। उपयोगी होने के लिए केन्द्र को सब तरह से शुद्ध रहना चाहिए। उसके और इस बड़े संगठन के अन्य अंगों का संबंध केवल आध्यात्मिक या नैतिक है। अतः खादी-केंद्र एक ऐसी सहकार-समिति है कि जिसके सदस्य ओटनेवाले, कातनेवाले, धुननेवाले, बुननेवाले और खरीदनेवाले हैं, जो सब सामान्य संबंध परस्पर सद्भावना से और सेवा से आपस में जुड़े हुए हैं।

१७-६-'२६

आक्षेप : अगर हरएक व्यक्ति कातेगा, तो जिन गरीब लोगों का गुजर-बसर कातने पर अवलंबित है, उनकी हानि होगी।

उत्तर : जिनको यज्ञरूप कातने के लिए कहा जाता है, वे खादी का वातावरण बढ़ाते हैं, कातने का धंधा आसान बनाते हैं, तथा छोटे-मोटे शोध और सुधार करके उसे ज्यादा फायदेमंद बनाते हैं। यज्ञार्थ कताई से पेशेवर कातनेवालों की मजदूरी में कोई हानि नहीं हो सकती।

३०-९-'२६

एक महाशय ने बहुत से ग्रामोद्योगों की फेहरिस्त बनाकर लिखा कि केवल खादी पर जोर देने की अपेक्षा उन सब उद्योगों को चलाने की कोशिश होनी चाहिए।

उत्तर : गिनने के लिए सारे उद्योगों की फेहरिस्त सुन्दर दीखती है, पर वह तुरन्त हल करने की समस्या को हल नहीं कर सकती। आम जनता को, वैसे ही ग्राम-सेवक को भी यह उद्योगों का अजायबघर केवल घोटाले में ही डालेगा। उनके लिए एक व्यापक उद्योग चाहिए। एक-एक उद्योग को बाद करने पर हमको इसी अटल निर्णय पर आना होगा कि करोड़ों के लिए व्यापक उद्योग केवल कताई ही है, दूसरा कोई नहीं। इसके मानी यह नहीं हैं कि दूसरे उद्योग कुछ काम के नहीं हैं या निरुपयोगी हैं। वास्तव में व्यक्तिगत दृष्टि से दूसरा कोई भी धंधा कताई की

अपेक्षा ज्यादा कमाई का होगा, जैसे कि घड़ी बनाना अच्छी कमाई का और आकर्षक उद्योग है। लेकिन उसमें कितने लोग लग सकते हैं? करोड़ों देहातियों के लिए वह किस काम का? अगर एक बार देहाती लोग घर की पुनर्रचना कर सकें, उनके बुजुर्ग रहते थे वैसे वे रहने लगें, अपनी फुरसत के समय का अच्छा उपयोग करने लगें, तो फिर बाकी सब दूसरे सारे उद्योग अपने-आप जिन्दे हो जायेंगे। जब लोगों की पसंदगी के लिए हम उनके सामने बिना वर्गीकरण की हुई उद्योगों की फेहरिस्त रख देते हैं, तो हम प्रगति नहीं कर सकते, जब कि हम जानते हैं कि केवल एक ही उद्योग सबके सामने रखने लायक है। जो कोई दूसरा उद्योग चला सकता है या चलाना चाहता है, वह भले ही उसे चलाये, लेकिन राष्ट्रीय साधन-सामग्री इसी एक हाथ-कताई के उद्योग पर केन्द्रित होनी चाहिए कि जिसे सब अभी चला सकते हैं और जिसे छोड़कर बहुतेरे दूसरा कोई उद्योग नहीं ले सकते। इतना कहना बस नहीं है कि अनेक उद्योगों में से हाथ-कताई भी एक है। अगर हमें देहात का घर फिर से बसाना है, तो हमें इस बात पर जोर देना जरूरी है कि इस केन्द्रीय उद्योग पर ही हमारा ध्यान केन्द्रित हो।

७-१०-'२६

आक्षेप : राष्ट्रीय आमदनी बहुत ही कम है। क्या विदेशी स्पर्धा का मुकाबला करने लायक उद्योगों को चलाये बिना राष्ट्रीय संपत्ति बढ़ना संभव है? हिन्दुस्तान का परदेश से व्यापार अनुकूल होना चाहिए, अर्थात् हिन्दुस्तान में रकम ज्यादा आनी चाहिए, तब ही भारत का किसान सफाई, शिक्षा, सभ्यता आदि का विचार कर सकता है। अब तक भारत इसी कारण से जिन्दा है कि वह बदलती हुई परिस्थिति से अपना मेल बैठाता रहा है। यंत्र के और बड़े पैमाने की उत्पत्ति के बिना यह नहीं हो सकेगा।

उत्तर : आक्षेपक भूलते हैं कि भारत को इंग्लैंड और अमेरिका जैसा बनाने में शोषण के लिए जगत् की कई अन्य जातियाँ और प्रदेश ढूँढ़ने

पडेगे। अब तक तो यह दीखता है कि पाश्चात्य राष्ट्रो ने योरप के बाहर की जानी हुई सब जातियाँ शोषण के लिए आपस मे बाँट ली हैं। हमारे ढूँढने के लिए कोई नये जगत् नहीं दीख रहे हैं। शोषित देशो मे भारत सबसे बडी शिकार है। बेशक जापान भी लूट का हिस्सा ले रहा है। अगर भारत और चीन देश अपना शोषण न होने दे, तो शोषको की क्या दशा होगी? अगर पाश्चात्य देश इस प्रकार सकट मे आ सकते हैं, तो फिर पश्चिम का अनुकरण करनेवाले भारत के नसीब मे क्या बदा रहेगा? दारिद्र्य जरूर जाना चाहिए, पर उसका इलाज यन्त्रीकरण नही है। बुराई बैलगाडी का उपयोग करने मे नही है। वह हमारी खुदगर्जी मे और हमारे पडोसियो की चिन्ता न करने मे है। अगर हममे हमारे पडोसियो के लिए प्रेम नही है, तो बदल कितना ही क्रान्तिकारी क्यो न हो, वह हमारी भलाई कभी नही कर सकेगा। अगर हममे हमारे पडोसी दरिद्रो के लिए प्रेम है, तो उनकी सेवा के लिए, वे जो चीजे बनाते हैं, उनका हम इस्तेमाल करेगे, हम पश्चिम से वह अनैतिक व्यापार भी नहीं करेगे जिससे विदेश की शौक की चीजे वे देहातो मे पहुँचाई जाती हैं। भारत को आलसी की तरह लाचारी से यह नही कहना चाहिए कि हम पश्चिम के हमले से नहीं बच सकते। उसे अपने खुद की तथा जगत की भलाई के लिए उसका मुकाबला करने लायक मजबूत बनना चाहिए।

१७-३-'२७

मुझे इस बात में विश्वास नही है कि आवश्यकताएँ बढाकर उनकी पूर्ति के साधन बनाने मे जगत अपने ध्येय की ओर एक कदम भी आगे बढ सकता है।

*

खादी मे सादापन है, पर फूहडता नही। वह गरीबो के अग पर ठीक शोभा देती है और पुराने जमाने की तरह अब भी अमीर और कलावान् स्त्री-पुरुषो के शरीरो को भी सुशोभित करने लायक बनायी जा सकती है। उसमे पुरानी कला और हाथ-उद्योगो को पुनर्जीवित करने की बात भरी

पड़ी है। वह यंत्रों का नाश नहीं करना चाहती। यंत्रों का नियंत्रण करके उनकी हानिप्रद बाढ़ को रोकती है। वह गरीबों की सेवा के लिए उनकी झोपड़ियों में ही यंत्र का उपयोग कराती है। चरखा खुद एक सुन्दर यंत्र है।

खादी गरीबों को श्रीमानों के बंधन से छुड़ाती है और गरीब और श्रीमान के बीच नैतिक और आत्मिक संबंध जोड़ती है। वह किसी भी गृह-उद्योग को अपने स्थान से नहीं हटाती, उलटे दिन-ब-दिन यह अनुभव आ रहा है कि वह दूसरे सब ग्राम-उद्योगों का केन्द्र बन रही है। वह विधवा के टूटे घर में आशा की किरण लाती है, साथ ही अगर कोई ज्यादा कमा सकता है, तो उसे ज्यादा कमाने से रोकती भी नहीं। वह किसीको कोई दूसरा अधिक अच्छा धंधा करने से भी नहीं रोकती। जिनको चाहिए, उनको वह एक सम्मानित काम देती है। वह देश के खाली समय का उपयोग कर लेती है।

भारत सात लाख देहातों में बसा हुआ है। जो कुछ थोड़े-से शहर हैं वे बाह्यांग हैं। वे अभी तो देहात का जीवनसार बाहर बहा ले जाने का दुष्ट काम कर रहे हैं। खादी इस प्रवृत्ति का सुधार करके उसे उलटाने का तथा शहर और देहात के बीच बेहतर संबंध जोड़ने का प्रयत्न है। शहरों का घमंडी बर्ताव देहात के जीवन और स्वातंत्र्य के लिए सदा मँडराता हुआ एक भय है।

खादी में सबसे अधिक संगठन-शक्ति है, क्योंकि उसे खुद को संगठित होना है। उसका संबंध सारे भारत से आता है। अगर आकाश से खादी की वर्षा हो, तो वह एक बड़ी आपत्ति होगी। चूँकि वह करोड़ों भूखे और लाखों मध्यम वर्ग के स्त्री-पुरुषों के सहयोग से ही बन सकती है, उसकी सफलता के मानी हैं, अहिंसात्मक पद्धति से उत्तम-से-उत्तम संगठन होना।

मेरा ध्येय तो समान बँटवारे का है, पर जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, वह बन नहीं आयेगा। इसलिए मैं न्याय्य बँटवारे के लिए प्रयत्न करता हूँ।

यह मै खादी के द्वारा करना चाहता हूँ, और चूँकि उसकी सफलता अग्रेजो के शोषण को बॉझ बना देगी, अग्रेजो का सम्बन्ध भी शुद्ध हो जायगा। इस मानी मे खादी स्वराज्य की ओर ले जाती है।

हमारे देश मे रोजाना प्रतिव्यक्ति आमदनी क्या है? हमारे अर्थ-शास्त्री कहते हैं कि वह छह पैसे है। पर यह ऑकडा सही बात नही बताता। औसत आमदनी गरीब की, वैसे ही वाइसराय और करोडपतियो की आमदनी के ऑकडे मिलाकर निकाली जाती है। इसलिए सच्ची आमदनी फी व्यक्ति शायद तीन पैसे ही हो। अगर मै चरखे की मदद से उस आमदनी मे तीन पैसो की वृद्धि करता हूँ, तो क्या मेरा चरखे को कामधेनु कहना ठीक नही है?

१४-३-'२९

प्रश्न : आप खादी का इस्तेमाल सदा के लिए चाहते हैं या राज-नीतिक स्वातंत्र्य प्राप्त करने के वास्ते थोडे समय के लिए ही? अगर पहली बात हो, तो क्या खादी सौंदर्य के खिलाफ नहीं है? क्या आप आशा रखते हैं कि सर्वसाधारण लोग अपनी नैसर्गिक रुचि को दबा सकेंगे?

उत्तर : मै सचमुच मे खादी को सदा के लिए चाहता हूँ, क्योकि किसान को नाश से बचाने के लिए वही एक साधन है। मेरा दावा है कि उसमे किसान को आर्थिक स्वातन्त्र्य देने की और भूख से बचने के समर्थ बनाने की शक्ति है। प्रश्नकर्ता अपने देश के प्राचीन इतिहास से और खादी के आज के विकास से अनजान दीखता है। जब जगत् के दूसरे प्रदेशो मे कपास का उपयोग भी मालूम नही था, तब भारत सौंदर्य का मान स्थापित करके पश्चिम के सपन्न राष्ट्रो को नाना रगो के सुन्दर कपडे मुहय्या करता था। और अभी का खादी का विकास बताता है कि वह धीरे-धीरे पर निश्चित रूप से दिन-ब-दिन सौंदर्य के शौकीनो को रिझा रही है। आखिर सच्ची कला स्त्री-पुरुषो के हाथो के नाजुक जिंदे स्पर्श से ही प्रकट हो सकती है, न कि निर्जीव बडे यन्त्रो के द्वारा, जो विशाल पैमाने की उत्पत्ति के लिए बनाये गये हैं।

२५-४-'२९

किसीने सुझाया : खादी बिचले आदमी द्वारा न बेची जानी चाहिए। हरएक को खुद के लिए बनवा लेनी चाहिए।

उत्तर : यह पूर्णता की सलाह मुझे अच्छी लगती है, पर इसमें खादी उत्पत्ति की व्यावहारिक बातों का अज्ञान है। हरएक को अपनी खादी बना लेना उतना ही अशक्य है कि जितना हरएक को अपना चावल उपजा लेना हो सकता है। शहरवासियों को अगर वे चाहें, तो भी अपनी खादी बना लेना शक्य नहीं है और इस विचारधारा को तो मैं समझ ही नहीं सकता कि या तो अपनी खुद की खादी पहनो या विदेशी कपड़ा। हम यह समझ लें कि भारत में ऐसे करोड़ों हैं कि जो दिन में आठ घंटे चरखा चला सकते हैं। उस सूत से बनी हुई सारी खादी का उनको खुद उपयोग कर लेना असम्भव है। भले नागरिकों का यह कर्तव्य है कि वे अपने इन भाई-बहनों द्वारा बना हुआ ज्यादा माल ले लेवें। हम यह भी न भूलें कि मनुष्य का स्वभाव सामाजिक है। अगर स्वतंत्र रहने का उसे अधिकार है, तो आपस में अवलंबित रहना भी उसका कर्तव्य है। केवल घमंडी पुरुष ही सबसे स्वतंत्र रहने का और स्वयंपूर्ण होने का दावा करेगा।

३०-५-'२९

सूत की उत्पत्ति बढ़ाने के तीन मार्ग हैं

1. खुद के लिए कातना।
2. मजदूरी के लिए कातना।
3. यज्ञरूप कातना।

अगर संगठन हो जाय, तो पहला मार्ग सबमें महत्व का, व्यापक और कभी बन्द न होनेवाला है। वह खादी-उत्पत्ति का सबसे सस्ता तरीका है। क्योंकि वह माल बेचने के लिए बाजार ढूँढने की तकलीफ मिटाता है। दूसरे मार्ग के लिए भी काफी क्षेत्र है, पर इसमें कपास संग्रह करने और बिक्री का प्रबंध करने के लिए पूँजी चाहिए। वह अलबत्ता हमारे

व्यावसायिक शक्ति की परीक्षा करता है, साथ ही हमारी सूझ और काम बना लेने की शक्ति भी बढ़ाता है, एक विशाल संगठन की रचना करने में हमें समर्थ बनाकर मध्यम-वर्ग के लोगों को एक सम्मानित धंधा देता है। तीसरा मार्ग उदात्त है, पर उसे कुछ चुने हुए लोग ही अपना सकते हैं। अगर सारा राष्ट्र यज्ञ की आवश्यकता मान ले, तो वह बेहद सूत-उत्पत्ति का साधन बन सकता है। म्युनिसिपल कमेटियों द्वारा चलायी हुई पाठशालाएं, उनमें चरखा दाखिल किया जाय, तो लाखों लोगों के कपड़े लायक सूत दे सकती हैं।

२१-७-'२९

आक्षेप :

१. भारत पश्चिम के अर्थ में औद्योगिक बनना चाहिए।

२. चरखे द्वारा भौतिक जीवन का प्रश्न हल नहीं हो सकता।

३. चरखा सफल होने की जो शर्तें हैं, वे चालू प्रवृत्तियों और मनुष्य-स्वभाव पर इतनी बड़ी मांग करती हैं कि उनका निभना मुश्किल है।

४. यंत्र की श्रेष्ठता और समर्थन इस बात में इतना नहीं है कि वह देश की आन्तरिक गरज पूरी करता है, जितना कि उसके बल पर परदेशी बाजारों पर आक्रमण करके उनको जीतने में है।

५. अगर भारत को अपने आध्यात्मिक संदेश के मुताबिक जिन्दा रहना है और उसे दुनिया में फैलाना है, तो उसे आधुनिक बनना चाहिए। हमें बिना संकोच के और पूरी शक्ति से आधुनिक औद्योगिक तरीकों को अपनाना चाहिए, साथ ही हमें आध्यात्मिकता का पूरा आचरण करना चाहिए, राष्ट्र के मानस में शक्तिशाली आध्यात्मिक ध्येय और देशभक्ति भरनी चाहिए, ताकि उसके सहारे हम जिस आधुनिकता की गहरी खाई के अंधेरे में पश्चिम पड़ा है उसको लांघ सकें। आध्यात्मिक ध्येय के बिना आधुनिकता जल्दी-से-जल्दी नाश की ओर ले जायगी।

उत्तर : मुझे खेद है कि मैं इन बातों का समर्थन नहीं कर सकता। उनमें मान लिया गया है कि तुलना में आधुनिक सभ्यता अच्छी है और

हम उसका सफल विरोध नहीं कर सकते। पश्चिम में भी ऐसे बुद्धिमानो की संख्या बढ रही है, जो उस सभ्यता मे विश्वास नही रखते, जिसमें एक ओर तो कभी तृप्त न होनेवाली भौतिक महत्त्वाकाक्षा है और दूसरी ओर है उसके फलस्वरूप युद्ध। पर सभ्यता भली हो या बुरी, भारत को पश्चिम की तरह ही औद्योगिक क्यो बनना चाहिए? पाश्चात्य सभ्यता शहरी है। इग्लैड या इटली जैसे छोटे देश अपनी व्यवस्था शहरी बना सके। शायद अमेरिका जैसा बडा देश भी, जिसमे आबादी बहुत विरल है, दूसरी तरह की व्यवस्था न कर सके। लेकिन भारत जैसे बडे देश को, जिसमे आबादी इतनी घनी है, जो अपनी प्राचीन देहाती परम्परा से अब तक अपना काम अच्छी तरह निभाते आया है, पाश्चात्य नमूने की नकल करने की जरूरत नही है और करनी भी नहीं चाहिए। ऐसा नही है कि जो बात अपनी विशेष परिस्थिति मे एक देश के लिए हितकारी है, वह भिन्न परिस्थितिवाले दूसरे देश के लिए भी हितकारी ही होगी।

आक्षेपक के दूसरे प्रस्ताव मे भी सार नही है। उल्टे वह प्रश्न चरखे से अथवा वैसे ही किसी दूसरे साधन से हल हो सकता है। नाम लेने लायक हरएक भारतीय या यूरोपियन लेखक ने स्वीकार किया है कि भारत को जिन्दा रहने के लिए गृह-उद्योगो की आवश्यकता है।

तीसरे प्रश्न का उत्तर सरल है। चरखे की शर्तें मौजूदा प्रवृत्तियो और मनुष्य-स्वभाव के खिलाफ नहीं हैं। इतना ही नहीं, बल्कि वे भारत की मौजूदा प्रवृत्तियों और स्वभाव के अनुसार ही हैं।

चौथे प्रस्ताव मे लेखक ने यन्त्रयुग की पूजा का समर्थन आन्तरिक जरूरत की पूर्ति के लिए नही, वरन् विदेशी बाजारो को जीतने के लिए किया। भारत का अहोभाग्य समझे या दुर्भाग्य, उसके लिए आक्रमण करके जीतने लायक विदेशी बाजार ही नही हैं। पश्चिम के प्रवीण शोषकों ने वह खेल पहले ही खेल लिया है। जब हम दूसरे औद्योगिक देशो पर आक्रमण करके उनको जीतेंगे, तभी हम विदेशी बाजारो को अपने काबू मे ला सकेंगे। अगर लेखक के दिल मे ऐसी कोई विशाल योजना हो, तो मुझे

लगता है कि चरखे के उपासको ने जो काम अपने सामने रखा है, उसकी तुलना मे आक्षेपक की योजना सफल होना अत्यधिक मुश्किल है।

लेखक का अन्तिम प्रस्ताव तो उसके सारे मामले को रद्द कर देता है। वह भारत को आधुनिक बनायेगा, साथ ही उसकी आध्यात्मिकता कायम रखेगा, जिसके बिना वह मानता है कि आधुनिकता नाशकारी होगी। वह भारत से वह बात कराना चाहता है, जो हमारे ऋषि-मुनियो ने असम्भव मानी है। 'Ye cannot serve God and Memmon'—माया और राम दोनो की सेवा नही बन सकती। आक्षेपक यह बात मानता-सा दीखता है कि पश्चिम इन दोनो का मेल नही बैठा सका है। फिर वह यह क्यो मानता है कि वह अशक्य काम भारत कर सकेगा? हम यह क्यो न माने कि अगर पुराने महानुभाव उसे कर सकते, तो उन्होने उसे कबका ही कर लिया होता। वास्तव मे सारे प्रयोग हो जाने के बाद ही उपनिषत्कारो ने कहा :

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम्॥"

इसमे शक नही कि शोषण के मानी हैं बिना हक हड़प लेना। आध्यात्मिकता से उसका मेल कभी बैठ ही नही सकता।

२-७-'३१

इसमे शक नही कि यन्त्र का तरीका सहल है। पर इतने से ही वह सदा हितकारक नही माना जा सकता। उतार आसान होता है, पर उसमे धोखा भी रहता है। देश की मौजूदा हालत मे तो हाथ का तरीका कठिन होने के कारण ही वरदानरूप है। यन्त्र-पद्धति का मोह चालू रहे, तो बहुत कुछ संभव है कि ऐसा समय आ जाय, जब हम अपने को इतने कमजोर और नालायक पाये कि बाद मे ईश्वर ने हमे दिये हुए जिन्दे यंत्र का उपयोग करना भूल जाने के लिए हम अपने आपको शाप देने लगे। करोडो लोग व्यायाम या खेल के द्वारा अपने को योग्य नहीं

रख सकते। वे उपयोगी, उत्पादक श्रम के धधो को छोडकर उनकी जगह निरुपयोगी, अनुत्पादक और खर्चीले खेल और व्यायाम को लें भी क्यो? वे आज बदल और मनोरजन के लिए भले ही अच्छे लगे, लेकिन जब वे आवश्यक धधे बन जायेंगे, तब वे हमें खटकेंगे।

सूत-मताधिकार

५११४ २०-११-'२४

प्रश्न : कांग्रेस अपने सदस्यो को कातने के लिए मजबूर कैसे कर सकती है? व्यवस्था मनाने की, न कि जबरदस्ती की होनी चाहिए।

उत्तर . क्या कांग्रेस को यह अधिकार है कि वह अपने सदस्यो को शराब न पीने को कहे? क्या वह भी व्यक्ति-स्वातत्र्य का बाधक माना जायगा? कांग्रेस शराब न पीने का हुक्म करे, तो उसके लिए उज्र नहीं होगा। क्योंकि शराब पीने की बुराई स्पष्ट है। अच्छा, तो मैं कहता हूँ कि आज भारत मे, जहाँ करोडो भूख के किनारे बैठे ह और अति दीन अवस्था मे हैं, वहाँ बाहर से विदेशी कपडा आने देना शायद ज्यादा बडी बुराई है। उत्कल के लाखो भूखो का विचार करो। मै वहाँ गया था, तब मैंने वहाँ अकालग्रस्तो को देखा। केवल उनकी हड्डियाँ रह गयी थीं और वे मरने की राह देख रहे थे। वे इस दशा मे इसलिए थे कि वे किसी भी हालत मे काम करने को तैयार नही थे। यह काम की नफरत शराब से भी बडी बुराई है। ऐसे लोगो से काम लेने की समस्या कैसे हल की जा सकती है? मै कताई व्यापक करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं सोच सकता हूँ। हिन्दुस्तान मे लाये हुए विदेशी कपडे का हरएक गज भूखे के मुँह की रोटी छीन रहा है। अगर भारत के करोडो भूखो को आनद और प्रसन्नता से अपनी रोटी कमाने का मौका देना है, तो सूत-मताधिकार पर आक्षेप न होना चाहिए। मै कांग्रेस को उन स्त्री-पुरुषो की जमात मानता हूँ, जो कातने की अत्यन्त आवश्यकता मानते हैं। वह हरएक सदस्य के लिए कातना लाजिमी करके अपने

सदस्यो का खरापन स्थिर क्यो न करे ? आप मनाने की बात करते हैं। इससे बढकर मनाना और क्या हो सकता है कि काग्रेस का हरएक सदस्य हर महीने कुछ तादाद मे नियमपूर्वक सूत काते। अगर वे खुद नहीं कातेगे, तो दूसरो को कातने के लिए कैसे कह सकेगे ?

प्रश्न : पर जो नही कातते, उनको आप काग्रेस के बाहर कैसे कर सकते हैं ? वे दूसरे तरीको से राष्ट्र की सेवा करते होगे।

उत्तर : क्यो नही, सपत्ति-मताधिकार के लिए क्या आधार है ? सदस्य बनने के लिए चार आने क्यो देने पडते हैं ? मताधिकार के लिए उम्र आवश्यक क्यो मानी जाती है ? सात वर्ष की उम्र मे भी जॉन स्टुअर्ट मिल कितना ही होशियार क्यो न रहा हो, उसे उस समय मताधिकार नही था। ऐसे बडे लोग भी बाहर क्यो रखे गये ? मताधिकार कुछ भी क्यो न हो, कुछ को तो टालना ही पडेगा। शायद आज कई लोग मेरा कहना स्वीकार नही करेगे, पर मुझे श्रद्धा है कि एक दिन ऐसा आयेगा, चाहे वह मेरे मरने के बाद आये, जब लोग कहेगे कि कुछ भी हो, गाधी कहता था वह सही था।

हाथ-करघा बनाम चरखा

११-११-'२६

आक्षेप : हाथकताई के एक आने के मुकाबले मे बुनाई मे करीब आठ आने मिल जाते हैं, इसलिए अगर कोई रोजाना केवल दो घटे ही काम करे, तो हाथ-कताई मे एक पैसा कमायेगा, उसकी जगह बुनाई मे दो आने कमा सकेगा। आर्थिक दृष्टि से एक पैसा आकर्षक भी नही है। भारत की आवश्यकता का मिल-सूत मिलने मे मुश्किल नही है। जो हाथ बुनाई अब तक मिल के मुकाबले मे टिक सकी है, उसीको निश्चित रूप से और वेग से आगे बढाना चाहिए। हाथ-कताई का आन्दोलन नुकसानदेह भी है, क्योकि वह चलने लायक करघे के उद्योग से लोगो का ध्यान दूसरी ओर ले जाता है, और जो हाथ-कताई का उद्योग अपनी

खुद की कमजोरी के कारण ही मर गया है, उस न चलने लायक उद्योग को मदद करने में लगाकर लोगों को गलत रास्ते ले जाता है।

उत्तर : एक पूरक धंधे के रूप में हाथ-बुनाई व्यावहारिक नहीं है, क्योंकि वह सीखना आसान नहीं है, वह भारत में कभी व्यापक नहीं रही है, उसे चलाने के लिए मददगार चाहिए, वह चाहे जब थोड़े-थोड़े समय के लिए बीच-बीच में नहीं की जा सकती। वह सामान्यतः अब तक स्वतन्त्र धंधा रही है और वैसे ही रह सकती है। मोची या लुहार के धंधे की तरह वह पूरे समय का ही धंधा हो सकती है। वह कताई की तरह व्यापक नहीं हो सकती। भारत को सालाना करीब साढ़े चार सौ करोड़ गज कपड़ा चाहिए। एक बुनकर एक घंटे में औसत पौन गज खादी बुनता है। इसलिए अगर हम विदेशी और देशी दोनों मिलों का कपड़ा बाद कर दें, तो हमारी सालाना आवश्यकता का पूरा कपड़ा बुनने के लिए रोजाना दो घंटों के हिसाब से नब्बे लाख बुनकर लगेंगे। अगर यह समझें कि इतने बुनकरों को नहीं, वरन् इतने परिवारों को काम मिलेगा, तो दो घंटों के दो आने उतने अधिक लोगों में बँट जायँगे, जिससे व्यक्ति की रोजाना आमदनी अधिक घट जायगी।

अब हम कताई की शक्ति का विचार करें। वह एक समय भारत का व्यापक पूरक धंधा था। अब भी करोड़ों लोग यह कला भूले नहीं हैं और लाखों घरों में अब भी चरखा मौजूद है। यह पाया गया है कि एक बुनकर के लिए दस कत्तिनें चाहिए। नब्बे लाख बुनकरों की जगह नौ करोड़ कत्तिनें अपनी कमाई में वृद्धि कर सकेंगी, जो उनके लिए खासी आमदनी समझनी चाहिए। यह मैं अब तक जो औसत आमदनी के हिसाब लगाये गये हैं, उनमें से आमदनी का बड़ा आँकड़ा फी व्यक्ति सालाना रुपये चालीस लेकर लिख रहा हूँ। कताई चाहे जब बन्द कर दी जा सकती है और चाहे जिस समय फिर से हाथ में ली जा सकती है। वह आसानी से और जल्दी सीखी जा सकती है। कातनेवाला बिलकुल प्रारम्भ से ही कुछ तार निकालने लगता है। इसके अलावा मिल का सूत सदा मिलते रहने का

भरोसा करना गल्त होगा। हाथ-बुनाई और मिल-बुनाई एक-दूसरे की सहायक नही हैं। वे एक-दूसरे की विरोधी हैं। अन्य यत्रो की तरह बुनाई-मिलो की वृत्ति भी हाथ-बुनी चीज को हटाने की है। इसलिए अगर हाथ-बुनाई बडे पैमाने पर पूरक धधा बने, तो उसे केवल मिलो पर ही अवलम्बित रहना पडेगा, जो उनको सूत मुहैया करने मे खूब पैसा ऐठेगी और मौका मिल्ते ही उनका नाश कर देंगी। दूसरी ओर हाथकताई और हाथबुनाई एक-दूसरे की सहायक हैं। शायद कइयो को यह मालूम न होगा कि मिल का सूत बुननेवाले बहुतेरे बुनकर साहूकारो के पजे मे फँसे हुए हैं और जब तक वे मिल के सूत के भरोसे रहेगे, तब तक उनकी यही दशा रहेगी। देहात के अर्थशास्त्र की माग है कि बुनकर को सूत अपने साथी किसान से मिले, न कि बीच के व्यापारी से।

आक्षेपक कहते हैं, गरीब देहाती को भी दो घटो के काम का एक पैसा आकर्षक नही है। पहली बात तो यह है कि चरखा उसके लिए नही है, जिसके पास कोई अधिक आमदनी का काम है। दूसरे, यह कैसे हो रहा है कि आज भी हजारो स्त्रियाँ रोजाना या हर सप्ताह अपने सूत के बदले मे रूई और थोडे-से पैसे लेने के लिए कुछ मील चलकर जाती हैं।

मै हाथ-करघे के खिलाफ नही हूँ। वह एक बडा और बढने लायक गृह-उद्योग है। अगर चरखा सफल हो, तो हाथकरघा अपने आप प्रगति कर जायगा। चरखा विफल हो, तो वह मर जायगा।

बुनकरों को

१३-१०-'२७

जो बुनकर विदेशी या स्वदेशी मिल का सूत बुनता है, वह अपने को मिलो के अधीन कर देता है, उनकी दया पर जीता है। आपको यह समझना चाहिए कि जो बुनाई आज कुछ हद तक आपके हाथ है, वह भविष्य मे आपके हाथ से चली जायगी। वैसा काम देशी या विदेशी

मिलें करने लग जायँगी। अगर आपको मालूम न हो, तो मैं आपको यह जानकारी देता हूँ कि जिन किस्मों पर आपका अब तक एकाधिकार रहा है, उनको बुनने का जगत् के शक्तिशाली मिलमालिक प्रयोग कर रहे हैं। मिलमालिकों का या मिल-उद्योग का यह दोष भी नहीं है कि वे हरदम ऐसे एकाधिकार को मिटाकर उस व्यापार को अपने हाथ में लेने की कोशिश करें। इन उद्योगपतियों का सचमुच यही उद्देश्य और ध्येय है कि यन्त्र में लगातार सुधार करके जगत् के हाथ-उद्योगों पर लगातार आक्रमण करते रहें। उनके बने रहने की यह एक शर्त ही है कि वे इस धंधे को तुम्हारे हाथ से निकाल लें। अगर आप नहीं चेतेंगे, तो जो दुर्गति हाथकताई की हुई है, वही दुर्दशा हाथबुनाई के धंधे की भी होगी।

वेद में चरखा

२-६-'२७

औंध के पण्डित सातवलेकरजी के लेख से :
ऋग्वेद में एक जगह लिखा है :

"सूत कातकर और उसे चमकीला रंग देकर बिना गठान के बुनो और इस प्रकार सयानों ने जो रास्ता बताया है, उसका संरक्षण करो। अच्छी तरह विचार करके अपने वंशजों को दैवी प्रकाश में ले जाओ।" अगर अनुवाद सही है, तो यह मन्त्र साबित करता है कि वैदिक समय में चरखा था। इतना ही नहीं, पर वह श्रेष्ठ और कनिष्ठ सब स्त्री-पुरुषों का धंधा था।

"यज्ञ में १०१ कारीगर काम कर रहे हैं। यज्ञ असंख्य धागों से पृथ्वी को ढाँक रहा है। यहाँ बुजुर्ग संरक्षक भी हैं, वे प्रक्रियाओं को देखते हुए कह रहे हैं : यहाँ बुनो, यहाँ दुरुस्त करो।"

इस पर से हम देखते हैं कि उस प्राचीन समय में भी कताई और बुनाई यज्ञरूप समझी जाती थी और बड़ों का संरक्षण प्राप्त करती थी। एक मंत्र यह भी बताता है कि उन दिनों के सैनिक भी यह प्रक्रियाएँ करने से बरी

नहीं थे और वर के लिए कपड़ा वधु बनाती थी, जैसा कि अब भी आसाम मे रिवाज है।

खादी-भावना

२२-९-'२७

खादी-भावना को समझने के लिए खादी पहनने मे जो सहचारी भाव हैं, वे हमे जान लेने चाहिए। जब कभी हम सबेरे खादी का कपडा पहनने के लिए उठाते हैं, तो हमे स्मरण कर लेना चाहिए कि हम उसे दरिद्रनारायण के नाम पर करोडो भूखो के लिए पहनते हैं। अगर हममे खादी-भावना है, तो हमारे प्रत्येक क्षेत्र मे सादापन आ जायगा। उसमे असीम धीरज भी है। जैसे कत्तिने और बुनकर अपना काम बडे धीरज के साथ करते हैं, वैसे हमे भी स्वराज्य का सूत कातने मे धीरज रखना चाहिए। खादी-भावना मे अटूट श्रद्धा भी होनी चाहिए। जैसे कातनेवाला कातते समय असीम श्रद्धा रखता है, यद्यपि उसका खुद का काता हुआ सूत थोडा-सा है तथापि सबका मिलाकर वह भारत के हरएक को कपडा दे सकेगा, वैसे ही हमे सत्य और अहिसा मे अटूट श्रद्धा होनी चाहिए कि आखिर वे हमारे मार्ग की हरएक मुश्किल को जीत लेगे। खादी-भावना का अर्थ है, जगत् के हरएक मनुष्य के साथ बन्धु-भावना। इसके मानी हैं, जो बात किसी भी व्यक्ति को हानि पहुँचा सकती है, उसका सम्पूर्ण त्याग। खादी मे यह सारी शक्ति है। लेकिन उसमे एक शर्त है। जो खादी-काम करते हैं, उनमें तपश्चर्या चाहिए। मुझे इस बात का सदा भान रहता है कि जिन्होने अपना जीवन खादी मे लगाया है, वे अगर निरन्तर जीवन की शुद्धता का आग्रह न रखेगे, तो लोग खादी से नफरत करेगे। मै यह भी जानता हूँ कि खादी अन्य व्यापारिक चीजो की स्पर्धा मे टिक नही सकती। जो बाते या शर्ते दूसरी चीजो को लागू होती हैं, वे अगर खादी को लागू करेंगे, तो खादी टिक न सकेगी। पर खादी एक ऐसी विशेष चीज है, जो अपने अन्य गुणो के कारण दूसरी चीजो पर मात कर सकती है।

खादी की साड़ी और प्रान्तीय पद्धतियाँ

२-२-'२८

महाराष्ट्र की एक बहन ने लिखा है उनमे रिवाज नौ गजी साडी पहनने का है। महँगी होने के कारण गरीबो को मुश्किल जाती है। वह महाराष्ट्र पद्धति को छोडकर छोटी साडी पहनने को तैयार है, पर घर के बुजुर्ग लोग विरोध करते हैं।

प्रान्तीयता राष्ट्रीय स्वराज्य दिलाने मे ही नहीं, वरन् प्रान्तीय स्वातन्त्र्य के सम्पादन मे भी रुकावट है। रुचि भिन्नता कुछ हद तक ठीक है, पर अगर वह सीमा का उल्लङ्घन कर दे, तो विभिन्नता के नाम पर चलनेवाली सुविधाएँ और रीति-रस्म राष्ट्रीयता के विघातक होगे। दक्षिणी साडी सुन्दरता की चीज जरूर है, पर अगर वह राष्ट्र को हानि पहुँचाकर ही रखी जा सकती है, तो उसे छोडना होगा। दक्षिणी, गुजराती और बगाली आदि सब पद्धतियाँ राष्ट्रीय ही हैं, और उनमे से हर एक-दूसरे के बराबर ही राष्ट्रीय है। इस दशा मे उस पद्धति को पसन्द करना चाहिए, जिसमे सभ्यता को सँभालते हुए कम से कम कपडा लगे। ऐसी राष्ट्रीय पद्धतियों का आपस मे लेनदेन और अनुकरण करना इष्ट है। देशप्रेमी लोगो को उस प्रान्तीय पद्धति को अपनाने मे आनन्द होना चाहिए, जिसमे सस्ताई हो और खादी पहनने की सुविधा हो। उसमे भी गरीब से गरीब लोगो की कपडा पहनने की पद्धति पर नजर रहे। स्वदेशी के मानी यह नहीं कि हम अपने को अपने छोटे से कुडे मे डुबा ले, उसे राष्ट्र के सागर से जा मिलनेवाला प्रवाह होना चाहिए। जो बात कपडे को लागू होती है, वह उतनी ही भाषा, खुराक आदि को भी।

स्थानिक खपत

२७-४-'३४

हरिजन-दौरे मे मुझसे बन सका, वहाँ तक मैने खादी-प्रश्न का अध्ययन करने मे कसर नहीं रखी। मैने देखा कि समय आ गया है कि अब खादी-

कार्यकर्ताओ को खादी के अर्थ के नियमो का पालन करने पर पहले की अपेक्षा अधिक ध्यान और जोर देना चाहिए। इन नियमो मे कुछ नियम मामूली अर्थशास्त्र को लागू होनेवाले नियमो से मूलतः भिन्न हैं। जैसे कि सामान्यतः एक जगह बनी हुई चीजे ससार के सभी प्रदेशों मे भेजी जाती हैं या भेजने का प्रयत्न किया जाता है। जो उन्हे बनाते हैं, उनको उनका उपयोग करने की जरूरत नही। खादी मे ऐसी बात नही है। उसकी विशेषता यह है कि जहाँ वह बनती है, वही उसका इस्तेमाल होना चाहिए, अधिकतर कत्तिनो और बुनकरों के द्वारा ही। ऐसी खपत से खादी की मॉग अपने आप निश्चित हो जाती है। शायद हम इस ध्येय को कभी न पहुँच सके। पर जहाँ तक हम इस ध्येय की ओर जायँगे, उतना ही खादी का खरा मूल्य गिना जायगा। हम यह ध्यान मे रखे कि खादी तभी टिक सकेगी, जब कि वह देहात के पोशाक के रूप मे स्थिर हो जायगी।

खादी का अर्थशास्त्र

२१-९-'३४

एक अर्थ मे खादी केवल आर्थिक व्यवस्था है। खादी का सगठन अन्य कुछ होने के पहले, वह व्यावसायिक कारोबार होना चाहिए। इसलिए उसे जनतन्त्र का सिद्धान्त लागू नही हो सकता। जनतन्त्र मे इच्छाओ और मतो के झगडे अवश्यभावी हैं। कभी-कभी विभिन्न मतो मे खूँखार लडाई भी होती है। व्यावसायिक सगठन मे ऐसे झगडे को स्थान न रहना चाहिए। कल्पना करो कि किसी व्यापारिक दूकान मे दलबन्दी, गुटबन्दी या ऐसी ही कुछ बुराइयाँ आ जायँ, तो क्या होगा? उनके दबाव मे उसके टुकडे-टुकडे हो जायँगे। फिर खादी-सगठन तो व्यापारिक कारोबार से बहुत कुछ अधिक है। वह जनता की सेवा के लिए परोपकारी सस्था है। ऐसी सस्था लोगो की सनक पर नही चलायी जा सकती। उसमे व्यक्ति की महत्त्वाकाक्षा के लिए स्थान नही है। खादी की पुनर्रचना मे हमे यह न भूलना चाहिए कि कुछ बातो मे खादी का शास्त्र मामूली धन्धे के बिलकुल विरुद्ध मार्ग से चलता है। 'वेल्थ ऑफ नेशन्स' किताब मे ॲडम स्मिथ ने

जिन सिद्धान्तो के अनुसार आर्थिक व्यवस्था चलती है, उन्हे लिखकर आगे कुछ ऐसी बातो का वर्णन किया है, जो गडबड करनेवाली शक्तियाँ (Disturbing Factors) बतायी गयी हैं, और जो आर्थिक नियमो को स्वतन्त्रता से चलने नही देती। इनमें मुख्य मानवता (Human Element) है। इधर यह मानवता ही मुख्य चीज है, जिस पर खादी का अर्थशास्त्र खडा है और मनुष्य की स्वार्थ-परायणता जो ॲडम स्मिथ के अनुसार अर्थ का हेतु है, ऐसा 'डिस्टरबिंग फैक्टर' है, जिसे हमे जीतना है। इसलिए जो बात मिल के माल को लागू होती है, वह खादी को लागू नही होती। व्यावसायिक पद्धति के उत्पादन मे माल को घटिया बनाना, उसमे हीन चीजे मिलाकर उसे अशुद्ध करना, मनुष्य की हीन रुचियो को ललचाना आदि मामूली चलतू बाते हैं। खादी मे उनको स्थान नही है और न अधिक से अधिक मुनाफा करने के या कम से कम मजदूरी देने के रवैये को भी। उल्टे खादी मे मुनाफा करने जैसी बात ही नही है। नुकसान नही रहना चाहिए। नुकसान होता है, क्योकि हम कार्यकर्ता अब तक नौसिखुए और अकुशल हैं। खादी मे जो कुछ दाम मिलते हैं, वे मूल उत्पादक कत्तिनो आदि को पहुँच जाते हैं। कार्यकर्ताओ को अपने मेहनताने से कुछ भी अधिक नहीं मिलता। माल को एक मुकर्रर तर्ज का बनाने (Standardization) की ही एक बात लीजिये। वह खादी मे अमल मे नही लायी जा सकती। जैसा कि श्री राजगोपालाचारी ने एक बार कहा था, गरीब मामूली कत्तिन सदा एक-सा अच्छा सूत नही कात सकती। वह यन्त्र नही है। कभी वह बीमार होती है, कभी उसका बच्चा बीमार होता है, जिससे उसका मन उद्विग्न हो जाता है। अगर उस गरीब कत्तिन पर या उसके बच्चे पर आपका प्रेम है, तो आप सदा एक-सा, अच्छा सूत लेने का आग्रह न रखकर उसकी मौजूदा दशा मे पूरी कोशिश करके जैसा माल वह दे सकती हो, वैसा लेकर सतोष मानेगे। उसके हाथ का पवित्र स्पर्श खादी को वह प्राण और इतिहास देता है, जो यन्त्र का सूत कदापि नही दे सकता। यन्त्र की

बनी चीज की कला केवल हमारी आँख को तृप्त करती है, जब कि खादी की कला पहले हृदय को तृप्त करके फिर आँख तक पहुँचती है।

खादी और अन्य ग्रामोद्योग

१६-११-'३४

देहाती ग्रह-मालिका मे खादी सूर्य है। दूसरे ग्रामोद्योग ग्रह हैं, जो खादी से मिलनेवाली उष्णता और पोषण के बदले मे खादी को सहारा दे सकते हैं। खादी के बिना दूसरे ग्रामोद्योग पनप नहीं सकते। पर मैने देखा कि दूसरे उद्योगो के पुनरुज्जीवन के बिना खादी भी अधिक प्रगति नही कर सकेगी। फुरसत के समय का पूरा लाभ उठाने के लिए देहाती जीवन के सब पहलुओ को स्पर्श करना चाहिए।

२२-६-'३५

प्रश्न : क्या ग्रामोद्योग का आन्दोलन सब यन्त्रो के बहिष्कार के लिए नही है ?

उत्तर : क्या यह चरखा यन्त्र नहीं है ?

प्रश्न : मेरा मतलब बडे यन्त्रो से है।

उत्तर : क्या आपका आशय सिंगर के सीने की मशीन से है ? ग्रामोद्योग-आन्दोलन मे वह भी सुरक्षित है और वैसे यन्त्र भी, जो बड़ी सख्या मे लोगो को श्रम करने के मौके से वचित नहीं करते, उनको मदद करके उनकी कुशलता बढाते है और उनका गुलाम न बनते हुए मनुष्य जिन्हे चाहे जब चला सकता है।

प्रश्न : बडे-बडे आविष्कारो के बारे मे आपके क्या विचार हैं, शायद बिजली से तो आप सरोकार नही रखेगे ?

उत्तर : ऐसा किसने कहा ? अगर देहात के हर घर मे बिजली जा सके, तो मै इसमें हर्ज नहीं मानूँगा कि देहाती लोग बिजली की मदद से अपने औजार चलाये। लेकिन तब बिजलीघर चरागाह की तरह ग्राम-पचायतो के या राजसत्ता के होंगे। लेकिन जहाँ बिजली या यन्त्र नहीं है,

वहाँ खाली हाथों को क्या करना चाहिए ? आप उनको काम देंगे या काम के अभाव मे हाथ काट डालने को कहेंगे ? मैं सबके हित के लिए किये हुए शास्त्रीय आविष्कार की कद्र करता हूँ। लेकिन आविष्कार आविष्कार मे फर्क है। एक साथ नरसमूह का सहार करनेवाली जहरी गैस मुझे नहीं चाहिए। मनुष्य के श्रम से न किये जा सकनेवाले से सार्वजनिक उपयुक्तता के कामो के लिए बडे यन्त्रो का अपना अनिवार्य स्थान है ही, लेकिन उन सबकी मालकियत राजसत्ता की होनी चाहिए और उनका उपयोग सपूर्णतया लोगों के हित मे हो। बहुत लोगो को हानि पहुँचाकर थोड़ो को श्रीमान् बनानेवाले और बहुतों का उपयोगी श्रम बिना कारण हटानेवाले यन्त्र मुझे नहीं चाहिए। छापाखानो का ही उदाहरण लीजिये, वे चलते रहेंगे। ऑपरेशन करने के शस्त्र हाथ से कैसे बन सकेंगे ? उनके लिए बड़े यन्त्रो की आवश्यकता है ही। लेकिन आलस्य-रोग को मिटाने के लिए इस चरखे के सिवा दूसरा कोई यन्त्र नही है। आपसे बातचीत करते हुए भी मै उसे चलाकर देश की सपत्ति मे थोडी वृद्धि कर सकता हूँ।

जीवन-निर्वाह मजदूरी की आवश्यकता

१२-७-'२५

यह बहस की गयी है कि देहात की बनी चीजो की कीमते बढने से, जो कि ज्यादा मजदूरी देने से अवश्य बढेगी, हमारा उद्देश्य विफल होगा, क्योंकि कीमते ऊँची रहीं, तो उनकी बिक्री गिर जायगी।

अगर चीजें बनानेवाले को उसमे केवल जीवन-निर्वाहभर दाम मिलते हैं, तो कीमत इतनी ऊँची क्यों रखी जाय ? खरीदनेवाली जनता को लोगो की दीन दशा का भान कराना चाहिए। अगर श्रम करनेवाले करोडो के प्रति न्याय करना है, तो हमे उनकी वाजिब देन चुकानी चाहिए। हमे उन्हे इतनी मजदूरी देनी चाहिए कि जिससे उनका निर्वाह चल सके, उनकी लाचारी से लाभ नही उठाना चाहिए।

हमे यन्त्रोद्योग की स्पर्धा मे नहीं उतरना है। जिस खेल मे हमारी

हार निश्चित है, उसमे हम क्यो जायँ ? पैसे की भाषा मे बडे कारखाने-वाले, चाहे वे देशी हो या विदेशी, मनुष्य के हाथ के श्रम पर सदा मात करते रहेगे। हमारा प्रयास असत्य और अमानुष अर्थशास्त्र की जगह सच्चा और मानवी अर्थशास्त्र स्थापित करने के लिए है। मानवी कानून नाशकारी स्पर्धा नही, वरन जीवनदायी सहयोग है। अगर मनुष्य ईश्वर का अंश है, ईश्वर सबमे व्याप्त है, तो हम थोडो की नही, बहुसख्यको की नही, बल्कि सबकी भलाई करने के लिए बने हैं।

१०-८-'३५

प्रश्न : खादी महँगी होने के कारण अगर उसकी माग न रहे, तो हजारो गरीब कत्तिनो का क्या होगा ?

उत्तर : यही बात मै आपके सामने उलटे रूप मे रखूँगा। दो पाई मजदूरी की जगह एक पाई करके अगर दुगुने मजदूरो को काम दे सके और वे लाचार कत्तिने इतने के लिए भी काम करने को तैयार हो, तो क्या आप ऐसा करने की हिम्मत करेगे ? आप ऐसा नही करेगे, अर्थात् आपको ऐसी एक औसत मर्यादा मुकर्रर करनी ही पडेगी, जिसके नीचे आप नही उतर सकेगे। अगर ऐसी औसत मर्यादा मुकर्रर करनी ही है, तो सदा के लिए वह ठीक से मुकर्रर क्यो न कर ली जाय। फिर भले ही थोडे समय के लिए कुछ कामगारो पर उसका विपरीत परिणाम क्यो न पडे। जब तक खरीददार मर्यादित हैं और उत्पादन अमर्याद, तब तक कुछ उत्पादको को ना कहना ही पडेगा। फिर हम जान-बूझ-कर औसत मजदूरी ऊँची क्यो न रख दे, जिसमे गरीबो का निर्वाह हो सके अन्यथा इस अनजान मे किये हुए शोषण का अन्त ही नही आयेगा।

प्रश्न : अब आप खादी की व्याख्या बदलेगे। अब वह केवल हाथ-कता, हाथ-बुना कपडा न रहकर ऐसा हाथ-कता, हाथ-बुना कपडा होगा, जिसके बनाने मे नियत दर से मजदूरी दी गयी हो।

उत्तर : इसमे कोई शक नही है।

प्रश्न : पर हम तो अब तक सबको यही कहते आये हैं कि कताई पूरक धधा है, वह केवल फुरसत के समय किया जाता है ?

उत्तर : हाँ और ना। ऐसे हजारो ह, जो दिनभर कताई करते ह। उनके लिए वह पूरक धन्धा न होकर मुख्य धधा है। अगर ऐसा न हो, तो भी दूसरे किसी एक घटे के काम के लिए आप जो मामूली मजदूरी देगे, उतनी ही एक घण्टे के इस काम के लिए भी क्यो न दे ?

प्रश्न : अगर अच्छे चरखे और औजार देकर उनकी कुशलता बढाये, तो कत्तिने अपने आप ज्यादा कमाने लगेगी, फिर मजदूरी बढाने की जरूरत क्या ?

उत्तर : वे कमायेगी, पर उसमे आपका क्या श्रेय रहा ?

प्रश्न : यह है कि उनको अब तक न्याय नही मिला। वह देने के लिए हम क्या करते हैं ? यह सब खादी पहननेवालो की आत्मशुद्धि का सवाल है। हम यह न भूले कि हमारा लक्ष्य दरिद्रनारायण की सेवा है। मुश्किले हैं, पर हमे उन्हे धीरे-धीरे हल करना है।

१४-९-'३५

हमने सदियो से गरीबो की उपेक्षा की है। जब हमने उनके श्रम पर अपना अधिकार माना, हमारे दिल मे यह विचार तक न‍ही आया कि उनको भी अपनी मजदूरी पूरी मॉगने का अधिकार है। ा को श्रम वैसी ही पूँजी है, जैसा हमारा पैसा। समय आ गया है उनकी आवश्यकताओ का, उनके काम और विश्राम के घटों उनके जीवनस्तर का खयाल करे।

१-१-'३७

यह बहस व्यर्थ है कि खुद कत्तिने ही थोडो को ज्याद मिलने की अपेक्षा सबको कम मजदूरी मिलना मजूर करे स्ताव है, शोपक की और गुलाम मालिक की यही बहस रही है। गुला मान्स ऑफ ऐसे अभागे थे, जो गुलामी की जजीर पसन्द करते थे। ा गया है वचना न कर ले। हमने उनकी गरज से अपना मौका साध ता के प्रश्न का विचार उनके दृष्टिकोण से नही किया है। सकता

१९-१०-'३५

इन सारे वर्षों मे हमने ग्राहक का ही विचार किया है, कत्तिनो के लिए बहुत थोडा। हम भूल गये थे कि चरखा-सघ कत्तिनो का सघ है, न कि ग्राहको का। हमे कत्तिनों के सच्चे प्रतिनिधि बनना चाहिए।

* १६-५-'३६

एक कारखाना कुछ सैकडे लोगो को काम देकर हजारो को बेकार कर देता है। एक कारखाने मे हजारो टन तेल निकलेगा, पर वह हजारो तेलियो को बेकार कर देगा। मै इसे विनाशकारी शक्ति कहता हूँ। दूसरी ओर करोड़ो हाथो से होनेवाली उत्पत्ति रचनात्मक और सबके भलाई की होती है। बड़े यन्त्रों द्वारा, चाहे वे राजसत्ता की मालकियत के ही क्यो न हो, बडे पैमाने पर की गयी उत्पत्ति हमारे काम की नहीं।

प्रश्न : करोड़ो का श्रम बचाकर उनको बौद्धिक कामो के लिए अधिक फुरसत क्यो न दे ?

उत्तर : फुरसत एक हद तक ही अच्छी और जरूरी है। ईश्वर ने मनुष्य को श्रम करके रोटी खाने के लिए बनाया है। मैं उस सभावना से भय खाता हूँ, जब अन्न सामग्री सहित हमारी आवश्यकता की सभी ही हेंगे जादूगर की टोपी मे से निकल आयेंगी।

भले ही

खादी-निष्ठा

क्यो न प-

६-६-'३६

तब तक कु

कर औसत -कार्यकर्ता यह खयाल रखे कि काग्रेस के बाहर कई बड़े सार्व-

हो सके ्म करनेवाले लोग हैं, जो खादी की निन्दा करते हैं। वे उसको

नही आयेगा। ी। वे यह भी समझ ले कि काग्रेस मे भी ऐसे लोग हैं, जो

प्रश्न : अ ास नही रखते, उसका मजाक उड़ाने मे कभी नही थकते और

कता, हाथ-बु ार्यक्रमो से उसे हटाने मे सफल होने तक केवल अनुशासन के

होगा, जिसके उपयोग करते हैं। इन बाधाओ के बावजूद खादी की

उत्तर है। इसमे शका नहीं कि अगर ऐसे विरोधों का मुकाबला

न करना पड़ता, तो उसकी प्रगति बहुत ज्यादा होती। अगर बड़े-से-बड़ा कांग्रेसी नेता भी खादी के खिलाफ हो जाय, तो खादी-कार्यकर्ताओं को क्या करना चाहिए? मुझे आशा है कि खादी के और उसकी शक्ति के सोलह वर्षों के अनुभव के बाद ऐसे पक्के खादीनिष्ठ काफी हैं, जिनकी उसमें श्रद्धा उस काम के अपने खुद के ज्ञान पर दृढ़ हो गयी है। अगर अब भी यह श्रद्धा उधार ली हुई है, तो उस बड़े अखबार-नवीस की वह भविष्यवाणी सचमुच सच होगी कि मेरे मरने पर खादी भी मर जायगी और मेरे देहपात पर जो चरखे तोड़े जायँगे, वे मेरे शरीर को जलाने के लिए काफी होंगे। मैं खादी-कार्यकर्ताओं को सुझाना चाहता हूँ कि वे फिर से विचार कर लें और अगर उनको खादी के आर्थिक महत्त्व में शंका हो, तो वे अपने विचार की दुरुस्ती कर लें।

आर्थिक दृष्टि से खादी टिक सकती है क्या?

२०-६-'३६

अगर इस प्रश्न का आशय यह है कि कीमत में खादी जापानी कपड़े या देशी मिल के कपड़े से टक्कर ले सकेगी या नहीं, तो निश्चित उत्तर है, नहीं। पर यही नकारात्मक उत्तर श्रम बचानेवाली यंत्र-श नहीं
मुकाबले में मनुष्य की शक्ति से बनी हरएक चीज के लिए देना योगों को
भारत के कल-कारखानों में बने हुए माल के लिए भी यही उ
विदेशी स्पर्धा का मुकाबला करने के लिए कारखानों में बने
को, लोहे को, शक्कर को भी किसी-न-किसी रूप में सरकार
जरूरत है। इस रूप में प्रश्न पूछना ही गलत है। खुले बाजा १६-१-'३७
संगठित उद्योग कम संगठित उद्योग को सदा हटा सकेगा, प्रस्ताव है,
कि उसको बाउण्टी मिले, दिलचाही पूँजी मिले और कुछ सम मान्स ऑफ
उसका माल हानि में भी बेचा जा सके। भारत में इस प्र या गया है
उद्योगों की दुर्दशा हुई है। भ्यता के

जो देश अमर्याद विदेशी स्पर्धा के लिए खुला है, हो सकता

शिकार हो सकता है, गुलामी का भी, अगर विदेशी लोग चाहे तो। इसका नाम है, शान्तिमय घुसना (Peaceful Penetration)। अब एक कदम आगे बढ़ें, तो समझ लेंगे कि बड़े यन्त्रो द्वारा बनाये हुए माल की और हाथ से बनाये हुए माल की यही कथा होगी। यही हमारी आँखो के सामने बीत भी रहा है। आटे की छोटी मिले हाथचक्की को उखाड रही हैं, तेल के कारखाने बैलघानियो को, चावल की मिले ढेकी को, शक्कर के कारखाने गुड के कढावो को, आदि। देहाती श्रम का यह उजडना देहातियो को दरिद्री बना रहा है और पैसेवालो को श्रीमान्। दुर्भाग्य की बात यह है कि देहाती लोग भी अनजान मे, पर निश्चित रूप से अपने ही नाश मे मदद कर रहे हैं।

यह सब सख्त खिलाफ बाते कबूल कर लेने पर भी मेरे इस कहने का क्या यह अर्थ है कि केवल खादी ही एक सच्ची आर्थिक बात है? तो फिर से मै उसे पूरी कह दूँ—करोडो देहातियो के लिए केवल खादी ही उस समय तक, अगर वह समय कभी आये तो, सच्चा आर्थिक प्रस्ताव है, जब तक सोलह वर्ष के ऊपर की उम्र के हरएक कार्यक्षम स्त्री-पुरुष को भारत के डर देहात मे उसके खेत, घर या कारखाने के लिए काम और पूरी ही हो जी देने की ज्यादा अच्छी पद्धति नही पायी जाती अथवा उस समय भले ही . ब देहात की जगह लेने के लिए काफी शहर न बस जायें, जिनमे क्यो न प. । आवश्यक आराम और सुविधाएँ, जो व्यवस्थित जीवन के तब तक कु चाहिए, न मिल जायें। मुझे यह पूरा प्रस्ताव यह बताने के कर औसत कपडा कि काफी लम्बे समय तक, जहाँ तक कि हमारी नजर हो सके उम है, खादी को स्थान रहेगा ही।
नही आयेगा। तुरन्त हल करने की समस्या यह है कि जो करोडो देहाती

प्रश्न : अ दरिद्री हो रहे हैं, उनको काम और मजदूरी कैसे दी जाय?
कता, हाथ-बु र्थिक, मानसिक और नैतिक दशा अधिकाधिक बिगड रही होगा, जिसके न करने की और जिंदा रहने की भी इच्छा खो रहे हैं। वे
उत्तर है जिन्दा रह रहे हैं। खादी उन्हे काम देती है, ओजार देती

है और उनके माल के लिए बाजार भी देती है। जहाँ अब तक निराशा रही, वहाँ वह आशा देती है।

प्रश्न अगर यह इतना आशाजनक प्रस्ताव है, तो फिर अब तक खादी की इतनी कम प्रगति क्यों हुई?

उत्तर करोड़ों की भाषा में खादी की प्रगति भले ही थोड़ी दीखे, पर अन्य किसी एक-एक उद्योग की अपेक्षा वह अधिक ही है। जहाँ खादी-केन्द्र है, वहाँ वह देहाती मजदूरों में से बहुसंख्यकों को सबसे ज्यादा मजदूरी बाँटती है। उसका व्यवस्था-खर्च कम-से-कम है और उसका पैसा लोगों में ही घूमता है। खादी को देहातियों के लम्बे समय के पूर्वग्रहों से लड़ना पड़ता है। राजसत्ता द्वारा संरक्षण न मिलने के कारण उसे बेईमान स्पर्धा से झगड़ना पड़ता है, अर्थशास्त्र-विशारद समझे जानेवालों के प्रचलित मतों से और खादी पहननेवालों की अधिकाधिक सस्ती मिलने की माँग से भी। इस प्रकार यह इस अभागे देश के देहातियों और शहर-वासियों को सच्चे अर्थशास्त्र की शिक्षा देने का सवाल है। इसलिए मैं कहता हूँ कि गज के हिसाब से खादी मिल के कपड़े से महँगी भले ही हो, लेकिन उसके सब गुण मिलाकर और देहातियों की दृष्टि से वह एक ऐसा आर्थिक और व्यावहारिक प्रस्ताव है, जिसका दूसरा कोई सानी नहीं है। इसका संपूर्ण परीक्षण करने के लिए खादी में अन्य ग्रामोद्योगों को भी गिन लेना चाहिए।

शास्त्रीयता चाहिए

१६-१-'२७

मैंने कई बार कहा है कि जैसे खादी एक ठीक आर्थिक प्रस्ताव है, वैसे ही वह एक शास्त्र और काव्य भी है। मेरे खयाल से 'रोमान्स ऑफ कॉटन' नाम की एक किताब है, जिसमें कपास के मूल का शोध किया गया है और यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि उस शोध ने सभ्यता के प्रवाह को कैसे बदला। हरएक चीज का शास्त्र और काव्य हो सकता

है, अगर उसमे शास्त्रीय या काव्य की भावना हो। कुछ लोग खादी को हँसते है और जब कताई का नाम लिया जाता है, तो वे अधीर हो जाते है या तिरस्कार जताते है। पर वह तिरस्कार की या मजाक की वस्तु नही रहती, जब हम उसमे देशभर मे छाये हुए आलस्य, बेकारी और दारिद्र्य का हटाने की शक्ति पाते हैं। वास्तव मे उसमे इन तीन बुराइयो का रामबाण इलाज होने की जरूरत नही है। रस पैदा करने के लिए उसमे उस शक्ति का ईमानदारी के साथ आरोपण करना काफी है। पर केवल पैसे के लिए ओटने, धुनने, कातने या बुननेवाले अज्ञानी गरजू कारीगर की तरह, उसका काम चलाते रहकर उसमे वैसी शक्ति का आरोपण करने मात्र से काम नही चलेगा। उसकी शक्ति मे विश्वास रखनेवाला व्यक्ति जान-बूझकर, समझदारी से, व्यवस्थित रीति से और शास्त्रीय भाव से उसके पीछे पडेगा। वह कोई बात पूर्वग्रह से नहीं मान लेगा, प्रत्येक पहलू की परीक्षा करेगा, ऑकडो और घटनाओ की जॉच करेगा, हार से घबडायेगा नही, छोटी-मोटी सफलता से फूलेगा नही और अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचे बिना सन्तोष नही मानेगा। शास्त्र नाम सार्थक होने के लिए उसमे शरीर, मन और आत्मा की भूख को शान्त करने का पूरा अवकाश होना चाहिए।

देशी उद्योग

२२-१०-'३७

उस उद्योग को देशी मानना चाहिए, जो आम जनता के हित का साबित किया जा सके। उसमे काम करनेवाले प्रवीण या सामान्य सब हिन्दुस्तानी हो, पूँजी और मशीनरी भी हिन्दुस्तानी हो। जो मजदूर काम मे लगाये जाते हैं, उनको जीवन-निर्वाह मजदूरी मिलनी चाहिए, आरामदेह घर भी और उनके बच्चो की भलाई (welfare) की जिम्मेदारी मालिको पर रहे।

सच्चा खादीधारी

२६-२-'३८

खादी की कल्पना अहिंसा की नींव और उसकी मूर्ति के रूप में की गयी है। सच्चा खादीधारी झूठ नहीं बोलेगा। सच्चा खादीधारी अपने दिल में हिंसा, कपट, अशुद्धि को स्थान नहीं देगा। जो यह कहे कि अगर खादी के मानी यह हैं, तो हम वह नहीं पहनेंगे, उनको मैं कहूँगा—आपको अच्छा लगे, वैसा करने को आप खुले हैं, पर फिर आपको सत्य और अहिंसा के मार्ग से स्वराज्य प्राप्त करने की बात को भूल जाना चाहिए। मैं आपको सत्य और अहिंसा का पालन करने के लिए मजबूर नहीं करूँगा और न मेरे तरीके से स्वराज्य प्राप्त करने के लिए भी।

सस्ता-महँगा

१०-१२-'३८

जीवन पैसे से अधिक है। हमारे बड़े-बूढ़ों को, जो काम नहीं कर सकते और हम गरीबों पर बोझरूप हैं, मार देना सस्ता होगा। हमारे बाल-बच्चों को भी मार देना सस्ता होगा, जिनकी हमारे भौतिक आराम के लिए आवश्यकता नहीं है और जिनका बिना बदले में कुछ मिले हमें भरण-पोषण करना पड़ता है। पर हम बूढ़ों को या बच्चों को मारते नहीं, इतना ही नहीं, बल्कि कितना ही खर्च क्यों न हो, उनका पालन-पोषण करने में गौरव मानते हैं। इसी प्रकार हमें दूसरा सारा कपड़ा छोड़कर खादी को कायम रखना चाहिए। हम केवल आदत के कारण ही खादी का विचार उसकी कीमत की दृष्टि से करते हैं। हमें अपने खादी के अर्थशास्त्र के विचारों में दुरुस्ती करनी चाहिए। देश की भलाई की दृष्टि से उसका अध्ययन करेंगे, तो पायेंगे कि खादी कभी महँगी नहीं हो सकती। परिवर्तन-काल में हमारे घरेलू अर्थ में जो गड़बड़ होगी, वह सहन करनी पड़ेगी।

निष्फल प्रयास

३-९-'३९

प्रश्न : एक मित्र लिखते हैं, बम्बई-सरकार बुनकरों की मदद में एक बड़ी रकम खर्च करती है, तथापि बुनकर मिलों का मुकाबला नहीं कर सकते। मेरी राय में इस खर्च का कोई फल नहीं मिलता। बुनकर लोग विदेशी सूत का भी इस्तेमाल करते हैं। इस निष्फल मदद के साथ-साथ सरकार कुछ खादी को भी मदद देती है। मैं नहीं जानता, इस दोगली भक्ति का कहाँ तक समर्थन हो सकता है।

उत्तर : मेरी सदा यह राय रही है कि जो बुनकर विदेशी या स्वदेशी मिल के सूत का उपयोग करते हैं, उनको दी हुई मदद पैसे और श्रम की बरबादी है, क्योंकि मिल का सूत बुननेवाले बुनकर का लोप हो जाना केवल समय का प्रश्न है। बुनकर की आशा केवल व्यापक हाथ-कताई में ही है।

अहिंसक व्यवस्था में कताई का स्थान

४-१२-'३९

जो यह मानते हैं कि भारत अहिंसा के मार्ग से स्वतन्त्र हो सकता है और स्वतन्त्र रखा जा सकता है, वे इस बात पर अवश्य विचार करेंगे कि व्यापक पैमाने पर अहिंसा तभी रह सकती है, जब आम जनता समझ-बूझकर उपयुक्त काम में लगायी जा सके। वह एक कौन-सी बात है, जो सब लोग नाममात्र की पूँजी से आसानी से कर सकें और जो दिल को शान्त रखे?

उत्तर है, हाथ-कताई और उसकी दूसरी प्रक्रियाएँ। यूरोप के देशों में जहाँ लड़ाई की संस्था स्थिर मान ली गयी है, जवान पुरुष फौजी सेवा के लिए कुछ वर्ष जबरन लिये जाते हैं। जिस देश को लड़ाई की तैयारी किये बिना अपना सरक्षण करके जीवन चलाना है, उसे लोगों को उत्पादक राष्ट्रीय सेवा में लगाना जरूरी है। अगर देश की मूल आवश्यकता की

चीजें केन्द्रीय उद्योगों के द्वारा बनायी जाती हैं, तो पूँजी की तरह उनका भी सरक्षण हिंसामय साधनों से करना पडेगा। जिस देश की सस्कृति अहिंसा पर खडी है, उसके लिए आवश्यक है कि उसका हरएक घर यथासम्भव स्वावलम्बी बने।

क्या खादी पहननेवाले को कातना भी चाहिए ?

२-८-'४०

आर्थिक दृष्टि से खादी को अपनाना काफी है। पर अगर खादी को स्वराज्य मिलाने का शस्त्र बनाना है, तो कताई भी उतनी ही जरूरी है। खादी हमें आर्थिक स्वावलम्बन देती है। कताई हमें कम-से कम मजदूरीवाले से जोडती है। फौजी देशों मे हरएक व्यक्ति फौजी काम के लिए कुछ समय देता है। हमारा आधार अहिंसा होने के कारण हरएक को कुछ समय यज्ञरूप कताई करनी ही चाहिए। अपने-आप बन्धनरूप मानकर कताई के लिए रोजाना एकआध घटा देना क्या बहुत ज्यादा है ?

अहिंसा और चरखा

९-४-'४०

चरखे का और उसके सहचारी भावों का पुनरुज्जीवन तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि एक बडी तादाद मे बुद्धिमान् और देशप्रेमी, नि स्वार्थी लोग एक धुन से चरखे का सन्देश देहात में पहुँचाकर उनकी निस्तेज आँखो मे आशा और प्रकाश नहीं ला देते। यह सही तरीके का एक सहयोग और प्रौढ-शिक्षा का बडा प्रयत्न है। वह चरखे के नि शब्द जीवनदायी घूमने की तरह लोगो मे मूक, पर निश्चित रीति से क्रान्ति ला देता है। लेकिन अगर राष्ट्र को अहिंसा मे श्रद्धा नहीं होगी, तो वह स्वराज्य नहीं ला सकेगा। इतना ही नहीं, वरन् चलेगा भी नहीं। वह उत्तेजक नहीं है। जो देशभक्त स्वातन्त्र्य के लिए तरसते हैं, वे शायद चरखे को तिरस्कार की नजर से देखें। वे उसे इतिहास के पन्नो मे नहीं

पा सकेंगे। स्वातन्त्र्य के पुजारी विदेशी शासक को हटाने के लिए लडने के उत्साह से भरे रहते है। वे सारे दोष उसमे देखते हैं, अपने मे कुछ भी नही। वे रक्त की नदियाँ बहाकर अपना स्वातन्त्र्य प्राप्त करनेवाले देशो के उदाहरण बताते है। अहिंसामय चरखा उनको बिल्कुल ठडा मामला दीखता है।

परदेश के लिए मिल का कपड़ा

२९-९-'४०

प्रश्न : हिन्दुस्तानी लोग भले ही खादी पहने, पर परदेश मे कपड़ा और सूत भेजने के लिए अपनी मिले क्यो न चलाये ?

उत्तर : मै इसमे हर्ज नही मानूँगा, अगर कपडा लेनेवाले देश को सचमुच उसकी गरज हो तो। भारत की भलाई के लिए मै दूसरे देशो का शोषण नही करना चाहता। हम खुद इस शोषण के जहरीले रोग से पीडित है। मै मेरे देश को ऐसी बात का दोषी नही बनाना चाहूँगा।

× × × ×

नोट : यहाँ तक के लेख प्रायः अंग्रेजी के अनुवाद है। इसके बाद के गाधीजी के हिन्दी भाषणो या लेखो मे से है।

× × × ×

अगस्त १९४१

जबरदस्ती से हम खादी को व्यापक नही बनाना चाहते। लोगो की आदत, मान्यता आदि को बदलकर ही हम अपना काम करना चाहते हैं। इसलिए सब दृष्टियो से हमारी शोध जारी रहनी चाहिए।

कार्यकर्ता लोग बुनना सीखें

अक्तूबर १९४१

मै देख रहा हूँ कि खादी-आदोलन को २१ वर्ष से अधिक हो चुके, हैं, फिर भी एक ओर तो हमारे पास बुनकरो की कमी रहती है ओर दूसरी

और जो लाखों बुनकर हमारे देश में पड़े हैं, उनसे हम अपना सूत नहीं बुनवा सकते हैं। इस विरोधी परिणाम का कारण कहीं हमारी कुछ गफलत तो नहीं है? इसकी कुंजी यही है कि प्रायश्चित्त रूप से ही सही, खादी-सेवक-वर्ग को बुनने की प्रक्रिया भी जाननी होगी। सबसे अच्छे सूत कातनेवाले भी इन्हींमें से मिले हैं। इसी वजह से हमने कातने में काफी तरक्की कर ली है। इसी तरह सेवक-वर्ग से बुनवाना भी चाहिए था। जब हम इस इल्म को हासिल कर लेंगे, तभी हम हाथ का सूत बुनने में बुनकरों को आनेवाली कठिनाइयों को ठीक-ठीक समझ सकेंगे और हमें उनका इलाज मालूम हो सकेगा। अगर हम अपनी गलती कबूल कर ले तथा उसका प्रायश्चित्त करें, तो नतीजा यह होना चाहिए कि हाथ-सूत में इतना सुधार हो कि वह मिल-सूत का मुकाबला कर सके, शायद बिल्कुल मिल जैसा सूत आज हाथ से न निकल सके, फिर भी आज दोनों के बीच जो अन्तर है, वह न रहने पाये और बुनकर हाथ-सूत देखकर नाक-भौं न सिकोड़े, जैसा कि वे आज करते हैं।

हम जड़ को न भूलें

दिसम्बर १९४१

खादी की जड़ में जो सिद्धान्त हैं, उन्हें हमने अच्छी तरह न पहचाना, तो कितनी ही खादी हम क्यों न पैदा कर लें, हमारा काम गिरनेवाला है। हिन्दुस्तान पहले खादीमय था, इतना ही नहीं, वरन् वह दुनिया के कई बड़े बड़े देशों को भी खादी भेजता था। लेकिन आज हम उस पर अभिमान नहीं कर सकते। उस वक्त खादी का सबब राजकाज से नहीं था। उन दिनों राजा, कारबारी लोग और व्यापारी गरीबों को चूसकर खादी लेते थे, उसे बेचते थे और धन इकट्ठा करते थे। इसीलिए हमें आज भी खादी की बात समझाने में दिक्कत होती है। आज हम मानते हैं कि खादी हमारी मुक्ति का साधन है। मैंने यह बात सन् १९०८ में पहली बार सोची थी। जो चीज पहले हमारी गुलामी का कारण थी, आज वही हमारी मुक्ति

का द्वार होगी, यही समझकर हमे चलना है। इसलिए हमने खादी की जड सत्य और अहिसा पर रखी है । अगर हम जड को भूल जायँ और किसी न किसी तरह खादी पैदा करने की कोशिश करे, तो ऐसा समय आयेगा कि जब हम खादी को जला देगे। दूसरे रचनात्मक कामो का कोई उतना मजाक नही उडाता और न उतना तिरस्कार ही करता है, जितना कि कई लोग खादी का करते हैं। मिलो के आ जाने से उन्हे ऐसा करने का और भी मौका मिला है। उनकी दृष्टि से तो यह बात ठीक ही है । वे पूछते हैं कि पहले भी खादी तो थी ही, फिर हम गुलाम क्यों बने ? इसी खादी को हम स्वराज्य का जरिया कैसे समझे ? इसका जवाब देना चरखा-सघ का कर्तव्य है। अगर हम अपनी जड को न पकड़ेगे, तो हममे गन्दगी भी पैदा हो सकती है। कार्यकर्ताओ को चाहिए कि वे खादी के सब कारोबार मे शुद्धता का खयाल रखे। आज मै यह नही कहूँगा कि हमारी सबकी सब कत्तिने भी सत्य और अहिसा को पहचाने, लेकिन अपने २००० कार्यकर्ताओ के बारे मे यह जरूर कहूँगा। यदि वे ऐसे नही होगे, तो हमारा काम अच्छी तरह नहीं चलेगा। हम डूब जायँगे।

चरखा-शास्त्र

सितम्बर १९४४

(खादी-कार्यकर्ताओ के सामने दिये हुए व्याख्यान मे से)

मुझे दीखता है कि जब तक हमारा चरखे का पैगाम हम घर-घर नही पहुँचाते, तब तक हमारा काम अधूरा ही है। यही कारण है कि हम अपने आदर्श से अभी बहुत दूर है। सात लाख देहातो मे से कई ऐसे होगे, जिनको हमारी चरखा-प्रवृत्ति क्या चीज है, इसका पता भी नही है। यही हमारा ऐब है।

हमने चरखा चलाया पर सोच-समझकर नहीं, यन्त्र की तरह चलाया। चरखे मे जितना अर्थ भरा पडा है, उसे आप अपना लेते, तो मै उसमे से जितना अर्थ निकालता हूँ, उतना ही आप भी निकालते।

हम पर इल्जाम लगाया जाता है कि चरखा सघवाले, ग्रामोद्योग सघ-वाले आदि गाधीवादी सब जड होते हैं। लोगों की उन पर श्रद्धा है, पर वे जनता को देश के सब हालात ठीक तरह मे नही बता सकते।

जब हम अपने को अहिसा के पुजारी बतलाते हैं, तब अगर हम अहिसा की शक्ति क्या है, यह न बतला सके, तो हम गाधीवादी कैसे? असल मे तो गाधीवाद ऐसी कोई चीज ही नही है। वास्तव मे कुछ है, तो वह अहिंसावाद है। चरखा सघ का हरएक व्यक्ति अहिसा की जीवित मूर्ति होना चाहिए। अहिसावादी कहो या गाधीवादी कहो, तेजस्वी होने चाहिए। फिर हिंदू-मुसलमान का मसला, अस्पृश्यता की समस्या, झगडे गलतफहमियाँ, हरीफाई कुछ न रहेगी। इसी काम के लिए सघ की हस्ती है और इसीलिए हमको जीना है और मरना भी है।

हमे यह देखना है कि हमने चरखे की शोध पर्याप्त मात्रा मे कर ली है क्या? हमने उसके पीछे काफी तपश्चर्या की है, कुछ आविष्कार किये है। चरखे तो बहुत बनाये। लेकिन अब ऐसा शास्त्री पैदा करना है, जो यत्र-शक्ति से पूरा परिचित हो। वह ऐसे चरखे बना दे, जिससे आज हम जितना सूत निकालते हैं, उससे अधिक अच्छा और अधिक सूत निकाल सकें। यदि ऐसा शास्त्री न मिला, तो भी मैं हारनेवाला नहीं हूँ।

जो चरखा सदियो तक कगालियत, लाचारी, जुल्म, बेगार का प्रतीक रहा है, उसे हमने आधुनिक ससार की सबसे बडी अहिंसक शक्ति, सगठन तथा अर्थ-व्यवस्था का प्रतीक बनाने का बीडा उठाया है। और यह सब मै आपके मार्फत करना चाहता हूँ।

कांग्रेस और सूत-शर्त

सितम्बर १९४५

प्रश्न : काग्रेस मे आपने खादी की शर्त लागू करवायी और चरखा-सघ मे सत की। चरखा-सघ के सिवा अन्य खादी को काग्रेसियो के लिए गैरकानूनी किया और अब बिना सूत के चरखा सघ से खादी देना मना कर दिया। क्या यह जबरदस्ती नहीं है?

उत्तर : खादी कांग्रेस ने अपनायी, चरखा संघ ने सूत की शर्त लगायी और जिस खादी को चरखा संघ ने प्रमाणित नही किया है, वह गैर-कानूनी है, अब खादी खरीदने के लिए कुछ अंश मे सूत देना पड़ता है। यह सब सही है। लेकिन इसमे मै तो जरा-सी भी गलती नही पाता हूँ। जबरदस्ती उसका नाम है, जिसमे इनकार करने पर सजा होती है। सजा क्या हो, यह अलग बात है। मै अगर मुफ्त खादी न दूँ और उसके दाम लूँ, तो उसमे कोई जबरदस्ती नही है। इसी तरह हरएक संस्था मे सदस्य होने की कुछ न कुछ शर्त रहती ही है। अगर उसमे बाद मे बदल किया जाता है, तो वह भी जबरदस्ती नही है। ऐसे ही अप्रमाणित खादी के बारे मे भी है। बाहर की याने अप्रमाणित खादी चले, तो वह शुद्ध खादी है या नही, बुनकर या कत्तिन को ठीक दाम दिया गया है या नही, इसकी जिम्मेवारी कौन उठाये ?

जैसे-जैसे समय आगे बढ़ता है और अनुभव मिलता है, वैसे-वैसे कानूनो मे परिवर्तन होता ही रहता है। देखना यह चाहिए कि जो परिवर्तन हुआ है, वह हेतु को सफल करता है या नही, सत्य अहिंसा का अनुसरण करता है या नही, पारमार्थिक है या स्वार्थवश हुआ है। इन सब प्रश्नो का उत्तर बतायेगा कि यह परिवर्तन मूल हेतु को सिद्ध करने के लिए ही है और इसमे किसी जगह जबरदस्ती की बात नही है।

मेरे माल के बदले मे पैसे की जगह सूत मॉगूॅ या वैसी ही कोई दूसरी वस्तु मॉगूॅ, तो उसके लिए मुझे धन्यवाद ही मिलना चाहिए।

अब जरा भीतर देखे। हम मानते है—और जो मानते है, उन्हीके लिए खादी की बात है—कि खादी व्यापक होने से अहिंसक स्वराज्य मिलेगा। ज्यादे-से-ज्यादे आदमी थोडा समय भी कातेगे, तो स्वराज्य-प्राप्ति मे बहुत मदद मिलेगी। इसलिए हम कातते है, तो मजबूर होकर नही, लेकिन शौक से और कातने से हम गरीबो के साथ सीधा सम्बन्ध जोडते हैं, यह अधिक फायदा उठाते हैं।

इन सब कारणो से मेरा उत्तर साफ है कि सूत को खरीदी का दाम बनाने मे तनिक भी जबरदस्ती नही है।

सेवक और पैसा

३-११-'४५

आज भी चरखा सघ के नौकर कहिये या सेवक कहिये, सारे हिन्दुस्तान मे ह। उनकी सख्या ३००० है। इसे मे बहुत छोटी सख्या मानता हूँ। खादी जब हिन्दुस्तान मे फैल जायगी, तब सख्या बहुत बढनी चाहिए। अगर जितने देहात ह, उतने सेवक मिल जायँ, तो चरखा सघ के दफ्तर मे सात लाख नाम होगे। इसके लिए काफी पैसा चाहिए। इस डर से कोई यह न माने कि इतने सेवक होना असभव है। मैने ऐसा कभी नही माना। जब काम शुभ रहता है और लोगो मे उसके लिए तैयारी रहती है, तब पैसा मिल ही जाता है। जीवनभर मैने सस्थाएँ बनाने और चलाने का ही काम किया है। मेरे अनुभव मे एक सस्था भी ऐसी नही रही है कि जो पैसे के अभाव से मिट गयी हो या छोटी रह गयी हो। उलटे मेरा अनुभव यह है कि सस्था सिर्फ कार्यकर्ता तथा सेवक के अभाव मे मिटी है या छोटी रही है। इसके उत्तर मे कोई ऐसा कह सकता है कि बडे-बडे कारखाने चलते हैं और सरकारी नौकरी मे भर्तियाँ होती हैं, वह पैसे से नही तो और किससे होती हैं? जो ऊपर की बात पूरी तौर से नही समझे हैं, वे ही ऐसी शका उठा सकते ह। मैने ऐसा नही कहा कि पैसे से कुछ भी नही हो सकता है। अगर पैसे से बहुत-से काम नही होते, तो हम पैसे के गुलाम क्यो बनते? मेरा कहना तो यह है कि अगर पैसे के गुलाम बनना है, तो लोक-सेवा की बात छोड देनी चाहिए। गुलामो के नसीब मे कुचला जाना ही बदा होता है। अगर हम पैसे को अपना गुलाम समझकर, साधन समझकर उसका उपयोग करे और वह भी सेवा-भाव से, तो हम उसका सदुपयोग करते ह। सेवा-काम के लिए हमारी पहली और अनिवार्य आवश्यकता मनुष्य है और जब ऐसे

सेवक मिल जाते हैं, तो पैसे उनके पीछे दौडकर आते हैं। पैसा ढूँढने के लिए ऐसे लोगो को जाना नही पडता। इस कारण मैंने कहा है कि सात लाख या इससे भी अधिक सेवक मिले, तो पैसे हमारी तिजोरी मे ही पडे हैं, ऐसा समझना चाहिए। यह कहा जा सकता है कि लोगो को ललचाये या लुभाये, इतना पैसा हम नही देते हैं। यह बात मै कबूल करूँगा। यहाँ तो भावना ही है। चरखा सघ जैसी पारमार्थिक सस्था मे जो लोग आते है, वे सेवा के लिए आते हैं, माहवार तनख्वाह के लिए नही। दरमाह लेते तो हैं, क्योकि जैसे धनिक को, वैसे ही गरीब को भी खाना तो चाहिए ही, लेकिन वह जिन्दा रहने के लिए और सेवा की शक्ति रखने के लिए। ऐसे सेवक शौक के लिए न खाते हैं, न पीते हैं, न पहनते हैं।

खादी-सेवक और राजनीतिक काम

अगर चरखा सघ के सेवक इस प्रकार के हैं, तो उनको राजप्रकरण मे काम करने को समय ही नही रहता। चरखा सघ के दफ्तर मे आठ घटे दिये और बाकी का समय मौज, शौक या दूसरे कामो मे लगा दिया, तो चरखा सघ का काम नही चल सकता। क्योकि उन्हीको चरखा सघ को बनाना या बिगाडना है। इसलिए आठ घटे से बाहर का समय भी उसी काम को बढाने की शक्ति पाने के लिए खर्च करना चाहिए, जैसे कि खादी बनाने की प्रक्रियाएँ सीखना, खादी-शास्त्र पढना तथा ऐसे ही कई काम भलीभाँति करना।

इसका मतलब यह नही है कि चरखा सघ मे काम करनेवालो को राजप्रकरण मे या दूसरे कामो मे रस नही है। रस तो है और चाहिए। जो उस रस को अकुश मे रखकर सब रस चरखा सघ के मार्फत ही पैदा करता है और उसका उपयोग करता है, वही सच्चे राजप्रकरण को पहचानता है। वह सच्चा मतदाता रहेगा और काग्रेस की तरफ से जो उम्मीदवार खडा किया जाता है, उसे मत देगा, लेकिन वह दूसरो को मनाने की झझट मे नही पडेगा, सभाओ मे व्याख्यान नही देगा।

कांग्रेस का काम और जनता का काम एक ही है। कांग्रेस जनता की ही है। कांग्रेस ने चरखा संघ को पैदा किया है। चरखा संघ भी जनता का है। जैसे राजप्रकरण कांग्रेस का है, वैसे ही चरखा संघ भी कांग्रेस का है। लेकिन एक ही आदमी दो घोड़ों पर सवारी कैसे करे? जो चरखा संघ में जाता है, वह सारे समय चरखा संघ का ही काम करे। जो राजप्रकरण में जाता है, वह राजप्रकरण का ही काम करे। इस तरह दोनों अपना अपना काम बाँटकर एक-दूसरे को पूरी मदद देते हैं। चरखा संघ का यह नियम रहा है कि जो चरखा संघ में काम करनेवाले हैं, वे राजप्रकरण में क्रियात्मक हिस्सा न लें।

अहिंसक समाज, स्वावलंबन, खेती आदि

२९-११-'४७

प्रश्न : रचनात्मक कार्य का उद्देश्य जनता को अहिंसात्मक राज्य-पद्धति के लिए तैयार करना बतलाया जाता है। क्या यह व्याख्या ठीक है? या "ऐसी समाज-व्यवस्था और राज्य-व्यवस्था, जिसमें एक आदमी को दूसरे आदमी के श्रम से नाजायज फायदा उठाने की गुञ्जाइश नहीं है" ठीक होगी?

उत्तर : आपकी व्याख्या ठीक तो है, लेकिन अधूरी है। अधूरी कैसे है, यह आपके दूसरे प्रश्न के उत्तर में बताया जायगा।

प्रश्न : यदि यह व्याख्या सही हो, तो ऐसा मालूम होता है कि ऐसी समाज-व्यवस्था और राज्य-व्यवस्था का निर्माण हम यन्त्र-शक्ति का ज्यादा-से-ज्यादा उपयोग करके भी कर सकते हैं। क्या अहिंसक राज्य-पद्धति के लिए ज्यादा-से-ज्यादा मात्रा में हस्त-व्यवसाय की जरूरत है? यदि है, तो कैसे?

उत्तर : अहिंसा के टुकड़े नहीं किये जा सकते। अहिंसा मनुष्यमात्र का गुण है या यों कहिये कि उसकी जाग्रत अवस्था में अहिंसा उसका गुण होना चाहिए। मनुष्य अहिंसा-परायण हो, यही उसकी जाग्रत अवस्था का बड़ा चिह्न है। अगर इस तरह से अहिंसा को देखा जाय, तो मालूम होगा

कि हमे अपनी जरूरते अपने हाथो से ही पूरी करनी चाहिए। अगर हम ऐसा न करे, तो इसके लिए हमे दूसरी शक्ति पर निर्भर रहना पडेगा। और जब तक यह स्थिति रहेगी, तब तक हम अपने को निर्भय महसूस नही करेगे। दूसरा भय यह भी है कि अगर हम यन्त्र का उपयोग ज्यादा से-ज्यादा करेगे, तो हमे उनकी रक्षा के लिए बडा उद्योग करना पडेगा अर्थात् फौज रखनी पडेगी, जैसा कि आज जगत् मे हो रहा है। बात यह है कि यद्यपि हमे बाहरी आक्रमण का डर न रहे, तो भी भीतर ही जिनके हाथो मे बडे यन्त्र होगे, उनके दास बनकर रहना होगा। अणुबम को ही लीजिये। अणुबम आज जिनके पास है, उनका डर उनके मित्रो को भी है।

प्रश्न : सूत कातने के पक्ष मे एक कारण यह दिया जाता है कि उससे मनुष्य स्वावलम्बी बनता है। क्या परावलम्बी आदमी की बनिस्बत स्वावलम्बी आदमी समाज की ज्यादा सेवा कर सकता है? क्या आपका ऐसा कहना है कि स्वावलम्बन मे और समाज-सेवा की शक्ति मे कोई ऐसा सम्बन्ध है, जिससे हम ऐसा कह सके कि जो मनुष्य अधिक-से-अधिक स्वावलम्बी हो, वह उतनी ही अधिक सेवा कर सकता है?

उत्तर : इस शका का समाधान करने के लिए भी अहिसक दृष्टि को सामने रखना होगा, क्योकि मैने जो व्यवस्था बतलायी है, उसकी जड मे सत्य और अहिसा है। हमारा प्रथम कर्तव्य तो यह है कि हम समाज के लिए भाररूप न हो, अर्थात् स्वावलबी बने। इस दृष्टि से स्वावलबन मे ही एक प्रकार की सेवा आ जाती है। हम स्वावलबी बन जाते ह, तो सेवा की दृष्टि से जितना समय बचा सके, उसमे समाज की सेवा करेगे। यदि सभी स्वावलबी हो जाते हॅ, ता किसीको कष्ट होगा ही नही। इस हालत मे किसीकी सेवा करने की आवश्यकता ही नही रहती। लेकिन अभी हम वहाँ तक पहुँचे ही नही है। इसीलिए तो समाज-सेवा की बात होती है। अगर हम स्वावलबन को आखिरी स्थिति तक बढाये, तो भी मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण उसे कुछ न-कुछ

समाज-सेवा लेनी पड़ेगी। अर्थात् मनुष्य जितना स्वावलंबी है, उतना ही परावलंबी भी है। जब समाज को व्यवस्थित रखने के लिए परावलम्बन होता है, तब उसका नाम परावलम्बन न रहकर सहयोग हो जाता है। सहयोग में सुगन्ध है। सहयोगियों में कोई दुर्बल और कोई सबल नहीं रहता। सब एक-दूसरे के बराबर होते हैं। परावलम्बन में अपंगता की बू आती है। एक कुटुम्ब के लोग जैसे स्वावलंबी रहते हैं, वैसे परावलंबी भी रहते हैं। लेकिन कुटुम्ब में अपने-पराये का भाव नहीं रहता। वे सब सहयोगी हैं। उसी तरह समाज, देश या मनुष्य-जाति को एक कुटुम्ब मान लिया जाय तो सब मनुष्य सहयोगी बन जाते हैं। ऐसे सहयोग का चित्र यदि हम अपनी कल्पना में लायेंगे, तो पता चलेगा कि हमको जड़ यन्त्र का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं रहेगी। अथवा इन यंत्रों का सहारा ज्यादा-से-ज्यादा नहीं, बल्कि कम-से-कम लेना पड़ेगा और उसीमें समाज सुरक्षित और स्वरक्षित बनेगा।

प्रश्न : खेती की बनिस्बत आप कातने पर ज्यादा जोर देते हैं, क्या उसका कारण राजकीय है? या यह कि लोग जितनी आसानी से कात सकते हैं, उतनी आसानी से सब लोग खेती नहीं कर सकते?

उत्तर : मेरी दृष्टि में राजकीय, सामाजिक या आर्थिक जैसे कोई अलग अलग विभाग नहीं हैं। जिस चीज में राजकारण है, उसमें समाजकारण भी है और अर्थकारण भी। एक में दूसरे आ ही जाते हैं। समझने के लिए हम विभाग करते हैं और करने भी पड़ते हैं। खेती पर मैंने जोर नहीं दिया, उसका एक कारण यह है कि मैं खेती का ज्ञान नहीं के बराबर रखता हूँ। इसलिए मैं उस पर जोर देकर उसके बारे में क्या बतलाऊँ? चरखे के बारे में ऐसा नहीं है, उसका मुझे काफी ज्ञान हो गया है। दूसरा कारण यह है कि विदेशी आक्रमण से चरखे का नाश हुआ और किया भी गया। खेती का नाश तो हो ही नहीं सकता था। लेकिन खेती का रूपान्तर यहाँ तक किया गया कि जनता का दासत्व बढ़ा। तीसरा कारण यह था कि हाथ की विशेषता का खेती में कम-से-कम प्रदर्शन

होता है। खादी बनाने मे और उसकी सब क्रियाओ मे हाथ और उँगलियो का जितना उपयोग होता है, उतना शायद ही और किसी उद्योग मे होता हो। चौथा कारण यह है कि विदेशियो का कब्जा पहले जमीन पर होता है और वे जमीन की मार्फत दूसरी बातो पर कब्जा करते हैं। इसलिए जमीन के सुधार मे सरकार की सहायता बहुत जरूरी होती है। इन सब तथा इसी तरह के अन्य कारणो से कातने पर जोर दिया गया है।

प्रश्न : मनुष्य-समाज के भौतिक विकास का एक तत्त्व तो ऐसा मालूम होता है कि मनुष्य स्वावलबन से परावलबन की तरफ दिन-ब-दिन बढता जा रहा है। क्या आप मानते है कि यह प्रवृत्ति ठीक नही है और इसकी विरोधी प्रवृत्ति का पुनरागमन होगा ?

उत्तर : इस प्रश्न का मतलब मै यह समझा हूँ कि समाज यत्र की ओर बढ रहा है। अगर मै सवाल ठीक समझा हूँ, तो मेरा उत्तर यह है कि समाज को यत्रो की गुलामी से छूटना ही होगा। क्योकि यत्र की गुलामी से हमारी इद्रियो की और हमारी वृत्ति की गुलामी बहुत बढ जाती है।

प्रश्न . क्या आपका यह विश्वास है कि केवल प्रचार से रचनात्मक कार्यक्रम अपना उद्देश्य आपके जीवन-काल मे सफल कर पायेगा ? मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियो (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर) को देखते हुए क्या आपको ऐसा नही लगता कि रचनात्मक कार्यक्रम का अमल जनता से आम तौर से कराने के लिए प्रचार के साथ-साथ कुछ कानूनी मदद (लेजिस्लेटिव एड) भी जरूरी है। विशेषत. मौजूदा यान्त्रिक युग मे जनता के चुने हुए प्रतिनिधियो से ऐसी मदद ली गयी, तो क्या उसमे अहिसा-तत्त्व का भग होगा ? यदि होगा, तो क्यो ?

उत्तर . मैने कई बार कहा है कि हमे अपनी शर्तो पर सरकार का सहयोग लेना ही है। इससे भी अधिक सारे जगत् का सहयोग लेना है। एक समय था, जब मै मानता था कि रचनात्मक काम के लिए धारासभा

से हमें कम-से-कम सहयोग मिल सकता है। अब मैं समझ गया हूँ कि यदि धारासभा में जनता के प्रतिनिधि जा सकें, तो उनमें रचनात्मक कार्य में सहायता मिल सकती है। साथ ही हमें याद रखना चाहिए कि जब तक हम प्रतिकूल परिस्थिति में भी रचनात्मक कार्य नहीं कर सकते, तब तक हम उसकी कीमत नहीं जान सकते। दुनिया तो जान ही नहीं सकती। मैं तो तटस्थ भाव से, पर अनुभव से कह सकता हूँ कि रचनात्मक कार्य करने में हम जितने आगे बढ़े हैं, उतनी ही लोक-शक्ति भी बढ़ी है। अगर हम रचनात्मक कार्य को सर्वमान्य बना सकें, जन-साधारण के मार्फत अमल में ला सकें, तो स्वराज्य हमारे हाथ में ही है।

खेती या चरखा

अप्रैल १९४६

प्रश्न : हिन्दुस्तान का देहाती अन्न के लिए अपनी आय का अस्सी फी सदी खर्च करता है और वस्त्र के लिए केवल बारह फी सदी। इस दशा में हमारे ग्रामोत्थान की योजना में क्या खेती को प्रथम स्थान प्राप्त नहीं होना चाहिए? क्या सूर्य-मंडल में सूर्य का स्थान खादी के बदले कास्तकारी को देना उचित नहीं होगा?

उत्तर : यह हिसाब सही हो, तो भी खेती चरखे का स्थान नहीं ले सकती। चरखे के द्वारा लोग आलस्य छोड़कर उद्यमी बन जाते हैं, तो वही एक बड़ी चीज हो जाती है। उसमें स्वराज्य की चाबी आ जाती है। चरखे को केन्द्र बनाकर हम उसकी त्रुटियों को दूर करने बैठते हैं तो उसमें और बहुत सी चीजें अपने-आप आ जाती हैं। आप यह सवाल रखें कि चरखे की बात मैंने हिंदुस्तान के लिए की है। उत्तर ध्रुव में मैं चरखा नहीं चलाऊँगा। हिन्दुस्तान अगर चरखे की ताकत को समझ ले, तो वह उसके द्वारा जरूर आजादी पा सकता है। शहरों में चरखे का कुछ प्रचार हुआ है। यह अच्छी बात है, पर देहातियों को अभी चरखा

अपनाना है। खेती के साथ उसका सम्बन्ध जोडने के लिए भी देहाती चरखा अपना सकते हैं।

खादी-शास्त्र को समझो

२-३-'४६

हम खादी-शास्त्र जानते नही थे। अभी भी पूरी तरह नही जानते हैं। यही कारण है कि बालक की तरह गिरते-पडते आगे बढते हैं, यानी चलना सीखते हैं। बिल्कुल पडे ही न रहे, इसलिए चलना सिखानेवाली गाडी का भी हमने उपयोग किया और आज भी करते हैं। अपनी इस कमजोरी का पता चलने के बाद तो चरखा सघ को जी-तोड कोशिश करके अपने सच्चे रूप को सिद्ध करना होगा या मिट जाना होगा। चरखा सघ मे मतलब है वे सब कार्यकर्ता, जो सघ का कार्य करते हैं। यह याद रहे कि कातनेवालो को अपने पैरो पर खडा करना और उनके कामो के मार्फत हिन्दुस्तान की आजादी हासिल करना चरखा सघ का उद्देश्य या मकसद है और होना चाहिए। यह चिंता हम न करे कि इस उद्देश्य को हम सिद्ध नही कर सकेंगे। यह उद्देश्य सच्चा है, यह समझकर ही खादी की प्रवृत्ति पैदा हुई है। इसलिए ध्येय की तरफ जाने मे जितनी भी भूले हुई हो, उन्हे दुरुस्त करके हमे आगे बढना है। इसीमे शास्त्रीयता भी समायी हुई है। कोई भी शास्त्र पूर्णतः आसमान से उतरकर नहीं आता है। सभी शास्त्र अनुभव से सुधरते जाते हैं और बनते जाते हैं। खगोल शास्त्र को ही लीजिये। हम देखते हैं कि उसमे सुधार होते ही रहते हैं। बहुत-सी गलतियाँ हुई हैं, उन्हे अब तक सुधारा गया है और आज भी कई सुधर रही हैं। यही बात खादी-शास्त्र के बारे मे भी कही जा सकती है।

'समझ-बूझकर' कातो

कातनेवाले को कताई से पहले की और बाद की सब क्रियाएँ खुद कर लेनी चाहिए, याने बुनने तक की सब क्रियाएँ उसे सीख लेनी चाहिए।

यह स्वराज्य का रास्ता है। आज तक हम जाने-अनजाने व्यापारी खादी ही पैदा करते रहे हैं, गोकि उसमें स्वराज्य की भावना भरी गयी है। यह भावना न भरी गयी होती, तो व्यापारी खादी भी न चलती और मुमकिन है कि 'स्वराज्य की खादी' तो सपना ही बनी रहती। व्यापारी खादी हमें चलना सिखानेवाली 'चन्दन गाडी' थी और आज भी है। कातनेवालो के लिए दूसरों से पिजवाना वगैरह छोटी 'चन्दन गाडियाँ' थी और है। जैसे-जैसे हम इन चन्दन गाडियो को छोडते जाते हैं, वैसे-वैसे स्वराज्य की खादी के करीब आते ह। चरखा सघ के जिन केन्द्रो मे खादी पैदा की जाती है और उसके लिए पिजाई आदि का जो काम अलग से किया जाता है, वह सब आज बन्द हो सकता हो, तो बन्द कर देना चाहिए। बगैर समझौते के इन्सान के सब काम चल नहीं पाते, इसलिए यही कहा जा सकता है कि जितनी जल्दी ये 'चन्दन गाडियाँ' छोडी जा सके, उतनी जल्दी छोड देनी चाहिए। जिसे ज्यादा श्रद्धा होगी और जो इस काम को जानता होगा, वह इसे सबसे पहले छोडेगा।

इस समय की एक परिस्थिति सोचने लायक है। जो लोग कताई का काम अपने गुजारे के लिए करते हैं, वे कताई से पहले की और बाद की नयी क्रियाओ को सहज ही मे सीख लेगे, क्योकि वैसा करने से उनकी आमदनी बढेगी। लेकिन आजकल ऐसी कत्तिनो की तादाद घट रही है, क्योकि आज दूसरे आसान जरियो से कमाई सुलभ है। कत्तिनो के सामने नीति-अनीति का सवाल नही होता। वे आसान-से-आसान धन्धे को अपनाती हैं। मसलन् बीडी के पत्ते बीनकर और बीडी बनाकर हजारो अपनी रोजी कमाते ह। हमे इनको ज्ञान देना है, स्वराज्य की कठिन सीढियो पर चढाना है और चढाते-चढाते इन सबको सबल बनाना है। अगर हम यह न कर सकेगे, तो अपनी हस्ती खो बैठेगे। इसलिए जो भाई या बहन समझ-बूझकर कातेगे, वे ही हमारे काम आ सकेगे।

दूसरी एक और बात याद रखने जैसी है। कई मौजूदा धधो मे कताई के धधे ने भी अपनी जगह बना ली है। इससे वह चलता तो

रहेगा ही। इस कारण से भी व्यापारी खादी के बारे मे हमे बेफिक्र रहना चाहिए। इसमे जो उलझने पैदा होगी, वे कार्यकर्ताओ को सुलझानी चाहिए। यह पूछना कि फलॉ चीज इस चौखट मे बैठ सकती है या नही, आलस्य या अज्ञान की निशानी समझनी चाहिए। जो भूमिति के उप-सिद्धातो को सिद्ध नही कर सकता, वह भूमिति का जानकार नही माना जाता। यही बात इस शास्त्र के बारे मे कही जा सकती है।

चरखा और अणुबम

नवम्बर १९४६

प्रश्न : क्या अमेरिका के लिए चरखे का कोई सदेश है? क्या अणु-बम के खिलाफ उसके इलाज के रूप मे चरखे का हथियार काम दे सकता है?

उत्तर . चरखे का पैगाम केवल अमेरिका के लिए ही नही, बल्कि सारी दुनिया के लिए है। लेकिन जब तक खुद हिन्दुस्तान चरखे को पूरी तरह से अपनाकर दुनिया के सामने इसकी एक जीती जागती अमली मिसाल पेश नही करता, तब तक यह कैसे हो सकता है? आज यह नही कहा जा सकता कि हिन्दुस्तान ने चरखे को पूरी तरह अपना लिया है। इसमे चरखे का कोई कसूर नही है। मुझे इसमे जरा भी शक नही है कि चरखे मे हिन्दुस्तान का ही नही, बल्कि सारी दुनिया का उद्धार और सुरक्षितता समायी हुई है। यदि हिन्दुस्तान मशीनो और कल-कारखानो का गुलाम बन जाय, तो फिर दुनिया का कोई रास्ता ही नही रह जायगा। फिर तो भगवान् ही उसे बचाये।

प्रश्न : क्या आप मानते हैं कि हिन्दुस्तान चरखे के काम को अच्छी तरह उठा लेगा?

उत्तर : हिन्दुस्तान चरखे को अपनाता जा रहा है, पर मुझे यह भी कबूल करना चाहिए कि इस काम की चाल बहुत धीमी है। प० नेहरू ने खादी को हमारी 'आजादी की पोशाक' कहा है। लेकिन जब तक

खादी से चन्द खब्ती या सनकी लोगों और गरीबों को ही संतोष होता है, तब तक वह 'आजादी की पोशाक' नहीं बन सकती। दुनिया में ऐसे कई काम हैं, जो इन्सान के किये नहीं होते। लेकिन ईश्वर, तो सब कुछ कर सकता है। यदि ईश्वर के नाम से पहचानी जानेवाली कोई जीती-जागती ताकत मौजूद न हो, तो चरखे की भी अपनी कोई हस्ती नहीं हो सकती।

खादी का नया युग

अगस्त १९४७

खादी का एक युग समाप्त हुआ है। खादी ने शायद गरीबों का एक काम कर लिया है। अब तो गरीब स्वावलम्बी कैसे बनें, खादी कैसे अहिंसा की मूर्ति बन सकती है, बताना रहा है। वही सच्चा काम है। उसीमें श्रद्धा बतानी है।

(चरखा जयन्ती सन्देश)

अब भी कातें ?

१२-११-'४७

एक भाई ने लिखा है :

मैं और मेरे घर के लोग बराबर चरखा कातते रहे हैं और खादी पहनते रहे हैं। अब आजादी मिल जाने के बाद भी क्या आप इस पर जोर देते हैं कि हम चरखा कातते रहें और खादी पहनते रहें ?

यह एक अजीब सवाल है। पर बहुत से लोगों की यही हालत है। इससे साफ जाहिर होता है कि इस तरह के लोगों ने चरखा चलाना और खादी पहनना इसलिए शुरू किया था कि उनके खयाल में वह आजादी हासिल करने का एक जरिया था। उनका दिल चरखे में या खादी में नहीं था। ये भाई भूल जाते हैं कि आजादी का मतलब सिर्फ विदेशियों

का बोझ हमारे कन्धो पर से हट जाना ही नही था। यह और बात है कि आजादी के लिए सबसे पहले इस बोझ का हटना जरूरी था। खादी का मतलब है ऐसा रहन-सहन, जिसकी नीव अहिसा पर हो। खादी का यही मतलब आजादी के पहले था और आज भी है। ठीक हो या गलत, पर मेरी यही राय है कि अहिसा के आज प्राय. लोप हो जाने से यह साबित होता है कि इन तमाम बरसो मे हम खादी के असली और सबसे बडे मतलब को कभी समझ नही पाये। इसलिए आज हमे जगह-जगह अराजकता और भाई-भाई की लड़ाई देखनी पड रही है। यदि हमे हिन्दुस्तान के करोडो गॉववाले अपने-आप समझने और महसूस करने लगे, ऐसी आजादी हासिल करनी है, तो मुझे इसमे शक नही कि चरखा कातना और खादी पहनना आज पहले से भी ज्यादा जरूरी है। वही इस धरती पर ईश्वर का राज्य या रामराज्य कहा जायगा।

खादी के जरिये हम यह कोशिश कर रहे थे कि बिजली या भाप से चलनेवाली मशीने आदमी पर हावी होने के बजाय आदमी मशीन के ऊपर रहे। खादी के जरिये हम कोशिश कर रहे थे कि आदमी-आदमी के बीच आज जो गरीब और अमीर, छोटे और बडो की जबरदस्त विषमता दिखायी दे रही है, उसकी जगह आदमी-आदमी मे, मर्द और स्त्री मे समानता कायम हो। हम यह कोशिश कर रहे थे कि सरमाया-दार मजदूरो पर हावी होकर रहे और उन पर बेजा शान जमाये, उसके बजाय मजदूर सरमायादारो से स्वतत्र रहे। इसलिए अगर पिछले तीस बरसो मे हिन्दुस्तान मे हमने जो कुछ किया, वह गलत रास्ता न था, तो हमे पहले से भी ज्यादा जोरो से और कही अधिक समझ के साथ चरखे की कताई और उसके साथ के सब कामो को जारी रखना चाहिए।

२४-१०-'४७

अहिंसा कहॉ, खादी कहॉ ?

खादी को अहिसा से अलग करे, तो उसके लिए थोडी जगह जरूर

हो, मगर अहिंसा की निशानी के रूप मे जो उसका गौरव होना चाहिए, वह आज नही है। राजनीति मे हिस्सा लेनेवाले जो लोग आज खादी पहनते हैं, वे रिवाज की वजह से ऐसा करते हैं। आज जय खादी की नहीं, बल्कि मिल के कपडे की है। हम मान बैठे हैं कि अगर मिले न हो, तो करोडो इन्सानो को नगा रहना पडे। इससे बडा भ्रम क्या हो सकता है? हमारे देश मे काफी कपास है, करघे है, चरखे हैं, कातने-बुनने की कला है फिर भी यह डर हमारे दिलो मे घर कर गया है कि करोडो लोग अपनी जरूरत पूरी करने के लिए कातने-बुनने का काम अपने हाथ मे नही लेगे। जिसके दिल मे डर समा गया है, वह उस जगह भी डरता है, जहाँ डर का कोई कारण नहीं होता।

६-११-'४७

आवश्यकता श्रद्धा व निश्चय की है

देशी या विदेशी मिल-कपडे का स्थान खादी सपूर्णतया ले सकती है, मेरी इस राय को काग्रेस ने अपनाया था और उसके लिए अखिल भारत चरखा सघ की स्थापना की। हिन्दुस्तान मे ४० करोड लोग बसते हैं। अगर पाकिस्तान की लोक-सख्या अलग कर दे, तब भी हिन्दुस्तान मे ३० करोड के ऊपर लोग रह जाते हैं। हमे कपडे के लिए जितनी कपास चाहिए, उससे भी ज्यादा हम पैदा करते हैं। देश मे पर्याप्त कातनेवाले भी है, जो इस कपास को बुनने लायक सूत मे परिवर्तित कर सकते है। और पर्याप्त से अधिक बुनकर भी है, जो इसका कपडा बना सकते हैं। बडी पूँजी की आवश्यकता के बिना हम इसके लिए लगनेवाले चरखे, करघे और दूसरे सरजाम आसानी से बना सकते हैं। आवश्यकता सिर्फ इस बात की है कि हमारे दिलो मे खादी के प्रति दृढ श्रद्धा हो और उसके सिवा दूसरा कपडा न पहनने का हम निश्चय करे।

रचनात्मक कार्य का प्राण

जो आँखे होते हुए भी सूर्य का प्रकाश नही देख सकता चमड़ी होते हुए भी सूर्य का तेज महसूस नही कर सकता, वह जीता हुआ भी प्राणरहित है। रचनात्मक कार्य का प्राण चरखा है। यदि उसे निकाल दो, तो बाकी सत्रह चीजे केवल एक प्राणरहित ढाँचा बन जायेगी। अगर हम गरीब-से-गरीब और निर्बल-से-निर्बल के लिए भी स्वराज्य चाहते हैं, तो वह केवल चरखे के द्वारा ही आ सकता है और चरखे के बिना रचनात्मक कार्यक्रम शून्यवत् हो जाता है। शून्य को एक के साथ रखने से दस होते हैं, अकेले शून्य की कोई कीमत नही है।

———

अध्याय २ चरखे का पुनरुज्जीवन

तारीख २०-९-२८ को गांधीजी से यह पूछे जाने पर कि आपने चरखा कब और कैसे पाया उन्होंने उत्तर दिया

"जब मैं सन् १९०८ में दक्षिण अफ्रीका से एक डेप्युटेशन लेकर लंदन गया था तब मुझे चरखे की सूझी। वहाँ हिन्दुस्तानी विद्यार्थियों और दूसरों से भारत की दशा के बारे में लम्बी चर्चाएँ हुई। तब मेरे दिल में यह खयाल एकाएक चमका कि चरखे के बिना स्वराज्य नहीं। मैंने एकाएक समझ लिया कि हरएक को कातना चाहिए। मुझे उस समय करघे और चरखे का भेद मालूम नहीं था और 'हिन्द-स्वराज' में मैंने करघा शब्द चरखे के अर्थ में इस्तेमाल किया है। उस पुस्तक के अन्तिम अध्याय में मैंने लिखा, 'हमें माँगने से कुछ नहीं मिलेगा हमें जो चाहिए, वह हमें ही लेना होगा।। उस प्रयत्न के लिए हमें आवश्यक बल की जरूरत है और वह बल उसीमें आयेगा, जो •

(२) अगर कोई वकील है, तो वह अपना धंधा छोड़कर करघा (चरखा) लेगा।

(८) अगर कोई डॉक्टर है, तो वह भी करघे (चरखे) को अपनायेगा।

(१०) अगर वह श्रीमान् है, तो अपना धन करघे (चरखे) बैठाने में लगायेगा और हाथ-बना माल खुद पहनकर दूसरों को प्रोत्साहन देगा।

जब सन् १९०९ में वह पुस्तक लिखी गयी थी, तब ये शब्द जितने सही थे, उतने आज भी हैं। यद्यपि १९०९ में मानसिक दर्शन में चरखे का शोध हो चुका था, तथापि उसका प्रत्यक्ष काम तो आश्रम की स्थापना

(सन् १९१६) के बाद करीब तीन वर्षों के सतत और कठिन प्रयास के पश्चात् सन् १९१८ मे ही हो सका। खादी की पहली प्रतिज्ञा सन् १९१९ मे ली गयी थी।"

तारीख ९ जनवरी १९१५ को गाधीजी अफ्रीका से भारत वापस आये। थोडे ही अरसे मे उन्होने अहमदाबाद के पास कोचरब मे एक आश्रम की स्थापना कर वहाँ सन् १९१६ मे कपडे बुनने के करघे बैठाये। उस समय बुनने के लिए सूत मिल का ही लिया गया। स्वदेशी की दृष्टि से कपडे के लिए हाथ-करघे का ही स्थान माना गया। थोडे ही समय मे खयाल मे यह आ गया कि सूत के लिए परावलम्बन अनिष्ट है। अब सूत कातने के लिए चरखे की खोज शुरू हुई। यो तो उस समय भी देश के कई प्रान्तो मे चरखे चलते ही थे, परन्तु अहमदाबाद के आसपास वे नही रहे थे। श्रीमती गगाबहन को चरखे का पता लगाने का काम सौपा गया। गाधीजी ने चरखा मिलने की दिलचस्प कथा इस प्रकार लिखी है :

"गुजरात मे खूब घूमने के बाद गायकवाडी राज्य के विजापुर गाँव मे गगाबहन को चरखा मिल गया। वहाँ पर बहुत से कुटुम्बो के पास चरखे थे, जिन्हे उन्होने टाँड पर चढाकर रख छोडा था। लेकिन यदि कोई उनका कता सूत ले लेता और उन्हे पूनियाँ बराबर दे देता, तो वे कातने के लिए तैयार थे। गगाबहन ने मुझे इस बात की खबर दी और मेरे हर्ष का पार न रहा। पूनी पहुँचाने का काम कठिन जान पडा। स्वर्गीय भाई उमर सोवानी से बातचीत करने पर उन्होने अपनी मिल से पूनियाँ पहुँचाने की जिम्मेदारी अपने सिर पर ले ली। मैने वे गगाबहन के पास भेजी। सूत इतनी तेजी से कतने लगा कि मै थक गया।

पूनियाँ खरीदकर लेने मे मुझे सकोच हुआ और मिल की पूनियाँ लेकर कातने मे मुझे बडा दोष प्रतीत हुआ। अगर मिल की पूनियाँ लेते है, तो मिल का सूत लेने मे क्या बुराई है? हमारे पुरखो के पास मिल की पूनियाँ कहाँ थीं? वे किस प्रकार पूनियाँ तैयार करते होगे? मैने गगा-

बहन को सुझाया कि वह पूनियाँ बनानेवाले को ढूँढे । उन्होंने यह काम अपने सिर लिया । एक पिंजारे को ढूँढ निकाला । उसे ३५ रुपये मासिक या उससे भी अधिक वेतन पर नियुक्त किया । उसने बालकों को पूनी बनाना सिखलाया । मैंने रूई की भीख माँगी । वह भी पूरी हुई । अब गंगाबहन ने काम एकदम बढ़ा दिया । उन्होंने बुनकरों को आबाद किया और कते हुए सूत को बुनवाना शुरू किया । अब तो विजापुर की खादी मशहूर हो गयी ।

इधर आश्रम में भी अब चरखा दाखिल करने में देर न लगी । मगन-लाल गांधी ने अपनी शोधक शक्ति से चरखे में सुधार किये और चरखे तथा तकुए आश्रम में तैयार हुए । आश्रम की खादी के पहले थान पर फी गज एक रुपया एक आना खर्च पड़ा । मैंने मित्रों के पास से मोटी, कच्चे सूत की खादी के एक गज टुकड़े के १-) वसूल किये, जो उन्होंने खुशी-खुशी दिये ।

बम्बई में मैं रोगशय्या पर पड़ा हुआ था । लेकिन सबसे पूछा करता था । वहाँ दो कातनेवाली बहनें मिलीं । उन्हें एक सेर सूत पर एक रुपया दिया । मैं अभी तक खादी-शास्त्र में अंधे जैसा था । हमें तो हाथ-कता सूत चाहिए था और कातनेवाली स्त्रियाँ चाहिए थीं । गंगाबहन जो दर देती थीं, उससे तुलना करते हुए मुझे मालूम हुआ कि मैं ठगा जा रहा हूँ । वे बहनें कम लेने को तैयार न थीं, इसलिए उन्हें छोड़ देना पड़ा । लेकिन उनका उपयोग तो हुआ ही । उन्होंने श्री अवन्तिकाबाई गोखले, श्री रमाबाई कामदार, श्री शंकरलाल बैंकर की माताजी और श्री वसुमतीबहन को कातना सिखाया और मेरे कमरे में चरखा गूँज उठा । अगर मैं यह कहूँ कि इस यंत्र ने मुझे रोगी से निरोगी बनाने में मदद पहुँचायी, तो अत्युक्ति न होगी । यह सत्य है कि यह स्थिति मानसिक है । लेकिन मनुष्य को रोगी या निरोगी बनाने में मन का हिस्सा कौन कम है ? मैंने भी चरखे को हाथ लगाया । लेकिन उस समय मैं इससे आगे न बढ़ सका ।

अब सवाल यह उठा कि यहाँ हाथ की पूनियाँ कहाँ से मिले। श्री रेवाशकर के बंगले के पास से तॉत की आवाज करता हुआ एक धुनिया रोज निकला करता था। मैने उसे बुलाया। वह गद्दे-गद्दियो की रूई धुनता था। उसने पूनियाँ तैयार करके देना मजूर किया लेकिन ऊँचा भाव मॉगा और मैने दिया भी। अब मै एकदम खादीमय होने के लिए अधीर हो उठा। मेरी धोती देशी मिल के कपडे की थी। विजापुर मे और आश्रम मे जो खादी बनती थी, वह बहुत मोटी और ३० इच अर्ज की होती थी। मैने गगाबहन को चेतावनी दी कि अगर ४५ इच अर्ज की खादी की धोती एक महीने के भीतर न दे सकेगी, तो मुझे मोटी खादी का पछिया पहनकर काम चलाना पडेगा। गगाबहन घबरायी। उन्हे यह मियाद कम मालूम हुई, लेकिन वे हिम्मत नहीं हारी। उन्होने एक महीने के भीतर ही मुझे ५० इच अर्ज का धोती जोडा ला दिया और मेरी दरिद्रता दूर कर दी।"

शुद्ध स्वदेशी

प्रारम्भ मे कातने के लिए मिल की पूनियो का उपयोग होता रहा। सन् १९१७ मे आश्रम मे तथा कुछ अन्य स्थानो मे हाथ-कताई का काम शुरु हुआ, धीरे-धीरे वह बढने लगा और थोडी शुद्ध खादी बनने लगी।

इस काम का प्रारम्भ स्वदेशी की दृष्टि से हुआ। उस समय से करीब ४०-५० वर्ष पूर्व ही महाराष्ट्र मे स्वदेशी का आन्दोलन शुरू होकर वह बगाल के विभाजन के समय बगाल तथा अन्य सूबो मे फैल रहा था। तब कपडे के विषय मे विदेशी कपडे की जगह भारत मे बने मिल के या हाथ करघे के कपडे पर जोर दिया जाता रहा, हालॉकि मिल का या हाथ-करघे का महीन कपडा विदेशी सूत से ही बनाया जाता था। अर्थात् जिस कपडे के मूल्य मे करीब ७५ प्रतिशत माल परदेश का था, वह भी स्वदेशी माना जाता था। स्वदेशी की यह अशुद्धता गाधीजी ने देश के खयाल मे ला दी, जिससे स्वदेशी का स्वरूप शुद्ध और स्पष्ट होने मे बहुत

मदद मिली और कपडे के बारे में हाथकते सूत से हाथबुना कपडा ही शुद्ध स्वदेशी माना जाय, इस विचार का प्रचार होने लगा।

खादी और असहयोग आन्दोलन

पहले लगभग ३ वर्षों में यह नया आन्दोलन आर्थिक दृष्टि से स्वदेशी के रूप में चला। सन् १९१९ और १९२० में देश में राजनीतिक दृष्टि से क्रांतिकारी घटनाएँ घटी। जलयानवाला बाग का काण्ड हुआ और सारा देश हडबडाकर जाग उठा। सन् १९२० में असहयोग आन्दोलन शुरू हुआ। गाधीजी ने उसका जो कार्यक्रम देश के सामने रखा था, उसका प्रारम्भ उनके द्वारा तो तारीख १ अगस्त १९२० को ही हो चुका था, पर काग्रेस द्वारा उसका विचार काग्रेस के कलकत्ते के विशेष अधिवेशन मे सन् १९२० के सितम्बर महीने मे हुआ। यह खयाल मे रहे कि सन् १९१९ के दिसम्बर महीने मे जो अमृतसर मे काग्रेस का अधिवेशन हुआ था, उसमे भी गाधीजी की प्रेरणा से स्वदेशी के अतर्गत हाथ-कताई और हाथ-बुनाई को प्रोत्साहन देने का प्रस्ताव पास हो चुका था। कलकत्ता अधिवेशन के प्रस्ताव मे असहयोग के कार्यक्रम की कई धाराएँ थी, जिनमे से विदेशी माल के बहिष्कार के अन्तर्गत स्वदेशी और खादीविषयक अश नीचे मुताबिक था:

"अनुशासन के और स्वार्थ-त्याग के बिना कोई देश सच्ची प्रगति नही कर सकता और चूँकि असहयोग उसका एक साधन है और चूँकि उसकी प्राथमिक अवस्था मे ही हरएक स्त्री-पुरुष और बालक को अनुशासन और त्याग के लिए मौका मिलना चाहिए, यह काग्रेस सलाह देती है कि कपडे मे व्यापक पैमाने पर स्वदेशी को अपनाना चाहिए। और चूँकि हिन्दुस्तान की मौजूदा मिले (जो देशी पूँजी से देशी नियत्रण मे चलती हैं) देश की आवश्यकता का सूत और कपडा नही बना रही है और भविष्य मे भी लम्बी मुद्दत तक उतना बनाना सम्भव नही दीखता, इसलिए यह काग्रेस घर-घर मे हाथ-कताई का पुनरुज्जीवन

करके और बुनकरो को हाथ-बुनाई का उद्योग देकर तुरन्त बडी तादाद मे कपडा बढाने की सलाह देती है।"

यह प्रस्ताव अमल मे लाने के लिए हिदायते दी गयी थी कि हाथ-कताई और हाथ-बुनाई को प्रोत्साहन देकर तथा उस कपडे का वितरण करके स्वदेशी को महत्त्व दिया जाय, कार्यकर्ताओ को विशेष शिक्षा दी जाय, उच्च श्रेणी के स्त्री-पुरुषो को कातने के लिए तथा हाथ-सूत का ही कपडा पहनने के लिए प्रवृत्त किया जाय और जगह-जगह कताई सिखाने के वर्ग खोले जायें। इस काम को प्रोत्साहन देने का भार गाधीजी द्वारा चलाये हुए सत्याग्रह आश्रम साबरमती पर, जिसका प्रारम्भ पहले कोचरब मे हुआ था, आया और जो कार्यकर्ता इस कार्य मे लगना चाहते थे, उनको सुझाया गया कि वे आश्रम के व्यवस्थापक से लिखापढी करे।

इसके बाद जब काग्रेस का मामूली अधिवेशन नागपुर मे सन् १९२० के दिसम्बर महीने मे हुआ, तब इस विषय के प्रस्ताव का स्वरूप नीचे मुताबिक रहा :

"भारत को आर्थिक दृष्टि से स्वतत्र और स्वावलबी बनाने के लिए देश को तैयार किया जाय, जिसमे व्यापारियो से कहा जाय कि वे विदेशी व्यापार के सम्बन्धो का क्रमश बहिष्कार करे, हाथ-कताई और हाथ-बुनाई को प्रोत्साहन दे और इस सम्बन्ध मे काग्रेस महासमिति द्वारा मुकर्रर की हुई विशारदो की एक समिति आर्थिक बहिष्कार की एक योजना बनाये।"

सन् १९२१ की तारीख १ अप्रैल को विजयवाडा की काग्रेस महासमिति की बैठक मे निश्चय हुआ कि १ करोड रुपये का तिलक स्वराज्य फण्ड इकट्ठा किया जाय, काग्रेस के १ करोड सदस्य बनाये जायें और ३० जून तक २० लाख चरखे चालू किये जायें। हरएक प्रान्त अपनी-अपनी लोक-सख्या के परिमाण मे चरखे चालू करे। २८ जुलाई को फिर से बम्बई की काग्रेस महासमिति की बैठक मे एक प्रस्ताव पास हुआ कि देश से सहानुभूति रखनेवाले सभी सज्जन अपना प्रयत्न इस ओर केन्द्रित करे कि ३० सितम्बर तक विदेशी कपडे का बहिष्कार सफल हो

जाय, हाथ-कताई और हाथ-बुनाई से खादी बनाने का काम बढ़ाया जाय सब कांग्रेसवाले १ अगस्त से विदेशी कपड़े का इस्तेमाल छोड़ दें जिन घरों में चरखे नहीं चलते हैं, उन घरों में वे दाखिल किये जायँ, बुनकरों को समझाया जाय कि वे विदेशी सूत का उपयोग करना छोड़ दें और यथासंभव हाथ-सूत का—और वह न मिले, तो भारतीय मिल के सूत का—इस्तेमाल करें तथा खादी चरखे, करघे और अन्य सरंजाम मुहैया करने के लिए दूकानें खोली जायँ। कांग्रेसी संस्थाओं को सलाह दी गयी कि राष्ट्रीय शालाओं में हाथ-कताई और हाथ-बुनाई चलाने की भरसक कोशिश की जाय। मिल-मालिकों से प्रार्थना की गयी कि वे अपने कपड़ों के भाव सस्ते रखें। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि असहयोग आन्दोलन का मकसद पूरा करने की मीयाद एक वर्ष की रखी गयी थी। इसलिए उसके सारे कार्यक्रम जल्दी-से-जल्दी पूरे करने की कोशिश थी। आगे चलकर सविनय कानून-भंग की बात आयी। तारीख ४ नवम्बर सन् १९२१ को देहली की कांग्रेस महासमिति की बैठक में निश्चय हुआ कि व्यक्तिगत कानून-भंग करनेवाले को हाथ-कताई आनी ही चाहिए, विदेशी कपड़ा कतई छोड़ देना चाहिए और केवल खादी ही पहननी चाहिए। व्यापक सविनय कानून-भंग के लिए यह जरूरी माना गया कि उस क्षेत्र की जनता में से बहुसंख्य लोगों को पूर्ण स्वदेशी के व्रत को अपना लेना चाहिए और अपने क्षेत्र में बनी हुई खादी ही पहननी चाहिए। सन् १९२२ में यह विचार सामने आया कि व्यापक सविनय कानून-भंग चलाया जाय। बारडोली ताल्लुके की ओर से माँग आयी कि वहाँ व्यापक सविनय कानून-भंग चलाने की इजाजत दी जाय। उसके लिए गांधीजी ने शर्तें रखी थीं कि उस क्षेत्र में सम्पूर्ण जातीय एकता स्थापित होनी चाहिए, अस्पृश्यता का नामोनिशान नहीं रहना चाहिए तथा उतने क्षेत्र में केवल खादी का ही इस्तेमाल होना चाहिए अर्थात् व्यापक वस्त्र-स्वावलंबन हो, इतना रचनात्मक काम होने पर ही वह क्षेत्र व्यापक सविनय कानून-भंग के लायक माना जा सकेगा। सन् १९२२ के मई महीने में इस ओर बारडोली

ताल्लुके मे जोरो से तैयारियाँ होने लगी। अन्य बातो के साथ-साथ कपास का संग्रह करने से लेकर कताई-बुनाई की सब प्रक्रियाएँ उस क्षेत्र मे सर्वत्र हों, ऐसा प्रयत्न होने लगा और बडी तादाद मे कार्यकर्ता लोग उस काम मे लगे।

ऊपर लिखे हुए विजयवाडा के कार्यक्रम मे से तिलक स्वराज्य फण्ड तो पूरा हो गया, किन्तु स्वदेशी और खादी का कार्यक्रम वैसा पूरा नही होने पाया। तथापि असहयोग के लिए स्वदेशी और खादी सम्बन्धी उक्त प्रकार की शर्तें होने के कारण उनको जो प्रोत्साहन और वेग मिला, उसकी छाप खादी-काम पर सदा के लिए अमिट रही।

पाठक देखेगे कि प्रारम्भ मे हाथ-कताई का कार्यक्रम गाधीजी ने देश की आर्थिक दशा सुधारने की दृष्टि से रखा था। विचारधारा यह थी कि उस समय सालाना करीब साठ करोड का विदेशी कपडा देश मे आता था। देश की मिले अगर उतना कपडा बना सकती, तो उतना पैसा बच सकता था। पर मिले जल्दी ही देश की जरूरत का सारा कपडा बना लेगी, ऐसी सभावना नही थी। इसलिए कमी की पूर्ति हाथ-सूत से करना आवश्यक था। जब अग्रेजी सल्तनत के खिलाफ राजनीतिक रूप मे असहयोग आन्दोलन आया, तब अन्य कार्यक्रमो के साथ अग्रेजी माल के बहिष्कार की भी बात आयी और उसके फलस्वरूप काग्रेस ने हाथ-कताई पर जोर दिया, हालाँकि गाधीजी सदा स्वदेशी के पहलू पर ही जोर देते रहे। उस समय देश मे प्रतिव्यक्ति करीब ६ वर्गगज ही कपडा बनता था। अगर प्रतिव्यक्ति आवश्यकता १५ वर्गगज माना जाय, तो ९ वर्गगज कपडा बढाने की जरूरत थी जिसके लिए हाथ-कताई का साधन सोचा गया। उस समय देश का मकसद स्वराज्य प्राप्त करना था। इतनी बडी तादाद मे हाथ-कते सूत का कपडा बनाने का अर्थ यह था कि करोडो स्त्री-पुरुष कातने लगे—अर्थात् वह एक क्रातिकारी योजना थी। स्वराज्य प्राप्त करने के लिए क्रान्ति की आवश्यकता थी। आशा रखी गयी थी कि स्वदेशी के द्वारा देश के मानस मे परिवर्तन होगा और वह मानसिक परिवर्तन क्रान्ति

लाने मे समर्थ होगा। जो देश हरसाल करीब ६० करोड रुपये बचाकर उतनी बडी रकम करोडो कतवैयो और बुनकरो को घरबैठे पहुँचा सकता या लोगो का उतनी रकम की बचत कर सकता है, उस देश की सगठन और उद्योग-शक्ति इतनी बढ जाती कि वह अपने सपूर्ण विकास के लिए सब कुछ कर सकता था।

गाधीजी ने असहयोग आन्दोलन १ अगस्त १९२० को शुरू कर दिया था। बाद मे सितम्बर मे, काग्रेस ने उसे अपना लिया और दिसम्बर मे नागपुर की काग्रेस ने उसका समर्थन किया। वह सन् १९२१ मे पूरे सालभर खूब वेग से चला। देश के कोने-कोने मे अद्भुत जाग्रति हुई। देहात मे भी, पढे-बेपढे, सब पर उसका गहरा असर हुआ। सारे कार्यक्रम पूरे तो नही हुए, पर उन्हे अमल मे लाने की लोगो ने भरसक कोशिश की। यह बात नही थी कि उस आन्दोलन का कही विरोध नही था। कई पढे-लिखे और पुराने मत के राजनीतिक लोगो ने उसका बहुत विरोध किया, पर आम जनता की भावनाएँ तेजी से उमड पडी थी। स्वदेशी की लहर बडी जोरो से चली। खादी उसका अग थी ही। पर उसका काम एकाएक बढाना आसान नही था। खादी बनाने की तथा वितरण की पुरानी व्यवस्था लम्बे समय से टूट चुकी थी। खादी थोडी जगह ही बची थी, पर प्रायः अशुद्ध रूप मे। इसलिए जहाँ कातने की परम्परा जिन्दा नही थी, वहाँ खादी-काम रुई, चरखा, सरजाम आदि से लेकर बुनाई तक नये सिरे से शुरू करना पडा। लोगो मे उत्साह था, इसलिए वह कई जगह शुरू हो तो गया, पर कार्यकर्ताओ के अनुभवी न होने के कारण कई योजनाएँ असफल रहीं तथा आर्थिक हानि भी उठानी पडी। फिर भी खादी-काम जम गया। अगर उस समय असहयोग-आन्दोलन नही रहता और केवल खादी की ही बात जनता के सामने रखी जाती, जिसे गाधीजी तो रखते ही, तो न तो खादी-काम इतना जल्दी जमता और न वह इतना पनपता। उसे फूलने-फलने के लिए असहयोग-आन्दोलन के कारण बडी अनुकूल परिस्थिति मिल गयी।

फरवरी सन् १९२१ मे गाधीजी ने सुझाया कि विद्यालयो मे भी कताई और बुनाई दाखिल की जाय। बहुत-सी शालाओ मे सरकारी नियन्त्रण था। वहाँ तो इसकी आशा ही नही थी। पर यहाँ तो असहयोग आन्दोलन मे सरकार से सम्बद्ध सभी शालाओ के बहिष्कार की ही बात थी। कार्यक्रम का यह अंग काफी सफल रहा। जो छात्र सरकारी शालाएँ छोडकर बाहर निकले, उनके लिए राष्ट्रीय शालाएँ खुलने लगी। उनमे कताई को स्थान दिया गया। उस समय के आँकडे देखकर गाधीजी ने बताया था कि शिक्षा स्वावलम्बी करने मे कताई से मदद मिल सकती है। इस पहलू का तब तो विशेष परिणाम नही निकला, पर बाद मे बुनियादी तालीम के सिलसिले मे शिक्षा स्वाश्रयी बनाने मे उसको महत्त्व का स्थान दिया गया।

राष्ट्रीय झंडा

जैसे-जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन बढा, वैसे-वैसे एक राष्ट्रीय झडे की जरूरत महसूस होने लगी। झडा कैसा हो, इस विषय मे सूचनाएँ आने लगी। मछलीपट्टम के राष्ट्रीय कॉलेज के श्री पी० वेकटय्या ने सब देशो के झडो के विवरण की एक पुस्तक प्रकाशित की, किन्तु उस पर से देश के हृदय को प्रभावित करनेवाले झण्डे के स्वरूप का निर्णय नही हो सका। चरखे की शक्ति की चर्चा चलते-चलते जालन्धर के लाला हसराज ने सुझाया कि हमारे स्वराज्य के झण्डे पर चरखा हो, तो अच्छी बात है। गाधीजी को यह बात पसन्द आयी। प्रतीक के तौर पर हिन्दुओ के लिए लाल, मुसलमानो के लिए हरा और दूसरी सब जमातो के लिए सफेद, इस प्रकार तीन रगो का खादी के कपडे का झण्डा बनाना तय हुआ। सन् १९२१ के अप्रैल महीने मे चरखा चिह्नाकित तिरगो झण्डे का उदय हुआ, जिसे आगे चलकर काग्रेस ने जल्दी ही अपना लिया। झण्डे मे खादी और चरखे के आने के कारण भी खादी भावना को काफी बढावा मिला।

खादी और जेल

असहयोग आन्दोलन के सिलसिले में कई भाई-बहनों को जेल जाना पड़ा। उनमें कुछ ऐसे थे, जिन्होंने खादी पहनने का व्रत ले रखा था और कुछ नियमपूर्वक प्रतिदिन सूत कातते थे। जेल के मामूली नियमों के अनुसार अधिकारियों ने उनके खादी के कपड़े उतारकर उन्हें जेल के कपड़े पहनने को मजबूर किया तथा कातने के लिए तकली या चरखा देने से इनकार किया। कुछ अपने व्रत पर डटे रहे। उनको अनशन करना पड़ा, जेल के नियम तोड़ने के मुद्दे पर जेल की नाना सजाएँ भोगनी पड़ीं। सन् १९२१-२२ के बाद भी जब-जब सत्याग्रह-आन्दोलन चला, तब भी ऐसे प्रश्न खड़े होते रहे। इस मुद्दे को लेकर खादी-व्रतियों को जेलों में बहुत कष्ट भोगने पड़े। दीर्घकाल तक यातनाएँ भोगने के बाद उनके लिए कातने की या खादी पहनने की कुछ सुविधाएँ होने लगीं।

अप्रैल सन् १९२३ में नागपुर के जिला मजिस्ट्रेट ने कांग्रेसी झंडे सहित जुलूस निकालने की मनाही कर दी। उस पर से नागपुर में झण्डा-सत्याग्रह शुरू हुआ। अन्य कार्यकर्ताओं के साथ सेठ जमनालालजी बजाज ने उसका नेतृत्व किया। हर रोज या समय-समय पर झंडे सहित जुलूस बनाकर सत्याग्रहियों के जत्थे जाते और वे गिरफ्तार कर लिये जाते। प्रान्त के हरएक जिले में स्वयंसेवक पहुँचे और अन्य प्रान्तों के स्वयंसेवकों ने भी इस सत्याग्रह में भाग लिया था। इन सत्याग्रहियों में कई अच्छे पढ़े-लिखे, योग्यता रखनेवाले और नेता लोग भी थे। अन्त में कई महीनों के बाद सरकार को झण्डे सहित जुलूस को जाने देना पड़ा, तब सत्याग्रह बन्द हुआ। उसमें सब स्त्री-पुरुष मिलाकर करीब ढाई हजार लोग जेल गये। तब कैदियों में राजनीतिक कैदी का भेद नहीं था। सबके साथ जेल का व्यवहार मामूली अपराधियों जैसा रहता था। पूज्य विनोबाजी जैसे भी क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की धारा १०९ के

अनुसार 'आवारा' के रूप में जेल भेजे गये थे। उनको रोजाना ३५ सेर अनाज पीसना पडता था या गिट्टी फोडनी पडती थी। सबको सख्त सजा भुगतनी पडी थी। सब स्वयसेवकों के लिए खादी पहनने का नियम था। जेल में कुछ को खादी पहनने को न मिलने पर काफी तकलीफे भोगनी पडीं।

गांधी टोपी

उन दिनो सफेद टोपी, जिसे गाधी टोपी कहते थे, पहनने का रिवाज बहुत बढ गया था। ये टोपियाँ खादी की तथा मिल के कपडे की भी हुआ करती थी। ये टोपियाँ राष्ट्रीयता का चिह्न बन गयी थीं। वे भी सरकार को खटकी। अग्रेजी हद मे तथा देशी रियासतो में भी इस टोपी का अपमान होने लगा। पुलिसवाले ऐसी टोपियाँ छीन लेते, फेक देते और जला भी डालते। एक जगह मजिस्ट्रेट ने सफेद टोपी न लगाने का भी हुक्म निकाला था। कुछ को यह टोपी पहनने के कारण जेल जाना पडा। आगे चलकर सन् १९३० मे सोलापुर के जिला मजिस्ट्रेट ने वहाँ के खादी भडार के व्यवस्थापक को हुक्म दिया कि वह सफेद टोपी न लगाये और हरे तथा लाल रग का कपडा न वेचे। इस कपडे का उपयोग झण्डा बनाने मे हो सकता था। खादी पर और गाधी टोपी पर सरकार की यह टेढी नजर देखकर कई सरकारपरस्त प्रतिष्ठित व्यक्ति और व्यापारी खादी और टोपी से नफरत करने लगे। खादी अथवा टोपी पहनने के कारण ही कुछ सरकारी और खानगी कर्मचारियो की नौकरियाँ गयी। कुछ ऐसे किस्से भी हुए कि कुछ सरकारी अधिकारी और अन्य व्यापारी लोग व्यापार के तथा अन्य काम-काज के सम्बन्ध मे भी सफेद टोपी पहननेवालो से मुलाकात नही लेते थे। पर ज्यो-ज्यो सरकार द्वारा या सरकार से प्रभावित लोगो द्वारा खादी का और गाधी टोपी का तिरस्कार करने का प्रयत्न हुआ, त्यो-त्यो दूसरी ओर जनता का उस पर प्रेम बढता गया।

राष्ट्रीय आन्दोलन को दबाने के लिए सरकार ने स्वयंसेवक दलों को बिखेरने का प्रयत्न किया। उधर कांग्रेस ने युवकों को स्वयंसेवक दलों में भर्ती होने की अपील की और स्वयंसेवक के प्रतिज्ञा-पत्र में यह एक शर्त डाली कि वह दूसरे किसी कपड़े का इस्तेमाल न करते हुए केवल हाथ-कती तथा हाथ-बुनी खादी ही पहने।

खादी और कांग्रेस

चौरीचौरा काण्ड के कारण असहयोग आन्दोलन स्थगित हुआ और मार्च सन् १९२२ में गांधीजी गिरफ्तार हुए। उनकी गैरहाजिरी में भी कांग्रेस कार्यसमिति ने रचनात्मक काम पर जोर देकर खादी के बारे में प्रस्ताव पास करके कहा, "खादी के आन्दोलन का महान् राजनीतिक मूल्य होने के अलावा वह भारत के करोड़ों को घरबैठे फुरसत के समय का एक स्थायी गृह-उद्योग देगा अधभूखे करोड़ों गरीबों की आज की उनकी छोटी-सी आमदनी में कुछ वृद्धि करेगा और धनवान् तथा गरीबों को जोड़नेवाली कड़ी बनेगा। इसलिए कांग्रेस कार्यसमिति को आशा है कि भारत के सब दलों और श्रेणियों के स्त्री-पुरुष राजनीतिक मतभेद भूलकर खादी के आन्दोलन को हार्दिक सहयोग देंगे।" गया कांग्रेस के बाद २ जनवरी १९२३ को कांग्रेस महासमिति ने प्रस्ताव पास कर फिर से अपील की कि विदेशी सूत और कपड़े का बहिष्कार करने के लिए, हाथ-कताई और हाथ-बुनाई का प्रसार करने के लिए फिर जोरों से प्रयत्न किया जाय ताकि देश को पूर्ण आर्थिक स्वातन्त्र्य मिल सके तथा जल्दी से-जल्दी स्वराज्य मिलना सम्भव हो जाय।

चरखा-जयन्ती

सन् १९२३ से गांधीजी का जन्म-दिन चरखा-जयन्ती के नाम से सार्वजनिक रूप से मनाया जाने लगा। उनके जन्म-दिन की हिन्दी तिथि द्वादशी होने के कारण वह दिन 'रटिया बारस' या 'चरखा द्वादशी' के नाम

से प्रसिद्ध हो गया। आगे चलकर हिन्दी और अंग्रेजी तारीख के बीच का फासला या आसपास का समय चरखा-सप्ताह के नाम से प्रख्यात हुआ, जिसमे रचनात्मक कामो के कई आयोजन किये जाने लगे।

कांग्रेस में कताई मताधिकार

जब सन् १९२४ मे कांग्रेस के सदस्य तन-मन से काते, इसलिए एक विशेष यत्न शुरू हुआ, जो आगे चलकर उसकी सदस्यता के लिए कातना (फ्रान्चाइज) मताधिकार बनने मे परिणत हुआ। १९ जून १९२४ को गाधीजी ने एक लेख द्वारा जाहिर किया कि वे कांग्रेस महासमिति के सामने उसके विचारार्थ नीचे लिखा प्रस्ताव उपस्थित करना चाहते है :

"इस बात का खयाल करके कि स्वराज्य प्राप्त करने के लिए हाथ-कताई और उससे बननेवाली खादी को अपरिहार्य और कांग्रेस द्वारा सविनय कानून भग के लिए इनका स्वीकार आवश्यक तैयारी के रूप मे माने जाने के बावजूद भी देशभर की कांग्रेसी सस्थाओ ने खुद कातने मे अब तक लापरवाही की है। यह कांग्रेस महासमिति निश्चय करती है कि कांग्रेस की प्रातिनिधिक सस्थाओ के सब सदस्य, बीमारी के कारण असमर्थ होने की अथवा लगातार मुसाफिरी मे न बन आने की दशा को छोडकर अन्य समय मे, हर रोज नियमपूर्वक कम से-कम आध घटा सूत काते और अखिल भारत खादी मण्डल के मन्त्री के पास हरएक सदस्य समान और अच्छे बट का दस तोला सूत, जो दस नम्बर के नीचे का न हो, हर महीने की १५ तारीख तक पहुँचा दे। पहली किश्त १५ अगस्त १९२४ तक पहुँच जाय और बाद मे हर महीने उसी तारीख को पहुँचती रहे। जो सदस्य समय पर नियत परिमाण मे ऐसा सूत नही भेजेगे, उनका स्थान रिक्त हुआ समझा जायगा और वह खाली हुई जगह मामूली तरीके से भर ली जायगी। पर जिस सदस्य का स्थान इस प्रकार से खाली होगा, उसे दूसरे सामान्य चुनाव तक चुनाव मे खडे रहने का अधिकार नही रहेगा।"

सन् १९२४ के जुलाई के प्रारम्भ में अहमदाबाद में जब कांग्रेस महासमिति की बैठक हुई, तब यह प्रस्ताव कुछ संशोधनों के साथ एक बार पास हो गया। संशोधन ये थे कि बीमारी अथवा प्रवास के कारण जो कातने की माफी थी उसके साथ एक यह बात भी जोड़ दी गयी कि अन्य वैसे ही कारणों से कातना न हो सके तो भी माफी रहे। दूसरे महत्त्व के संशोधन के मुताबिक, सूत १० नम्बर के नीचे का न हो, ऐसे १० तोले सूत की जगह सूत के नम्बर का उल्लेख न रहकर, मासिक २००० गज सूत देने की बात आयी। महासमिति की उस बैठक में इस प्रस्ताव पर काफी गरमागरम बहस हुई। मुख्य मतभेद प्रस्ताव के आखिरी हिस्से पर था जिसमें सूत न देने पर सदस्य का स्थान रिक्त होने की सजा लिखी थी। कुछ सदस्य रोष से सभा छोड़कर बाहर चले गये। मतगणना उनके बाहर जाने के बाद हो सकी थी। उस हिस्से के पक्ष में ६७ और विपक्ष में ३७ मत पाये गये थे। पर कुछ सदस्यों के सभा छोड़कर चले जाने तक नौबत आने के कारण, सभा ने फिर से विचार करके प्रस्ताव का उतना हिस्सा छोड़ दिया और बाकी का अंश पास किया।

उक्त प्रस्ताव के बाद सदस्यों का सूत खादी मण्डल के पास पहुँचने लगा। पहले-पहल गुजरात का सूत आया। ४०८ प्रातिनिधिक सदस्यों में से १६९, अर्थात् प्रतिशत ४२ सदस्यों ने सूत भेजा। वयोवृद्ध श्री अब्बास तय्यबजी ने भी अपना सूत भेजा और सरदार वल्लभभाई पटेल ने भी, जो उस समय कातने में बिलकुल नये थे, ५००० गज सूत भेजा। मौलाना शौकतअली और मौलाना मुहम्मदअली ने भी अपना कता सूत भेजा। डॉक्टर एनी बेसेन्ट इस योजना के खिलाफ थीं, तथापि कांग्रेस का अनुशासन पालन करने के लिए ही वे उस समय अपनी ८० वर्ष की उम्र में कातने लगीं। प्रातिनिधिक सदस्यों के अलावा मामूली सदस्य भी सूत भेजने लगे।

हर महीने सूत आने लगा। दफ्तर में उसके आँकड़े भी पहुँचने

लगे। पर ऑकडे पूरे तथा समय पर नही आते थे। तथापि जो सामग्री मिली और दफ्तर मे ऑकडे तैयार किये जा सके, वे इस प्रकार दर्ज ह :

महीना	प्रातिनिधिक सदस्यो की कुल सख्या	सूत भेजनेवाले सदस्यो की सख्या प्रातिनिधिक	अन्य	मीजान
अगस्त	११३०२	१७४६	१०३४	२७८०
सितम्बर	१३८०४	२०४७	४९७९	७०२६

महीना	प्रातिनिधिक सदस्यो की कुल सख्या	सूत भेजनेवाले सदस्यो की सख्या प्रातिनिधिक	अन्य	मीजान
अक्तूबर	१३८०४	१५६०	४८७१	६४३१
नवम्बर	१३८०४	१११६	४१४३	५२५९
(इसमे आन्ध्र के ऑकड़े नही आये, जहॉ कि दोनो प्रकार के सूत भेजनेवाले सदस्य कुल मिलाकर करीब १००० होगे)				
दिसम्बर	१३८०४	८९५	३६४९	४५४४

(ऊपर के ऑकडो मे स्पष्ट है कि काग्रेस के प्रातिनिधिक सदस्यो मे सूत भेजनेवालो की सख्या घटती रही। दूसरो का प्राय कायम रही।)

सन् १९२४ के दिसम्बर महीने मे काग्रेस का अधिवेशन बेलगॉव मे गाधीजी की अध्यक्षता मे हुआ। उसमे काग्रेस के विधान मे परिवर्तन करके सदस्यो के दो वर्ग बनाये गये। एक 'अ' वर्ग, जिसके सदस्य खुद अपना कता हुआ सूत देते और दूसरा 'ब' वर्ग, जिसके सदस्य अपनी देखभाल मे कताया हुआ या दूसरो से प्राप्त करके सूत देते। इस प्रकार सूत देना काग्रेस की सदस्यता की योग्यता बनी और कुछ अश मे खुद कातना लाजिमी हुआ।

'कताई मताधिकार' सम्बन्धी प्रस्ताव का अश इस प्रकार है

"यह काग्रेस स्वराजियो तथा अन्य भाइयो का, जो नये आर्डिनेन्स अथवा सन् १९१८ के कानून के अनुसार गिरफ्तार हुए हैं, अभिनन्दन करती है और यह राय रखती है कि जब तक भारत के लोगो मे अपना

दर्जा और स्वातन्त्र्य सुरक्षित रखने की शक्ति नहीं आती, तब तक ऐसी गिरफ्तारियाँ नहीं टलेंगी। कांग्रेस की यह भी राय है कि देश की वर्तमान परिस्थिति में लम्बे अरसे से सोचे गये, पर अब तक पूरे न हुए, विदेशी कपड़े के बहिष्कार से इस शक्ति का विकास हो सकता है। इसलिए इस राष्ट्रीय हेतु को सफल करने के लोगों के निश्चय के चिह्नस्वरूप कांग्रेस अपनी सदस्यता के मताधिकार में हाथ-कताई को स्थान देने की बात का स्वागत करती है और हरएक स्त्री-पुरुष से अपील करती है कि वह इसका अमल करके कांग्रेस में शामिल हो।

ऊपर लिखे कारण से कांग्रेस उम्मीद रखती है कि भारत का हरएक स्त्री-पुरुष विदेशी कपड़ा छोड़ देगा और दूसरे सब कपड़ों को छोड़कर हाथकती और हाथबुनी खादी का ही उपयोग करेगा। यह हेतु जल्द-से-जल्द सफल करने के लिए कांग्रेस अपने सब सदस्यों से आशा रखती है कि वे हाथ-कताई और उसकी दूसरी प्रक्रियाओं के तथा खादी की उत्पत्ति और बिक्री के प्रसार में मदद करेंगे।

कांग्रेस राजा-महाराजाओं से, श्रीमान् लोगों से, जो कांग्रेस में शामिल नहीं हुई हैं ऐसी राजनीतिक और दूसरी संस्थाओं के सदस्यों से तथा स्थानिक स्वराज्य संस्थाओं से अपील करती है कि वे खुद खादी का इस्तेमाल करके अथवा अन्य प्रकार से हाथ-कताई और खादी के प्रसार में हाथ बँटायें—विशेषतः जो महीन खादी में कला का उत्तम काम कर सकते हैं, ऐसे अब तक कायम रहे कारीगरों को उदारतापूर्वक आश्रय देकर। कांग्रेस विदेशी कपड़े और सूत के व्यापारियों से अपील करती है कि वे देश-हित का खयाल करके अब विदेशी कपड़ा और सूत मँगवाना बन्द कर दें और खादी का व्यापार करके इस राष्ट्रीय गृह-उद्योग को मदद करें। कांग्रेस को इस बात की जानकारी मिली है कि मिलों का और हाथ-करघों पर मिल के सूत का बना हुआ कई किस्मों का कपड़ा बाजार में खादी के नाम से बेचा जाता है। कांग्रेस मिल-मालिकों और अन्य कपड़ा बनानेवालों से अपील करती है कि वे अपना यह अनिष्ट और बुरा

व्यवहार छोड दे, और यह भी अपील करती है कि वे भारत के जो प्रदेश अब तक काग्रेस के प्रभाव मे नही आ सके हैं, उन्हीमे अपना काम सीमित करके पुराने गृह-उद्योगो के पुनरुज्जीवन को उत्तेजन दे और विदेशी सूत मँगाना बन्द कर दे। काग्रेस हिन्दू-मुसलिम तथा अन्य धर्मों के सब सम्प्रदायो के मुखियो से अपील करती है कि वे अपने-अपने सम्प्रदायवालो मे खादी के सन्देश का प्रचार करे और विदेशी कपडे का इस्तेमाल छोड देने का उपदेश करे।

विधान की सातवी धारा की जगह नीचे लिखी कलम दाखिल की जाय।

जिसके लिए विधान की चौथी धारा बाधक नही है, ऐसा कोई भी स्त्री-पुरुष प्रान्तीय काग्रेस कमेटी के मातहत किसी भी प्राथमिक काग्रेस समिति का सदस्य बनने का अधिकारी रहेगा। पर ऐसा कोई भी व्यक्ति काग्रेस समिति या सस्था का सदस्य नही बन सकेगा, जो राजनीतिक और काग्रेस के प्रसगो पर या काग्रेस के काम मे लगे हुए समय मे हाथकती और हाथबुनी खादी नही पहनेगा और जो खुद का कता हुआ वार्षिक २४ हजार गज समान सूत नही देगा, अथवा जो बीमारी, अनिच्छा या अन्य किसी कारण से नहीं कात सकता है, वह दूसरे किसीके द्वारा काता हुआ उतना सूत नही देगा। यह सूत-चन्दा अग्रिम देना होगा अथवा हर मास दो हजार गज की किश्तो मे अग्रिम दिया जा सकता है।

जिसने सूत-चन्दा या सूत की किश्त न दी हो, उसको काग्रेस के प्रतिनिधियो के, डेलिगेटो के अथवा समिति के अथवा उपसमिति के चुनाव मे वोट देने का अधिकार नही रहेगा और न चुनकर आने का भी। उसे काग्रेस या काग्रेस-सगठन की किसी समिति या उपसमिति की सभा मे भाग लेने का भी अधिकार नही रहेगा।"

अब काग्रेस के विधान के अनुसार सूत देनेवाले सदस्यो के ऑकडे खादी-मण्डल के दफ्तर मे आने लगे, क्योकि सूत का काम सँभालने का भार खादी-मण्डल पर डाला गया था। मार्च १९२५ मे जो अधूरे ऑकडे

आये, उसमे 'अ' वर्ग के सदस्य ५३१८ और 'ब' वर्ग के २३१७ थे। कुछ ऑकडे दोनो वर्गों के मिलकर आये थे, उनमे वर्गवार तफसील नही थी। सब मिलाकर दोनों प्रकार के सदस्यो की कुल सख्या १०६०२ हुई। मई महीने मे 'अ' वर्ग के सदस्य ५५४३ और 'ब' वर्ग के ६३२५ रहे और कुछ आँकडे बिना तफसील के मिले। कुल मिलाकर सदस्यो की सख्या १५३५५ हुई।

सूत की शर्त को लेकर काग्रस के सदस्यो मे काफी असन्तोष रहा। थोडे ही समय मे उसके खिलाफ विचारधारा बहने लगी। उस समय राजनीतिक मतभेद भी तीव्र थे। एक वह पक्ष था, जो असहयोग के सिद्वान्त के अनुसार ही काम करना चाहता था। उसे 'नोचेंजर्स' अर्थात् अपरिवर्तनवादी दल कहते थे। दूसरा पक्ष स्वराज्य-दल कहलाता था, जो धारासभाओ मे जाने के कार्यक्रम को आवश्यक मानता था। १७ जुलाई १९२५ को काग्रेस के स्वराज्य-दल के तथा अन्य नेताओं की एक बैठक हुई। उसमे नीचे लिखी बातें तय हुई

काग्रेस का सदस्य बनने के लिए सूत देने की जो बात थी, उसमे दभ और असत्य का प्रवेश होने लगा था। इसलिए तय हुआ कि काग्रेस का सदस्य बनने के लिए कातने की बात तो रहे ही, परन्तु उसके विकल्प मे दूसरे प्रकार के शारीरिक श्रम को भी स्थान रहे। अब तक जो दूसरो से प्राप्त किया हुआ सूत भी दिया जा सकता था, उसकी जगह केवल खुद का ही कता हुआ सूत देने की बात रखना ठीक समझा गया। काग्रेस-सदस्यता के लिए सूत के या अन्य शारीरिक श्रम के बदले चार आना नकदी विकल्प रूप मे रखने का भी विचार हुआ। इस पर काफी मतभेद रहा, निर्णय नही हो पाया। यह भी तय हुआ कि सब सदस्यो को काग्रेसी काम के समय तथा विशेष मौको पर खादी ही पहननी चाहिए और अन्य समय मे भी विदेशी कपडा बिलकुल न पहनकर खादी पहनने की कोशिश करनी चाहिए। भविष्य मे खादी-काम

के बारे मे सर्वसम्मति से तय हुआ कि काग्रेस के अन्तर्गत एक चरखा-सघ की स्थापना की जाय, जिसे अपना काम करने मे स्वतन्त्र अधिकार रहे, जो काग्रेस के कताई-काम का निरीक्षण करे और काग्रेस की तरफ से जो सूत-चन्दा मिले, वह ले और उसकी जॉच करे।

३० जुलाई १९२५ के 'यग इण्डिया' मे गाधीजी ने चरखा-सघ की इस कल्पना के बारे मे लिखा :

"काग्रेस के प्रधानतः राजनीतिक सस्था बनने की दशा मे यह आवश्यक हो गया है कि सारे भारत के कातनेवालो का एक ऐसा सघ बनना चाहिए, जो काग्रेस के सूत मताधिकार सम्बन्धी कताई भाग की व्यवस्था और विकास करे। कातनेवाले सदस्य जो सूत दे, उसे ले और केवल हाथ-कताई और खादी के काम पर जोर दे। अगर ऐसा सघ स्थापित हो तो वह शुद्ध व्यावसायिक रूप का हो, स्थायी हो और काग्रेस की नीति मे परिवर्तन होने पर भी उसमे परिवर्तन न हो। इसलिए उसका कार्यकारी मण्डल यथासम्भव स्थायी हो। उसको खादी-सेवको का सगठन करना होगा। वह देहात का प्रतिनिधित्व करेगा और दूर-दूर के गॉवो तक चरखे का सन्देश पहुँचाकर देहात का सगठन करेगा। इसके अलावा वह अब तक जो नही हुई, ऐसी यह भी एक बात करेगा कि देहात से सम्पत्ति ढो लाने के बदले गॉववालो मे सम्पत्ति का वितरण करेगा। वह देहाती जीवन मे शान्तिमय प्रवेश करेगा और वहॉ सच्चा राष्ट्रीय जीवन बहायेगा। वहॉ आज तक जगत् मे नही दीखा, ऐसा सबसे प्रबल सहयोग का प्रयत्न होना चाहिए। अगर योग्य मात्रा मे बुद्धि मिले, योग्य मात्रा मे साधारण त्याग मिले और साधारण ईमानदारी रहे तथा धनी और मध्यम-वर्ग से सहायता मिले, तो उसको यश मिलना निश्चित है। देखे, भविष्य मे भारत के भाग्य मे क्या लिखा है।"

तारीख २२, २३ सितम्बर १९२५ को पटना मे काग्रेस महासमिति की सभा हुई। उसमे चरखा-सघ बनाना तय हुआ। काग्रेस के विधान के अनुसार तब तक काग्रेसी सदस्यो पर सूत कातने की शर्त लाजिमी थी।

इस सभा में निश्चय हुआ कि विकल्प रूप में—अर्थात् सूत न दे तो—चार आने नकद दिये जा सकते है।

गाधीजी के मार्ग-दर्शन में काग्रेस ने अपने सदस्यों को कातने के मार्ग पर लाने में काफी कोशिश की। गाधीजी मानते थे कि देशभर में व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन होना चाहिए। नेता लोग स्वय कातेगे तो दूसरे भी कातने लगेगे। कताई-सगठन से देश की जो शक्ति बढ़ेगी वह देश के कल्याण के लिए आवश्यक सब काम कर सकेगी। कातना उनके अन्य गुणो के साथ शारीरिक श्रम का प्रतीक भी था। व्यावहारिक रूप में काग्रेसजनो के सामने दो बाते आयीं—एक खादी पहनना और दूसरी कातना। काग्रेस में इन विषयों के प्रस्ताव बड़े बहुमत से पास होते गये। उन मत देनेवालो में कई निष्ठावान् थे, जो ये बाते दिल से चाहते थे और करते भी थे। कुछ देखादेखी सकोच से भी पक्ष में राय दे देते थे, पर उसे अमल में लाने के लिए जो थोडा कष्ट उठाना पडता है, उसके लिए वे तैयार नही थे। कुछ ऐसे भी थे, जो इन बातो के और गाधीजी की विचारधारा के खिलाफ थे। परन्तु काग्रेस में प्रस्ताव पास हो जाने पर और उसके लाजिमी होने पर अनुशासन के विचार से उनको भी यह करना पडता था। काग्रेस द्वारा इस सम्बन्ध में स्वीकृत प्रस्तावो के सिद्धान्त के अनुसार चलने की काग्रेस-सदस्यो के सिवा अन्य लोगों ने भी कोशिश की। पर काग्रेसी सदस्यो का ही विचार किया जाय, तो कहना पड़ेगा कि उनमें से अनेक लोगो ने इन बातो को दिल से नहीं अपनाया। कई दोष पैदा हुए। इतनी बडी सख्या के कारोबार में उनको महत्त्व देना भी उचित नहीं। तथापि उनका यहाँ उल्लेख न करे, तो यह विवरण अधूरा रह जायगा, ऐसा लगता है। कातने के बारे मे प्रारभ में दोनो बाते रखी थीं कि अपना खुद का कता हुआ या दूसरो से कतवाकर या प्राप्त करके सूत दिया जा सकता है। इसमे यह बुराई पैदा होने लगी कि सूत देने का केवल नाम करके उसे फिर से वापस लेकर वही सूत अनेक के नाम पर पुन -पुनः आने लगा। इसलिए आगे चलकर खुद-कता सूत देने का नियम बना।

पर उसमें भी किसी भी प्रकार से प्राप्त किया हुआ सूत अपना कता हुआ कहकर दिया जाने लगा। जब अपना कता सूत देना मताधिकार की योग्यता बनी, तब थोड़े ही समय के बाद सदस्यों की संख्या काफी घटने लगी। सूत कतवाने के पीछे शारीरिक श्रम कराने की भावना भी थी, इसलिए मताधिकार में आगे चलकर सूत कातना अथवा सफाई आदि शारीरिक श्रम के दूसरे काम करना भी रखा गया। तथापि इनका भी दिल से अमल करनेवालों की संख्या नहीं बढ़ी। बाद में विकल्प में चार आने नकद देने का नियम बना। धीरे-धीरे सूत कातना, शारीरिक श्रम करना इत्यादि सब बातें छूट गयीं और सदस्यता का आधार केवल चार आना चन्दा ही रह गया। इस प्रकार कांग्रेस के द्वारा कांग्रेस-सदस्यों में सूत कातने का प्रचार बहुत अधिक नहीं हो पाया। कांग्रेस के प्रातिनिधिक सदस्यों के लिए खादी पहनने की शर्त तब से अब तक लाजिमी है, पर उसका भी अमल कइयों ने नहीं किया। तब तक आदतन खादी पहनने की बात तो थी ही नहीं। केवल कुछ मौकों पर पहनना लाजिमी था। तथापि कुछ तो वोट देने के समय और कांग्रेस की सभाओं में भी खादी नहीं पहनते थे। जब किसीके विरुद्ध खादी न पहनने का कोई उज्र करता, तो अंग पर खादी न होते हुए भी वह कह देता था कि मैं खादी ही पहने हुए हूँ। और यदि सभा का अध्यक्ष उसके पक्ष के अनुकूल रहता, तो वह यह निर्णय दे देता था कि जब सदस्य कहता है कि मेरा कपड़ा खादी है, तो उसे वैसा मान लेना चाहिए, अधिक विचार या जाँच करने की जरूरत नहीं। आगे चलकर खादी का अर्थ प्रमाणित खादी हुआ। तब भी कई कांग्रेस के सदस्य अप्रमाणित खादी पहनकर सन्तोष मान लेते रहे। इस प्रकार खादी के विषय को लेकर कांग्रेसी सदस्यों में कई दोष पैदा होते गये। इतनी बड़ी जमात में, जिसमें कि भिन्न-भिन्न मतवाले शामिल रहते थे, ऐसा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। फिर भी कांग्रेस के द्वारा खादी को जो प्रोत्साहन मिला, वह खादी-काम को बढ़ावा देने में बेहद सहायक हुआ। उसके बिना खादी-काम का इतना बढ़ना संभव नहीं था।

अध्याय ३ खादी-काम : चरखा-संघ के जन्म के पूर्व

जुलाई सन् १९२१ में काग्रेस कार्य-समिति ने कहाँ कितने चरखे चल रहे हैं, कितनी खादी तैयार हो रही है, कैसे बिक रही है आदि बातो की जानकारी मँगाने का एक प्रस्ताव पास किया।

उसी समय कई जगह चरखे आदि औजार बनाने का प्रबन्ध भी होने लगा। इधर खादी-विज्ञान की बाजू संभालने के लिए सत्याग्रह आश्रम साबरमती मे तैयारी होने लगी। वहीं बुनाई-विद्यालय भी शुरू हुआ और उसमे खादी-काम सिखाने का प्रबन्ध हुआ।

उस समय जो थोडी-सी खादी बनती थी, उसे बेचने के लिए बडा प्रयास करना पडता था। फेरी से भी बेचनी पडती थी। बडे-बडे नेता भी अपने कन्धो पर ढोकर फेरी से बेचते थे। कई बहने भी यह काम बडे चाव से करती थी। कभी-कभी यह काम सविनय-कानून-भग के आन्दोलन का एक कार्यक्रम बन जाता था। कई स्त्री-पुरुष फेरी से खादी बेचते हुए सरकार द्वारा गिरफ्तार होकर जेल मे गये। थोडे ही समय मे खादी की उत्पत्ति तेजी से बढने लगी। दिसम्बर सन् १९२१ मे अहमदाबाद मे जब काग्रेस का अधिवेशन हुआ था, तब सारा मण्डप खादी से ही सजाया गया था, जिसका मूल्य करीब साढे तीन लाख रुपया आँका गया था। प्रदर्शनी भी हुई थी, जिसमे कपडे मे केवल खादी को ही स्थान दिया गया था। उसमे कपास से लेकर खादी बुनने तक की सब प्रक्रियाएँ बतलायी गयी थी। अनेक प्रान्तो से कताई, धुनाई, बुनाई करनेवाले कारीगर आये थे। चिकाकोल के कारीगर भी थे। इन बातो से पाठक कल्पना कर सकेंगे कि थोडे ही समय मे खादी ने कितनी प्रगति कर ली थी।

प्रारम्भ मे खादी की उत्पत्ति-बिक्री का काम काग्रेस कार्यसमिति ने

अपने मातहत कराया। इस काम के लिए उसने प्रान्तीय काग्रेस समितियो को रुपया दिया तथा कुछ अन्य सस्थाओ एव व्यक्तियो को भी कर्ज या दान के रूप मे आर्थिक सहायता दी। मदद का यह काम जुलाई सन् १९२१ मे ही शुरू हो गया था। पहले पॉच-छह महीनो मे ही प्रान्तीय काग्रेस-समितियो, अन्य सस्थाओ तथा व्यक्तियो को कुल मिलाकर करीब तीन लाख रुपये दिये गये। मई सन् १९२२ मे काग्रेस कार्यसमिति ने खादी-काम के लिए खादी-विभाग खोला और उसे चलाने का भार श्री जमनालालजी बजाज के सुपुर्द किया। खादी-विज्ञान का विभाग भी खोला गया, जिसके सचालक श्री मगनलाल भाई गाधी हुए। खादी-उत्पत्ति विभाग श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम के सुपुर्द हुआ। बिक्री-विभाग के सचालक श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी बने। उस समय तक प्रान्तीय काग्रेस समितियो को खादी-काम के लिए करीब १३॥ लाख रुपये दिये जा चुके थे। इसके बाद भी काग्रेस-समितियो को तथा अन्य सस्थाओ और व्यक्तियो को रकमे दी जाती रही। इस प्रकार सन् १९२१ से १९२३ तक खादी-काम मे काग्रेस के करीब २३ लाख रुपये लगे।

सन् १९२२ से साबरमती आश्रम का खादी-विद्यालय काग्रेस के खादी-विज्ञान विभाग की ओर से चलने लगा। उसमे खादी की शिक्षा पाने के लिए हरएक प्रान्त से दो-तीन सज्जन आये। वे काफी योग्य थे। उनमे से कई अपने-अपने प्रान्त के प्रमुख और बडी लगनवाले कार्यकर्ता थे। काफी पढे-लिखे, किन्तु शरीर-श्रम न करनेवाले होने पर भी उन्होने बडे परिश्रम से धुनाई आदि प्रक्रियाएँ सीखी। वे अपने प्रान्तो मे वापस जाकर खादी-काम मे लगे। उनमे से कुछ की इस काम मे बीस-बीस, पचीस-पचीस वर्ष की सेवा रही। ये भाई चरखा-सघ के आधार-स्तम्भ रहे।

विज्ञान-विभाग को नीचे लिखे काम करने थे :

१. भिन्न-भिन्न प्रान्तो के चरखे, धुनकियाँ और दूसरे

औजारों की परीक्षा करना और कोई नया आविष्कार हो, तो उसकी जाँच करना।

२ औजारों के बारे में शोध और सुधार करना और नमूने के तौर पर अच्छे औजार बनाना।

३ उम्मीदवारों को ओटाई, धुनाई, कताई, बुनाई और औजार-सजाई सिखाना।

४ खादी की शुद्धता की जाँच करना और भिन्न भिन्न प्रान्तों के सूत की परीक्षा करना।

५ कांग्रेस के कताई सम्बन्धी प्रस्ताव का काम करना।

ये सारे काम विज्ञान-विभाग ने बड़ी कुशलता से किये और उनमें उसे अच्छी सफलता मिली।

खादी-काम की जानकारी प्राप्त करने के लिए कांग्रेस खादी-विभाग ने प्रारम्भ में ही एक खादी जानकारी विभाग (खादी इन्फर्मेशन ब्यूरो) खोला था। उसके द्वारा जो जानकारी मिली, उसका सारांश यहाँ इस खयाल से दिया जाता है कि उस समय की भिन्न-भिन्न प्रान्तों की खादी-काम की स्थिति का कुछ अन्दाजा लग सके।

बंगाल—जो कुछ शुद्ध खादी बनती थी, वह चटगाँव डिवीजन में ही बनती थी। कुछ ढाका जिले में भी थी, पर बहुत थोड़ी। इन स्थानों में तथा अन्यत्र मिश्र खादी भी बनती थी, जिसमें ताना मिल के सूत का रहता था। हलके दर्जे की रुई का उपयोग किया जाता था। सूत मोटा होता था।

असम—वहाँ उस समय से करीब ५० वर्ष पहले कपड़ा घर-घर बनता था। जब से विदेशी सूत आने लगा, तब से धीरे-धीरे कताई नष्ट हो गयी, तथापि बुनाई घर-घर चालू रही। स्त्रियाँ सूती और रेशमी दोनों तरह का कपड़ा बुन लेती थीं। ये करघे ऐसे थे कि जो दो-तीन मिनट में समेटे जाकर फिर से शुरू किये जा सकते थे। ओटाई और धुनाई भी

घरो मे ही होती थी। धुनकी बेत की बनती थी और उसकी डोरी भी बँटे हुए बारीक बेत की होती थी। कपास हलके दर्जे का था। थोडा देवकपास भी होता था। खादी-आन्दोलन शुरू हुआ, तब वहाँ जो खादी बनती थी, वह प्रायः मिश्रित होती थी।

आन्ध्र—वहाँ का खादी-काम काग्रेस समितियो तथा खानगी व्यापारियो द्वारा होता था। खादी-काम बढाने के लिए बहुत गुजाइश थी। पजाब की तरह ही आन्ध्र मे भी हाथकताई अधिक थी। वहाँ महीन बढिया खादी भी होती थी। लेकिन व्यापारी लोग खादी की माँग बढने पर मिल के सूत का मिलावटी माल खादी के नाम से बेचने लगे। इसलिए काग्रेस कार्यसमिति को ऐसा प्रबन्ध करना पडा, जिससे लोग समझ सके कि किनका माल शुद्ध है। कुछ जिलो के दूर के देहातो मे कई लोग अपने लिए सूत कातकर उसे अपने पडोस के बुनकर से बुनवा लेते थे। बहुत से घरो मे कताई चलती थी और उसका सूत बाजार मे बिकने के लिए आता था। सूत का नम्बर कहीं १० के नीचे, कही २० के आसपास और कहीं-कही १०० के लगभग भी था। बुनाई बडे अर्ज की याने ४४" या ५४" की भी होती थी। रँगाई-छपाई का काम भी कई जगह होता था, जिसमे मछलीपट्टम की कलमकारी कला प्रख्यात थी। यह अन्दाज किया गया था कि उस समय प्रान्तभर मे करीब सवा लाख चरखे चालू दशा मे होगे। खादी-आन्दोलन शुरू होने पर वहाँ का काम तुरन्त ही विशेष परिमाण मे बढ गया। यह काम बढाने मे बडा हिस्सा खानगी व्यापारियो का रहा। कही कही सहकार समितियाँ बनने से भी काम हुआ।

तमिलनाड—तमिलनाड के काम की रिपोर्ट सन् १९२४ मे मिली। आन्ध्र की तरह वहाँ भी कातने की परम्परा कायम थी। उस समय वहाँ मासिक रुपये पचास हजार की खादी बनने लगी थी। कपास सग्रह करके कत्तिनो को कातने के लिए दिया जाता था।

तमिलनाड, आन्ध्र, बिहार, पजाब और राजस्थान मे ऐसे कई क्षेत्र थे कि जिनमे से हरएक मे हजारो चरखे चलते थे और कताई की परम्परा

कायम थी। अन्दाज लगाया गया था कि पंजाब में करीब २० लाख चरखे चलते होंगे। वहाँ घर घर सूत काता जाकर चादर आदि मोटा कपड़ा बनता था। पहनने का कपड़ा भी बनता था। बिहार प्रान्तीय खादी मंडल ने अन्दाज लगाया था कि बिहार में करीब ५० हजार चरखे चलते होंगे। आन्ध्र में ताडपत्री के आसपास २० मील के घेरे में ६० हजार और तमिलनाड के कोइम्बतूर जिले में २ लाख चरखों का अन्दाज किया गया था। ऊपर जो चरखों के आँकड़े दिये गये हैं, उन पर से यह अनुमान नहीं निकालना चाहिए कि वे सारे चरखे सालभर पूरे समय चला करते थे या खादी-आन्दोलन के अंगभूत चलते थे। उनमें से बहुतेरे पुरानी परम्परा से चलते थे और उन पर फुरसत के समय काता जाता था।

बम्बई शहर—यह खादी-बिक्री का प्रमुख स्थान बना। वहाँ का मुख्य खादी भंडार श्री जेराजाणीजी चलाते थे। इसे आगे चलकर सितम्बर सन् १९२४ में कांग्रेस के अखिल भारत खादी मंडल ने अपने अधिकार में लिया। वहाँ दूसरे भी कई खादी भंडार शुरू हुए, उनमें से कुछ में मिश्र खादी बेची जाती थी। शहर में सूतकताई के लिए भी प्रयत्न हुआ। प्रान्तीय कांग्रेस समिति के द्वारा दो महीनों में ५ हजार चरखे बाँटे गये। इसके अलावा कई दूसरी संस्थाओं ने भी चरखे बाँटने और सूत कतवाने का काम शुरू किया। इनमें कुछ स्त्रियों की संस्थाएँ प्रमुख थीं। चन्द महीनों में ही करीब नौ हजार पौंड सूत काता गया, जो ६ से २० नम्बर तक का था।

फरवरी सन् १९२३ में कांग्रेस कार्यसमिति ने खादीकाम बढ़ाने के लिए यह योजना बनायी :

१. ३००० कार्यकर्ताओं द्वारा फेरी कराके घर-घर खादी बेचना।

२. बुनाई सिखाने के लिए ६०० शिक्षक मुकर्रर करना।

३. वर्ष के अन्त तक इस योजना के द्वारा कम-से-कम एक करोड़ रुपयों की खादी फेरी से बेचने का और हर गाँव में १५-१५ दिन इस

प्रकार १०००० गाँवो मे लोगो को धुनाई सिखाने का अन्दाज किया गया था। फेरीवालो को एक रुपये की बिक्री पर एक आना कमीशन कांग्रेस का खादी-विभाग देता और बाकी खर्च प्रान्तीय कांग्रेस समितियो को चलाना था।

उपर्युक्त योजना अमल मे लाने के लिए खादीकाम स्थायी रूप से चलाने लायक प्रबंध करना जरूरी था। दिनोदिन काम कुछ पेचीदा भी हो चला था। कही सूत ज्यादा तैयार होने लगा था, पर उतनी बुनाई नही हो सकती थी। कही बुनाई आसान थी, पर सूत नही मिलता था। खादी-शास्त्र जाननेवाले कार्यकर्ता नाममात्र के थे। इसलिए मार्च सन् १९२३ मे कांग्रेस के अखिल भारत खादी मंडल ने सब प्रान्तीय कांग्रेस समितियो को हिदायत दी कि वे अपने-अपने खादी मंडलो मे स्थायी रूप से काम करनेवाले ईमानदार, व्यवहारकुशल और खादीकाम जाननेवाले कार्यकर्ता मुकर्रर करे। जो खादी की प्रक्रियाएँ न जानते हो, उन्हे सिखाकर तैयार करने की हिदायत दी गयी, जिन्होने साबरमती विद्यालय मे शिक्षा पायी थी, उनको काम मे लगाने को कहा गया। प्रान्तो ने वैसा करना शुरू किया। वही से खादी-सेवक-दल (खादी सर्विस) के संगठन की नींव पडी। यह भी सोचा गया कि प्रान्तीय तथा स्थानीय कांग्रेस समितियो के अलावा दूसरी सार्वजनिक संस्थाओ के मार्फत भी खादी-उत्पत्ति और बिक्री का काम कराया जाय। ऐसी कुछ संस्थाएँ खडी भी हुई। इनमे गुजरात खादी मण्डल प्रमुख था। ऐसी संस्थाओ के लिए जो नियम बनाये गये थे, उनमे एक नियम यह भी था कि उनकी देखभाल और नियन्त्रण प्रान्तीय कांग्रेस कार्य-समितियो के हाथ मे रहे।

सन् १९२३ मे बुनाई मे थोडी आर्थिक मदद देने की योजना बनी। उसका कुछ लोगो ने लाभ उठाया। गरीब कातनेवालो को रूई और पूनियाँ खरीदने के लिए कुछ आर्थिक मदद देने की भी योजना बनी।

अप्रैल १९२३ में जो खादी-बिक्री के आँकड़े मिले, वे इस प्रकार हैं

प्रान्त	रुपये	प्रान्त	रुपये
गुजरात	८३०००	बिहार	३६०३०
केरल	६७५५	मध्यप्रान्त	३०५८७
आन्ध्र	७४७७४	बंगाल	५५४९३४
उत्कल	११५८८	तमिलनाड	६३२२०
उत्तर प्रदेश	१६५१९	कर्नाटक	३०८९२
असम	५००	बम्बई	१४२०९५
सिन्ध	८४५०	महाराष्ट्र	२२८९४
पंजाब	९६०१	बरार	७१००
			१०९८९३९

ये बिक्री के आँकड़े किस अवधि के हैं, इसका पता नहीं चला। शायद वे खादीकाम के प्रारम्भ से अप्रैल १९२३ तक के हों।

सन् १९२४ के जो आँकड़े मिले, उनसे मालूम हुआ कि उस वर्ष करीब १० लाख रुपयों की खादी पैदा हुई और २० लाख की बिक्री। बिक्री के आँकड़ों में कुछ थोक बिक्री के आँकड़े शामिल होने के कारण शायद कुछ आँकड़े दुबारा आ गये होंगे। कई स्थानों से जानकारी मिली भी नहीं और जो मिली, वह अधूरी थी। ये आँकड़े तो केवल प्रांतीय खादी मंडलों के दफ्तरों के तथा कुछ संस्थाओं के थे। इनके अलावा कई प्रांतों में परंपरा से खादी का कुछ काम बचा हुआ था। उस समय यह अंदाज किया गया था कि देशभर में कुल मिलाकर सालभर में करीब दो करोड़ रुपये मूल्य का हाथसूत कता होगा।

अखिल भारत खादीमंडल

दिसंबर सन् १९२३ में काकिनाडा कांग्रेस ने नीचे लिखे प्रस्ताव के अनुसार अखिल भारत खादी मंडल (ऑल इण्डिया खद्दर बोर्ड) की स्थापना की।

निश्चय हुआ कि नीचे लिखे सदस्यो का अखिल भारत खादीमडल बनाया जाय :

१. श्री जमनालाल बजाज, अध्यक्ष	५ श्री वेल्जी लखनसी नप्पू
२ ,, वल्लभभाई पटेल	६ ,, नवरोजी एच० वेल्गॉववाला
३ ,, मगनलालभाई गाधी	७ ,, मौलाना शौकतअली
४. ,, रेवाशकर जगजीवन जव्हेरी	८ ,, शकरलाल बैकर, मत्री

"इस मण्डल को काग्रेस महासमिति की देखभाल मे देशभर मे खादी-काम को सगठित करने का, उसे चलाने का, उसके लिए काग्रेस कार्यसमिति जो रकमे देगी, उनके अलावा चन्दा करने का तथा खादी का काम करने के लिए कर्ज लेने का अधिकार रहेगा। इस मण्डल का कार्यकाल तीन वर्ष का रहेगा तथा जो स्थान रिक्त होगे, वे बाकी के सदस्य भर लेगे। वह काग्रेस महासमिति की वार्षिक सभा मे तथा अन्य समय भी जब मॉग हो, तब कार्य का विवरण तथा हिसाब पेश करेगा। वह काग्रेस महासमिति की ओर से खादी-काम के बारे मे केन्द्रीय अधिकारी के तौर पर तथा प्रान्तीय काग्रेस समितियो के सहयोग से काम करेगा, प्रान्तीय काग्रेस समितियो द्वारा स्थापित किये गये खादी मण्डलो का निरीक्षण और नियत्रण करेगा और जिन प्रान्तो मे ऐसे खादी मण्डल नही बने हैं, वहॉ प्रान्तीय काग्रेस समिति के सहयोग से नये प्रान्तीय मण्डल स्थापित करेगा।"

आगे चलकर श्री वेल्जी नप्पू ने अपनी सदस्यता का त्यागपत्र दिया और उनके स्थान पर ता० २३ अगस्त १९२५ को पण्डित जवाहरलाल नेहरू सदस्य बनाये गये।

चरखा सघ की स्थापना सन् १९२५ के सितम्बर महीने मे होने तक देशभर का खादी-काम इस मण्डल के द्वारा होता रहा।

मण्डल ने सब प्रान्तीय काग्रेस समितियो को प्रार्थना की कि वे प्रान्तीय खादी मण्डलो की स्थापना करे, उनको अपना तन्त्र चलाने का पूरा अधिकार दे और मण्डलो मे जिम्मेदार और कार्यक्षम सभासद चुनें, उनका कार्यकाल कम-से-कम तीन वर्षों का रहे, ताकि उनके काम करने

मे खण्ड न पडे । फलस्वरूप सन् १९२४ मे बर्मा और बरार को छोडकर अन्य सभी प्रान्तो मे प्रान्तीय खादी मण्डल स्थापित हो गये ।

इस मण्डल के पहले वर्ष मे अन्य कामो के साथ यह भी एक लाभ हुआ कि खादी-काम कहाँ कहाँ चल रहा है, वह कहाँ-कहाँ बढाने की सुविधा है तथा उस समय जहाँ खादी-काम नहीं होता था, वहाँ वह कैसे शुरू किया जा सकता है, इसकी जाँच की गयी । मडल के सदस्यो ने दौरा किया । जानकारी इकट्ठी की गयी । जानकारी-विभाग (इन्फर्मेशन ब्यूरो) के द्वारा भी जानकारी मिलायी गयी । पाया गया कि तमिल्नाड, आन्ध्र, बिहार, पजाब और राजपूताना मे लाखो चरखे चल रहे थे और कातने की परम्परा कायम थी । मोटी खादी बनाकर लोग उसका इस्तेमाल भी करते थे, हालाँकि कताई-उद्योग की हालत गिरती दशा मे थी । रूई मुहय्या कर देने तथा काम के सगठन के लिए सस्थाएँ बनाने की आवश्यकता थी । बिहार, बगाल, उत्कल और युक्तप्रान्त मे रूई सग्रह करने के लिए १,३५,००० रु० मजूर किये गये । सस्थाओ तथा व्यक्तियो को खादी और सूत के रेहन पर कर्ज दिया गया । बुनाई बढाने के लिए आर्थिक मदद, खादी-उत्पत्ति बढाने के लिए दो प्रतिशत बाउण्टी और फेरी से खादी बेचनेवालो को कमीशन देना तय हुआ । बिक्री की व्यवस्था मे, बम्बई का श्री जेराजाणीजी का खादी भण्डार, खादीमण्डल द्वारा अपने अधिकार मे कर लेने के अलावा, कई अन्य स्थानो मे खादी-भण्डार चलाने के लिए सस्थाओ तथा व्यक्तियो को कर्ज दिया गया । ओजारो का सुधार करने की ओर भी ध्यान दिया गया तथा उनके बनाने का प्रबन्ध शुरू हुआ । शुद्ध खादी की और सूत की परीक्षा करने का तथा उस समय काग्रेस ने अपने सदस्यो को सूत देने का जो आदेश दिया था, उसके अनुसार सूत लेने का प्रबध किया गया । वस्त्र-स्वावलबन की ओर भी ध्यान दिया गया । तमिलनाड मे कनोर, गुजरात मे रामेसरा और बारडोली, बिहार मे मधुबनी और आन्ध्र मे सीतानगरम् मे वस्त्र स्वाव-लबन के केन्द्र शुरू हुए । गुजरात मे बडे उत्साह से काम हुआ । वहाँ

एक खादी प्रचारक मण्डल की स्थापना हुई। वह लोगो से रूई दान के रूप मे प्राप्त करके कातनेवालो को सस्ते दामो पर देता। खुद के सूत के बने कपडे पर वह बुनाई का तीन-चौथाई हिस्सा सहायता के रूप मे देता। उस एक वर्ष मे गुजरात और काठियावाड मे २३०००) का वस्त्र-स्वावलबन का कपडा बना।

खादी-सेवक-दल मे खादी-मण्डल के केन्द्रीय दफ्तर के कार्यकर्ता, विज्ञान तथा जानकारी विभागो के कार्यकर्ता, सब प्रान्तो मे काम करनेवाले हिसाब निरीक्षक, पर्यवेक्षक आदि सब शामिल किये गये। उस समय वेतन की कमाल मर्यादा मासिक १००) रखी थी। विशेष कारणो से कुछ अपवाद किये जा सकते थे। प्रवास-खर्च रेलवे के तीसरे दर्जे का किराया मुकर्रर किया गया था। यह ख्याल रहे कि इस खादी-सेवक-दल मे कुछ ऊँचे दर्जे के भी कार्यकर्ता थे, जो अपनी खुशी से कम निर्वाह-व्यय लेते थे।

सन् १९२५ के खादी-सेवको के जो ऑकडे मिले, उनकी तफसील नीचे मुताबिक है :

केन्द्र का नाम	सख्या, कार्यकर्ता	ग्रेजुएट	वैतनिक	अवैतनिक	मासिक वेतन अधिक से अधिक	मासिक वेतन कम से कम	औसत
१ तमिलनाड खादी मण्डल	२२	१	२२	–	८०	१५	३२।
२ अखिल भारत ,, ,,	२४	८	२२	२	१५०	१०	६४।।
३ खादी प्रतिष्ठान, बगाल	८८	१३	८४	४	१००	१०	२६
४. गुजरात खादी मण्डल	३२	५	३२	–	१००	१५	४३।।
५. पजाब ,, ,,	१५	१	१५	–	१५०	२०	५०
६ महाकोशल ,, ,,	६	—	६	–	४०	१०	१८
७ सिन्ध (६ पूरे समय + ३ आशिक)	९	१	७	२	—	—	३८
८. दिल्ली (७ पूरे समय + ९ आशिक)	१	—	६	१०	—	—	२२।।
९. गाधी कुटीर, बिहार	४०	(तफसील नही मिली)					

उस समय खादी की उत्पत्ति-बिक्री की, खादी-काम के लिए कर्ज देने की और बाउन्टी आदि मदद करने की नीति इस प्रकार थी।

उत्पत्ति-बिक्री

प्रारम्भ से ही सर्वसाधारण नीति यह रही कि जिस प्रान्त मे माल

बनता है, वहीं उसकी खपत हो जाय। पर इसके अमल मे कई कठिनाइयाँ थीं। इसलिए बिक्री के लिए माल दूर-दूर के खादी भडारो मे पहुँचता रहा। यह स्थिति बहुत लम्बे अर्से तक बनी रही। मडल ने हिदायते दी थीं कि हरएक प्रान्त अपनी खादी-उत्पत्ति की शक्ति यथासम्भव बढाये और कोशिश करे कि प्रान्त की जनता के कपडे की जरूरत अपने ही प्रान्त मे बनी खादी से पूरी करे। पहले काम उन क्षेत्रो मे शुरू किया जाय, जहाँ खादी बनाने की विशेष अनुकूलता हो, ताकि वे अपने प्रान्त के बाहर भी, जहाँ खादी की काफी उत्पत्ति नही हो सकती है, अपनी फाजिल खादी भेज सके दूसरे प्रान्तो की माँग पूरी करना अपना कर्तव्य समझे, परन्तु बाहर माल भेजना या बाहर से माल मँगाना प्रान्तीय खादी मण्डलो द्वारा हो।

कर्ज देना

खादी उत्पत्ति के लिए कर्ज उन्ही क्षेत्रो मे देने की नीति थी, जहाँ गरीब बेकार लोगो मे चरखे का प्रचार करना था तथा जहाँ रूई धुनने की मजदूरी ४० तोले पर ५ आने से और कताई की मजदूरी सेर पीछे १० आने से अधिक न हो। कर्ज रजिस्टर्ड सस्थाओ को तथा अन्य सस्थाओ को, सस्था की और उसके सदस्यो की जाती जिम्मेवारी पर और माल की जमानत पर बाकायदा दस्तावेज लिखाकर देने की बात थी। सूद की दर नाम मात्र की अर्थात् १००० रु० पीछे सालाना एक टका थी। जाँच-पडताल करके रकम जोखिम मे न आये और जो खादी-काम ठीक से करा सकेगे, इसका विश्वास हो जाय, उन्हींको कर्ज देने का नियम था। ऐसा भी एक नियम था कि जिनको कर्ज दिया जाय, उनकी खादी और सूत मण्डल के कब्जे मे रहे। उस समय यह नीति रही कि यथासम्भव खानगी पूँजी खादी के काम मे आये। कुछ समय यह भी हुआ कि जितनी रकम सस्था या व्यक्ति अपनी खुद की लगाते, उतना ही उन्हे कर्ज दिया जाता।

बाउण्टी

बिक्री पर फी सदी दो टका बाउण्टी उनको देने का प्रस्ताव था कि जो लागत मूल्य पर १ रुपया पीछे एक आने से अधिक खर्च न चढाये और जिस खादी की बिक्री-कीमत सवा रुपया वर्ग गज से अधिक न हो बिक्री भडार मे शुद्ध खादी के सिवा दूसरा कोई कपडा न रहे। प्रारम्भ मे यह मदद मिलाने के लिए बिक्री की मर्यादा कम-से-कम १५ हजार रुपया वार्षिक रखी गयी थी। पर उस समय खादी की बिक्री बहुत कम होती थी, अत: उसे एक दफा ५ हजार पर उतारकर फिर १००० पर लाना पडा। इन वर्षो मे फेरी बिक्री पर कमीशन कुछ समय एक रुपये पर एक आना और कुछ समय आधा आना रहा।

इन सारे प्रयत्नो से काम बढा जरूर। कई कार्यकर्ता लगन से काम करनेवाले मिले, तथापि काम बढाने की जल्दी मे जैसे मिले, उन्हीको काम पर ले लेना पडा। वे अधिकतर राष्ट्रीय काम करनेवालो मे से थे। उनको व्यावहारिक अनुभव नही था, खादी-विज्ञान का ज्ञान तो बहुत ही कम। खादी मे कुछ सुधार हुआ, पर वह गिनती मे लेने लायक नही था। खर्च अधिक होता था, खादी महँगी पडती थी। आर्थिक हानि होती थी। अब महसूस होने लगा कि व्यावहारिक कुशलता लाना आवश्यक है। वह एकाएक तो नही आ सकती थी, पर उस ओर ध्यान दिया गया और उस दिशा मे प्रयत्न होने लगे।

काग्रेस कार्यसमिति ने स्थानिक स्वराज्य सस्थाओ को अपनी पाठशालाओ मे कताई दाखिल करने और खादी पर टैक्स माफ करने के लिए पत्र भेजे थे। कई म्युनिसिपल कमिटियो ने खादी पर टैक्स माफ किया। यह सिलसिला बाद के वर्षो मे भी चालू रहा और देशभर मे प्राय. सब प्रान्तो मे और देशी रियासतो मे भी खादी पर टैक्स माफ रहा। पाठशालाओ मे कताई दाखिल करने का काम कई जगह शुरू हुआ। लेकिन अध्यापक जानकार न होने के कारण वह एक दो वर्ष चलकर बद हो गया।

सन् १९२५ के जुलाई महीने मे श्री देशबन्धु चित्तरजनदास का स्वर्गवास हुआ। उनके स्मारक के रूप मे कताई और खादी का प्रचार करना तथा खादीकाम के लिए चन्दा इकट्ठा करना तय हुआ।

खादी के प्रचार मे गाधीजी द्वारा सपादित 'यग इण्डिया' एव गुजराती और हिन्दी 'नवजीवन' साप्ताहिक पत्रो की बडी मदद रही। उन चार-पॉच वर्षो मे और बाद मे भी ये पत्र खादी-प्रचार के बडे प्रबल साधन रहे। इनके अलावा कई खादी बुलेटिन प्रकाशित हुए, खादीगाइड भी छपा। उसकी एक बढी हुई आवृत्ति सन् १९२५ मे प्रकाशित हुई, जिसमे खादी सबधी तफसीलवार जानकारी है। तकली पर कातना, देशी रॅगाई और चरखा-शास्त्र नाम की पुस्तके तैयार हुई। सन् १९२५ के जनवरी के शुरू मे खादी सबधी एक सागोपाग किताब लिखाने के लिए १०००) का पारितोषिक देना घोषित हुआ। इस लेख की प्राप्ति की तारीख १५ मार्च १९२५ रखी गयी थी, जो बाद मे ३० अप्रैल कर दी गयी। इस पर करीब ६० निबन्ध मिले। श्री एन्० एस्० वरदाचारी और श्री एस्० वी० पुणतावेकर के निबध पसन्द आये। ये दोनो प्राय: बराबरी के पाये गये। इसलिए वह इनाम इन दोनो मे आधा-आधा बॉटा गया। इन दोनो लेखको से प्रार्थना की गयी कि वे अपनी-अपनी सामग्री इकट्ठी करके एक निबन्ध बना दे। वैसा किया गया और खादी-मीमासा के सामान्य ज्ञान के बारे मे वह पहली किताब (अग्रेजी मे) प्रकाशित हुई। उसका नाम है: 'एसे ऑन हैण्ड स्पीनिग ऐण्ड हैण्ड वीव्हिग'।

जब काग्रेस महासमिति ने और काग्रेस ने अपने सदस्यो को सूत कातने को कहा, तब अखिल भारत खादीमडल ने घोषित किया कि वह तथा प्रान्तीय खादीमडल इस काम मे नीचे लिखी सहायता देगे :

(१) जिस सूबे मे आसानी से रूई नही मिलती है, वहॉ वह मुहय्या की जायगी।

(२) शर्तें तय करके सूत और रूई के लिए कर्ज दिया जा सकेगा।

(३) चरखे तथा बुनकियाँ बनाने के लिए उनके अच्छे नमूने भेजे जायेंगे और कातने और बुनने के सब औजार देने की कोशिश की जायगी। जब तक सदस्य अपनी पूनियो का प्रबंध खुद नहीं कर सकेंगे, तब तक पूनियाँ मुहय्या करने मे मदद की जायगी।

(४) योजना बनाकर कातना और बुनना सिखाने के लिए यथा-सम्भव शिक्षको का प्रबंध किया जायगा।

(५) मडल प्रान्तीय काग्रेस समितियो से सूत खरीद सकेगा और उनके लिए वह बुनवा देगा।

(६) काग्रेस ने जो नियम बनाया था कि खुद न कात सकने की दशा मे सूत दूसरो से प्राप्त करके काग्रेस समिति को दिया जा सकता है, उसके बारे मे आश्वासन दिया गया कि जो चाहेंगे, उनको हाथकता सूत वाजिब दर से दिया जायगा।

(७) इसके अलावा इस विषय मे व्यक्तियो को तथा काग्रेस समितियो को जो जानकारी चाहिए, वह यथासम्भव दी जायगी।

इस घोषणा के अनुसार काग्रेस सदस्यो को सूत के बारे मे मदद करने की खादी मण्डलो ने यथाशक्ति कोशिश की।

साबरमती आश्रम मे खादी विद्यालय का आरम्भ पहले ही हो चुका था। सन् १९२३ के आखिर तक ११५ विद्यार्थी शिक्षा पाकर खादी-काम मे लग गये थे। अखिल भारत खादी मडल के पहले वर्ष मे नये २२ विद्यार्थी दाखिल हुए।

सन् १९२४ मे तमिलनाड के कुछ गाँवो मे चरखे से आमदनी कितनी होती है, इसकी जाँच की गयी। परिणाम नीचे मुताबिक पाया गया।

गाँव का नाम	चरखो की संख्या	परिवारो की चरखे के अलावा आमदनी	चरखे की आमदनी	प्रतिशत वृद्धि
		रु०	रु०	
१. उप्पू पालयम्	२५	३३६०	६६०	१५%
२ सेम्बम् पालयम्	२९	३०६५	४५०	१५%
३ पुलियन पट्टी	२०	२६५०	३४६	१४%
४ चित्त लन्दूर	२५	२१५०	३७५	१७%
५. पुदू मालयम्	२५	२३९८	३३६	१७%

अध्याय ४ अखिल भारत

चरखा संघ का विधान

सन् १९२१ के अप्रैल महीने मे काग्रेस महासमिति ने देश मे २० लाख चरखे चलाने का सकल्प किया था। इस पर से जहाँ तहाँ काग्रेस समितियाँ खादी-काम करने लगी। दूसरी सस्थाएँ तथा कुछ व्यक्ति भी खादीकाम करने लगे। सन् १९२२ मे काग्रेस कार्यसमिति ने अपने मातहत खादी विभाग खोला। इसी प्रकार कुछ प्रान्तो मे प्रान्तीय काग्रेस समितियो ने भी अपने-अपने खादी-विभाग चालू किये। कुछ प्रान्तो मे खादी-विभाग के बदले प्रान्तीय काग्रेस समितियो ने प्रान्तीय खादी मण्डलो की स्थापना की और प्रान्त का खादी-काम उन मण्डलो के सुपुर्द किया। बाद मे अखिल भारत खादी मण्डल के प्रयत्न से बाकी सब प्रान्तो मे खादी मण्डलो की स्थापना हो गयी। अन्त मे ये सारे प्रान्तीय खादी मण्डल अखिल भारत खादी मण्डल की देखभाल मे काम करने लगे। प्रान्तीय खादी मण्डलो मे प्रान्तीय काग्रेस समितियो द्वारा नियुक्त किये हुए व्यक्ति सदस्य होते। उनकी सख्या अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार मुकर्रर की गयी थी। मण्डलो के अपने अध्यक्ष और मन्त्री भी रहते थे। इस प्रकार उस समय खादी-काम कुछ स्वतन्त्र-सा था। तथापि प्रान्तीय खादी मण्डल अन्त मे प्रान्तीय काग्रेस कार्यसमितियो के अधीन ही थे। सन् १९२४ और १९२५ मे काग्रेस समितियो मे तीव्र राजनीतिक मतभेद रहे। प्राय हरएक समिति मे भविष्य मे राजनीतिक काम का स्वरूप क्या हो, इसकी तीव्र चर्चा रहती। दलबन्दियाँ भी होने लगी। खादीकाम काग्रेस समितियो के अधीन होने के कारण मतभेद का उस पर असर होना ही था। कहीं-कहीं खादीकाम का पैसा राजनीतिक काम मे भी खर्च होने लगा।

काम बिगड़ने का डर था। इसलिए सन् १९२५ के सितम्बर महीने में कांग्रेस महासमिति ने स्वतंत्र चरखा संघ की स्थापना करने की इजाजत दी।

यह भी खयाल में रहे कि सन् १९२४ के दिसम्बर में बेलगाँव के कांग्रेस के अधिवेशन में तय हुआ था कि अब कांग्रेस केवल रचनात्मक काम ही करे धारासभाओं में जाना-आदि राजनीतिक काम स्वराज्य-दल करे। महासमिति की पटना की सभा में इसमें परिवर्तन हुआ। राजनीतिक काम कांग्रेस ने फिर से अपने हाथ में लिया और खादीकाम के लिए चरखा संघ बनाने का निश्चय हुआ। पटना में ता० २२ सितम्बर १९२५ को कांग्रेस महासमिति ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया.

"निश्चय किया जाता है कि अब कांग्रेस देश के हित में आवश्यक हो, वह सारा राजनीतिक काम अपने हाथ में ले और चलाये और अपने सारे तन्त्र तथा कोष का उपयोग उस उद्देश्य से करे। पर इसमें यह अपवाद है कि जो रकमें या जायदाद खादीकाम के लिए अंकित की गयी हैं तथा ऐसी रकमें और जायदाद कि जो अखिल भारत खादीमण्डल के अधीन हैं, वे मौजूदा आर्थिक जिम्मेदारियों के साथ महात्मा गांधीजी द्वारा बननेवाले अखिल भारत चरखा संघ को सौंप दी जायँ। यह चरखा संघ कांग्रेस-संगठन के अन्तर्गत, परन्तु स्वतंत्र रहेगा और उसे ऊपर लिखी रकमों तथा जायदाद और अपने दूसरे कोषों का अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उपयोग करने का पूरा अधिकार रहेगा।"

गांधीजी ने तारीख २३ सितम्बर १९२५ के तीसरे प्रहर यह संघ बनाने की चर्चा के लिए वहाँ उपस्थित सब खादी-प्रेमियों को बुलाया। करीब १०० के ऊपर सज्जन इकट्ठे हुए। गांधीजी ने विधान का अपना मसविदा सभा के सामने रखा और उसको अन्तिम स्वरूप दे सकने के लिए सूचनाएँ माँगीं। मूल मसविदे में कई फर्क किये गये। उनमें दो मुख्य थे। एक, 'अ' वर्ग के सदस्य के सूत-चन्दे के परिमाण के बारे में और दूसरा सदस्य के

किसी प्रतिज्ञा लेने के बारे मे। काफी देर तक चर्चा हुई। दीख पडा कि करीब आधे लोग मसविदे के मासिक दो हजार गज सूतचन्दे के बदले एक हजार गज रखने के पक्ष मे थे। तथा अल्पमत यह भी था कि सदस्यो से किसी प्रकार की प्रतिज्ञा न ली जाय। गाधीजी ने कहा : यद्यपि मेरा मत २००० गज और प्रतिज्ञा लेने के पक्ष मे है, तथापि कुछ लोग ऐसा नही चाहते हैं, इसलिए मै अपनी दोनो बातें छोड देता हूँ। नीचे लिखा विधान स्वीकृत हुआ। उस रोज कार्यसमिति के सदस्यो के नाम नहीं बतलाये गये।

गाधीजी ने दूसरे दिन तारीख २४ सितम्बर को कार्यकारिणी समिति के लिए नाम बतलाये। उनके नाम विधान मे दिये गये। कार्यकारिणी समिति के सदस्यो की प्रार्थना पर गाधीजी ने सघ का अध्यक्ष बनना स्वीकार किया।

चरखा सघ का मूल विधान

(१) चूँकि हाथकताई की कला का और खादी का विकास करने के लिए उस विषय का समग्र ज्ञान रखनेवाली एक सस्था स्थापित करने का समय आ गया है और अनुभव से यह साबित हो चुका है कि राजनीति से, राजनीतिक उथल-पुथल से और राजनीतिक सस्था के नियत्रण और प्रभाव से दूर रहनेवाली एक स्थायी सस्था के बिना उनका विकास हो सकना सम्भव नहीं है, इसलिए अब काग्रेस महासमिति की मजूरी से काग्रेस सगठन के अन्तर्गत, किन्तु स्वतत्र अस्तित्व और सत्ता रखनेवाली अखिल भारत चरखा सघ नाम की सस्था स्थापित की जाती है।

(२) इस सघ मे सदस्य, सहयोगी और चन्दा देनेवाले, जिनकी व्याख्या आगे दी गयी है, रहेगे तथा उसकी एक कार्यकारिणी समिति रहेगी, जिसके निम्नलिखित सज्जन सदस्य होगे। वे पॉच वर्ष तक अपने पद पर रहेगे।

(१) महात्मा गाधी, अध्यक्ष
(२) मौलाना शौकतअली
(३) श्री राजेन्द्रप्रसाद
(४) ,, सतीशचन्द्र दासगुप्ता
(५) ,, मगनलालभाई गाधी
(६) ,, जमनालाल बजाज, कोषाध्यक्ष
(७) ,, स्वाइब कुरेशी
(८) ,, शकरलाल बैंकर } मत्री
(९) ,, जवाहरलाल नेहरू }

कार्यकारिणी समिति के अधिकार

(३) कार्यकारिणी समिति अखिल भारत खादीमडल का और सब प्रान्तीय मण्डलो का सब रुपया और सम्पत्ति अपने कब्जे मे लेगी। इस धन-सम्पत्ति का उपयोग करने का उसे पूरा अधिकार रहेगा और इन मण्डलो की मौजूदा आर्थिक जिम्मेदारियो को चुकायेगी।

(४) कार्यकारिणी समिति को अधिकार होगा कि वह कर्ज ले सके, चन्दा जमा कर सके, स्थावरसम्पत्ति रखे, पैसा योग्य सुरक्षित रीति से लगाये, हाथकताई और खादीकाम को तरक्की देने के लिए रेहन दे और ले, खादीकाम करनेवाली सस्थाओ को कर्ज, दान और ग्राउण्टी के रूप मे आर्थिक सहायता दे, हाथकताई सिखाने के लिए विद्यालय और सस्थाएँ स्थापित करे और उनको मदद करे, खादी भडार खोले और उनको मदद दे, खादी सेवक दल की स्थापना करे, काग्रेस की तरफ से काग्रेस के चन्दे का सदस्यो का खुद-कता सूत ले और उसके लिए प्रमाण-पत्र दे तथा सघ के उद्देश्यो को सफल बनाने के लिए जो-जो काम आवश्यक हो, वे सब करे। कार्यकारिणी समिति को यह भी अधिकार होगा कि वह सघ का और कार्यकारिणी समिति का कामकाज चलाने के लिए नियम बना सके और सघ के मौजूदा विधान मे ऐसे सशोधन कर सके, जो समय-समय पर आवश्यक जान पडे।

(५) मौजूदा कार्यकारिणी समिति में मृत्यु, इस्तीफा या अन्य कारणों से जगह खाली हो तो वह बाकी के सदस्य भर सकेंगे।

(६) कार्यकारिणी समिति को अपने सदस्यों की संख्या बढ़ाने का अधिकार होगा, पर वह संख्या कभी १२ से अधिक न होनी चाहिए। कार्यकारिणी की सभा के लिए कोरम चार सदस्यों का होगा।

(७) सब निर्णय बहुमत से किये जायेंगे।

(८) कार्यकारिणी सब चन्दे, दान और फीस का चाहे नकदी हो या माल के रूप में, और खर्च का ठीक ठीक हिसाब रखेगी। किसीको भी वही खाते देखने का अधिकार रहेगा और हर तीन महीनों में योग्य ऑडिटरों द्वारा हिसाब की जाँच कराई जायगी।

(९) संघ का केन्द्रीय दफ्तर सत्याग्रह आश्रम साबरमती में रहेगा। जो कांग्रेस का सदस्य होना चाहेंगे, वे अपने चन्दे का सूत नीचे लिखे फॉर्म में तफसील भरकर केन्द्रीय दफ्तर में भेजेंगे।

सेवा में,

मन्त्रीजी, अखिल भारत चरखा संघ, साबरमती

महाशय,

मैं इस फॉर्म के साथ अपनी कांग्रेस सदस्यता के चन्दे का अपना कता सूत गज वजन, भेजता हूँ।

मैं कांग्रेस कमेटी का सदस्य हूँ / बनना चाहता हूँ।

मेरी उम्र साल की है। मेरा धन्धा है।

मेरा पता—

हस्ताक्षर

[हस्ताक्षर स्पष्ट अक्षरों में करें। यदि स्त्री हो तो विवाहित या अविवाहित लिखें।]

तारीख

(१०) सूत चन्दा पाने पर मंत्री उसकी तादाद और गुण की जाँच

करायेंगे। अगर वह संतोषजनक पाया गया, तो जिस कांग्रेस कमेटी का सम्बन्ध आता है, उसको वह नीचे फॉर्म में प्रमाण-पत्र भेज देंगे और उसकी एक नकल मंत्री के हस्ताक्षर से सूत भेजनेवाले के पास भेजी जायगी।

,,प्रमाण-पत्र दिया जाता है कि श्री . . . . . ने साल . . के लिए अपनी कांग्रेस सदस्यता के चन्दे का . . गज सूत अखिल भारत चरखा संघ को भेज दिया है। यह . . प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के . कांग्रेस कमेटी में सदस्य हैं।

(११) केन्द्रीय दफ्तरवाले कांग्रेस की सदस्यता के लिए चरखा संघ को मिले हुए सब सूत की पूरी तफसील सहित एक अलग रजिस्टर (खातेवार) रखेंगे।

चरखा संघ के सदस्य

(१२) चरखा-संघ के सदस्यों के दो वर्ग होंगे—एक 'अ' वर्ग और दूसरा 'ब' वर्ग।

(क) अ वर्ग में वे व्यक्ति रहेंगे, जिनकी उम्र १८ साल से अधिक हो, जो आदतन खादी पहनते हों और जो हर महीने कोषाध्यक्ष के पास अथवा कार्य समिति द्वारा नियुक्त किये हुए किसी दूसरे व्यक्ति के पास समान, ठीक बट का अपना काता १००० गज सूत देगा।

(ख) ब वर्ग में वे व्यक्ति रहेंगे, जिनकी आयु १८ वर्ष से अधिक हो, जो आदतन खादी पहनते हों और जो समान, ठीक बटा अपना काता हुआ वार्षिक २००० गज सूत देंगे।

(१३) कांग्रेस सदस्यता के लिए संघ को दिया हुआ सूत संघ के चन्दे में शुमार होगा।

सदस्यों के हक और कर्तव्य

(१४) 'अ' और 'ब' दोनों वर्गों के हरएक सदस्य का कर्तव्य होगा कि वह हाथ-कताई और खादी का प्रचार करे।

(१५) मौजूदा कार्यकारिणी का कार्यकाल पूरा होने के बाद

सदस्यों को अधिकार होगा कि वे 'अ' वर्ग के सदस्यों में से कार्यकारिणी समिति का चुनाव करें। अब से पाँच वर्षों के बाद योग्य रीति से बुलायी गयी सदस्यों की सभा में उपस्थित सदस्य तीन-चौथाई सदस्यों की राय से संघ का विधान बदल सकेंगे।

(१६) जब किसी क्षेत्र में संघ के ५० सदस्य बन जायेंगे, तो उन्हें अधिकार होगा कि वे 'अ' वर्ग के सदस्यों में से उस क्षेत्र की बातों पर सलाह देने के लिए पाँच व्यक्तियों की सलाह समिति बना सकें।

सहयोगी

(१७) जो चरखा संघ को हर साल अग्रिम रु० १२ चन्दा देगा और जो आदतन खादी पहनता है, वह संघ का सहयोगी सदस्य माना जायगा।

(१८) जो आदतन खादी पहनता है और अग्रिम रु० ५००) संघ को चन्दा देगा, वह संघ का आजीवन सहयोगी सदस्य होगा।

(१९) सभी सहयोगी सदस्यों को हक होगा कि उन्हें कार्यकारिणी समिति के बयान, आँकड़े (बैलेन्स-शीट) और वृत्तान्त की नकलें मुफ्त में मिलें।

(२०) जो व्यक्ति संघ का सदस्य बनना चाहे, वह निम्नलिखित फॉर्म में दरख्वास्त दे।

श्रीमान् मन्त्रीजी,

अखिल भारत चरखा-संघ, साबरमती

महाशय,

मैंने अखिल भारत चरखा संघ की नियमावली पढ़ ली है। मैं उसका · वर्ग का सदस्य/सहयोगी बनना चाहता हूँ और उसके चन्दे में · · काल का चन्दा गज सूत या रुपये · भेजता हूँ। कृपा कर मेरा नाम सदस्य/सहयोगी में दर्ज कर लीजिये।

हस्ताक्षर · ··

पूरा पता · ·

तारीख · ·· · ·

ऊपर लिखा विधान 'यग इडिया' मे प्रकाशित करते हुए गाधीजी ने लिखा :

"विधान का ध्यानपूर्वक विचार करने से पता चलेगा कि चरखा सघ अभी लोक-प्रातिनिधिक सस्था नही है, बल्कि व्यवहार मे तो वह एक आदमी का ही बनाव है। या तो वह, जिसने बनायी है उसके अहकार का द्योतक है या उसकी खुद मे और इस संस्था मे और इस सस्था के काम मे अटूट श्रद्धा बतलानेवाली चीज है। जहाँ तक मनुष्य अपने को जान सकता है, मै मानता हूँ कि इस सस्था को एकतन्त्री रूप देने मे मेरा अहकार नही है। व्यवसायी सस्थाएँ कभी लोकतन्त्रात्मक हो ही नही सकती। अगर देश मे हाथ-कताई को व्यापक और सफल बनना है, तो उसकी गैर-राजनीतिक और शुद्ध आर्थिक बाजू का पूरा विकास होना चाहिए। अखिल भारत चरखा सघ के द्वारा यह विकास बना लाना है। सघ बनाने के समय जब मुझे स्वराज्य दलवालो सहित एक सौ से अधिक खादीप्रेमियो की मदद मिली थी, तो मुझे पूछा गया था कि क्या अब मुझे खादी के राजनीतिक महत्त्व मे अथवा सविनय कानून भग के लिए परिस्थिति निर्माण करने की उसकी शक्ति मे विश्वास नही रहा? मेरा साफ उत्तर था कि पूरा विश्वास है।

खादी का राजनीतिक महत्त्व उसकी आर्थिक क्षमता मे है। जिन लोगो को बिना धन्धे के भूखा रहना पडता है, उनमे कोई राजनीतिक जाग्रति नही रह सकती है। जहाँ कपडे की आवश्यकता नही और लोग शिकार करके जीवन बसर करते है अथवा जिस देश मे परदेश के लोगो का शोषण करके जीवन चलता है, उस देश मे खादी को राजनीतिक महत्त्व नही रहेगा। भारत मे उसकी विशेष दशा के कारण खादी को राजनीतिक महत्त्व है, क्योकि उसको कपडे की जरूरत है, वह किसी दूसरे देश का शोषण नही कर रहा है और यद्यपि भूखा रहना पडता है, तथापि उसके करोडो को साल मे चार महीने कुछ भी काम नही रहता। सविनय कानून भग की परिस्थिति निर्माण करने मे खादी की शक्ति इस

ध्यान में है कि अगर वह सफल हो, तो हमारे अपने अन्दर शक्ति होने का हमें आत्मविश्वास हो जायगा और शान्तता का वातावरण भी, जिसके तल में दृढनिश्चय भी रहेगा। बहुत-से लोगों को, जो सविनय प्रतिकार का नाम लेते हैं, उसका ठीक अर्थ मालूम नहीं है। वे उसे तीव्र क्षोभ के वातावरण के रूप में, जो किसी भी समय प्रत्यक्ष हिंसा में परिणत हो सकता है, समझ लेते हैं, जब कि सविनय प्रतिकार बिलकुल उसके उलटे है। अर्थशास्त्र की दृष्टि से खादी सफल हुए बिना न तो राजनीतिक परिणाम और न शान्त वातावरण संभव है। इसलिए उसके इस सर्वोपरि और आर्थिक पहलू पर, जो उसका सीधा फल है, जोर देना आवश्यक है। विधान की भूमिका सोच समझकर दी गयी है और वह प्राणरूप है। अति उग्र राजनीतिक लोग और अति उग्र सविनय प्रतिकारवाले भी संघ में शामिल हो सकते हैं, पर आर्थिक कार्यकर्ता की हैसियत से ही। किसी महाराजा को भी संघ से किनारा न काटना चाहिए, अगर वे खादी के महान् आर्थिक मूल्य को और भारत के करोड़ों भूखों के लिए पूरक धन्धे की आवश्यकता को मानते हैं। इसलिए मैं, जो खादी और चरखे में विश्वास रखते हैं, उन सबको संघ में शामिल होने का निमन्त्रण देने का साहस करता हूँ, चाहे उनकी राजनीतिक प्रवृत्ति कुछ भी हो और जाति और धर्म कुछ भी हो। मैं उन अंग्रेजी और दूसरे यूरोपियनों को भी संघ में शामिल होने का निमन्त्रण देता हूँ जो भारत के करोड़ों भूखों की भलाई करने का विचार रखते हैं। मैं मानता हूँ कि ऐसे कई हैं, जो खादी में और हाथकताई में विश्वास रखते हैं, पर खुद नहीं कातेंगे। वे सहयोगी बनें अगर खादी पहनेंगे तो। ऐसे भी कई हैं, जो कई कारणों से खुद खादी नहीं पहनेंगे, पर चाहते हैं कि उसकी प्रगति हो वे दान देकर संघ को मदद पहुँचायें।

यह समझने में भूल न हो कि जब तक कांग्रेस कृपापूर्वक चाहती है, तब तक यह संघ कांग्रेस-संगठन के अंगभूत रहेगा। इस नाते संघ का कर्तव्य होगा कि वह कांग्रेस को उसके हाथकताई और खादी के कार्यक्रम

मे भरसक मदद दे। इस प्रकार काग्रेस और सघ को जोडने की कडी, कताई और खादी मे दोनो की श्रद्धा होना है। काग्रेस की बदलती राजनीति मे न सघ पडेगा और न उससे विचलित होगा। उसका अस्तित्व स्वतन्त्र रहेगा। उसका उद्देश्य चरखा और खादी के प्रचार मे सीमित रहेगा। वह अपने अलग विधान से शासित होगा, यहाँ तक कि उसने अपने लिए एक अलग (फ्रेन्चाइज) मताधिकार स्वीकार कर लिया है और वह जैसा कि मैने पहले कहा है, गैरकाग्रेसी को भी अपना सभासद ले सकता है तथा न कोई काग्रेसजन, चाहे वह उसका सूत-सदस्य भी क्यो न हो, सघ का सभासद होने के लिए बँधा है।

सघ का विधान, पहले मेरा जितना इरादा था, उतना सख्त नही रहा। मेरे मसविदे के अनुसार 'अ' वर्ग के सदस्य का सूत-चन्दा मासिक दो हजार गज था और मैने ऐसे सदस्यो से नीचे लिखी प्रतिज्ञा चाही थी।

"मुझे दृढ विश्वास है कि देश के द्वारा चरखे को और उससे बनी खादी को व्यापक पैमाने पर अपनाये गये बिना भारत की जनता की आर्थिक उन्नति असम्भव है। इसलिए मै बीमारी या किसी दूसरे अकस्मात् कारण से असमर्थ होने की दशा को छोडकर अन्य दिनो मे हर रोज कम-से-कम आध घण्टा सूत कातूँगा और हाथकती-हाथबुनी खादी आदतन पहनूँगा और मेरे विश्वास मे फरक होने की दशा मे अथवा कातना या खादी पहनना बन्द होने की दशा मे मै सघ की सदस्यता का इस्तीफा दे दूँगा।"

विरोध के कारण दो हजार की जगह सूतचन्दा एक हजार कर दिया गया। प्रतिज्ञा भी इस कारण छोड दी गयी कि कइयो ने गम्भीरता-पूर्वक वचन देना अयुक्त माना, जो कि मेरे खयाल से गलत है। मेरी राय मे और दूसरे कइयो की राय मे भी मजबूत-से-मजबूत दिलवालो के लिए भी वचन या व्रत आवश्यक है।

कार्यकारिणी के सदस्यो के लिए भी मसविदे ने नीचे लिखी प्रतिज्ञा थी।

"मै वचन देता हूँ कि सघ की कार्यकारिणी के सदस्य के नाते मै अपने कर्तव्यो को दिल से अदा करूँगा और सघ के उद्देश्यो को सफल बनाना, खानगी या सार्वजनिक जो काम मेरे जिम्मे होगे, उन सबसे बढकर मानूँगा।"

यह बतलाया गया कि ऐसी प्रतिज्ञा न ली जाय। जब कार्यकारिणी के सदस्य पूरे समय देनेवाले रहेंगे, तो उनके द्वारा अपने पद के कर्तव्यो को दिल से अदा करने की बात उसमे आ ही गयी, ऐसा मान लेना चाहिए। वास्तव मे कार्यकारिणी मे सदस्य रहना सपूर्ण कर्तव्यरूप ही है, न कि अधिकाररूप।

ता० ११ नवम्बर १९२५ को मूल विधान की कलम १६ मे नीचे लिखा सशोधन हुआ।

'उस क्षेत्र की बातो' की जगह 'उस क्षेत्र की चरखा सघ के उद्देश्यो से सम्बद्ध बातो पर' शब्द रखे जायँ।

इसके अलावा मत्री को अधिकार दिया गया कि वह आर्थिक प्रश्नो को छोडकर अन्य बातो के बारे मे पत्रव्यवहार से कार्यकारिणी का प्रस्ताव करा सके।

मूल विधान के अनुसार सघ का सारा कारोबार कार्यकारिणी समिति को सौपा गया था, जो पॉच वर्षो के लिए बनायी गयी थी। उसमे स्थान रिक्त होने पर अन्य सदस्यो को उस स्थान की पूर्ति करने का अधिकार दिया गया था और पॉच वर्ष का उसका जीवनकाल पूरा होने पर सघ के सदस्यो को अधिकार दिया गया था कि वे 'अ' वर्ग के सदस्यो मे से नयी कार्यकारिणी समिति चुन ले। पर इस विषय मे ता० १८ से २० दिसम्बर १९२८ को वर्धा मे हुई चरखा सघ की सभा मे कुछ महत्त्व-पूर्ण परिवर्तन किये गये। मूल विधान की कलम २, ५, ६ और १५ की जगह नीचे लिखे मुताबिक व्यवस्था हुई।

नयी कलमें

इस संघ मे सदस्य, सहयोगी और चन्दा-दाता, जिनकी व्याख्या अन्यत्र दी गयी है, हुआ करेंगे तथा उसका एक ट्रस्टी-मडल रहेगा, जो संघ का कार्यकारी मडल भी रहेगा।

उक्त ट्रस्टी-मडल एव कार्यकारी मडल मे १२ सज्जन आजीवन सदस्य होगे, बशर्ते कि वे संघ के 'अ' वर्ग के सदस्य बने रहे। इनके अलावा तीन अन्य सालाना सदस्य रहेगे, जो संघ के सदस्यो द्वारा हरसाल 'अ' वर्ग के सदस्यो मे से चुने जायेगे। इस चुनाव मे, चुनाव के समय जो लगातार दो वर्ष तक संघ के सदस्य न रहे हो, उन्हे मत देने का अधिकार नही रहेगा।

ट्रस्टी-मडल एव कार्यकारी मंडल के सदस्यो के नाम नीचे मुताबिक :

(१) महात्मा गाधी (अध्यक्ष) (२) सेठ जमनालाल बजाज (कोषाध्यक्ष) (३) श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (४) श्री गगाधरराव देशपाण्डे (५) श्री कोंडा वेंकटप्पैया (६) बाबू राजेन्द्रप्रसाद (७) पं० जवाहरलाल नेहरू (८) श्री सतीशचन्द्र दासगुप्ता (९) श्री वल्लभभाई पटेल (१०) श्री मणिलाल कोठारी (११) श्री शकरलाल बैंकर (मत्री)

ट्रस्टी-मडल एव कार्यकारी मण्डल मे इस्तीफा, मृत्यु तथा अन्य किसी कारण से स्थान रिक्त हो जाय, तो बाकी के सदस्य संघ के 'अ' वर्ग के सदस्यो मे से उसकी पूर्ति करेगे, बशर्ते कि जो आजीवन सदस्य की जगह मुकर्रर होगा, वह आजीवन सदस्य रहेगा और जो सालाना सदस्य की जगह चुना जायगा, वह उसके बाकी बचे समय के लिए सदस्य रहेगा।

ट्रस्टी-मडल अर्थात् कार्यकारी मण्डल अपने सदस्यो मे से अध्यक्ष, मत्री और कोषाध्यक्ष का चुनाव करेगे, जो तीन वर्ष तक अपने पद पर रहेगे।

ट्रस्टी-मण्डल एवं कार्यकारी मण्डल का कोरम चार सदस्यों का होगा।

उस समय ऊपर लिखे मुख्य संशोधनों के अलावा कुछ और उसीके अंगभूत शाब्दिक परिवर्तन भी मूल विधान में किये गये।

सन् १९२९ अप्रैल ता० ४ और ५ को चरखा संघ की सभा में संघ के सदस्यों में से 'ब' वर्ग की श्रेणी हटा दी गयी और उसके अनुसार आनुषंगिक परिवर्तन अन्य धाराओं में किये गये।

ता० ८-११-'३७ को १८६० के कानून संख्या २१ के अनुसार चरखा संघ की रजिस्ट्री करायी गयी। उसमें विधान प्रायः पुराना ही बना रहा, पर कांग्रेस के सदस्यत्व की सूतसम्बन्धी धाराएँ निकल गयीं, क्योंकि उसके पहले ही कांग्रेस ने सूत-सदस्य बनाने का नियम हटा दिया था।

नवम्बर १९४० में विधान में यह तबदीली हुई कि अदालती काम का अधिकार मंत्री को दिया गया तथा संघ के शाखा मंत्रियों को बैंकों में खाता खोलने-चलाने का अधिकार दिया गया तथा जो हर तीन महीने हिसाब ऑडिट कराने की धारा थी, उसमें सालाना ऑडिट की बात रखी गयी। संघ के सदस्यों को लेखों, बैलेन्स शीटों तथा वृत्तांतों की नकलें भेजने की बात थी, उसकी जगह केवल रिपोर्ट और बैलेंस-शीट भेजने की बात रह गयी।

सन् १९२८ में कार्यकारी मण्डल के तीन सदस्यों के सालाना चुनाव की पद्धति स्वीकार की गयी थी। कुछ वर्षों तक यह चुनाव ठीक होते रहे, अलबत्ता चुनाव की तकलीफें तो थीं ही। सब सदस्यों की फेहरिस्त रखना, किसको मत देने का अधिकार है इसका निर्णय करना, देशभर में दूर-दूर फैले हुए दो-तीन हजार सदस्यों को मत के लिए कागजात भेजना, मत आने पर उनका हिसाब करना आदि कई झंझटें थीं। तब भी ये चुनाव बहुत अच्छी तरह चलते रहे। यह ध्यान में रखने की बात है कि उन वर्षों में, यद्यपि एक ही जगह के लिए एक से अधिक उम्मीदवार

खडे होते थे, फिर भी कोई कॅनव्हासिंग नहीं था, अपनी-अपनी स्वतन्त्र इच्छा के अनुसार हरएक सदस्य अपनी राय देता था। चुनाव के साथ जो मामूली बुराइयाँ रहती है, वे उन आरम्भिक वर्षो मे बिलकुल नही थी। पर धीरे-धीरे बुराइयो का प्रवेश होने लगा। यह चुनाव की धारा इस उद्देश्य मे रखी गयी थी कि सार्वजनिक क्षेत्रो मे, जो चरखा सघ के बाहर के भाई-बहन खादी-काम मे दिलचस्पी लेते थे, उनमे से कुछ सघ के कार्यकारी मडल मे आ सके। पर चूँकि विधान मे सघ के कार्यकर्ताओ को चुनाव मे खडे रहने की मनाही नही थी, वे भी चुनाव मे खडे होने लगे और चुनकर आने लगे। बाद मे चुनाव मे नैतिक दोष भी घुसने लगे। एक बार एक शाखा-मन्त्रीजी चुनाव मे खडे हुए। उन्होने अपने मातहत कार्यकर्ताओ को अपने नाम पर निशानी करके मत-पत्रक भेज दिये, ताकि उन सदस्यो को केवल सही करनी पडे और किनको मत देना है, इसका वे खयाल ही न करे। यह बात प्रकट होने पर वह चुनाव रद्द करना पडा। दूसरी बार एक दूसरे शाखा-मन्त्री ने प्रान्त के अन्दर और प्रान्त के बाहर कॅनव्हासिंग किया और उनके पास काम करनेवाले एक कार्यकर्ता ने उन्हीको मत देने के लिए शाखा के कार्यकर्ताओ को लिखा। यह खयाल मे रहे कि सघ के बहुत से सदस्य तो शाखा के कार्यकर्ता ही होते थे, बाहर के बहुत थोडे। इस दशा मे जब चरखा सघ के अधिकारी चुनाव मे खडे हो और वे अन्य लोगो की तरह चुनकर आने की लालसा रखकर कॅनव्हासिंग करे, तो उसमे दोष आने ही थे। अतः सघ की सन् १९४१, तारीख २२ जून की सभा मे यह चुनाव-पद्धति बन्द कर दी गयी और तीन सालाना-सदस्य स्थायी ट्रस्टियो द्वारा ही चुन लिये जाने का नियम बनाया गया। यह भी एक नियम बना कि शाखाओ के अधिकारी या कर्मचारी ट्रस्टी न बनाये जायँ, पर विधान का आखिरी प्रस्ताव पास करते समय यह बात गलती से छूट गयी। इसके अलावा बम्बई हाइकोर्ट मे सघ का जो इनकम-टैक्स का मुकदमा चला था, उसमे चरखा सघ के परोपकारी सस्था होने के

बारे में सन्देह न होते हुए भी न्यायाधीश ने विधान में गल्ती बतलायी थी, हालाँकि 'वास्तव में गल्ती नहीं है' ऐसा अन्त में प्रीवी कौंसिल ने निर्णय दिया। फिर भी कोई त्रुटि न रह जाय, इस दृष्टि से सारे विधान का पुनर्विचार होकर उसके उद्देश्य तथा नियमावली में ७ नवम्बर १९४१ को कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। परिवर्तन कानून के अनुसार ठीक रीति से होने के लिए संघ की फिर से सभा हुई और वे दुबारा पास किये गये। आखिरी विधान दूसरी सभा में ता० १७ दिसम्बर १९४१ को पास हुआ।

इसके बाद सूत-सदस्य का चन्दा, जो पहले मासिक १००० गज था, वह ता० २८ नवम्बर १९४५ की सभा में मासिक आधी गुण्डी अर्थात् ३२० तार किया गया। यह सूत-चन्दा कम करने का कारण यह हुआ कि उस समय चरखा संघ ने बड़ी तादाद में सहयोगी सदस्य बनाने का कार्यक्रम बनाया था। उसकी सफलता के लिए यह आवश्यक था कि सहयोगियों पर सूत-चन्दे का बोझ कम से-कम पड़े।

इस प्रकार सन् १९४९ के अन्त में चरखा संघ का विधान नीचे मुताबिक रहा.

विधान तथा नियमावली

१ नाम—इस संघ का नाम 'अखिल भारत चरखा संघ' होगा।

२. उद्देश्य—इस संघ के उद्देश्य ये होंगे.

हाथ-कताई तथा हाथ-कती व हाथ बुनी खादी की उत्पत्ति व बिक्री के तथा तत्सम्बन्धी अन्य सब प्रक्रियाओं के द्वारा—

(अ) गरीबों को पूरे या थोड़े समय काम देकर राहत पहुँचाना,

(आ) उनको यथासम्भव निर्वाह-मजदूरी प्राप्त कराना,

(इ) उनकी बेकारी से रक्षा करने के लिए साधन मुहय्या करना, खास करके अकाल के दिनों में, फसल न होने पर या दूसरे दैवी संकट आने पर,

(ई) सामान्यत और यथावकाश शिक्षण, दवाई आदि की सुविधाएँ कराना;

(उ) हाथ-कताई तथा खादी की उत्पत्ति व बिक्री तथा तत्सम्बन्धी दूसरी तमाम प्रक्रियाओ का शिक्षण देने तथा प्रयोग करने के लिए सस्थाएँ खोलना, चलाना या ऐसी सस्थाओ को सहायता देना और

(ऊ) पूर्वोक्त उद्देश्यो के अनुकूल दूसरे कार्य या प्रवृत्तियाँ चलाना।

नियम—

३. सघ के सदस्य दो तरह के होगे—आजीवन सदस्य व सालाना सदस्य।

४. आजीवन व सालाना सदस्यो का मिलकर 'ट्रस्टी-मडल' होगा (जिसका उल्लेख आगे चलकर 'मडल' करके किया है)। वह सघ का सचालक मडल होगा।

५. (अ) आजीवन सदस्य नीचे लिखे तथा दूसरे ऐसे व्यक्ति होगे, जिन्हे मण्डल रिक्त स्थानो पर आजीवन सदस्यो के तौर पर समय-समय पर ले।*

(आ) सालाना सदस्यो की सख्या ३ से अधिक न होगी। वे आजीवन सदस्यो द्वारा सहयोगियो मे से हर साल इस काम के लिए बुलायी गयी सभा मे उपस्थित सदस्यो के दो-तिहाई बहुमत से ले लिये जाया करेगे।

सूचना. आजीवन सदस्यो की सख्या ७ से कम और १२ से अधिक कभी न होगी।

६ मण्डल के द्वारा समय-समय पर निश्चित किये गये स्थान मे मण्डल का केन्द्रीय कार्यालय रहेगा।

७. साल मे मण्डल की कम-से-कम एक सभा जरूर होगी, परन्तु

---

* यहाँ नाम इसलिए नही दिये गये कि वे समय-समय पर बदलते रहे है।

मंत्री जब-जब आवश्यक समझे, तब-तब अधिक बार भी सभाएँ बुला सकेगा और मंत्री को मंडल के कम-से-कम ३ सदस्य माँग करें तब मण्डल की सभा बुलानी होगी।

सदस्यों को परिपत्र भेजकर भी प्रस्ताव पास किया जा सकेगा। लेकिन इस तरह स्वीकृत प्रस्ताव मण्डल की आगामी सभा में पेश किया जायगा।

८ मण्डल अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष, एक मंत्री व एक कोषाध्यक्ष चुनेगा और ये अधिकारी तीन साल तक अपने पद पर रहेंगे। ये फिर से चुने जा सकेंगे। तथापि मंत्री व कोषाध्यक्ष का पद एक ही व्यक्ति को दिया जा सकेगा।

९. संघ की या उसकी शाखाओं की या उनके अधिकार की वर्तमान या भावी सारी धन-सम्पत्ति मण्डल की मालिकी की रहेगी। मंडल उसे संघ की तरफ से और संघ के लिए अपने अधिकार में रखेगा और संघ के पूर्वोक्त उद्देश्यों की पूर्ति में उसको लगायेगा तथा संघ का कोई ट्रस्टी या सहयोगी या सदस्य संघ के धन या आमदनी से अपने ट्रस्टी या सहयोगी या सदस्य होने के नाते जाती फायदा या आर्थिक लाभ नहीं उठा सकेगा।

१० मण्डल संघ के सब काम, कारोबार और प्रवृत्तियाँ चलायेगा और विशेषकर नीचे लिखे काम करेगा :

(अ) कर्ज लेना, चन्दा इकट्ठा करना, स्थावर सम्पत्ति रखना, संघ की धन-सम्पत्ति, जायदाद पर या अन्य तरह से लगाना।

(आ) कर्ज, दान या सहायता के तौर पर खादी-संस्थाओं को आर्थिक या दूसरी तरह की इमदाद देना।

(इ) हाथ-कताई और हाथ-कती व हाथ-बुनी खादी की उत्पत्ति व बिक्री तथा तत्सम्बन्धी दूसरी प्रक्रियाएँ सिखानेवाली या उनके प्रयोग करनेवाली संस्थाएँ व विद्यालय खोलना या उन्हें सहायता देना।

(ई) खादी भंडार खोलना या उन्हें सहायता देना।

(उ) खादी-कार्यकर्ताओं का संगठन करना।

(ऊ) जमीन-जायदाद का पट्टा, रहन, चार्ज, दान अथवा बिक्री से सम्पादन करना या अलग करना।

(ए) सघ की तरफ से मुकदमे तथा अन्य अदालती कार्रवाई करना तथा सघ पर मुकद्दमे तथा अन्य अदालती कार्रवाई की जाय, तो उनकी जवाबदेही करना।

(ऐ) किसी उपसमिति या व्यक्तियो को अपना कोई अधिकार देना।

(ओ) दावो-झगडो को पच द्वारा निबटाना।

(औ) आमतौर पर सघ के उद्देश्यो की पूर्ति के लिए मण्डल जो बाते करना मुनासिब या जरूरी समझे, वे सब करना।

११. (अ) मृत्यु, इस्तीफा या दूसरे किसी कारण से मण्डल मे जगह खाली होने पर उसकी पूर्ति मण्डल के उपस्थित सदस्यो के दो-तिहाई बहुमत से की जायगी।

(आ) आजीवन सदस्य की जगह नियुक्त व्यक्ति जीवनभर के लिए सदस्य बनेगा, किन्तु सालाना सदस्य की जगह नियुक्त सदस्य उतनी ही मीयाद तक के लिए सदस्य रहेगा, जितनी कि पिछले सदस्य की बाकी रही हो।

(इ) जब तक कि आजीवन सदस्यो की सख्या ७ से कम न हो गयी हो, मण्डल की कोई कार्रवाई मण्डल मे एक या अधिक स्थान रिक्त होने की वजह से नाजायज नही समझी जायगी।

१२ मण्डल को अख्तियार होगा कि वह उस प्रयोजन से बुलायी गयी सभा मे अपने सदस्यो के दो-तिहाई बहुमत से संघ के किसी भी सदस्य को बिना कोई कारण बताये सघ से अलग कर दे।

१३. मण्डल की सभाऍ सघ के अध्यक्ष के या उनकी गैरहाजिरी मे उस सभा मे उपस्थित सदस्यो द्वारा उस मौके पर चुने गये किसी सदस्य के सभापतित्व मे होगी।

१४. मडल की सभाओ मे तमाम निर्णय बहुमत से होगे। किसी विषय पर समान मत होने पर अध्यक्ष अपना अधिक मत दे सकेंगे।

१५ मंडल की सभा के लिए कोरम ५ सदस्यों का रहेगा।

१६ (अ) मंडल का काम होगा कि वह संघ का सारा हिसाब-किताब नियमित रखवाये।

(आ) वह हिसाब मंडल के द्वारा नियुक्त ऑडिटर से प्रतिवर्ष ऑडिट कराया जायगा और ऐसे ऑडिट किये हुए हिसाब का विवरण प्रकाशित किया जायगा।

१७ मंडल संघ के दो प्रकार के सहयोगी बनायेगा

(अ) साधारण सहयोगी व (आ) आजीवन सहयोगी

१८. (१) जो व्यक्ति (अ) १८ साल से ऊपर की उम्र का हो, (आ) आदतन खादी पहनता व सारे कामों मे इस्तेमाल करता हो, (इ) अपना कता व समान बटवाला मासिक चार फुटी ३२० तार सूत याने आधी गुण्डी चन्दा संघ को दे, वह संघ का साधारण सहयोगी बनाया जा सकेगा।

(२) हरएक साधारण सहयोगी का कर्तव्य होगा कि वह हाथ-कताई और खादी के लिए प्रचार करता रहे।

१९. जिस व्यक्ति की उम्र १८ साल से ऊपर हो, जो आदतन खादी पहनता और सारे कामों में इस्तेमाल करता हो और जो ५०० रु० एकमुश्त संघ को दे, वह संघ का आजीवन सहयोगी बनाया जा सकेगा।

२० साधारण सहयोगी अपने चन्दे का सूत या रुपया ६ मास तक न देने पर सहयोगी न रहेगा।

२१. संघ पर या संघ की तरफ से जो कुछ मामले-मुकदमे चलेंगे या चलाये जायेंगे, उनकी कानूनी कार्रवाई संघ के तत्कालीन मंत्री या दूसरे कोई व्यक्ति, जिन्हे संघ उसके लिए अधिकार दे, संघ की तरफ से करेंगे।

२२ मण्डल को अधिकार होगा कि वह संघ की शाखाएँ खोले और हरएक शाखा के लिए एक शाखा-मंत्री मुकर्रर करे, जो मण्डल के नियंत्रण मे और मण्डल के आदेशानुसार काम करे।

२३. सघ के मत्री की लेखी इजाजत से :

(अ) संघ की शाखा का मंत्री किसी बैंक मे या साहूकार के यहाँ शाखा का खाता खोल सकेगा और संघ के पूर्वोक्त उद्देश्यो की पूर्ति के लिए उसे चला सकेगा ।

(आ) शाखा-मत्री को अपनी शाखा की तरफ से चेको पर सही करने तथा शाखा को प्राप्य चेको, बिलो, नोटो तथा चलन के अन्य हुण्डी-पुर्जो पर हस्ताक्षर (endorse) करने का अधिकार होगा, किन्तु किसी शाखा-मत्री को सघ की तरफ से या सघ के अथवा उसकी किसी शाखा के लिए कर्ज लेने का अधिकार न होगा ।

२४. मण्डल को अधिकार होगा कि वह सघ के विधान व नियमो मे इस काम के लिए विशेष सभा बुलाकर सघ के ⅔ सदस्यो के बहुमत से सशोधन या रद्दोबदल कर सके, बशर्ते कि ऐसे सशोधन या रद्दोबदल सघ के ऊपर लिखे उद्देश्यो के आन्तरिक हेतु के विरुद्ध न हो ।

२५. सघ या मण्डल के समुचित कार्य-सचालन के लिए समय-समय पर नियम-उपनियम बनाने का अधिकार मण्डल को होगा ।

चरखा-सघ के विधान पर यह एक आक्षेप रहा है कि उसमे लोक-सत्तात्मकता नही है, अर्थात् उसके ट्रस्टी चुनाव होकर आम सदस्यो द्वारा चुने नही जाते हैं । वह प्रातिनिधिक सस्था न होकर केवल कुछ व्यक्तियो का ही तत्र है । दीखने मे यह आक्षेप ठीक-सा दिखता है, लेकिन जिस सस्था मे प्रतिदिन व्यावहारिक काम करना पडता है, धन-सम्पत्ति का संबध आता है, उसका विश्वस्त सेवको द्वारा ही चलाया जाना ठीक रहता है, नही तो चुनाव के फेर मे पडकर दलबन्दियाँ होकर नीति स्थिर रखना असम्भव हो जाता है ।

कुछ समय तक जब कुछ अश मे चुनाव का सिलसिला जारी था, तब जो नैतिक बुराइयाँ पैदा हुईं, उनका जिक्र ऊपर आ चुका है । जहाँ सत्ता—अधिकार चलाने का प्रश्न है, वहाँ चुनाव-पद्धति को स्थान होना समर्थनीय हो सकता है । पर जहाँ शुद्ध सेवा करनी है और केवल

परोपकार का काम है, वहाँ स्वार्थ या महत्त्वाकाक्षा को स्थान न रहे, तो ही ठीक है। अब तक जो चरखा सघ का काम चला, उससे साबित हो गया है कि उसका प्रातिनिधिक स्वरूप न रहने के कारण जन-सेवा मे कोई बाधा नहीं पहुँची है। मूल मे जब चरखा सघ बनाया गया था, तब भी वह राजनीतिक दलो के सम्पर्क से अलग रहे, यह बात थी ही। उसके बनने के बाद भी उसमे आम चुनाव को दाखिल करना उचित नही था। इस विषय मे गाधीजी ने निम्न प्रकार लिखा है :

२१-९-'३४

"एक अर्थ मे खादी केवल आर्थिक व्यवस्था है, खादी का सगठन अन्य कुछ होने के पहले वह व्यावसायिक कारोबार होना चाहिए। इसलिए उसे जनतत्रता का सिद्धान्त लागू नही हो सकता। जनतत्र मे इच्छाओ और मतो के झगडे अवश्यभावी ह, कभी कभी विभिन्न मतो मे खूँख्वार लडाई भी होती है। व्यावसायिक सगठन मे ऐसे झगडे को स्थान न रहना चाहिए। कल्पना करो कि किसी व्यापारिक दूकान मे दलबदी, गुटबदी या ऐसी ही कुछ बुराइयाँ आ जायँ, तो क्या होगा ? उनके दबाव मे उसके टुकडे-टुकडे हो जायगे। फिर खादी सगठन तो व्यापारिक कारोबार से बहुत कुछ अधिक है। वह जनता की सेवा के लिए परोपकारी सस्था है। ऐसी सस्था लोगो की लहर से नही चलायी जा सकती। उसमे व्यक्ति की महत्त्वाकाक्षा के लिए स्थान नही है।"

सघ पर यह भी एक आक्षेप रहा है कि जो सहयोगी बनकर सूत-चन्दा देते हैं, उनको बदले मे क्या लाभ मिलता है ? वास्तव मे चरखा सघ का काम शुद्ध नि स्वार्थ सेवा का है, उसमे सूत-चन्दे के बदले मे कुछ मिलने की अपेक्षा नही रखनी चाहिए। फिर भी चरखा-सघ ने यह नियम बनाया है कि जो सहयोगी चरखा सघ का साहित्य खरीदना चाहता है, उसे उसके १२॥% मूल्य मे रिआयत की जाती है। चरखा सघ का साहित्य पढने मे किसीको दिलचस्पी हो और सहयोगी के नाते वह होनी चाहिए, तो उसमे सूत-चन्दे की कसर अच्छी तरह निकल जाती है।

× × ×

संघ के सदस्यो की तादाद

ता० ३० नवम्बर १९२५ तक सघ के 'अ' वर्ग के सदस्य २१४४, 'ब' वर्ग के १४० और सहयोगी १७ बने। उस समय और बाद मे भी कई वर्षो तक सदस्य बनाने के लिए विशेष यत्न नही किया गया। सन् १९२५ के बाद के वर्षो के सदस्यो के आँकडे इस प्रकार हैं :

(सन् १९२६ मे १८ वर्ष से कम उम्रवालो के लिए बालवर्ग खोला गया था। उनके सूत की मात्रा मासिक एक हजार गज थी।)

सन्	अ वर्ग	ब वर्ग	बाल वर्ग
१९२६	३४७२	९४२	—
१९२७	२१९५	३४०	२६४
१९२८	१५२७	२७९	२०५
१९२९	१४११	(यह दोनो वर्ग इस साल से हटा दिये गये)	
१९३०	१९२८		
१९३१	१३०८		
१९३२	६५५		
१९३३	५१२		
१९३४	११३१		
१९३५	१२०६		
१९३६	१९९४		
१९३७	११६१		
१९३८	१८३६		
१९३९	२५३१	(इनमे २२७४ चरखा सघ के कार्यकर्ता थे)	
१९४०	३५५८	(इनमे २९३९ चरखा सघ के कार्यकर्ता थे)	
१९४१	२९१४	(इनमे २४१७ चरखा सघ के और प्रमाणित सस्थाओ के कार्यकर्ता थे)	
१९४२	राजनीतिक क्षोभ के कारण बहुत थोडे सदस्य बने और जानकारी भी नहीं मिली।		

सन् १९४५ में चरखा संघ का 'अ' वर्ग भी हट गया। केवल सहयोगी वर्ग रह गया। सहयोगी की सूत की मात्रा मासिक आधी गुण्डी अर्थात् वार्षिक छह गुण्डी कर दी गयी। इस वर्ष में सहयोगियों की संख्या बढ़ाने की विशेष कोशिश की गयी। सन् १९४६ में इनकी संख्या ३५६८६ हुई। उस वर्ष वस्त्र-स्वावलम्बियों के अर्थात् हर मास नियमपूर्वक ७॥ गुण्डी कातनेवालों के आँकड़े भी प्राप्त किये गये। वास्तव में इनकी संख्या काफी अधिक थी, पर दफ्तर में उन सबके आँकड़े पहुँच नहीं सके। ये आँकड़े वस्त्र-स्वावलम्बन खादी सम्बन्धी जाग्रति किस प्रांत में कितनी थी, इसके सूचक हैं। तफसील नीचे मुताबिक :

शाखा	सहयोगी	वस्त्र-स्वावलम्बी
आन्ध्र	१४५४	—
बिहार	६९७३	—
बंगाल	१०९	३१४
बम्बई	१५६	२९
महाराष्ट्र	४८०१	१९०४
हैदराबाद	१३०	—
महाकोशल	१२८४	—
कर्नाटक	१३४६	११०
केरल	१२४६	—
पंजाब	१८९	—
राजस्थान	४५५	—
सिन्ध	२०३	३००
तमिलनाड	१४७५६	११४८
युक्तप्रान्त	७३२	१३७
उत्कल	४५६	३३६
गुजरात	१३९६	५७५
	३५६८६	४८५३

कार्यकारी मण्डल के सदस्य एवं ट्रस्टी

चरखा सघ का सारा प्रबन्ध उसके कार्यकारी मण्डल के अधीन रहा। इस मण्डल का प्रारम्भ मे नाम कार्यकारिणी समिति था। बाद मे सन् १९२८ मे विधान मे परिवर्तन हुए, तब उसका नाम ट्रस्टी-मण्डल एव कार्यकारी मण्डल रखा गया। उसके बाद सन् १९४१ मे विधान मे फिर महत्त्व के फेरबदल हुए, तब उसका नाम केवल ट्रस्टी-मण्डल रखा गया। जब सन् १९२५ के सितम्बर महीने मे चरखा सघ बना था, तब नीचे लिखे सज्जन उसकी कार्यकारिणी के सदस्य और पदाधिकारी थे :

(१) महात्मा गाधी (अध्यक्ष), (२) मौलाना शौकतअली, (३) बाबू राजेन्द्रप्रसाद, (४) श्री सतीशचन्द्र दासगुप्ता, (५) श्री मगनलाल भाई गाधी, (६) श्री जमनालाल बजाज (कोषाध्यक्ष), (७) श्री स्वाइब कुरेशी, (८) श्री शकरलाल बैंकर और (९) पडित जवाहरलाल नेहरू। आखिर के तीनो मत्री थे।

सन् १९२७ मे पुराने सदस्यो मे से पडित जवाहरलाल नेहरू और श्री स्वाइब कुरेशी सदस्य नही रहे, श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, श्री गगाधरराव देशपाण्डे, श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम और श्री कोडावेकटप्पैया नये सदस्य बने।

सन् १९२८ मे पुराने सदस्यो मे से श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम, मौलाना शौकतअली और श्री मगनलालभाई गाधी सदस्य नहीं रहे। उनकी जगह प० जवाहरलाल नेहरू और श्री मणिलालभाई कोठारी सदस्य हुए। उस समय आजीवन अर्थात् स्थायी सदस्यो के सिवा तीन सालाना सदस्य निर्वाचित करने का नियम बन गया था। उसके अनुसार [१] श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी, [२] डॉ० वी० सुब्रह्मण्यम् और [३] श्री के० सन्तानम् सालाना सदस्य चुने गये। उस समय गाधीजी का स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण वे अध्यक्ष तो रहे, पर

सभापति का काम श्री जमनालालजी बजाज करने लगे। उनको यह काम लम्बी मुद्दत तक करना पड़ा।

सन् १९२९ मे स्थायी सदस्यो मे बारहवे सदस्य श्री रणछोडलाल अमृतलाल बनाये गये। सालाना निर्वाचितो मे श्री के० सन्तानम् के बदले पंडित देवशर्मा विद्यालंकार आये।

सन् १९३० मे बारह स्थायी सदस्यो का ही कार्यकारी मण्डल रह गया। राजनीतिक गड़बड़ी के कारण सालाना सदस्यो का निर्वाचन नही हो सका।

सन् १९३१ से १९३४ तक वही कार्यकारी मंडल रहा। सन् १९३५ मे पुराने सदस्यो मे से श्री मणिलाल कोठारी, श्री रणछोडलाल अमृतलाल और श्री राजगोपालाचारी कम हुए। दो नये सदस्य श्री गोपबन्धु चौधरी और श्री श्रीकृष्णदास जाजू लिये गये। इस प्रकार ग्यारह सदस्यो का कार्यकारी मंडल रहा। इस वर्ष श्री विट्ठलदास जेराजाणी, श्री नारायण मूर्ति और श्री अवन्तिकाबाई गोखले सालाना सदस्य निर्वाचित हुए। श्री जमनालालजी बजाज ने सभापति-पद का काम छोड़ा। वह काम फिर से गाधीजी करने लगे।

सन् १९३६ मे श्री सतीशचन्द्र दासगुप्ता सदस्य नहीं रहे। श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम आसर और श्री धीरेन्द्रनाथ मजूमदार नये सदस्य बनाये गये।

सन् १९३७ और '३८ मे स्थायी सदस्य पिछले साल के रहे। इन वर्षों मे श्री विट्ठलदास जेराजाणी, श्री अवन्तिकाबाई गोखले और आचार्य कृपालानी सालाना सदस्य निर्वाचित हुए।

सन् १९३९ मे पुराने सदस्यो मे से श्री जमनालाल बजाज, पंडित जवाहरलाल नेहरू, श्री कोंडावेंकटप्पैया और श्री गंगाधरराव देशपांडे कम हुए। श्री कृष्णदासभाई गाधी और श्री पुरुषोत्तम कानजी नये सदस्य लिये गये। इस प्रकार १० स्थायी सदस्य रहे। वार्षिक सदस्यो के

चुनाव मे आचार्य कृपालानी, श्री ऐया मुथ्थु और श्री शकरराम निर्वाचित हुए। आखिर के दोनो सघ के कार्यकर्ता थे।

सन् १९४० मे राजकुमारी श्री अमृतकौर और श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी स्थायी सदस्यो मे लिये गये। और सालाना सदस्यो मे श्री रघुनाथराव धोत्रे, श्री पृथ्वीचन्दजी नैयर और श्री कनय्यालाल शाह निर्वाचित हुए। आखिर के दोनो सघ के कार्यकर्ता थे।

सन् १९४१ मे स्थायी सदस्य पूर्ववत् रहे। सालाना सदस्य श्री रघुनाथराव धोत्रे और श्री सीताराम शास्त्री स्थायी सदस्यो द्वारा चुने गये।

सन् १९४२ और '४३ मे राजनीतिक क्षोभ रहा। सन् १९४४ मे ट्रस्टी-मण्डल पुराना ही बना रहा। सालाना सदस्यो में श्रीयुत धोत्रे रहे। सन् १९४५ मे वैसी ही स्थिति रही।

सन् १९४६ मे श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम और श्री गोपबन्धु चौधरी सदस्य नही रहे। कोई सालाना सदस्य भी नहीं बनाया गया।

बीच मे कुछ समय के लिए श्री लक्ष्मीबाबू ट्रस्टी-मडल के सदस्य रहे। सन् १९४७ मे ट्रस्टियो मे विशेष परिवर्तन हुआ। देश की राजनीतिक परिस्थिति बदली। सरदार वल्लभभाई पटेल, बाबू राजेन्द्रप्रसाद, राजकुमारी अमृतकौर, श्री पुरुषोत्तमदास कानजी और श्री लक्ष्मीबाबू सदस्य नहीं रहे। खान अब्दुल गफ्फारखाँ, श्री गोपबन्धु चौधरी, श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम तथा श्री धोत्रे नये स्थायी सदस्य लिये गये। और श्री जुगतरामभाई दवे और श्री एन० एस० वरदाचारी सालाना सदस्य चुने गये।

सन् १९४८ और '४९ मे स्थायी सदस्यो मे श्री गोपबाबू सदस्य नहीरहे। श्री नारायणदास गाधी, श्री रमादेवी चौधरी सदस्य बनाये गये, श्री जुगतरामभाई सालाना सदस्य रहे।

सघ के पदाधिकारी

अपने निर्वाण तक गाधीजी ही सघ के अध्यक्ष रहे। उनके बाद सन् १९४८ मे श्री धीरेन्द्रनाथ मजूमदार अध्यक्ष चुने गये।

अखिल भारत खादी-मंडल के समय से लेकर सन् १९४० तक श्री शंकरलालजी बैंकर मंत्री रहे। उनके अथक परिश्रम से चरखा संघ के काम में यश मिलने में बड़ी मदद रही। उस परिश्रम के कारण उनका स्वास्थ्य भी गिरा। अंत में सन् १९४० में उनका इस्तीफा मंजूर हुआ। उनके बाद श्री श्रीकृष्णदास जाजू मंत्री बनाये गये। इस समय के बाद चरखा संघ की यह नीति स्थिर हुई कि प्रान्तीय शाखाओं के मंत्री का कार्यकाल पाँच वर्ष से अधिक न हो। यही नीति चरखा संघ के प्रधान मंत्री के लिए भी उपयुक्त थी। विधान तो यह था कि प्रधान मंत्री का कार्यकाल तीन वर्ष का रहे। पर वे ही व्यक्ति फिर-फिर से चुन लिये जाते थे। चुनाव का समय आने के पहले श्री जाजूजी ने अपना जेल-वास का समय छोड़कर, पाँच वर्ष का समय पूरा होने पर, अपने मंत्रीपद का इस्तीफा दिया। उनकी जगह सन् १९४७ के अप्रैल महीने में श्री कृष्णदासभाई गांधी संघ के मंत्री चुने गये।

चरखा संघ के आरम्भ से ही श्री जमनालाल बजाज उसके कोषाध्यक्ष रहे। सन् १९३९ में श्री पुरुषोत्तम कानजी कोषाध्यक्ष बने और सन् १९४७ में श्री श्रीकृष्णदास जाजू। प्रारम्भ के कुछ वर्षों में कोषाध्यक्ष को विशेष काम रहा, लेकिन बाद में वैसा काम नहीं रहा।

प्रान्तीय शाखाएँ

संघ के संगठन में प्रान्तीय खादीकाम चलाने के लिए संघ की शुरुआत से ही प्रत्येक प्रान्त के लिए एक-एक प्रतिनिधि मुकर्रर करने की योजना बनी और प्रतिनिधियों के मार्गदर्शन में पूरा समय काम करनेवाला एक शाखा-मंत्री रखना तय हुआ। ये दो पदाधिकारी शाखा के शासन के जिम्मेवार थे। किसी समिति की भाषा में बोला जाय, तो प्रतिनिधि का स्थान अध्यक्ष का-सा था। प्रारम्भिक काल में हरएक शाखा के लिए एक-एक प्रतिनिधि नियुक्त करने की कोशिश की गयी। मंत्री रखना तो जरूरी था ही। आखिर तक हरएक शाखा में मंत्री रहा, पर कुछ वर्षों के बाद कहीं-

कहीं प्रतिनिधि नहीं रखे जा सके। अन्त में प्रतिनिधि कुछ ही शाखाओं में रहे।

नीचे प्रान्तीय शाखाओं के प्रतिनिधियों और मंत्रियों की तफसील दी जाती है। उस पर से कौन-सी शाखा कब बनी और कुछ शाखाओं के क्षेत्र में समय-समय पर क्या परिवर्तन हुए, इसका भी पता चलेगा।

राजस्थान—इस शाखा का काम सन् १९२५ में अजमेर में शुरू हुआ और श्री जमनालाल बजाज प्रतिनिधि तथा श्री बलवतराव देशपांडे मंत्री मुकर्रर हुए। सन् १९२७ में दफ्तर जयपुर में और बाद में १९३५ में गोविंदगढ-मलिकपुर में लाया गया। सन् १९३८ के बाद कोई प्रतिनिधि नहीं रहा। श्री देशपांडेजी के बाद सन् १९४२ में कुछ समय श्री भैरवलाल मंत्री रहे। सन् १९४४ में श्री मदनलाल खेतान और १९४७ से श्री भीमसेनजी वेदालंकार मंत्री बने।

आन्ध्र—सन् १९२५ में शाखा शुरू हुई। श्री कोंडा वेंकटप्पैया प्रतिनिधि और श्री सीताराम शास्त्री मंत्री मुकर्रर हुए। दफ्तर गुंटूर में शुरू हुआ। सन् १९२९ में श्री कोंडा वेंकटप्पैया प्रतिनिधि नहीं रहे। डॉ० पट्टाभि सीतारामय्या मंत्री मुकर्रर हुए। दफ्तर मछलीपट्टम लाया गया। सन् १९३९ में डॉ० पट्टाभि सीतारामय्या प्रतिनिधि बनाये गये और व्ही० नारायणमूर्ति मंत्री। सन् १९४६ से श्री कोदंडराम स्वामी मंत्री रहे।

आसाम—सन् १९२५ में काम शुरू हुआ। श्री कनकचन्द शर्मा मंत्री मुकर्रर हुए। दफ्तर नवगाँव में रखा गया। शाखा थोड़े समय में ही बंद हो गयी। सन् १९४० से फिर से शुरू हुई। बीच में बंगाल में शामिल थी। इस बार श्री विमलाप्रसाद चालिहा मंत्री बने और दफ्तर शिवसागर में लाया गया। सन् १९४२ में श्री भद्रकांत दौरा कार्यवाहक मंत्री रहे। फिर से शाखा जल्दी ही बन्द हो गयी।

बिहार—सन् १९२५ में शाखा बनी। प्रतिनिधि बाबू राजेन्द्रप्रसाद और मंत्री श्री लक्ष्मीनारायण थे। दफ्तर मुजफ्फरपुर से सन् १९३२ में

मधुबनी ले गये। सन् १९४५ मे श्री ध्वजाप्रसाद साहू मंत्री बनाये गये। सन् १९४७ मे प्रान्त विकेंद्रित हुआ और शाखा नही रही।

बंगाल—सन् १९२५ मे श्री सतीशचन्द्र दासगुप्ता प्रतिनिधि मुकर्रर किये गये। शुरुआत मे दफ्तर कलकत्ते मे था, पर सन् १९२७ मे खादी प्रतिष्ठान सोदपुर मे ले गये। सन् १९२९ मे श्री तारणीकान्त दत्त मन्त्री मुकर्रर हुए और १९३० मे श्री हेमप्रभादेवी प्रतिनिधि बनायी गयीं, पर बाद मे कोई प्रतिनिधि नही रहा। सन् १९३६ मे आसाम इस शाखा में मिलाया गया तथा मन्त्री श्री अन्नदाप्रसाद चौधरी मुकर्रर हुए। सन् १९४२ मे श्री जितेंद्रकुमार चक्रवर्ती मन्त्री बने और १९४५ मे दफ्तर बरकमता मे गया। सन् १९४७ में शाखा बन्द हुई।

बरमा—सन् १९२६ मे श्री नानालाल कालिदास प्रतिनिधि नियुक्त हुए। दफ्तर रगून मे रखा गया। सन् १९२७ में श्री व्ही० डी० मेहता प्रतिनिधि थे। सन् १९२८ में श्री नानालाल कालिदास फिर से प्रतिनिधि हुए। सन् १९३२ मे श्री एम० बी० मेहता और १९३४ मे श्री सोनीराम पोद्दार प्रतिनिधि हुए। युद्ध के कारण सन् १९४१ में शाखा बन्द हो गयी।

महाकोशल—सन् १९२६ मे श्री व्ही० सूबेदार प्रतिनिधि बनाये गये। दफ्तर सागर मे था। पर थोडे ही समय मे शाखा बन्द हो गयी। बाद मे प्रान्त महाराष्ट्र शाखा के अन्तर्गत रहा। सन् १९४५ मे फिर से स्वतन्त्र शाखा बनी। मन्त्री श्री दादाभाई नाईक बनाये गये।

कर्नाटक—सन् १९२५ मे शाखा बनी। श्री गगाधरराव देशपाण्डे प्रतिनिधि और श्री व्ही० एन० सोमन मन्त्री मुकर्रर हुए। दफ्तर बेलगॉव मे रहा। सन् १९२८ मे श्री एस० एच० कौजलगी और १९३२ मे श्री एस० आर० सावकार मन्त्री बनाये गये। दफ्तर पुरानी हुदली में रखा गया। बाद मे श्री कौजलगी फिर से मन्त्री हुए। सन् १९३२ के बाद कोई प्रतिनिधि नहीं रहा। सन् १९४२ मे श्री एस० आर० सावकार फिर से मन्त्री बने। सन् १९४४ मे श्री व्यंकटरामय्या और १९४६ से श्री रामचन्द्र बडवी मन्त्री रहे।

मध्य महाराष्ट्र—सन् १९२५ मे शाखा शुरू होकर प्रतिनिधि श्री शकरराव देव थे। दफ्तर पूना मे रहा।

दक्षिण महाराष्ट्र—शाखा सन् १९२५ मे शुरू होकर उसके प्रतिनिधि श्री अप्पासाहब पटवर्धन थे।

उत्तर महाराष्ट्र—सन् १९२५ मे श्री अण्णासाहब दास्ताने प्रतिनिधि मुकर्रर हुए। दफ्तर जलगॉव मे रहा।

महाराष्ट्र—ऊपर लिखी तीनो शाखाएँ दो वर्ष अलग चलकर सन् १९२७ मे एकत्र की गयीं। श्री अण्णासाहब दास्ताने प्रतिनिधि रहे। और दफ्तर पूर्व खानदेश जिले मे पिपराले गॉव मे गया। बाद मे वह वर्धा लाया गया और सन् १९२८ मे श्री श्रीकृष्णदास जाजू मन्त्री मुकर्रर हुए। सन् १९३३ मे श्री दास्ताने प्रतिनिधि नहीं रहे। सन् १९३४ मे श्री अनन्त वासुदेव सहस्रबुद्धे मन्त्री बने और १९३५ मे श्री श्रीकृष्णदास जाजू प्रतिनिधि नियुक्त हुए। सन् १९३७ मे दफ्तर मूल (चॉदा) में गया। सन् १९४१ मे शाखा का नाम 'मध्यप्रान्त महाराष्ट्र' रखा गया और श्री द्वारकानाथ लेले मन्त्री बने। उनके बाद सन् १९४४ मे श्री लक्ष्मणराव पडित मन्त्री मुकर्रर हुए। सन् १९४५ मे शाखा के तीन स्वतन्त्र विभाग कर दिये गये। मराठी मुल्क का एक भाग रहा, दूसरा हैदराबाद का तथा तीसरा महाकोशल का। पहला भाग महाराष्ट्र नाम से रहा। सन् १९४५ मे महाराष्ट्र के प्रतिनिधि श्री रघुनाथराव धोत्रे हुए तथा मन्त्री श्री लक्ष्मणराव पडित रहे। सन् १९४६ से श्री शकरराव वेले मन्त्री रहे।

पंजाब—सन् १९२५ में शाखा बनी। डॉ० गोपीचन्द भार्गव प्रतिनिधि और लाला किसनचन्द भाटिया मन्त्री नियुक्त हुए। दफ्तर आदमपुर दुआबा मे रहा। सन् १९३५ मे दफ्तर लाहोर मे लाया गया। सन् १९४० मे श्री पृथ्वीचन्द्र नैय्यर मन्त्री बने और दफ्तर फिर से आदमपुर मे लाया गया। सन् १९४२ मे श्री विशाखारामजी १९४५ मे सोहनलालजी और १९४८ मे श्री हरिरामजी मन्त्री बने।

तमिलनाड और केरल—सन् १९२५ मे शाखा बनी। श्री एस० रामनाथम् मन्त्री मुकर्रर हुए। दफ्तर ईरोड मे रहा। सन् १९२८ मे श्री एन० एस० वरदाचारी मन्त्री नियुक्त हुए। दफ्तर तिरुपुर मे लाया गया। सन् १९३२ मे श्री एन० नारायण मन्त्री और १९३५ मे श्री के० एस० सुब्रह्मण्यम् प्रतिनिधि नियुक्त हुए। सन् १९३६ से कोई प्रतिनिधि नही रहा और श्री ए० आया मथ्थू मन्त्री बने। सन् १९४० मे श्री एस० रामनाथम् फिर से मन्त्री मुकर्रर हुए। सन् १९४७ मे श्री एन० रामस्वामी और उनके बाद १९४९ मे श्री सुब्रह्मण्यम् मन्त्री हुए।

केरल—सन् १९३५ मे तमिलनाड से अलग शाखा बनायी गयी। श्री सी० के० कर्ता मन्त्री बनाये गये। दफ्तर पय्यनूर मे रखा गया। सन् १९४५ मे श्री शामजी सुन्दरदास प्रतिनिधि और श्री आर० श्रीनिवासन मन्त्री बनाये गये। थोडे समय के बाद श्री शामजी सुन्दरदास ने प्रतिनिधि पद छोड़ दिया। इस दरमियान दफ्तर कुछ समय कालिकत मे रहकर बाद मे पालघाट मे लाया गया।

युक्तप्रान्त—सन् १९२५ मे प० जवाहरलाल नेहरू प्रतिनिधि और श्री सीतलासहाय मत्री मुकर्रर हुए। दफ्तर लखनऊ मे था। सन् १९२७ मे दफ्तर इलाहाबाद मे आया। सन् १९३० मे इस प्रात मे देहली भाग शामिल किया गया और श्री गाधी आश्रम, मेरठ प्रतिनिधि बना और दफ्तर मेरठ मे रखा गया। सन् १९३१ मे प० जवाहरलाल नेहरू फिर से प्रतिनिधि बने और श्री गाधी आश्रम मत्री। सन् १९३६ मे श्री विचित्र-नारायण शर्मा मत्री हुए। सन् १९४४ मे प्रतिनिधि कोई नही रहा। श्री धीरेंद्रनाथ मजूमदार मत्री बने। सन् १९४७ मे शाखा बन्द हुई।

उत्कल—सन् १९२५ मे शाखा बनी। श्री निरजन पट्टनायक मत्री बनाये गये। दफ्तर स्वराज्य आश्रम, बहरामपुर मे कायम हुआ। सन् १९२९ मे श्री तारणीकान्त दत्त मत्री मुकर्रर हुए। सन् १९३० मे श्री बन्सीधर रथ मत्री रहे, दफ्तर कटक मे रखा गया। सन् १९३५ मे गोपबधु चौधरी मत्री हुए।

कुछ समय प्रांत बंगाल शाखा में रहा। सन् १९३८ में श्री कृपासिन्धु पण्डया मंत्री मुकर्रर किये गये। दफ्तर केंदुपटना में गया। सन् १९३९ में श्री नित्यानन्द कानूनगो, १९४१ में फिर से श्री गोपबंधु चौधरी, १९४४ में श्री अंतर्यामी पण्डया और १९४६ में श्री मनमोहन चौधरी मंत्री बने। सन् १९४७ में शाखा बन्द हुई। प्रांत विकेंद्रित हुआ।

सिंध--सन् १९३० में शाखा बनी। डॉ० चोइथराम गिडवानी प्रतिनिधि और श्री एन० आर० मलकानी मंत्री नियुक्त हुए। दफ्तर सिन्ध हैदराबाद में रखा गया। सन् १९३५ में श्री जयरामदास दौलतराम और १९३८ में श्री मलकानी फिर से मंत्री बने। सन् १९३९ में श्री मलकानी प्रतिनिधि नियुक्त हुए और श्री उत्तमचन्दजी मंत्री। सन् १९४२ में श्री वाल्मल खूबचन्द मंत्री रहे और दफ्तर टंडोआदम में लाया गया। सन् १९४४ में श्री एन० आर० मलकानी फिर से प्रतिनिधि बनाये गये और दफ्तर हैदराबाद लाया गया। सन् १९४७ में नित्यानन्दजी मंत्री नियुक्त हुए तथा दफ्तर घोटकी में लाया गया। सन् १९४७ में शाखा बन्द हुई।

बम्बई—सन् १९३५ में शाखा बनी। श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी प्रतिनिधि और श्री पुरुषोत्तम कानजी मंत्री बने। दफ्तर कालबादेवी रोड ३९६ में रहा। सन् १९४२ में श्री हरिलालभाई और १९४५ में मणिबेन नाणावटी मंत्री बनाये गये।

गुजरात—सन् १९३५ में शाखा बनी। सरदार वल्लभभाई पटेल प्रतिनिधि हुए। दफ्तर अहमदाबाद में रहा। सन् १९३८ में श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम और १९४५ में श्री उत्तमचंद शाह मंत्री बने तथा दफ्तर बारडोली लाया गया।

कश्मीर--सन् १९३५ में शाखा बनी। श्री एस० डी० मर्चेंट मंत्री थे। दफ्तर श्रीनगर में रखा गया। सन् १९३७ में श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी प्रतिनिधि नियुक्त हुए और श्री विचित्रनारायण शर्मा मंत्री। सन् १९४५ में श्री रामाधारभाई मंत्री बनाये गये। सन् १९४७ से कोई प्रतिनिधि नहीं रहा। श्री गुलाम महंमद मंत्री बनाये गये।

काठियावाड—सन् १९३५ मे शाखा बनी। प्रतिनिधि श्री रामजी-भाई हसराज नियुक्त हुए। दफ्तर अमरेली मे रखा गया। शाखा थोडे ही समय मे बन्द हो गयी और प्रात गुजरात शाखा के अतर्गत रहा।

हैदराबाद—सन् १९४५ मे स्वतत्र शाखा बनी। श्री रामकिशनजी धूत मत्री बनाये गये। सन् १९४७ मे राजनीतिक गडबडी के कारण इस शाखा का काम महाराष्ट्र शाखा के अतर्गत सोप दिया गया। मत्री श्री शकरराव वेले थे। सन् १९४९ मे श्री वैद्यनाथन मत्री मुकर्रर हुए।

———

अध्याय ५ चरखा संघ के प्राण

खादी को बडे-बडे पहाड लाघने पडे हैं। कभी-कभी राजनीतिक तेजी के साथ उसका मार्ग कुछ आसान होता रहा, पर वह थोडे-थोडे समय के लिए ही। यह गाधीजी का ही साहस था कि चरखे का कार्य-क्रम देश के सामने रखा गया। अगर किसी दूसरे को यह बात सूझती तो भी वह उसे देश के सामने रखने की हिम्मत नही करता। मिलो ने हाथकताई के लिए तनिक भी स्थान नही रखा था। आज भी मिलो के रहते हुए हाथकताई चलने की आशा रखना केवल खादीनिष्ठो के लिए ही सभव है। खादी का आदोलन प्रारम्भ हुआ, तभी से खादी-कार्यकर्ताओ को अनेक कष्ट सहन करने पडे। उन्हे कताई-कला का ज्ञान नही के बराबर था। उसे प्राप्त करने के लिए उन्हे बडा परिश्रम करना पडा। धुनाई जैसी कठिन प्रक्रिया उन्हे भी सीखनी पडी कि जिन्होने अपनी उम्र भर मे कभी कोई शारीरिक परिश्रम का काम नही किया था। खादी खरीदने मे ज्यादा पैसा खर्च करना पडता था। पहननेवालो मे से कई इतने गरीब थे कि उनके लिए थोडा-सा भी पैसा अधिक खर्च करना मुश्किल जाता था। कपडा मोटा होने के कारण वह आरामदेह नही था। उसका इस्तेमाल करने मे स्त्रियो को विशेष दिक्कत थी। वजन के कारण उसके धोने मे भी कठिनाई होती थी। अपनी रुचि का कपडा नही मिलता था। खादी को अपनाने मे उत्साही युवको को अपने बुजुर्गो की नाराजी सहनी पडती थी। प्रारम्भ मे समाज मे भी उसकी कद्र नही थी। इसके उपरान्त उस पर लगातार पच्चीस वर्षों तक राजसत्ता का रोष बना रहा, जिसके कारण खादीधारियो को जहाँ-तहाँ अपमान, तिरस्कार और कष्ट

सहने पड़े। उस पर अर्थशास्त्र-विशारदों के कड़े प्रहार होते रहे। बहुतेरे पढ़े-लिखे लोग खादी का हँसी मजाक उड़ाते थे।

इतनी भयानक प्रतिकूल परिस्थिति में भी खादी-काम बढ़ता रहा, उसका मुख्य कारण यह है कि उसके प्राण बलवान थे। वे प्राण हैं उसके कार्यकर्ता सेवक दल। इस किताब में कहीं-कहीं कुछ कार्यकर्ताओं के नाम आये हैं। सबके नाम तो क्या दिये जा सकते हैं? कार्य का विवरण लिखने के सिलसिले में जितनों का अनायास सम्बन्ध आया, उतने ही नामों का उल्लेख हुआ है। चरखा संघ के अध्यक्षों, प्रधान मन्त्रियों, ट्रस्टियों और कार्यकारी मंडल के सदस्यों के अलावा शाखाओं के प्रतिनिधि (Agents) और मन्त्री ये मुख्य कार्यकर्ता रहे। इनके नाम अन्यत्र दिये गये हैं। पाठक वे नाम पढ़ लेंगे तो उन्हें पता चलेगा कि कितनी बड़ी योग्यता के व्यक्तियों ने इस काम में योग दिया है। सन् १९३७ में प्रान्तीय मन्त्रिमंडल बने और उसके बाद भी स्वराज्य मिलने पर जो लोग केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों के मन्त्रिमंडलों में आये, उनमें से कइयों ने किसी न किसी रूप में खादी की सेवा की है। चरखा संघ के मातहत पूरा समय काम करनेवाले कार्यकर्ताओं के अलावा देश भर में जगह-जगह ऐसे अनेक खादीकाम करनेवाले रहे हैं कि जिनकी योग्यता और सेवा प्रत्यक्ष चरखा संघवालों से कम नहीं रही। संघ में या बाहर जो खादी-सेवक, मिले, वे न मिलते तो देश के इतिहास के इस समय में खादी जो काम कर सकी, वह कदापि न होता।

खादी में केवल कपड़ा बनवाकर उसे बेच देना और कुछ लोगों को राहत पहुँचा देना, इतनी-सी ही बात नहीं थी। कामगारों के जीवन में प्रवेश करके उनकी सर्वाङ्गीण उन्नति करने की कोशिश करना यह भी एक लक्ष्य था। उनके पास जो पैसा पहुँचे, उसका सदुपयोग हो, उनके मानस में इष्ट परिवर्तन हो, उनकी आदतें सुधरें, उनमें सामाजिक सुधार हो, आदि अनेक बातें उनसे सम्पर्क बढ़ाकर करा लेनी थीं। खादी की उत्पत्ति-बिक्री अर्थात् व्यावसायिक काम में सारा कारोबार सचाई के साथ

चलाकर आम व्यापार मे एक आदर्श उपस्थित करना था। त्याग की भावना तो बढानी थी ही। समाज के सामने चरखे को सत्य और प्रेम के प्रतीक के रूप मे रखना था। अर्थात् जीवन के सब अगो मे, घर मे, बाहर, समाज मे, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रो मे भी, सत्य को प्रतिष्ठित करना था। ध्येय बहुत ऊँचा और मुश्किल था। फिर भी यथासम्भव कोशिश तो करनी ही थी। ये सारे काम केवल उपदेश से थोडे ही हो सकते थे? यह तो सभी जानते हैं कि प्रत्यक्ष आचरण के बिना लोगो पर असर नहीं पडता। इन सब बातो मे चरखा सघ कहाँ तक सफल हुआ, इसका हिसाब न लगाना ही उचित है। चरखा सघ की तरह अन्य कई सस्थाएँ भी इस दिशा मे काम करती रही हैं। इतना कह देना गैरवाजिब नहीं होगा कि इस दिशा मे जो कुछ हुआ है, उसमे खादी कार्यकर्ताओ का, चाहे वे सघ मे काम करते रहे हो या बाहर, काफी हाथ रहा। कुछ समय तक सघ मे कुल मिलाकर पूरा समय काम करनेवाले करीब ३००० कार्यकर्ता रहे। वे देश के कोने-कोने मे दूर-दूर तक बिखरे हुए थे। करोडो लोगो से उनका सम्बन्ध आया। देश मे काग्रेस को छोडकर ऐसी दूसरी कोई सस्था नही थी कि जिसके कार्यकर्ताओ का इतने लोगोसे सम्बन्ध आया हो—विशेषतः देहातियो से। इस पर से समाज मे सुधार करा लेने की चरखा सघ की शक्ति का अदाज किया जा सकता है। कार्यकर्ताओ को चरखा सघ के प्राण मानने का कारण यह है कि चरखा सघ का अपना ध्येय सपादन करने का जरिया उसके कार्यकर्ता ही थे और उन्होने अपने जीवन से और त्याग से समाज का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने के प्रयत्न मे काफी हाथ बँटाया है।

शाखा-मत्री का महत्त्व

खादी कार्यकर्ताओ के कारण जो सुधार हो पाया, उसका स्वरूप और परिणाम प्रान्त-प्रान्त मे भिन्न-भिन्न पाया जायगा। एक तो यह काम हर-एक प्रान्त की आम जनता की खासियत या विशेषता पर अवलम्बित रहा। दूसरे, वह निर्भर रहा चरखा सघ की प्रान्तीय शाखा के मत्री पर।

संघ की पुरानी प्रथा के मुताबिक प्रान्त में एक ही व्यक्ति वर्षों तक शाखा-मंत्री बना रहा। संघ के संगठन में प्रधान मंत्री से या ट्रस्टियों या केन्द्रीय दफ्तर के कार्यकर्ताओं से भी शाखा-मंत्री का पद अधिक महत्त्व का रहा, क्योंकि प्रत्यक्ष कार्य तो प्रान्त में ही होता था। संघ का ट्रस्टी मंडल या प्रधान मंत्री तो नीति स्थिर कर सकता था और केंद्र से नियमों के अनुसार शाखाओं का नियन्त्रण किया जा सकता था, पर व्यवहार में बहुत कुछ शाखामंत्री पर ही छोड़ देना पड़ता था। शाखा के सब कार्यकर्ता सीधे शाखामंत्री के हाथ के नीचे काम करते थे और आम जनता का संबंध अधिकतर शाखामंत्रियों या शाखाओं के कार्यकर्ताओं से ही आता था। वहाँ के कार्यकर्ताओं के व्यवहार, नीति, स्वभाव आदि पर शाखामंत्री की ही छाप पड़ सकती थी। इसलिए चरखा संघ के उद्देश्य को लेकर हरएक शाखा के क्षेत्र में जो कुछ कमी बेशी परिणाम निकला हो, उसका मुख्य कारण शाखामंत्री को ही मानना होगा। कुछ समय तक बहुतेरी शाखाओं में प्रतिनिधि भी थे। पर उनमें से बहुत थोड़ों का शाखा के काम से निकट का संबंध आया, हालाँकि संघ के संगठन के अनुसार मुख्य अधिकारी प्रतिनिधि माने जाते थे। शाखामंत्रियों का काम करने के लिए भी काफी योग्य व्यक्ति मिलते रहे। तरतमभाव तो सदा रहना ही है। यह नहीं कह सकते कि कहीं दोष नहीं था। जहाँ जहाँ शाखाओं को मंत्रीपद के लिए विशेष योग्य व्यक्ति मिले, वहाँ वहाँ चरखा संघ का उद्देश्य अधिक सफल रहा। हम यहाँ व्यक्तिगत शाखा का विचार नहीं करेंगे। इतना कहना काफी है कि समूचे संघ की और सब शाखाओं की दृष्टि से विचार किया जाय, तो शाखामंत्रियों का काम संतोषजनक रहा।

सामान्य कार्यकर्ता

अब थोड़ा आमतौर से सर्वसाधारण कार्यकर्ताओं के बारे में विचार कर लें। मुख्य अधिकारी का असर सामान्य कार्यकर्ताओं पर पड़ता है, इसलिए शाखा-शाखा के सामान्य कार्यकर्ताओं में भी विभिन्नता रही। मुख्य और अन्य कार्यकर्ताओं का भेद बुद्धि के, शिक्षा के या काम करने का

मौका मिलने के कारण होता है। तथापि नीति या चारित्र्य ऐसी वस्तु है कि वह ऊँचे या नीचे पद का, अधिकार या अनधिकार का भेद नहीं मानती। छोटे-बड़े सब तरह के कार्यकर्ताओ मे अपने-अपने चारित्र्य की विशेषता रह सकती है। सघ के सामान्य कार्यकर्ताओ मे भी कई बड़े चारित्र्यवान व्यक्ति रहे। कही-कही उनका त्याग अधिकारियो से भी अधिक रहा। प्रारम्भ मे खादी का काम बडा मुश्किल था। दूर दूर के देहातो मे जाकर उसका प्रारभ करना पडता था। हरिजनो से सपर्क रहने के तथा अस्पृश्यता न मानने के कारण कार्यकर्ताओ को देहाती जनता मे प्रवेश करना मुश्किल होता था। कहीं-कहीं रहने के लिए स्थान नही मिलता था। कुओपर नही चढ सकते थे। बीमार होने पर कोई पास नही आता। पर प्रान्त मे आदत की खाने की चीजे नही मिलती थी। अपरिचित मुल्क मे थोडे-से निर्वाह-व्यय मे निभाना पडता था और वह भी थोडा समय नही, वर्षो तक। ख्याति, कीर्ति का भी प्रलोभन नही था। केवल अपनी कर्तव्यनिष्ठा ही उन्हे स्फूर्ति देती थी। ऐसे कार्यकर्ताओ के सामने किसका सिर नही झुकेगा? चरखा सघ की प्रतिष्ठा बढाने मे इनका स्थान महत्त्वपूर्ण रहा। इनके नाम कहा पढने को नही मिलेगे। व्यक्तिगत रूप से हम इन्हे भूल भी जायेगे, पर इनकी सेवा ठोस और सच्ची रही है।

कार्यकर्ताओ के गुण-दोष

बहुत दफा सख्या और गुण का मेल नही बैठता। कार्यकर्ताओ की तीन हजार की सख्या छोटी नही है। सघ मे कई कार्यकर्ता सेवाभाव से आये, विशेषतः प्रारभकाल मे। पर ज्यो-ज्यो काम बढने लगा, अधिक कार्यकर्ताओ को भर्ती करने की जरूरत हुई। उनका चुनाव गुण का खयाल कर के नही किया जा सकता था। दाखिल करते समय चारित्र्य-गुण की परीक्षा भी क्या हो सकती है? कुछ कार्यकर्ता खादी के प्रेम से प्रेरित होकर आये, तो कुछ इसलिए कि जब कहीं भी काम करना है तो चरखा सघ मे ही सही। कुछ खादी मे विश्वास न रखते हुए भी दूसरा काम मिलने तक ही सघ मे काम करने की दृष्टि से आये। इस प्रकार लोग

नाना कारणों से संघ में शामिल हुए। कुछ दाखिल होने के बाद अपने में परिवर्तन करके खादीकाम में समरस हो गये। कुछ दुरुस्त नहीं होने पाये। समूची संख्या की दृष्टि से देखा जाय, तो सब में सब प्रकार के कार्यकर्ता रहे। यहाँ एक बात का उल्लेख कर देना जरूरी है कि प्रारम्भ में खादी के द्वारा देश-कल्याण होने की श्रद्धा ने कार्यकर्ताओं में काफी गुणोत्कर्ष रहा। कई कार्यकर्ताओं की विशेषता यह रही कि वे दाखिल होने के बाद बीस-बीस, पच्चीस-पच्चास वर्ष तक खादीकाम में लगे रहे, अर्थात् उन्होंने इसी काम को अपना जीवन-कार्य बना लिया। पर समय पाकर उम्र बढ़ी, परिवार बढ़ा, कौटुम्बिक जिम्मेवारी बढ़ी, शरीर में और मन में शिथिलता आयी। यह बात नहीं है कि सब में ही यह दुर्बलता आयी, पर यहाँ विचार तो समूचे कार्यकर्ता-समूह की दृष्टि से चल रहा है। इधर खादीकाम का स्वरूप समय-समय पर बदलता रहा। खादीकाम को जमाने का प्रारंभिक विकट समय निकल जाने पर जो स्थिर जीवन का समय आया, उसमें तप कम करना पड़ा। उद्योगशीलता कम हुई। तब बदलते हुए खादीकाम के लिए कई कार्यकर्ताओं की योग्यता और शक्ति कम पायी गयी। कई वर्षों पूर्व काम में लगे हुए कार्यकर्ता नये कठोर काम से अपने जीवन का मेल बैठाने में अपने को असमर्थ पाने लगे। इसलिए इस विवरण में जहाँ कार्यकर्ताओं की तारीफ की गयी है, वहाँ उनके कुछ दोषों का भी दिग्दर्शन होगा। क्योंकि पूरा चित्र सामने आ जाना इष्ट है।

संघ का यह प्रयत्न रहा कि उसके कार्यकर्ता चरखा सत्य और अहिंसा का प्रतीक है, इस कथन को सार्थक बनाये। चरखा संघ को बहुतेरी बातों में गांधीजी से सीधी प्रेरणा मिलती रही। इसका असर कार्यकर्ताओं पर होता रहा है। फलस्वरूप कार्यकर्ताओं का व्यवहार ऐसा रहा कि लोगों का चरखा संघ में विश्वास बढ़ता गया। बाहर के लोग कार्यकर्ताओं को अपने काम में लेने के लिए लालायित रहे। जब कांग्रेसी मन्त्रिमंडल स्थापित हुए और उनकी इच्छा रचनात्मक काम करने की हुई, तब

उनकी नजर चरखा सघ और चरखा सघ जैसी अन्य अखिल भारत रचनात्मक सस्थाओ के कार्यकर्ताओ की ओर आग्रहपूर्वक गयी और उनको दीख पडा कि वे सेवाकाम मे जितना भरोसा इन कार्यकर्ताओ पर कर सकते है, उतना दूसरो पर नही। दूसरी ओर जो कार्यकर्ता सघ छोडकर दूसरे कामो मे गये, उनको भी तुलना मे दीख पडा कि वे निर्मल वातावरण मे से मामूली सासारिक वातावरण मे आ पडे ह। आखिरी वर्षो मे महँगाई अत्यधिक बढ जाने के कारण कुछ कार्यकर्ताओ को सघ छोडना पडा। कही-कही प्रातीय सरकारो ने भी खादी के काम चलाये। सरकारी नौकरियो मे वेतन अधिक रहता है। उस कारण भी कुछ कार्यकर्ता गये। कुछ अप्रमाणित खादी के व्यापार मे भी लगे। पर कई ऐसे थे कि जो ऐसे आकर्षण या प्रलोभन की परवाह न कर सघ के काम मे ही डटे रहकर कष्ट का जीवन सहन करते रहे। समूचे कार्यकर्तागण की दृष्टि से विचार करने पर मानना होगा कि ऐसा शुद्ध और सेवाभावी सेवकदल किसी भी सस्था के लिए गौरव की चीज है। अन्य किसी इतनी बडी सस्था मे उसका सानी मिलना मुश्किल है।

सेवकदल का सगठन

जब खादीकाम का आरभ हुआ था, तभी जहाँ तहाँ कुछ भाई-बहन स्वयस्फूर्ति से वह करने लगे, कुछ अवैतनिक, कुछ थोडा समय और कुछ पूरे समय के लिए। इन कार्यकर्ताओ मे से कई वे थे, जिन्होने असहयोग-आदोलन मे अपना धधा या विद्याभ्यास छोड दिया था और र ट्रसेवा करने की लगन रखते थे। जैसे-जैसे काम का विस्तार होने लगा, वैसे-वैसे यह जरूरी हुआ कि पूरा समय काम करनेवाले अधिक कार्यकर्ताओ को सगठन मे लिया जाय। सन् १९२४ मे ही जब खादी का काम अखिल भारत खादीमडल के अधीन था, खादी सेवकदल सगठित करने का प्रस्ताव पास हो चुका था। इन कार्यकर्ताओ की जरूरत, भिन्न-भिन्न सूबो को अपना-अपना खादी-काम अच्छी तरह करने, केन्द्रीय दफ्तर को सूबे के काम का ऑडिट और निरीक्षण करने तथा खादी-

विज्ञान की शिक्षा देने के लिए थी। उस समय सेवको के लिए कुछ नियम बनाये गये और दल की स्थापना सन् १९२४ के जनवरी महीने मे हुई। इस दल मे पहले पहल अखिल भारत खादीमडल के दफ्तर, विज्ञान (टेक्निकल) विभाग और जानकारी विभाग मे काम करनेवाले कार्यकर्ता लिये गये। उस समय यह तय हुआ था कि वेतन का मान १०० रुपये मासिक से अधिक न हो और रेल का प्रवास-खर्च तीसरे दर्जे का दिया जाय, अपवाद रूप मे अधिक वेतन देने की बात भी रखी गयी थी।

यहाँ हम केवल चरखा सघ के कार्यकर्ताओ के ऑकडे दे सकेंगे। सघ के अलावा अन्य कई सस्थाएँ तथा वेपारी लोग व्यक्तिगत या सामुदायिक रूप से काफी तादाद मे खादीकाम करते रहे, पर वेपारियो के कार्यकर्ताओ के ऑकडे सघ के दफ्तर मे मिले ही नही। अन्य सस्थाओ के भी ऑकडे कभी मिले, कभी नहीं मिले। वह जानकारी अधूरी है, इसलिए उनके ऑकडे देने का प्रयत्न करना वेकार होगा।

सन् १९२६-२७ मे जब कि चरखा सघ की स्थापना हो चुकी थी, केन्द्रीय दफ्तर और सब शाखाओ के मिलाकर कुल ४३५ कार्यकर्ता सघ मे काम करने लगे थे। इसके बाद के ऑकडे इस प्रकार हैं :

सन्	कार्यकर्ताओ की सख्या	विशेष
१९२७-२८	५११	
१९२८-२९	६६३	औसत मासिक वेतन करीब रु २५
१९२९-३०	११४५	
१९३०-३१	११५९	" " " ३०
१९३२	११२४	औसत मासिक वेतन करीब रु० २०)
१९३३	१११५	औसत मासिक वेतन करीब रु० २०)
१९३४	८७१	औसत मासिक वेतन करीब रु० २६)
११३५	१०९७	औसत मासिक वेतन करीब रु० २१)
१९३६	११३५	
१९३७	१६२२	

सन्	कार्यकर्ताओ की सख्या	विशेष
१९३८	२२२१	
१९३९	२७३२	
१९४०	२९३३	
१९४१-४२ करीब	३४००	मासिक वेतन रु० १९ तक पानेवाले २१८८ मासिक वेतन २० से ५० तक पानेवाले ११२२ मासिक वेतन ५० से अधिक पानेवाले १२२
१९४२-४३	१९३५	
१९४३-४४	२४३८	
१९४४-४५	२३४१	
१९४५-४६	२१३६	मासिक वेतन रु० १५ तक पानेवाले ३९४ मासिक वेतन १५ से ३० तक पानेवाले ११७० मासिक वेतन ३० से ५० तक पानेवाले ४०८ मासिक वेतन ५० से ७५ तक पानेवाले १४२ मासिक वेतन ७५ से अधिक पानेवाले २२
१९४६-४७ करीब	१२१८	इस वर्ष मे रु० ७५ से अधिक पानेवालों की सख्या केवल २ रही
१९४७-४८	११८९	

सन् १९४९ के आखिर मे कार्यकर्ताओ की सख्या करीब ९०० ही रह गयी। आखिरी तीन वर्षों मे सख्या कम होने का एक मुख्य कारण यह था कि बिहार और उत्कल प्रान्त विकेन्द्रित हुए। वहाँ के कार्यकर्ता सघ मे गिने नही गये। इसके अलावा मद्रास प्रान्त के ७ बडे-बडे उत्पत्ति-केन्द्र प्रान्तीय सरकार की व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना के लिए सरकार के स्वाधीन कर दिये गये। वहाँ के सघ के कार्यकर्ता भी सरकारी तन्त्र मे खादीकाम करने लगे। चरखा सघ ने अपना व्यापारी काम कम करके प्रमाणित सस्थाएँ बढायी। उनमे भी सघ के कई कार्यकर्ता गये। इस

प्रकार कार्यकर्ता खादी के काम मे कहीं-न-कही लगे तो रहे, पर सघ की गिनती मे नहीं आ सके।

सन् १९४९ के आखिर का वेतन-मान का हिसाब ठीक निकाला नहीं जा सका। पर अन्दाज यह है कि करीब २५० कार्यकर्ताओं का मासिक वेतन रु० ३० तक, ४०० का रु० ३१ से ५० तक, २०० का रु० ५१ से ७५ तक और करीब ४० का रु० ७५ से १०० तक रहा।

ऊपर लिखे वेतन के सब आँकडे मूल वेतन के हैं। महँगाई भत्ता इनके अलावा दिया जाता था।

सन् १९४७ के बाद कार्यकर्ताओ की सख्या विशेष रूप से घटी है। चरखा सघ की कार्य पद्धति मे तबदीली होकर उसने अपने व्यापारिक खादीकाम का सकोच किया। वह काम प्रमाणित सस्थाओ द्वारा कराना तय हुआ। अब सघ का विशेष काम वस्त्र-स्वावलम्बन, खादी-शिक्षा और ग्रामसेवा रहा। इसके पहले के आखिरी दो-तीन वर्षा मे कार्यकर्ताओं की सख्या घटी हुई दीखती है। इसका मुख्य कारण यह है कि उस समय मे युक्तप्रान्त का खादी काम, जो पहले श्री गाधी आश्रम, मेरठ और चरखा सघ की शराकत मे चलता था, वह श्री गाधी आश्रम की तरफ चला गया। इसलिए आश्रम के कार्यकर्ताओ की सख्या चरखा सघ की सख्या मे नहीं गिनी जा सकी।

कार्यकर्ताओ मे मुख्यत दो श्रेणियाँ रहीं। एक, केवल शारीरिक श्रम का काम करनेवालो की और दूसरी, पढे-लिखे बाद्धिक काम करनेवालो की। हालाँकि चरखा सघ के काम का स्वरूप ही ऐसा था कि इनमे से भी कइयो को कुछ न कुछ शारीरिक श्रम का काम करना ही पडता था। सस्ताई के समय मे केवल शारीरिक श्रम का काम करनेवालो का मासिक वेतन करीब रु० १६ तक रहता था, प्रान्तभेद से कमी-बेशी।

ऊपर बतलाया है कि कई वर्षा तक सघ के कार्यकर्ताओ की सख्या

करीब ३००० रही । इतनी तादाद के कार्यकर्ताओ का काम व्यवस्थित रीति से शान्तिपूर्वक निभना आसान नही था । उनकी नियुक्ति, प्रारम्भिक वेतन, वेतन-वृद्धि, अनुशासन, बरखास्तगी, छुट्टी के नियम आदि से सम्बन्धित कई पेचीदे प्रश्नो का उठना स्वाभाविक था । इनका कुछ तफसील से विचार करे ।

वेतन-मान

तात्त्विक पहलू

चूँकि चरखा सघ गरीबो की सेवा के लिए है, उसके कार्यकर्ता सघ मे सेवा के लिए आने चाहिए, न कि अपनी खुद की आर्थिक तरक्की के लिए । वे सघ के लिए हैं, न कि सघ उनके लिए । अगर उनको बाहर अधिक वेतन मिल सकता है, तो भी वह सघ के लिए उचित पैमाना नही हो सकता है । दूसरी ओर जीवन-निर्वाह के लिए आवश्यक हो, उतना प्रबन्ध किये बिना भी काम नही चल सकता । जीवन-निर्वाह का परिमाण क्या रहे, यह एक जटिल प्रश्न है । गाधीजी ने कई बार कहा है कि केवल शारीरिक श्रम करनेवाला हो या बौद्धिक, ऊँचे दर्जे का हो या नीचे दर्जे का, सबकी शारीरिक आवश्यकताएँ समान मानकर वेतन भी समान ही होना उचित है, पर यह तो एक ऐसा ध्येय है कि जिसका अमल दुश्वार है । जैसे बाहर, वैसे सघ मे भी वेतन के बारे मे केवल शारीरिक श्रम का काम करनेवालो मे और बुद्धि का काम करनेवालो मे भेद मान लिया गया है । व्यावहारिक दृष्टि से इसका कुछ समर्थन इस बिना पर हो सकता है कि मजदूर परिवार के प्रायः सभी बालिग सदस्य कुछ न कुछ कमाते हैं, जब कि मध्यम वर्ग के बौद्धिक काम करनेवालो मे सामाजिक प्रथा या अन्य किसी कारणो से एकाध ही कमाता है और उसी पर सारे परिवार का बोझ पडता है । इस वर्ग का खानपान, रहन-सहन, सामाजिक रीतिरस्म ऐसे हैं, जो उन्हे ज्यादा खर्च मे घसीट ले जाते हैं । सघ मे केवल शारीरिक श्रमवालो का वेतन-मान जो कम रहा, वह बाहर समाज मे जो चलता

है, उससे कम नहीं था, कुछ अधिक ही था। कार्यकर्ता नाम भी प्रायः बौद्धिक कार्यकर्ताओं को ही लागू किया जाता रहा। इन कार्यकर्ताओं के वेतन की कमाल और किमान मर्यादाएँ प्राय निश्चित-सी रहीं, पर प्रश्न यह रहा कि उनमे अन्तर कहाँ तक रहे। हरएक की आवश्यकता का मान काम नहीं देता, क्योंकि आवश्यकताओं के बारे मे अपने-अपने विचार भिन्न भिन्न रहते हैं। सयम रखे तो स्थिति एक होती है, न रखे तो दूसरी। तीन हजार कार्यकर्ताओं की आवश्यकताओं की छानबीन कैसे की जाय? खुद उनपर इसका निर्णय नहीं छोड़ा जा सकता था, क्योंकि भावनाएँ भिन्न-भिन्न थीं। हरएक से इतना घनिष्ट सम्बन्ध भी नहीं आता था कि कोई अधिकारी उसका ठीक निर्णय कर सके। इसके अलावा चरखा सघ आश्रम जैसी सस्था नहीं है। परोपकारी होते हुए भी उसका स्वरूप व्यावहारिक है। कार्यकर्ताओं की केवल आवश्यकताओं का खयाल करके उनकी योग्यता की ओर ध्यान न दिया जाय तो सारा काम बिगड़ने का डर है। सर्वसाधारण समाज मे तो व्यावहारिक योग्यता ही वेतन का मान-दण्ड माना जाता है। अधिकारी को रुपये दो हजार मासिक मिलते हैं, तो कारकून को करीब एक सा ही। यह चीज भी चरखा सघ के काम की नहीं, क्योंकि सघ मे नैतिक पहलू का महत्त्व अधिक है। योग्यता का खयाल करते हुए भी वेतन-मान को खादी जीवन के सिद्धान्तों से नियन्त्रित करना जरूरी था। इसलिए कार्यकर्ताओं मे वेतन का अन्तर कम से कम रखना ही उचित था। दूसरी बात यह थी कि अगर मुख्य अधिकारी का वेतन अधिक रखकर उसके परिमाण मे अन्य कार्यकर्ताओं का वेतन भी अधिक रखा जाता तो कइयों को उनके बाजार के मूल्य से अधिक वेतन देना पड़ता और लोगों की एक सही शिकायत रहती कि चरखा सघ फिजूल खर्च बढ़ाकर बिना कारण खादी महँगी करता है। जहाँ अधिकारी और उसके मातहत वर्ग के कार्यकर्ताओं के वेतन मे अधिक अन्तर रहता है, वहाँ उनका सम्बन्ध मालिक नौकर का-सा हो जाता है, साथियों का-सा नहीं

रहता। अधिकारी का अपने कार्यकर्ताओ पर नैतिक प्रभाव नहीं पडता। संघ के बहुत-से कार्यकर्ता निम्न मध्यम श्रेणी के रहे। इस दशा मे आवश्यकताएँ प्राय समान होने पर एक-दूसरे के वेतन मे अधिक अन्तर रखने के लिए कोई योग्य कारण नही था। योग्यता, अनुभव, पुरानी सेवा, काम की जिम्मेवारी आदि कारणो से वेतन मे कुछ अन्तर अपने आप ही हो जाता है। एक और विचार चरखा संघ के सामने था। देहात मे काम करने के लिए ग्रामसेवक खादी-कार्यकर्ताओ मे से ही तैयार किये जा सकते थे। ग्राम-सेवक को विशेष अधिक वेतन कैसे मिल सकता है? जिनकी सेवा करनी है, उनसे विशेष अधिक कमाई करनेवाले को वहाँ अपना काम सफल करना संभव नहीं है। संघ के कार्यकर्ताओ का वेतन-मान निश्चित करने मे ऊपर लिखी सब बातो का विचार करना जरूरी था। सामान्यतः नीति यह रही कि ऊँचे वेतन का आँकडा बढने न पाये नीचे वेतन का नीचे न जाने पाये और ऊँचे और नीचे मे अन्तर कम रहे।

वेतनविषयक व्यवहार

ऊपर लिखा गया है कि खादी-सेवकदल स्थापित करने का निश्चय हुआ था, तब वेतन की कमाल मर्यादा मासिक एक सौ रुपया मानी गयी थी, हालाँकि अपवाद के लिए कुछ गुंजाइश थी। ऐसे अपवाद बहुत थोडे हुए। जो हुए, सो प्राय प्रारम्भिक काल मे ही, करीब १० १२ ही। बम्बईवालो को वहाँ की परिस्थिति के कारण कुछ अधिक देना पडा। फिर भी वेतन का आँकडा एक सौ पचास से अधिक नहीं गया। प्रारम्भ मे किये हुए उन अपवादो को छोडकर मूल वेतन की कमाल मर्यादा कई वर्षो तक रुपये ७५ रही। महाराष्ट्र मे कुछ वर्ष वह पचास और साठ रही। अन्त मे महँगाई बढने के कारण सन् १९४७ मे वह सब दूर रुपये एक सौ कर दी गयी। नीति यह रही कि कमाल मर्यादा कायम रखते हुए कम वेतनवालो का वेतन खास

करके बढ़ाया जाय, ताकि किमान और कमाल मर्यादा में कम से-कम अन्तर रह जाय।

अन्य नौकरियों में जो एक पद्धति है कि जितना पद ऊँचा, उतना ही वेतन अधिक, इसका चरखा संघ में अनुसरण नहीं किया गया। यों ता फर्क के लिए अधिक गुञ्जाइश नहीं थी तथापि वेतन का पद से घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं रखा गया। कुछ जगह उच्चाधिकारियों का वेतन उनके मातहतों की अपेक्षा कम रहा। यह बात इस कारण सम्भव हुई कि संघ में कई कार्यकर्ता त्याग-भावना से आये थे। उनमें कुछ ऐसे भी थे, जो बाहर हजार पाँच सौ मासिक कमाने लायक होकर भी संघ में केवल अपनी आवश्यकता के लिए सौ–पचास ही लेकर सन्तोष करते थे। चरखा संघ का प्रारम्भ हुआ, तब ऐसे कई कार्यकर्ता थे जो कम लेते रहे हालाँकि चरखा संघ उनको अधिक देने को तयार था। सामान्य कार्यकर्ताओं की दृष्टि से सन् १९३० तक सामान्यत यह ढगा रही कि बाहर के मुकाबले में संघ का वेतन-मान कम रहा, सन् १९३० से १९३८ तक, जब देश भर में आर्थिक गिरावट थी और सर्वत्र वेतन-मान कम हुए, तब वह बाहर की अपेक्षा अच्छा रहा। सन् १९३८ के बाद महँगाई आयी, तब फिर बाहर का और संघ का अन्तर बढ़ने लगा, अर्थात् संघ का वेतन-मान मुकाबले में अधिक कम रहा।

महँगाई बढ़ने लगी तब सन १९४० के बाद महँगाई-भत्ता देने का क्रम शुरू हुआ। भत्ता धीरे-धीरे बढ़कर वह कुछ समय तक वेतन का २५ प्रतिशत + १० रहा। बाद में प्रान्त-प्रान्त की परिस्थिति के मुताबिक इस १० रुपये की जगह रुपये १५ या इससे भी अधिक हुआ। संघ कार्यकर्ताओं को प्राविडेण्ट फण्ड की सुविधा लम्बे अरसे से दी जाती रही, जिसमें कार्यकर्ता के वेतन के एक रुपये पीछे एक आना वह देता और एक आना संघ देता। कार्यकर्ताओं को अन्य मदद के तौर पर यह योजना रही कि उनके काते हुए सूत के बुनाई खर्च में रिआयत की जाती थी और यह भी कि उनके परिवारवाले जो सूत काते, उस पर दुगुनी,

तिगुनी, चौगुनी तक कताई-मजदूरी दी जाती थी। इस योजना का हेतु यह रहा कि मध्यम वर्ग मे जो एक परम्परा है कि घर का एक कमाये और उसी से सबका खर्च चले, उसकी जगह यह आदत हो कि परिवार मे से हरएक फुरसत के समय कुछ काम करके कुटुम्ब का निर्वाह चलाने मे सहायक हो, घर मे उद्योग का वातावरण बना रहे। इसके अलावा सन् १९४७ मे बालक-भत्ते की योजना बनी। इसमे तीन बालको तक प्रति बालक रु० ५ मासिक भत्ता दिया जाता है। इस प्रकार बढती हुई महँगाई का मुकाबला करने के लिए कुछ न कुछ व्यवस्था की जाती रही। पर महँगाई इतनी बढती रही कि ये सब उपाय पूरे नहीं पड सकते थे। तथापि बहुत से कार्यकर्ता सेवाभाव से अपने काम मे डटे रहे।

अवैतनिक और सवैतनिक कार्यकर्ता

सघ मे पैसे की जगह नैतिक मूल्यो की ओर विशेष ध्यान रहा। एक और विशेषता का यहाँ उल्लेख कर देना उचित होगा। आम समाज मे हम देखते हैं कि अवैतनिक (Honorary) काम करनेवालो की विशेष कद्र की जाती है, वेतनभोगियो की वैसी नहीं। जहाँ अधिक से अधिक वेतन लेने की इच्छा रहती है, वहाँ इस वृत्ति का कुछ समर्थन हो सकता है। पर जहाँ अपने निर्वाह के लिए कम से कम वेतन लिया जाता है, वहाँ नि.शुल्क काम करनेवाले और वेतनभोगी मे फर्क क्यो होना चाहिए? उलटे ऐसे थोडा वेतन लेनेवालो की अवैतनिको की अपेक्षा अधिक कद्र होनी चाहिए। क्योकि अवैतनिक काम कर सकने के मानी यह है कि उनके पास निजी जायदाद या धन-सम्पत्ति या निर्वाह के अन्य साधन इतने हैं कि उनको खुद को पैसे के लिए काम करने की जरूरत नही है। इसके विपरीत निर्वाह-वेतन लेनेवाले की दशा यह रहती है कि उसको अपने निर्वाह के लिए कमाना जरूरी है। अगर वह न कमाये, तो उसका निर्वाह नही चल सकता। निर्वाह-वेतन भी बन्द हो जाय तो फिर सकट का मुकाबला करने की तैयारी रखनी

पड़ती है। ऐसे गरीब लोगों का निर्वाह-वेतन भी न लेने का अर्थ यही हो सकता है कि वे कोई सार्वजनिक सेवा का काम करें ही नहीं। फिर सेवा के काम कैसे चल सकेंगे? इसलिए अवैतनिक काम करनेवाले और निर्वाह-वेतन लेनेवाले—इन दोनों में प्रतिष्ठा की दृष्टि से भेद करना गैरवाजिब है। चरखा संघ का यह प्रयत्न रहा कि उनमें ऐसा भेद न रहे। कहीं-कहीं यह भी देखा जाता है कि कई अवैतनिक काम करनेवाले, अगर उनकी निज की कोई महत्त्वाकांक्षा न हो, तो अपने काम की पूरी जिम्मेवारी महसूस नहीं करते हैं। चरखा संघ का यह सद्भाग्य रहा कि उसके अवैतनिक काम करनेवाले, चाहे वे पूरे दिन काम करने के लिए रहे हों या कम समय के लिए, दिल लगाकर काम करते रहे।

वेतन-वृद्धि

इतनी बड़ी संख्या के कार्यकर्ताओं का प्रवेश के समय वेतन निश्चित करना, बाद में वृद्धि कब और कितनी देना, इसका अधिकार किसे देना आदि प्रश्न कम पेचीदे नहीं हैं। जहाँ कार्यकर्ता नाना केन्द्रों में काम कर रहे हैं, जिनके काम का स्वरूप भिन्न-भिन्न है, जिनकी योग्यता में काफी फर्क है, जो लंबी मुद्दत तक उसी काम में लगे रहना चाहते हैं, ऐसा सब दृष्टियों से विचार किया जाय, तो सीधी-सी पद्धति यह दिखती है कि उनके दल अर्थात् Grades बना दिये जायँ और काल-मर्यादा निश्चित करके वेतन-वृद्धि भी निश्चित कर दी जाय। इस पद्धति का स्वीकार करने का विचार संघ के सामने कई बार आया, पर वह स्वीकार नहीं की गयी। इस पद्धति में गुण यह है कि कार्यकर्ता का भविष्य सुरक्षित होता है। पर संघ गरीबों की सेवा के लिए होने के कारण यह मानी हुई बात थी कि उसमें आनेवाला कार्यकर्ता उसे बाहर जो कुछ मिल सकता है, उससे कम लेने की तैयारी से ही आता है। अगर कभी उसे संघ को छोड़ना पड़े, तो बाहर अधिक वेतन मिलने में उसे दिक्कत न होनी चाहिए। यह बात जरूर है कि वृद्धावस्था तक एक काम करते रहने पर बाद में वह काम

बदलकर दूसरा करना मुश्किल जाता है, पर संघ की नीति पुराने कार्य-कर्ताओं को निभाने की ही रही। ग्रेड बनाकर वेतन-वृद्धि निश्चित करने मे एक बाधा यह रही कि संघ की कार्य पद्धति मे समय-समय पर परिवर्तन करना जरूरी था और परिवर्तन होता रहा। इसलिए योग्यता का मान क्या माना जाय, यह तय नहीं किया जा सकता था। संघ मे स्कूल-कॉलेजो के पढ़े-लिखे लोग बहुत कम आये। उसके अधिकतर काम के लिए वह पढ़ाई उपयुक्त भी नहीं थी। अगर आज कोई एक तरह के काम मे कुशल पाया जाता है तो पद्धति मे फर्क होने पर वह नये तरीके के काम के लायक साबित होगा ही ऐसा नहीं माना जा सकता। काल-मर्यादा के अनुसार नियत वेतन बढ़ाने मे आलस्य बढ़ने का डर रहता है। यह बात जरूरी है कि नियत वेतन-वृद्धि मे यह शर्त तो रहती ही है कि वेतन-वृद्धि काम सतोषजनक किये जाने पर ही दी जायगी। लेकिन यह शर्त सस्थाओ के लिए प्राय: काम नही आती। सार्वजनिक परोपकारी सस्थाओ और कार्यकर्ताओ के दरम्यान जो कुछ इकरार किये जाते है, उनके बारे मे व्यावहारिक अनुभव यह है कि ये सारे इकरार सस्था पर तो बंधनकारक रहते है, पर कार्यकर्ता उनसे प्रायः मुक्त रह जाते है। इसके अलावा काम सतोषजनक न होने पर भी मुकर्रर समय पर दयाभाव के कारण वृद्धि रोकी नहीं जा सकती। इसलिए संघ की नीति यह रही कि भविष्य का वेतन या कार्यकर्ता को कौन-सा काम कहाँ देना, इसके बारे मे संघ पर कोई बंधन न रहे। कुछ शाखाओ मे एक वर्ष के बाद या प्रतिवर्ष थोड़ी-सी वृद्धि कर देने की कभी-कभी प्रथा-सी रही। पर यह कोई नियम की बात नहीं थी। वैसे ही कार्यकर्ता का एक जगह से दूसरी जगह तबादला करने मे कुछ शाखाओ मे अनुशासन की ढिलाई के कारण कुछ अड़चन जरूर रही, पर सामान्यत. तबादला किया जाता रहा। एक शाखा से दूसरी शाखा मे तबादला करने का प्रश्न क्वचित ही खड़ा हुआ।

प्रारभिक वेतन तो योग्यता के अनुसार निश्चित किया जाता रहा।

संघ के प्रारंभकाल में अनुभवी, योग्यतावाले कार्यकर्ता मिलते रहे। बाद में बहुतेरे नये उम्मीदवारों की तरह लिये गये। वे काम करते करते शिक्षा पाकर आगे बढ़ते गये। वेतन-वृद्धि किसको कितनी दी जाय, इसका अधिकार शाखा-मंत्री के हाथ में रहा। इस व्यवस्था को भी आदर्श तो नहीं मान सकते। यह ठीक तो नहीं है कि इतने कार्यकर्ताओं का भाग्य एक व्यक्ति के अधीन रहे। कार्यकर्ताओं के या उच्च अधिकारियों के मन में यह भय रहना स्वाभाविक था कि वह राग-द्वेष के कारण किसीका नफा-नुकसान कर सकता है। पर सत्य का वातावरण यथाशक्य कायम रखने की कोशिश होने के कारण इस विषय में शिकायत बहुत कम रही। यह भी एक नियम रहा कि वेतन-वृद्धि का विचार वर्षभर में एक ही बार हो। सब शाखाओं के बजट मंजूरी के लिए केन्द्रीय दफ्तर में आते थे। उनके साथ वेतन-वृद्धि के प्रस्ताव भी रहते थे। केन्द्रीय दफ्तर की मंजूरी के बिना वृद्धि अमल में नहीं लायी जाती थी। इस प्रकार इस विषय पर केन्द्रीय दफ्तर की देखभाल रहती थी। पर यह व्यवस्था कोई विशेष परिणामकारक नहीं थी, क्योंकि शाखाओं के मुख्य कार्यकर्ताओं को छोड़कर दूसरों से केन्द्रीय दफ्तर का संपर्क कम रहने के कारण वेतन-वृद्धि का फैसला करने की सामग्री उनके पास नहीं के बराबर रहती। इसलिए प्रायः शाखा-मंत्रियों की सिफारिश ही मान ली जाती थी। निर्णय में फर्क क्वचित् ही होता। कार्यकर्ताओं का सीधा संबंध शाखा-मंत्रियों से रहता था। मंत्रियों को बार बार दौरे पर जाकर केन्द्रों के काम का निरीक्षण करना पड़ता था, जिससे उनका सब कार्यकर्ताओं से अच्छा परिचय हो जाता था। इसके अलावा यह भी पद्धति रही कि वेतन-वृद्धि जिसके सम्बन्ध में केन्द्रों के मुख्य अधिकारियों की, जिनका कार्यकर्ताओं से रोजमर्रा का संबंध आता था, सलाह ली जाती थी। उस पर औपचारिक लिखा-पढ़ी से नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष खुले दिल से विचार होता था। इस प्रकार यद्यपि वेतन का आखिरी निर्णय शाखा-मंत्रियों पर निर्भर था, तथापि उसमें दोष कम-से-कम आने पाया और व्यक्तिगत गुण-दोषों का विचार होकर वेतन का निर्णय

होता रहा। वेतन की कमाल और किमान मर्यादा मे अन्तर कम होने के कारण भी कार्यकर्ताओ मे असतोप के लिए बहुत कम स्थान रहा।

ईमानदारी

सघ के अधिकाश कार्यकर्ताओ का सबध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष पैसे-टके से आता ही रहा। दूर-दूर के देहातो के केन्द्रो मे एक-एक, दो दो कार्यकर्ता ही काम करते रहे। जहाँ अधिक कार्यकर्ता रहते, वहाँ भी कोई व्यवस्थापक का काम करता, कोई रोकड का, कोई कामगारो को मजदूरी चुकाने का, कोई खरीदा-बिक्री का। इस प्रकार बहुतेरो का पैसे-टके से सम्बन्ध रहता। व्यावहारिक दृष्टि से सोचनेवालो को यह जानने का कुतूहल होना स्वाभाविक है कि इतनी बडी सख्या के कार्यकर्ताओ मे एव इतना कम वेतन पानेवालो मे आर्थिक शुद्धता कहाँ तक रह सकी होगी। हम नही कह सकते कि सब मे सपूर्ण आर्थिक शुद्धता रही। कुछ कार्यकर्ताओ ने गडबड जरूर की, दो तीन पर फौजदारी मुकदमे चलाकर उनको जेल मे भी जाना पडा। केन्द्रीय दफ्तर मे एक रोकडिया द्वारा एक बडी रकम का गबन हुआ, वह तो सबकी नजर उतारने लायक बात हुई। फिर भी २५ वर्षो के कार्यकाल मे, हजारो कार्यकर्ताओ द्वारा जिस विस्तृत पैमानेपर पैसे-टके का काम होता रहा, उसका खयाल करते हुए स्वीकार करना पडेगा कि सघ के कार्यकर्ताओ ने अपना काम खूब ईमानदारी के साथ निभाया। एक शाखा मे तो मत्री की पत्नी ही कुछ वर्ष उस शाखा की अतस्थ ऑडिटर रही। दोनो ही सत्य के उपासक होने के कारण ही यह बात बन आयी। किसी दूसरी सस्था मे तो ऐसी व्यवस्था की कल्पना ही नही की जा सकती है। कार्यकर्ताओ के दिल मे इस बात की जाग्रति रही कि वे सघ मे गरीबो की सेवा करने के लिए ह। व्यवस्थापक का पद, कार्यकर्ता का कुछ वर्ष अनुभव लेकर परिचय होने के बाद दिया जाता था। मुख्य अधिकारियो की यह भी नीति रही कि कार्यकर्ताओ मे आलस्य, बुद्धि की न्यूनता या कम समझ बरदाश्त की जा सकती है, पर बेईमानी

कदापि नहीं। सत्य की उपासना पर लगातार जोर देते रहने के कारण शुद्धता रहने में काफी मदद मिली।

आपस का मेलजोल

कार्यकर्ताओं का आपस का व्यवहार काफी मेलजोल का रहा। दलबन्दी क्वचित ही रही। बिना कारण एक दूसरे की शिकायत करने का सिलसिला बहुत कम रहा। शिकायत के बारे में यह पद्धति रही कि जिसके खिलाफ शिकायत करनी हो, वह चाहे अपने ऊपर का अधिकारी ही क्यों न हो, उसे बतलाकर की जाय। इस पद्धति से शिकायत ऊपर जाने से पहले ही बहुत-से मामले आपस में निपट जाया करते थे। अगर शिकायत आगे जाती भी तो वह नपे तुले शब्दों में जाती, बढा चढाकर नहीं। निर्णय दोनों व्यक्तियों के प्रत्यक्ष में चर्चा करके होता, ताकि सच क्या है इसका पता चलाने में आसानी रहती। सामान्यत वातावरण निर्भयता का रहने के कारण मातहतों को अपने अधिकारियों के खिलाफ शिकायत करने का प्रायः सकोच नहीं रहता था तथा अधिकारी भी अपने खिलाफ कही गयी बातें सुनना सहन कर लेते थे। मालिक-नौकर जैसा सम्बन्ध नहीं था, समानता का भाव रहता था। अनुशासन भंग के लिए सजा की कार्यवाही क्वचित ही करनी पड़ी। लगातार लापरवाही करनेवालों की थोड़े समय के लिए वेतन-वृद्धि रोक दी जाती थी।

फुटकर

सन् १९२१ से १९३४ तक खादी काम में व्यापारिक ढंग अधिक रहा। उससे कार्यकर्ताओं की हिसाब-किताब कुशलता बढती गयी। सन् १९३५ में जीवन-निर्वाह-मजदूरी का प्रश्न आने पर काम के स्वरूप में फर्क जरूर हुआ, तथापि प्रधानता व्यापारिक पद्धति की ही रही। आगे चलकर वस्त्र-स्वावलम्बन पर जोर दिया जाने लगा, तब काम का रूप काफी बदल गया। अब तक खादी की प्रक्रियाएँ खुद अपने हाथ से करने के

बदले केवल बुद्धि से और कलम से कार्यकर्ताओ का काम निभ सकता था, पर वस्त्र-स्वावलम्बन मे सब प्रक्रियाएँ खुद करके दूसरो को सिखाने की बात थी। पुराने कार्यकर्ता मध्यम आयु पार कर चुके थे। उनके लिए धुनाई जैसी प्रक्रिया करना, कताई मे कुशलता प्राप्त करना, दुबटा करना, चरखा तथा तकुवा दुरुस्त करना और फिर स्वय बुनना, ये बाते मुश्किल होने लगी। पर यह सब कराये बिना चरखा सघ का काम आगे नही बढ सकता था, इसलिए कार्यकर्ताओ के ये सब बाते सीखने पर जोर देना पडा। इस परिवर्तन से कुछ कार्यकर्ताओ के दिल मे घबराहट हुई। कुछ ने बदली हुई परिस्थिति के लायक बनने का प्रयत्न शुरू किया, कुछ पर दबाव भी डालना पडा। अत मे सन् १९४४ मे सब कार्यकर्ताओ के लिए खादी प्रक्रियाओ की एक सादी-सी परीक्षा मुकर्रर की गयी। उसका मान बहुत ऊँचा नही था, फिर भी जिन्होने अब तक कुशलता प्राप्त करने की कोशिश नही की थी, उनको उसमे कुछ मुश्किली लगी। ५० वर्ष से अधिक आयुवाले तथा विशेष कारण से कुछ उस परीक्षा से मुक्त रहे। यह भी नियम बनाना पडा कि जो वह परीक्षा पास नही करेगे, उनकी वेतन-वृद्धि रोक ली जायगी। दो-तीन साल के अरसे मे बहुतेरे कार्यकर्ताओ ने वह परीक्षा पास कर ली।

सन् १९४४ मे ग्रामसेवा की बात आयी। गाधीजी ने अपेक्षा रखी थी कि ग्रामसेवक चुनने मे शुरुआत सघ के कार्यकर्ताओ से की जाय। केन्द्रीय दफ्तर के और शाखाओ के कई प्रथम श्रेणी के कार्यकर्ता इस काम मे कूद पडने को तैयार थे। पर उनके चले जाने से सघ का इतना बडा तन्त्र सँभालना मुश्किल हो जाता। उनको ग्रामसेवा के लिए इजाजत नही दी जा सकती थी। दूसरो के लिए दरवाजा खुला था। पर ग्रामसेवक के काम मे जोखिम थी। ५ वर्ष तक सघ से कुछ सहायता मिलने के बाद कार्यकर्ता को स्वावलम्बी बनना था। जो मध्यम आयु पार कर चुके थे और जिनका परिवार बढ गया था, उनके लिए यह साहस मुश्किल था। इस

काम के लिए महाराष्ट्र शाखा के दो कार्यकर्ता तैयार हुए। आगे चलकर सन् १९४८ और ४९ में संघ का व्यापारिक काम बहुत कुछ कम हो गया। प्रयत्न करके प्रमाणित संस्थाएँ बनाकर उनको वह सौंपा गया। जो कार्यकर्ता खाली हुए, उनमें से कुछ उन संस्थाओं में काम करने लगे। कुछ प्रान्तीय सरकारों द्वारा चलाये गये रचनात्मक कामों में लगे। बाकी रहे उनके बार बार शिविर चलाकर उनको नये काम की शिक्षा दी गयी और अपेक्षा रखी गयी कि वे धीरे-धीरे ग्रामसेवा के काम में प्रवेश करेंगे, जिस पर कि चरखा संघ को भी जोर देना है।

अध्याय ६ खादी का राहत का युग

'चरखे की तात्त्विक मीमासा' का अध्याय पढने पर पाठको को मालूम हो गया होगा कि चरखे मे कई बातो का समावेश हुआ है। प्रारभ मे वह देश के सामने स्वदेशी-धर्म के रूप मे आया। बाद मे विदेशी कपडे के बहिष्कार के साधन के रूप मे। साथ ही करोडो बेकार, अध-भूखे देहातियो के राहत के रूप मे। वस्त्र-स्वावलबन की बात उसमे थी ही। वस्त्र-स्वावलबन के साथ वह देहात की मूल आवश्यकताओ के स्वावलबन का प्रतीक भी माना गया। वह सारे ग्रामोद्योगो का भी प्रतीक बना। उसके द्वारा नैतिक अर्थशास्त्र को अमली रूप दिया गया तथा उसे खादी-प्रेमियो ने सत्य और अहिसा के प्रतीक के रूप मे अपनाया। यह सारी बाते स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से गाधीजी के मन मे सदा थीं ही। हालाकि उनमे से एक-एक का विकास क्रमशः होता गया। चरखा सघ भी समय समय पर उसके कुछ ही पहलुओ पर विशेष और व्यापक रूप से जोर देता रहा। इन पहलुओ की दृष्टि से चरखा सघ के कार्य के मुख्यतः तीन काल-खड होते ह। इनमे से हरएक काल खड मे किसी एक दो विशेष पहलुओ पर जोर रहा, साथ मे दूसरी बाते भी थीं ही। सन् १९३३ तक खादी काम का विशेष रूप गरीबो को राहत देने को लेकर व्यावसायिक रहा। बाद मे सन् १९४३ तक जीवन-निर्वाह मजदूरी को लेकर उसमे नैतिक अर्थशास्त्र की दृष्टि रही। सन् १९४४ के बाद उसमे सत्य और अहिसा के प्रतीक की प्रधानता रही।

इसके आगे हम खादी आदोलन के आरभ से लेकर सन् १९४९ तक हरएक साल मे चरखा सघ की कार्यवाही मे जो मुख्य मुख्य बाते हुई, उनका सक्षेप मे विवरण देगे। पहला कालखड अर्थात् सन् १९३३ तक का,

विशेषतया राहत का युग रहा। उसे 'खादी का राहत का युग' नाम दिया है। दूसरे कालखंड में जीवन-निर्वाह मजदूरी की विशेषता रही। उसको 'खादी का नैतिक-युग' नाम दिया है। और तीसरे का नाम रखा गया है 'खादी का आध्यात्मिक युग'। क्योंकि तब चरखे की अहिंसा शक्ति पर ध्यान केन्द्रित करने की बात आयी और उसका प्रचार अहिंसक समाज की रचना के साधन-रूप किया जाने लगा।

ता० १ अक्तूबर १९२५ से ता० ३ सितम्बर १९२६

अर्थ और तंत्र की व्यवस्था

चरखा संघ की स्थापना के बाद का यह पहला वर्ष था। कांग्रेस महासमिति के निर्णय के मुताबिक अखिल भारत खादीमंडल की तथा प्रान्तीय खादीमंडलों की सब जायदाद चरखा संघ की अधीनता में आ गयी। संघ को अपने हाथ में सब से पहले यह काम लेना पड़ा कि खादीमंडलों की रकम और जायदाद का हिसाब ठीक कर के कामकाज की ठीक व्यवस्था की जाय। सारे काम के केन्द्रीकरण की आवश्यकता हुई। प्रबन्ध के लिए तंत्र खड़ा करना पड़ा। हरएक कांग्रेसी सूबे में एक एक शाखा खोलकर उसके लिए एक एक प्रतिनिधि मुकर्रर करना तय हुआ, जिसका नाम अंग्रेजी में Agent रखा गया। प्रतिनिधि अवैतनिक थे। जिन प्रान्तों के लिए प्रतिनिधि नहीं मिल सके, वहाँ केवल मंत्री ही मुकर्रर हुए। संघ के शाखा-प्रतिनिधियों और शाखा-मंत्रियों की नामावली अन्यत्र दी गयी है। पहले ही वर्ष में प्रान्तीय शाखाओं का संगठन कर लिया गया। खादीमंडलों द्वारा जो काम चल रहा था वह संघ की अधीनता में आ गया। उनके कार्यकर्ता भी संघ में काम करने लगे। प्रान्तीय कांग्रेस समितियों तथा प्रान्तीय खादीमंडलों के हिसाब निपटाने में एक वर्ष से अधिक समय लग गया। कुछ बड़ी-बड़ी रकमें बट्टे-खाते लिखनी पड़ीं।

खादी की उत्पत्ति-बिक्री

इस वर्ष मे खादी के बारे मे जनता की दिलचस्पी बढी। सघ की कार्यकारिणी के सदस्यो ने दौरे किये। खादी की मॉग बढी। उत्पत्ति काफी नही थी। उसे बढाना जरूरी था। लेकिन जो पूँजी चरखा सघ के हाथ आयी थी, वह इस काम के लिए अपूर्ण थी। खादी-मडलो से चरखासघ के हिसाब मे करीब १२ लाख रुपये आये, इनमे वे रकमे भी थी, जो अनेक कारणो से रुकी हुई थी। इस वर्ष मे देशबधु दास स्मारक-फड इकट्ठा हुआ। उसमे से करीब दो लाख रुपये चरखा सघ को मिले। गुजरात के खादीकाम के लिए भी एक अलग कोष इकट्ठा किया गया। इन प्रयत्नो के फलस्वरूप कुछ प्रान्तो मे खादीकाम बढाया जा सका। कुछ प्रान्तो मे वहाँ की अव्यवस्था दूर करने मे समय लगा। तथापि सब मिलाकर पिछले साल की अपेक्षा खादी-उत्पत्ति का काम सवाया हो गया। बिक्री के प्रबन्ध मे भी सुधार हुआ। उत्पत्ति के प्रान्त मे ही बिक्री बढाने की कोशिश की गयी। बगाल मे खादी-प्रतिष्ठान के और अभय आश्रम के परिश्रम से वहाँ तैयार हुआ करीब ४॥ लाख रुपयो का माल सूबे में ही बिक गया। इन दोनो सस्थाओ ने व्याख्यानो और लेखो द्वारा अच्छा प्रचार किया। तमिलनाड मे भी करीब ९ लाख रुपयो की उत्पत्ति मे से ६०% खादी सूबे मे ही बिक गयी। बिहार और महाराष्ट्र मे खादी प्रदर्शनियाँ भरायी गयी। फेरी कमीशन की जो योजना बनी थी, उससे भी बिक्री मे मदद हुई। यह खयाल मे रहे कि उस समय खादी बिकना आसान नही था। मिल के कपडे के और खादी के मूल्य में काफी अन्तर था। आम जनता मे खादी सबधी इतनी जाग्रति नहीं थी कि वह अपने-आप खादी खरीद ले। माल भी खराब बनता था। सरकार का रोष तो था ही। राजपूताना और पजाब मे खादी काफी बन सकती थी और बनती थी, परन्तु उन सूबो मे बिक्री बहुत कम थी। ऐसे प्रांतो की खादी बम्बई भाण्डार के जरिये बेचनी पडती थी।

राहत की मात्रा

गरीब लोगों को राहत पहुँचाने के बाबत उस समय का हिसाब यह था कि करीब १५०० गाँवो में कताई-बुनाई का काम चलता था। कातनेवाले करीब ४३००० और बुननेवाले करीब ३५०० थे। ये आँकड़े चरखा सघ के दफ्तर के हैं। इसके अलावा और भी काम चल रहा था पर उनका हिसाब चरखा सघ के दफ्तर में नहीं आता था।

माल में सुधार

अब खादी के गुण में कुछ सुधार होने लगा। सन् १९२१ में जब खादी आन्दोलन शुरू हुआ था, तब बिलकुल सादा, मोटा और खराब कपडा बनता था। प्रायः सफेद खादी ही मिलती थी। बाद में धीरे-धीरे अच्छा सूत आने लगा। बुनाई में कुछ सुधार हुआ। रंगीन कपडे बनने लगे। विभिन्न किस्मो का कपडा बनने लगा। उस पर नक्शी का काम होने लगा। जिन प्रान्तो में बिलकुल छोटे अर्ज का कपडा बनता था, वहाँ कुछ बडे अर्ज का भी बनने लगा। आंध्र के बारीक माल पर बम्बई में नक्शी-काम कर के वहाँ की राष्ट्रीय स्त्री-सभा द्वारा अच्छी साडियाँ बनायी जाने लगी। माल के सुधार के साथ-साथ सघ का तत्र व्यवस्थित होकर खर्च की किफायत होने लगी। कताई-बुनाई आदि की मजदूरी के दाम माफिक होने लगे। खादी के दाम भी घटने लगे। खादी आन्दोलन का प्रारभ हुआ था, तब एक वर्ग गज की कीमत करीब एक रुपया थी। पर हर साल वह धीरे-धीरे कम होकर सन् १९२५ में कहीं-कहीं करीब ॥) तक उतर आयी। सूत में बहुत ज्यादा सुधार की जरूरत थी। बुनाई-मजदूरी बहुत ज्यादा लगती थी। सूत मजबूत बनाने के लिए बुनाई अच्छी करने का विशेष प्रयत्न किया गया।

वस्त्र-स्वावलंबन

कुछ जगह वस्त्र-स्वावलम्बन का काम चल रहा था। गुजरात में इस विषय में काफी तरक्की हुई। उस वर्ष वेडछी आश्रम में वस्त्र-स्वावलम्बन

का करीब ७००० वर्गगज कपडा बुना गया। इस सूत के कातनेवाले बहुतेरे किसान थे। वहाँ बुनाई की दिक्कत थी, इसलिए नये बुनकर तैयार करने का प्रयत्न हुआ। गुजरात के अन्य वस्त्र-स्वावलम्बन का करीब ५०००० वर्गगज कपडा तैयार हुआ। काठियावाड में अमरेली और पचताल्वाडा में करीब ७५००० वर्गगज कपडा तैयार हुआ होगा। इस वर्ष वस्त्र-स्वावलम्बन का व्यापक काम करने के लिए मेवाड राज्य में बिजौलिया का क्षेत्र चुना गया। वहाँ का काम श्री जेठालाल भाई गोविन्दजी के नेतृत्व में शुरू हुआ। क्षेत्र की आबादी करीब ११००० की थी। फी व्यक्ति १० वर्गगज की आवश्यकता मानकर ११०००० वर्गगज कपडे की जरूरत आँकी गयी। क्षेत्र में खूब प्रचार किया गया। स्त्रियाँ काफी तादाद में कातने लगी, कुछ पुरुष भी। पहले वर्ष में ६५ करघे चले, ७८००० वर्गगज कपडा तैयार हुआ। काम सफल होने की आशा बँधी।

विज्ञान-विभाग पूर्ववत् चलता रहा। काम बढा। विद्यालय में करीब पचास नये छात्र दाखिल हुए। कताई-धुनाई प्रक्रियाओ का प्रदर्शन करने के लिए टोलियाँ बनायी गयी, जिन्होंने कानपुर, दिल्ली, पोरबन्दर, रत्नागिरी, बम्बई, पूना आदि शहरो में जाकर प्रत्यक्ष प्रयोग करके बतलाये। औजारो में कुछ सुधारणा हुई। रूई, सूत और कपडे के नमूने जाँचे गये। सूत की मजबूती जाँचने के यन्त्र बनाये जाकर वे भिन्न-भिन्न प्रान्तो में भेजे गये। कपडे की मजबूती की जाँच शुरू हुई। कपडा शुद्ध खादी है या नहीं, इसकी जाँच करने के लिए बाहर से दफ्तर में ११५ नमूने आये उनमें से ५३ अशुद्ध पाये गये। चरखा संघ के सदस्यो के तथा कांग्रेस के सदस्यो के सूत की जाँच विज्ञान-विभाग में की जाती थी। उसके दोष सदस्यो को लिख भेजे जाते थे और सूत सुधारने के उपाय भी समझाये जाते थे।

ता० १-१०-२६ से ता० ३०-९-२७ तक

खादी का प्रचार

इस वर्ष में खादीकाम में मामूली प्रगति तो रही ही, पर विशेष ध्यान सूत और कपड़े में सुधार करने पर और चरखा संघ के तंत्र की व्यावहारिक व्यवस्था सुधारने पर रहा। जिन प्रान्तों में संगठन ठीक नहीं होने पाया था, वहाँ उसे ठीक करने की कोशिश की गयी। खादी की माँग बढ़ी। खादीकाम बढ़ाने के लिए चरखा संघ के पास अब भी पूरा पैसा नहीं था। इस वर्ष देशबन्धु दास स्मारक फंड के लिए गांधीजी ने कई प्रान्तों में दौरा किया। करीब पाँच लाख रुपया इकट्ठा हुआ। उसमें से करीब सवा दो लाख रुपये संघ को इसी वर्ष में मिल गये। इसके अलावा अन्य जरियों से दो लाख रुपये मिले। इससे कुछ खादीकाम बढ़ा पर रकम की कमी ही रही। गांधीजी के दौरे के फलस्वरूप जनता में खादी-तत्त्वों का अच्छा प्रचार हुआ। वे जिन-जिन प्रान्तों में गये, वहाँ खादी की बिक्री काफी बढ़ी। उनके दौरे से दूसरा लाभ यह हुआ कि खादी की ओर गैर-कांग्रेसी लोगों का भी झुकाव हुआ। कुछ राजा-महाराजाओं का भी इस काम की ओर ध्यान गया। दौरे में गांधीजी द्वारा खादी के नाना पहलुओं का स्पष्टीकरण होने से यह बात लोगों के सामने अधिक स्पष्टरूप से आयी कि राजनीतिक पहलू के अलावा खादी के आर्थिक और सामाजिक पहलू भी बड़े महत्त्व के हैं।

खादी-संस्थाएँ

उस समय खादीकाम चार प्रकार की संस्थाएँ कर रही थीं। चरखा संघ तो था ही, जो केन्द्र और प्रान्तीय शाखाओं के द्वारा प्रत्यक्ष काम करने के अलावा जहाँ जहाँ दूसरों द्वारा खादीकाम होता था, उनको मदद देता, उनके काम का निरीक्षण करता और भिन्न भिन्न संस्थाओं के काम का सम्बन्ध जोड़ता। दूसरे, वे सार्वजनिक संस्थाएँ थीं, जो मुनाफे की दृष्टि से नहीं, वरन् खादी का महत्त्व समझकर काम कर रही थीं। उन

संस्थाओ मे ऐसे सेवक काम कर रहे थे कि जिनके त्याग और लगन से सार्वजनिक जीवन का नैतिक स्तर ऊँचा हो रहा था। बिहार मे गाधी-कुटीर, मल्काचक बगाल मे खादी-प्रतिष्ठान, अभय आश्रम, प्रवर्तक सघ, विद्याश्रम, युक्तप्रान्त मे श्री गाधी आश्रम, अकबरपुर, तमिलनाड मे गाधी आश्रम, तिरुचनगोड, कर्नाटक मे कुमरी खादी मन्दिर, हुबली आदि संस्थाएँ इस प्रकार का काम कर रही थी। ऐसी सस्थाओ को चरखा सघ की ओर से आर्थिक मदद भी दी जाती थी। इनके अलावा ऐसे भी कुछ आश्रम और केन्द्र थे कि जहाँ खादी-कार्यकर्ताओ को खादी की शिक्षा दी जाती थी और खादी को केन्द्र मानकर ग्रामोत्थान का काम भी होता था। ऐसी सस्थाओ मे साबरमती और वर्धा के सत्याग्रह आश्रम, आन्ध्र मे सीतानगरम् का गौतमी आश्रम, आरामबाग खादीकार्य और भीमपुर खादी-केन्द्र, खानदेश मे पिपराला का उद्योग-मन्दिर, गुजरात मे बारडोली, सरभोण और वेडछी के आश्रम आदि मुख्य थे। तीसरे, कुछ ऐसे धनी महाशय थे कि जो परोपकार की दृष्टि से अपनी पूँजी और नफा-नुकसान की अपनी जिम्मेवारी पर खादी-उत्पत्ति और बिक्री का काम करते थे। चौथे, कुछ बेपारी व्यक्तिगत या सामुदायिक रूप से अपने व्यवसाय की दृष्टि से खादीकाम करते थे। उनमे से कुछ को चरखा सघ ने कर्ज दिया था। उनकी अधिकाश पूंजी उनकी खुद की ही थी। सघ उनकी खादी बिकवा देने मे मदद करता। ऐसा काम अधिकतर तमिलनाड और आन्ध्र मे था। उस समय देशभर मे जितनी प्रमाणित खादी बनती थी, उसमे करीब ४०% माल ऐसे बेपारियो द्वारा तैयार होता था, पर वे खुद अपने माल का करीब एक दशाश हिस्सा ही बेच पाते थे। बाकी नब्बे टका माल चरखा सघ या सार्वजनिक सस्थाओ द्वारा बिकता था। ये बेपारी लोग वही काम करते थे, जहाँ कताई की परपरा चालू थी और सूत अधिक मात्रा मे मिलता। अर्थात् ऐसी उत्पत्ति आसान थी, पर बिक्री तो त्यागी सेवको द्वारा ही हो सकती थी।

उत्पत्ति-बिक्री

गांधीजी के दौरे के कारण खादी-बिक्री काफी बढ़ी, उत्पत्ति उतनी नहीं हो सकी। बंगाल और पंजाब में जातीय दंगों के कारण और गुजरात में बाढ़ के कारण उत्पत्ति कम हुई। कताई-बुनाई में सुधार करने में लगने से खादी-प्रतिष्ठान की उत्पत्ति कम हुई। बंगाल का सारा माल बंगाल में ही बिक जाता था। तमिलनाड में खादी की उत्पत्ति साढ़े दस लाख तक बढ़ जाने पर भी ६०% माल की बिक्री वहीं हो गयी। महाराष्ट्र में खादी-बिक्री बढ़ी। उनको बहुत-सा माल दूसरे प्रान्तों से मंगाना पड़ता था। फेरी से खादी बेचने का काम बढ़ा। फेरी की नयी योजना बनायी गयी, जिसमें देहात की बिक्री पर १५% और शहर की बिक्री पर ६½% कमीशन रखा गया।

राहत की मात्रा

इस वर्ष कितने कामगारों को खादीकाम दिया जाता है, इसका ठीक रजिस्टर रखने की कोशिश की गयी। प्रान्तों में खादीकाम की पद्धतियाँ भिन्न-भिन्न थीं। पंजाब, राजपूताना, युक्तप्रान्त और बंगाल के कुछ हिस्सों में तथा अन्यत्र भी हाथकता सूत बाजार में बिकने के लिए आता था। कुछ क्षेत्र ऐसे भी थे, जहाँ बुनकर लोग तैयार खादी बाजार में बेचने को लाते थे। ऐसी हालत में इस काम में लगे हुए सब कामगारों के आँकड़े निकालना मुश्किल था। चरखे कितने चलते हैं, इसकी गिनती करने की भी कोशिश की गयी। पंजाब में चरखे तो बहुत चलते थे, पर उनका बहुत सा सूत कातनेवाले अपने लिए कपड़ा बनाने में लगाते थे। चरखा संघ थोड़ा सा ही खरीद पाता था। धुनियों की गिनती लगाना भी मुश्किल था, क्योंकि कुछ धुनाई पेशेवरों द्वारा होती थी और कहीं-कहीं कत्तिनें खुद कर लेती थीं। इसलिए कुछ कामगारों की ठीक गिनती नहीं हो पायी। इस वर्ष में चरखा संघ के दफ्तर में कत्तिनों की ८३०००, धुनकरों की ५००० और बुनकरों की ६२७ संख्या दर्ज है।

तिरुचनगोड के गाधी-आश्रम मे कामगरो की आमदनी की जॉच की गयी, उसका हिसाब यह निकला कि सौ रुपये की खादी-कीमत मे से रु० ५४) मजदूरी के बॅटते हैं, रु० ६) कार्यकर्ताओ के वेतन के, रु० ३) दफ्तर, नाल-ढुलाई आदि खर्च मे और रु० ३७) रूई आदि कच्चे माल के लगते हैं। देश-भरमे खादी-उत्पत्ति-केन्द्र १७७ थे। इनमे खुद चरखा सघ के ६२, चरखा सघ द्वारा प्रमाणित ७४ और ४१ ऐसे थे, जिनको चरखा सघ आर्थिक मदद देता था। बिक्री की दूकाने २०४ थी, जिनमे चरखा सघ की ११५, स्वतन्त्र ४५ और चरखा सघ की सहायताप्राप्त ४४ थीं। २८३१ गॉवो मे काम चलता था। कुल कार्यकर्ता ७४१ थे, जिनमे ४३५ चरखा सघ के और ३१३ अन्य सस्थाओ के। प्रमाणित वेपारियो के कार्यकर्ताओ की सख्या इन ऑकडो मे शामिल नही है।

माल मे सुधार

माल के गुण मे सुधार हो रहा था। इसके लिए श्री लक्ष्मीदास पुरुषोत्तम और श्री शकरलाल बैंकर ने बगाल, उत्कल, आन्ध्र, तमिलनाड, कर्नाटक, युक्तप्रान्त ओर राजस्थान का दौरा किया। उसमे कुशल धुनाई-कताई की प्रक्रियाएँ प्रत्यक्ष बतलायी जाती। स्वय-धुनाई का, कुशल-बुनाई का, अच्छी रूई का और ठीक बट देने का महत्त्व समझाया जाता। सूत की मजबूती और समानता की जॉच करना भी समझाया जाता। ऐसे प्रयत्नो की सफलता तो धीरे-धीरे ही होती है, पर इस प्रयत्न से सूत का सुधार करने की ओर ज्यादा ध्यान गया। कही ज्यादा नम्बर का सूत कतने लगा, महीन खादी की पैदाइश बढने लगी, बुनाई मे सुधार होने लगा। बुनावट कुछ घनी होने लगी। ग्राहको की रुचि का खयाल करके माल की किस्मो मे विभिन्नता आयी। खादी प्रतिष्ठान, सोदपुर ने अपना रग कारखाना शुरू किया। खादी के दाम भी कुछ घटे।

वस्त्र-स्वावलम्बन

वस्त्र-स्वावलम्बन का काम पूर्ववत् चलता रहा। बिजोलिया का काम सतोषजनक रहा। यह अन्दाज किया गया कि वहाँ के लोगो मे करीब

आधी संख्या के अंग पर खादी आयी। पंजाब के मांटगोमरी, खानेवाल और सरगोधा केन्द्रों में सूत के बदले खादी देने का काम शुरू हुआ। सालभर में इस प्रकार वहाँ करीब ६२ हजार वर्गगज खादी दी गयी।

साबरमती के खादी-विद्यालय का काम पूर्ववत् चलता रहा। उसमें ४३ नये विद्यार्थी दाखिल हुए। चरखा संघ ने एक खादी-सेवक-दल की योजना बनायी, जिसमें उम्मीदवारों की शिक्षा का समय दो वर्ष का मुकर्रर हुआ। पहले तीन महीने उम्मीदवारी के काम के और आखिरी नौ महीने किसी केन्द्र में प्रत्यक्ष कामकाज करने के लिए थे। इस दो वर्ष के शिक्षण-काल में विद्यार्थी को १२ रु० मासिक छात्रवृत्ति दी जाती। बाद में नौकरी शुरू होती, तब कम-से-कम ३० रु० मासिक वेतन और १० वर्षों तक चरखा संघ के काम में रखने का भरोसा दिया गया था। विज्ञान-विभाग चलता रहा और बढ़ता रहा।

स्थानिक स्वराज्य संस्थाओं और शालाओं में खादी

पिछले अध्यायों में म्युनिसिपल कमेटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों द्वारा खादीकाम में दिलचस्पी लेने की बात लिखी गयी है। पर बाद में पाया गया कि कहीं-कहीं सफलता नहीं मिली। कुछ कमेटियाँ अपने इस विषय के प्रस्ताव अमल में नहीं ला सकीं। चुंगी माफ करने के लिए प्रान्तीय सरकार की मंजूरी की जरूरत थी। वह कहीं-कहीं नहीं मिली। बिहार और मद्रास प्रान्त में सरकारी हुक्म खिलाफ जाने के कारण वहाँ की कमेटियाँ अपनी शालाओं में कताई दाखिल नहीं कर सकीं। कुछ कमेटियों ने अपने सिपाहियों को खादी की वर्दी देने का प्रस्ताव पास किया था, पर कहीं-कहीं वह बन्धनकारक न होकर केवल सिफारिशी था। विजय-वाडा, गुण्टूर, तिरुपति, बरहामपुर, लखनऊ, अहमदाबाद, मुजफ्फरपुर, बालासोर और सारन के डिस्ट्रिक्ट बोर्डों की शालाओं में कताई शुरू करने की कोशिश की गयी। अलाहाबाद और बनारस म्युनिसिपल कमेटियों की शालाओं में दो वर्ष कताई चलकर बन्द हो गयी। राष्ट्रीय शालाओं में कताई शुरू रही। गुजरात खादी प्रचारक मंडल, गुजरात महा र

विहार विद्यापीठ, आरानबाग खादी कार्यालय आदि सस्थाएँ अपनी पाठशालाओ में खादी-काम पर जोर देती रही। अहमदाबाद के लेबर यूनियन की शालाओ मे भी कताई शुरू हुई।

ता० १ अक्तूबर १९२७ से ता० ३० सितम्बर १९२८ तक

श्री मगनलालभाई गाधी

इस वर्ष खादीकाम की प्रगति मे रुकावट करनेवाली एक दुर्घटना यह हुई कि श्री मगनलालभाई गाधी का स्वर्गवास हो गया। वे खादी-विज्ञान की ओर विशेष ध्यान देकर उसका कुछ शास्त्र बना सके थे। चरखा सघ का विज्ञान-विभाग वे ही चलाते थे और खादी विद्यालय का भार भी उन्हीं पर था। उनका खादीविषयक ज्ञान खादी के सुधार मे बहुत काम आया। कुछ वर्षो के बाद वर्धा की मगनवाडी उनके स्मारक के रूप मे खडी हुई।

इस वर्ष भी गाधीजी का तथा चरखा सघ की कार्यकारिणी के सदस्यो का दौरा हुआ। गाधीजी के सिलोन के दौरे मे करीब एक लाख की रकम इकट्ठी हुई। सघ के अन्य काम पूर्ववत् चलते रहे, कुछ बढे भी। माल मे कुछ सुधार हुआ। रॅगाई-छपाई का काम बढा। पिछले कुछ वर्षो मे खादी की कीमते बराबर घटती रही, पर इस वर्ष रूई के भाव बढने के कारण मुश्किल से पुरानी घटी हुई कीमत टिक सकी। अब खानगी प्रमाणित वेपारी मुनाफे की गुजाइश न रहने के कारण खादीकाम से हटने लगे। खादी की घटी हुई दरे कायम रखने का एक उपाय यह था कि सघ के तत्र का खर्च कम किया जाय, दूसरे, सूत मजबूत हो, तो बुनाई के दाम कम लगे। दोनो दृष्टियो से कुछ प्रयत्न तो हुआ, पर ऐसी बातो मे सफलता मिलने मे काफी समय लगता है।

वस्त्र स्वावलबन

वस्त्र-स्वावलम्बन के बारे मे बिजोलिया का काम अच्छा रहा। वहाँ

के किसान हाथकताई को अधिकाधिक अपनाने लगे। पेशेवर जुलाहों के अतिरिक्त अन्य कुछ परिवारों में बुनाई दाखिल हुई। कुछ परिवारों में कपड़ा रँगा छपा जाने लगा। उतने क्षेत्र में करीब १००० चरखे चलने लगे। करीब ५५०० व्यक्तियों ने अपने घर में कते सूत का कपड़ा बनवाया। ऐसा कपड़ा ६६००० वर्गगज बना। मजदूरी के लिए काते हुए सूत का करीब २०००० वर्गगज बना। जयपुर रियासत के गोगल गाँव में भी वस्त्र-स्वावलम्बन का काम शुरू हुआ। गुजरात की रानीपरज जनता में बारडोली, महुआ और व्यारा तालुकों में वस्त्र-स्वावलम्बन की प्रगति हुई। इस वर्ष वहाँ ७०१ परिवारों में कते हुए सूत का १४०७१ वर्गगज कपड़ा तैयार हुआ। पाया गया कि आन्ध्र के गुन्डरेड्डीपाल्यम् गाँव के आसपास बहुत-से लोग परम्परा से अपने सूत की खादी का इस्तेमाल करते थे। ऐसे कुछ क्षेत्र तिरुपुर के आसपास और हैदराबाद रियासत में भी थे।

व्यावहारिक कुशलता

अब खादीकाम को आगे बढ़ाने के लिए इसकी अधिक आवश्यकता महसूस होने लगी कि तंत्र का सारा काम कुशलता से चले। संघ ने यह नीति अख्तियार की कि जो केन्द्र, उत्पत्ति के हों या बिक्री के, स्वाश्रयी अर्थात् बिना नुकसान उठाये चलाये जा सकते हैं, वे ही चालू रहें, वैसे ही बजट मंजूर किये जायँ। तथापि जहाँ खादीकाम नये से शुरू करना था, वहाँ तो कुछ वर्षों तक हानि सहन करनी ही पड़ती। कुछ केन्द्र प्रचार की दृष्टि से भी चालू रखने की जरूरत थी। कहीं-कहीं पहले से इसका हिसाब ही नहीं लग सकता था कि साल के अन्त तक कितना काम हो सकेगा। इस प्रकार कुछ-न-कुछ काम तो नुकसान में चलता ही। ऑडिटर और निरीक्षक मुकर्रर किये गये, जो प्रान्तों में जाकर जाँच करके वहाँ की व्यवस्था की रिपोर्ट देते। सब शाखाओं से मासिक कच्चे आँकड़े (Trial Balance) और वार्षिक पक्के आँकड़े (Balance sheet) नियत फार्म में और समय पर प्राप्त करने की योजना बनायी

गयी। बिक्री काम मे मार्गदर्शन करने के लिए श्री जेराजाणीजी ने युक्तप्रान्त और बिहार मे दौरा किया। ऐसा कुछ पाया गया कि खादी-बिक्री बढाने के मोह मे कई जगह उधारी बढने लगी, जिसके कारण कुछ पैसा रुकने और डूबने लगा। चरखा सघ के पास पूँजी कम तो थी ही, उसमे भी कुछ ऐसे रुकने लगी। इसलिए चरखा सघ ने निर्णय किया कि थोक या फुटकर कोई भी बिक्री उधार से न की जाय। फेरीवालो को भी माल नगदी से ही देना तय हुआ। इस निर्णय का अमल शाखाओ मे कमी-बेशी परिमाण मे होने लगा।

मैसूर राज्य ने अपनी ओर से बदनवाल मे जो खादीकाम शुरू किया था, वह अच्छी तरह चल निकला। वहाँ दूसरे क्षेत्रो मे भी खादीकाम करना तय हुआ। ग्वालियर राज्य मे उज्जैन और सुजानपुर जिलो की पाठशालाओ मे कताई शुरू हुई।

ता० १ अक्तूबर १९२८ से ३० सितम्बर १९२९ तक

इस वर्ष चरखा सघ के विधान मे कुछ महत्त्व के बदल हुए, जिनका जिक्र अन्यत्र किया गया है। देश के राजनीतिक वातावरण मे तेजी आयी। राजनीतिक सुधार क्या हो, इसका विचार करने के लिए साइमन कमीशन आया। भारत के सब दलो ने उससे असहयोग किया। काग्रेस ने विदेशी कपडे के बहिष्कार के लिए एक कमेटी मुकर्रर की। उसने उस विषय मे जोरो से प्रचार किया। राजनीतिक तेजी के साथ खादी की माँग बढी। कुछ उत्पत्ति भी बढी। गाधीजी ने सिंध, बर्मा, आध्र और युक्तप्रान्त के अल्मोडा जिले मे दौरा किया। सब मिलाकर करीब ४। लाख रुपये चन्दा हुआ।

माल मे सुधार

सूत के सुधार के बारे मे इस बात की ओर विशेष ध्यान दिया गया कि कातने के लिए रुई अच्छी दी जाय। बगाल मे खादी-प्रतिष्ठान और

अभयाश्रम ने बाहर से अच्छी रुई मँगाकर कत्तिनों को दी, जिससे सूत का नम्बर, मजबूती और समानता कुछ सुधरी। तमिलनाड शाखा ने कत्तिनों को अच्छी कपास देना शुरू किया। कई प्रान्तों ने बुनाई सुधारने की कोशिश की। कई जगह रुई की किस्म के हिसाब से मोटा सूत काता जाता था, जिससे बिना कारण आर्थिक हानि होती थी। इसके सुधार के लिए चरखों में दुरुस्ती करने की ओर विशेष ध्यान गया। कहीं-कहीं तकुवे बारीक किये गये और माड़ी पतली की गयी। बुनाई ज्यादा घनी करने की ओर ध्यान दिया गया। कुछ प्रान्तों ने जुलाहों का सब की ओर से कमियाँ दी गयीं। धुलाई, रंगाई और छपाई में तरक्की हुई। पिछले कुछ वर्ष चरखा संघ का खादीकाम नुकसानी में चलता रहा। इस वर्ष उत्पत्ति और बिक्री बढ़ने के कारण कुछ प्रान्तों में नुकसान नहीं रहा। खर्च की सामान्य नीति यह थी कि उत्पत्ति और बिक्री में रुपये पीछे एक-एक आने से अधिक खर्च न हो। पर कई जगह यह परिमाण निभता नहीं था।

वस्त्र-स्वावलम्बन

वस्त्र-स्वावलम्बन का काम पूर्ववत् चलता रहा। बिजोलिया का काम पूरा हो गया, ऐसा माना गया और श्री जेठालालभाई अपने साथियों के साथ मध्यप्रान्त के सागर जिले के अनन्तपुर गाँव में वस्त्र-स्वावलम्बन का प्रचार करने के लिए गये। बिजोलिया क्षेत्र में करीब ६५०० लोग अपने सूत से अपना कपड़ा बनवाने लगे। इस वर्ष वहाँ ९८५०० वर्गगज कपड़ा बना। रींगस में भी काम बढ़ा, वहाँ करीब १००० किसानों को बुनाई सिखायी गयी। यह पता चला कि वहाँ करीब ५०० व्यक्ति अपना पूरा और ६०० व्यक्ति अधूरा कपड़ा बनवाने लगे। गुजरात में भी काम बढ़ा, बंगाल में भी चलता रहा। महाराष्ट्र ने पश्चिम खानदेश जिले के मुकटी गाँव में, पूर्व खानदेश जिले के हातेड गाँव में और सावंतवाडी राज्य में कामलेर गाँव में वस्त्र-स्वावलम्बन का काम शुरू हुआ।

साबरमती के खादी विद्यालय मे इस साल कुल मिलाकर १०६ विद्यार्थी शिक्षा पाते रहे।

मैसूर राज्य का खादीकाम बढा। बडौदा राज्य ने वहाँ कुछ खादी-केन्द्र चलाने के लिए ५००० रुपया पूँजी और १२०० रुपये चालू खर्च के लिए मजूर किये।

ता० १ अक्तूबर १९२९ से ता० ३० सितंबर १९३० तक

यह वर्ष अन्य बातो के साथ खादीकाम के लिए भी सस्मरणीय रहा। इस वर्ष मे स्वराज्य प्राप्त करने के लिए सविनय कानूनभग के अन्तर्गत गाधीजी की नमक-सत्याग्रह की प्रख्यात दाण्डी-यात्रा हुई। स्वराज्य की लडाई की दुदुभि जोरो से बजी। दाण्डी-यात्रा शुरू होते-न-होते खादी-भाण्डारो मे पडी पुरानी खादी भी चिन्धी-चिन्धी बिक गयी। भाण्डारों मे खादी का दर्शन होना दुर्लभ हो गया। वहाँ प्रायः कातने के औजार ही नजर आते। उत्पत्ति-केन्द्रो से थोडा-सा माल आते-आते ही उठ जाता। इसलिए हिदायत दी गयी कि खादी सूत के बदले ही बेची जाय। कही-कही इसका अमल भी हुआ। उत्पत्ति बढाने की खूब कोशिश की गयी। पर उत्पत्ति का एकाएक बढना या सूत कातकर खादी के बदले मे देना आसान नही था। बिक्री गतवर्ष को अपेक्षा दुगुनी हुई। उत्पत्ति फीसदी ७५ टका बढी। खादी की माँग बहुत बढ जाने के कारण खादीकाम मे लाभ की गुजाइश हुई और बेपारी लोग इस काम मे फिर से आने लगे। खादी-उत्पत्ति का काम ही ऐसा है कि वह एकाएक बढ नहीं सकता। पर उस समय तो कार्यकर्ता कम होने के कारण भी उत्पत्ति बढाने मे रुकावट हुई। कुछ कार्यकर्ता सरकार द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये और कुछ अपनी खुशी से राजनीतिक आन्दोलन मे कूद पडे।

खादी और मिले

उस आन्दोलन मे कपडे की मिलो का एक विशेष सम्बन्ध आया।

विदेशी कपडे के बहिष्कार पर जोर दिया गया। कपडे की तंगी केवल खादी से मिट नही सकती थी, इसलिए कांग्रेसवालों का मिलो की तरफ ध्यान गया। देश की मिलो मे दो तरह की मिले थीं। एक वे कि जिनका सचालन अंग्रेजो के हाथो मे था और जिनमे पूँजी भी प्राय. विदेशी ही लगी थी। दूसरी वे कि जिन्हे हम स्वदेशी समझ सकते थे। कुछ नेताओं ने मिलो का पृथक्करण करके स्वदेशी मानी जानेवाली और न मानी जानेवाली मिलों की फेहरिस्तें बनायीं। जनता से अपील की गयी कि स्वदेशी मिलो के ही कपडे का इस्तेमाल किया जाय। फलस्वरूप उन स्वदेशी मिलो के कपडे की मॉग बहुत बढी और उनकी खूब बन आयी उन्होने उस मौके से मुनाफा कमाने मे कोई कसर नही रखी। मिलो का काम खादी के खिलाफ न जाय, इसलिए जेल जाने के पहले गाधीजी ने नीचे लिखी बात प्रधान मिलमालिको के सामने रखी थी, जो उन्होंने बाद मे पण्डित मोतीलालजी नेहरू के सामने कबूल कर ली थी :

(१) मिलो को अपने कपडे पर खादी से भिन्नता बतलाने के लिए कुछ निशानी लगानी चाहिए। मिल के कपडे पर खादी नाम की छाप और लेबिल न लगे।

(२) मिले ऐसा कपडा न निकाले, जो खादी जैसा दिखे या खादी से मुकाबला करे, इसलिए वे कुछ किस्मो को छोडकर १८ नम्बर के ऊपर के सूत का ही कपडा बुने।

ऊपर लिखी बातो पर कुछ समय थोडा-सा अमल हुआ। धीरे-धीरे वे सब छूट गयी। मिलो के बारे मे ऊपर की व्यवस्था सोचते हुए भी नेता लोग जोर तो खादी पर ही देते रहे। पर, जब स्वदेशी के नाम पर कुछ मिलो का कपडा इस्तेमाल करने की सिफारिश हुई, तो जनता मे उनके पक्ष मे अनुकूल भावना खडी हो गयी। इस दशा मे लोगो का दिल अपनी सुविधा की बात कर लेने की ओर झुका। अर्थात् खादी के अधूरे भक्त मानने लगे कि स्वदेशी मिल के कपडे का व्यवहार करने मे भी देशसेवा तो है ही, फिर महँगी खादी क्यो पहने ? इस प्रकार नेताओं द्वारा

स्वदेशी मिलो का नाम लेने से ही खादी को ठेस पहुँची। यह बुरा परिणाम लबे अर्से तक बना रहा। सिद्धान्त मे ढिलाई करने से कैसा अनिष्ट परिणाम होता है, इसका यह खासा उदाहरण है। स्मरण रहे कि सन् १९२१ मे जब स्वदेशी आन्दोलन जोरो से चला था, तब भी मिलवालो का व्यवहार देश के अनुकूल नही था। स्वदेशी छाप लगाकर विदेशी कपडा बडी तादाद मे चलाया गया। उस समय काग्रेस ने मिलवालो से कपडे के दाम सस्ते रखने की अपील की थी, पर दाम बहुत बढ गया। इस बार भी मिलो ने खादी जैसा कपडा बहुत निकाला और वह खादी के नाम से बिका।

बाजार मे अशुद्ध खादी भी बहुत आयी। बेपारी लोग सूत-कताई के केन्द्रो मे पहुँचे और जैसा मिला, वैसा सूत ज्यादा दामो से लेकर भी मुनाफा करने लगे। सूत-कताई बढी, लेकिन सूत खराब और मोटा होने लगा। शुद्ध खादी भी खराब बनने लगी। कुछ वर्षो से जो सूत-सुधार का काम चल रहा था, वह रुक गया। प्रमाणित बेपारी भी खादी की माँग के कारण सूत-कताई के एक ही क्षेत्र मे पहुँचकर आपस मे स्पर्धा करने लगे। इसलिए चरखा सघ को प्रमाणित बेपारियो के काम के क्षेत्र बाँट देने पडे, ताकि कोई दूसरे के क्षेत्र मे खादीकाम के लिए न जाय। इस व्यवस्था का अमल कुछ प्रान्तो मे हुआ।

इस वर्ष मे माल की जाति नहीं सुधर पायी, तथापि रँगाई और छपाई मे काफी तरक्की हुई। पजाब, राजस्थान, आध्र और युक्तप्रान्त मे छपाई का काम बहुत बढिया होने लगा। बम्बई मे श्री हरिलाल मनमोहन-दास ने अपना छपाई और रँगाई का कारखाना शुरू किया, जिसने आगे चलकर खादी की सुन्दरता बढाने मे बहुत मदद की।

इस वर्ष रूई के भाव काफी गिरे, उत्पत्ति-बिक्री भी बढी। इसलिए खादी के बिक्री भाव घटाना सभव हो गया। वे पिछले वर्ष की अपेक्षा रुपये पीछे करीब =) घट सके। यह खयाल मे रहे कि उस समय खादी की बिक्री मे स्पर्धा रहती थी। खादी बाजार मे बिक सके, ऐसे दामो मे ही बेचनी पडती थी।

कताई में बाढ़

राजनीतिक तेजी के साथ आम जनता का ध्यान कताई की तरफ विशेषतया गया। ज्यादा लोग कातने लगे। कताई-बुनाई सिखाने का और औजारों का अधिक प्रबंध हुआ। औजार बनाने में भी समय तो लगता ही। तकली बनाना आसान था, इसलिए जहाँ तहाँ तकली चलने लगी। सभाओं में बड़ी तादाद में लोग तकली कातते हुए पाये जाते। कहीं-कहीं ऐसे जुलूस भी निकलते कि जिनमें चलते-चलते तकली कातने-वालों के जत्थे रहते थे। कताई की बाढ़ तो आयी, पर वह बहुत समय तक टिक न सकी। लोगों का राजनीतिक उत्साह मन्द होने के साथ कताई भी कम होने लगी। कताई का कदम पीछे पड़ने का एक कारण यह भी था कि सूत बुनने का ठीक प्रबन्ध नहीं हो सका। सूत कमजोर था और आसपास में बुनकर मिलते भी न थे। सिखाकर नये बुनकर तैयार करना या कहीं दूर से लाकर बसाना मुश्किल था। फिर भी गुजरात में पूनी बनाने और खादी बुनने के लिए विशेष यत्न किया गया।

साबरमती के खादी विद्यालय से २०४ विद्यार्थियों ने लाभ उठाया। इसके अलावा बारडोली के स्वराज्य-आश्रम में, वर्धा के सत्याग्रह-आश्रम में, सोदपुर के खादी-प्रतिष्ठान में खादी की प्रक्रियाएँ सिखाने का प्रबन्ध रहा। कुछ राष्ट्रीय शालाओं में भी सिखाने की व्यवस्था थी, जैसे कि अहमदाबाद के गुजरात विद्यापीठ में, बनारस के काशी विद्यापीठ में, पटना के बिहार विद्यापीठ में और दिल्ली के जामिया मिल्लिया में। ये राष्ट्रीय शिक्षण-संस्थाएँ सन् १९२० के असहयोग आन्दोलन में जनमी थीं और राष्ट्रीय शिक्षा का काम कर रही थीं।

देशी रियासतों में खादीकाम पूर्ववत् चलता रहा। इस वर्ष विशेष बात यह रही कि कुछ सहकारी समितियों ने खादीकाम करना शुरू किया। कर्नाटक के गोकाक तालुके में बम्बई प्रान्तीय कोआपरेटिव इन्स्टिट्यूट की मदद से चार खादी-केन्द्र शुरू हुए। मैसूर कोआपरेटिव सोसाइटी ने एक खादी बिक्री-भण्डार शुरू किया।

कांग्रेस प्रदर्शनी

अनेक छोटी-मोटी प्रदर्शनियो के अलावा काग्रेस के समय होनेवाली वडी प्रदर्शनी मे अन्य चीजो के साथ खादी को भी स्थान दिया जाता था। पर इस वर्ष गाधीजी की सलाह से लाहौर काग्रेस स्वागत समिति ने निश्चय किया कि वहाँ कपडे मे केवल खादी को ही स्थान दिया जाय। यह बात आगे भी चालू रही। बाद मे हरएक प्रदर्शनी मे खादी के सजाये हुए भवन के अलावा शुद्ध खादी वेचने की अनेक दूकाने रहती और खादी की सब प्रक्रियाओ का प्रत्यक्ष प्रदर्शन रहता। खादीकाम के चित्र, नक्शे और आलेख भी रहते।

इन दिनो कामगारो की सामाजिक हालत सुधारने की ओर ध्यान जाने लगा। कही-कही मुफ्त औषधि देने का प्रबन्ध हुआ। कही हरिजन बालको के लिए पाठशालाएँ चलायी गयी। हरिजनो मे मुर्दा मास न खाने का और दारू न पीने का प्रचार किया गया। कही वाचनालय खोले गये। मैजिक लालटेन से सामाजिक हित की बाते समझायी गयी। इस प्रकार खादी सामाजिक भलाई का एक अग बनने लगी।

ता० १ अक्तूबर १९३० से ३१ दिसंबर १९३१ तक

इसके पहले चरखा-सघ के हिसाब का वर्ष अक्तूबर से सितम्बर तक का था। अब वह काग्रेस मे हिसाब भेजने की सुविधा की दृष्टि से जनवरी से दिसम्बर का कर दिया गया। इसलिए इस वर्ष का हिसाब १५ महीनो का हुआ। पिछले वर्ष मे खादी की उत्पत्ति और बिक्री बढी, लेकिन सन् १९३० से आर्थिक मदी शुरू हुई। सब चीजो के भाव गिरे, लोगो के पास नगदी पैसा कम हो गया। खरीदने की शक्ति घटी, खादी की बिक्री भी घटी। राजनीतिक तेजी मे बढी हुई उत्पत्ति की खादी पडी रही। उसकी निकासी मुश्किल हो गयी। बिक्री कम होने के कारण उत्पत्ति पर रोक लगाना आवश्यक हो गया। फिर भी विशेष प्रयत्न करके खादी-काम की गिरावट ज्यादा नहीं होने दी।

सन् १९३२

इस वर्ष भी आर्थिक मंदी रही। खादी-बिक्री कम हुई, उत्पत्ति भी घटानी पडी। कांग्रेस और सरकार के बीच फिर से लड़ाई छिड़ी। कुछ खादी-कार्यकर्ता सविनय कानून भंग में शामिल हुए, कइयों को सरकार ने गिरफ्तार कर लिया, कई खादी-केन्द्रों की खानातलाशी ली गयी कइयों पर पुलिस की निगरानी रही। कई खादी-केन्द्र सरकार ने अपने कब्जे में ले लिये, जिससे वहाँ काम ही बन्द हो गया। कहीं-कहीं व्यवस्थापक के अथवा मुख्य कार्यकर्ताओं के गिरफ्तार होने के कारण केन्द्र बन्द हो गये। इसके अलावा पिछले दो वर्षों में जो स्वदेशी मिल का आन्दोलन चला था, उसके फलस्वरूप लोगों का खादी पर जोर कम हुआ। कई लोगों ने मान लिया कि कांग्रेस स्वदेशी मिल के कपड़े का इस्तेमाल पसन्द करती है। खादी की माँग कम होने पर बहुत-से प्रमाणित खादी बेपारियों ने खादीकाम छोड दिया या बहुत कुछ कम कर डाला। चरखा संघ को तो गरीब-बेकारों की मदद के लिए वह किसी प्रकार चलाना ही था। तथापि बिक्री कम होने के कारण वह घटाना तो पडा ही। खादी-आन्दोलन शुरू होने के बाद यह पहला ही समय था कि जब चरखा-संघ का खादीकाम पिछले वर्ष की अपेक्षा फीसदी २०-२५ टका घटा। इस वर्ष में भी माल सुधार का प्रयत्न चालू रहा। खादी की कीमतें घटीं, वस्त्र स्वावलम्बन का काम पूर्ववत् चला और कहीं-कहीं बढा भी।

सन् १९३३

चरखा संघ ने अपनी कार्य-पद्धति की जो नीति अपनायी थी, उसका एक काल खण्ड इस वर्ष में पूरा होकर इसके बाद सन् १९३४ से कुछ विशेष तबदीली शुरू होती है। अतः अब तक कौन-सा काम किस दर्जे तक पहुँचा था, उसकी कुछ तफसील यहाँ दे देना उचित होगा। खादी-काम के मुख्य पहलू दो रहे: एक व्यापारिक खादी, दूसरा वस्त्र-

स्वावलम्बन। व्यापारिक खादी का काम वेग से बढा। इसका हेतु देहात मे गरीब जनता को राहत देने का रहा। काम का स्वरूप यह रहा कि मजदूरी देकर सूत कतवाना और तैयार माल बेचना। फुरसत के समय का उपयोग करके कताई द्वारा गरीबो को राहत मिल सकती है, यह दावा साबित हुआ। जहाँ कताई की परपरा चालू थी, वहाँ अकाल के समय मे भी वह बडे काम की चीज पायी गयी। खादी की तादाद बढी, वैसे ही उसके गुण मे भी बडा भारी सुधार हुआ। सन् १९२१ साल के मुकाबले मे इन दस वर्षो मे खराब मोटी खादी की जगह इतनी अच्छी खादी बनने लगी कि आरभ मे उसकी कल्पना भी नहीं होती। सूत का नम्बर बढा, साथ मे उसकी समानता और मजबूती भी। बुनाई अच्छी, घनी और सुन्दर होने लगी। बढिया रँगे और छपे कपडे भिन्न भिन्न रुचि को सन्तोष देने लायक बनने लगे। खादी चल निकली और कई स्थानो मे बिक्री-भडार और खादी बेचने की एजेसियाँ खडी हो गयीं और वाजिब दामो मे सुविधा से माल मिलने लगा। कुछ औजारो मे सुधार हुआ और धन्धे की दृष्टि से व्यावसायिक कुशलता से काम होने लगा। आर्थिक मदी के कारण इन दो-तीन वर्षों मे कुछ उत्पत्ति-बिक्री घटी। तथापि इस वर्ष मे सघ के आश्रय मे एक करोड वर्गगज खादी तैयार हो सकी। अखिल-भारत खादी मडल के समय से उत्पत्ति के बारे मे यह नीति रही कि जहाँ खादी की पैदाइश की सुविधा हो, वहाँ वह अधिक-से-अधिक पैमाने पर बनायी जाय और प्रान्त की आवश्यकता पूरी करके जो बचे, वह दूसरे सूबो मे भेजी जाय। करीब ७५ फीसदी माल उत्पत्ति के ही सूबो मे बिकता रहा। गुजरात मे और बम्बई शहर मे अन्य प्रान्तो से माल आता रहा। गुजरात मे सामान्यतः मजदूरी की दरे ऊँची रहने के कारण वहाँ अन्य प्रान्तो जैसी सस्ती खादी नहीं बन सकती थी। वहाँ वस्त्र-स्वावलम्बन का काम अधिक बढा। आसाम मे उत्पत्ति के लायक क्षेत्र था, पर कार्यकर्ताओ के अभाव मे वहाँ कार्य का विकास नहीं हो पाया। पजाब और राजस्थान मे स्थानीय बिक्री कम रही। सयुक्तप्रात,

बिहार और बंगाल में तादाद और गुण दोनों दृष्टियों से काफी काम बढ़ा। वहाँ का बहुतेरा माल अपने-अपने सूबों में ही बिकता रहा। महाराष्ट्र में जहाँ सन् १९२७ तक उत्पत्ति प्राय: थी ही नहीं और बिक्री भी कम थी, अब काफी काम बढ़ गया और काफी माल बनने लगा। कर्नाटक में उत्पत्ति की गुंजाइश थी, पर प्रांत में ही उसकी पूरी माँग न होने के कारण वहाँ का काम रुका रहा। आन्ध्र में मोटे माल से लेकर महीन-से-महीन तक खादी बनती रही। वहाँ उत्पत्ति के लिए बहुत अवकाश था, पर स्थानीय खपत बढ़ाने की बहुत जरूरत थी। तमिलनाड उत्पत्ति और बिक्री दोनों में पहले नंबर में रहा।

इस काल में खादी-उत्पत्ति का पैमाना बढ़ाने, उसका जाति गुण सुधारने तथा साथ ही व्यावसायिक दृष्टि से माल सस्ता करते रहने पर काफी जोर दिया जाता रहा। आरंभ में जिस खराब माल की कीमत एक रुपया फी वर्गगज थी, अब उतने ही अच्छे माल की कीमत साढ़े चार आना तक आ पहुँची।

कामगारों में वस्त्र-स्वावलंबन

इस समय कामगारों में भी वस्त्र स्वावलम्बन का काम बढ़ाने की ओर ध्यान रहा। शहरों में खादी-बिक्री पर जोर दिया जाता था, उसमें हेतु था, देहात के गरीबों को राहत देने के साथ-साथ शहर के उदाहरण से देहात में भी खादी के इस्तेमाल में दिलचस्पी पैदा करना। जो कामगार कताई आदि में लगे थे, उनके अंग पर भी खादी लाने की कोशिश हुई। बुनकरों में कई खादी का इस्तेमाल करने लगे, पर कत्तिनों में वैसा नहीं हो सका। भय था कि अगर उन पर दबाव डाला जाता, तो शायद उनके कातने में ही धक्का पहुँचता। हर सूबे में इस वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से क्या कोशिश रही, इसकी तफसील नीचे मुताबिक है :

आन्ध्र-शाखा के कुछ केन्द्रों में वस्त्र-स्वावलम्बन का काम परंपरा से चलता था। विशेष कार्यकर्ता मुकर्रर कर सब उत्पत्ति-केन्द्रों में स्थानिक

बिक्री बढ़ाने के लिए संगठन बनाये गये। प्रेतीगुड्डा, रेपल्ले और अमृतलूर में मजदूरी का कुछ अंश खादी के रूप में दिया जाता रहा। बिहार में सब उत्पत्ति-केन्द्रों में स्थानिक बिक्री के लिए खादी रखी जाती थी। वहाँ बुनकरों में करीब ७५ फी सदी अंशत: खादी पहनने लगे। कत्तिनों में कुछ मोटा सूत कातनेवाली अपने सूत की खादी पहनती थी, पर बारीक सूत कातनेवाली नहीं पहनती थीं। बंगाल शाखा के सब बुनकर खादी पहनते थे। कर्नाटक में कामगारों में खादी का प्रचार नहीं होने पाया। उत्पत्ति-केन्द्रों में लागत दाम पर खादी बेचने का प्रबन्ध था। कश्मीर के कामगार ऊनी कपड़े के बारे में परम्परा से वस्त्र-स्वावलम्बी रहे। महाराष्ट्र के मध्यप्रान्त और हैदराबाद के केन्द्रों में कत्तिनें और बुनकर अपने कपड़े की करीब आधी जरूरत खादी से पूरी करते थे। पंजाब में आदमपुर, धुरियल और झण्डियाला केन्द्रों में करीब दो-तिहाई कत्तिनें अपने ही सूत की खादी पहनती थीं। बुनकरों में करीब एक-तिहाई पूरे तौर से खादी पहनते थे और बाकी आंशिक रूप से। राजस्थानों में प्राय: सभी बुनकर खादी पहनते थे और देहातों में अन्य लोग भी खादी का इस्तेमाल करते थे। तमिलनाड में शाखा के बहुतेरे बुनकर आदतन खादी पहनते थे, लेकिन कत्तिनें बहुत थोड़ी। युक्तप्रान्त में भी यही दशा थी। उत्कल में बोलगढ केन्द्र की करीब १००० कत्तिनों में ८५ फी सदी काफी तादाद में खादी पहनती थीं। इन कत्तिनों को मजदूरी रुई के रूप में मिलती थी। बचे हुए सूत से वे अपना कपड़ा बनवा लेती थीं। उत्कल के अन्य केन्द्रों में भी कुछ कत्तिनें आंशिक रूप से खादी पहनती थीं।

व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन

ऊपर लिखा हुआ प्रयत्न व्यक्तिगत रूप से खादी पहनने का हुआ। इसके साथ-साथ यह भी प्रयत्न रहा कि कुछ चुने हुए क्षेत्रों में व्यापक रूप से वस्त्र-स्वावलम्बन का कार्य किया जाय, ताकि इन प्रयोगों से क्या नतीजा निकलता है, यह मालूम हो सके। श्रीलक्ष्मीदास पुरुषोत्तम की देखभाल में गुजरात में यह काम सबसे पहले शुरू हुआ। वह सन् १९२५ से शुरू

होकर बारडोली ताल्लुके के रानीपरज लोगों में कई वर्षों तक चलता रहा। यह सन् १९२९ में बारडोली स्वराज्य आश्रम के अन्तर्गत ११ आश्रमों और ७९ कार्यकर्ताओं द्वारा २९४ गाँवों में चलता था। उस वर्ष के अन्त में वहाँ ४३५६ चरखे चले और ४०९ रानीपरज परिवारों में उनका सारा कपडा उनके ही सूत से बना। यह कपडा ३६०१४ वर्गगज हुआ। पर बाद में वहाँ का कार्य राजनीतिक क्षोभ के कारण अस्त-व्यस्त हो गया। वस्त्र-स्वावलम्बन का सूत बुनने का प्रबन्ध साबरमती के उद्योग-मन्दिर में था। सन् १९३३ में करीब ३००० वर्गगज वस्त्र स्वावलम्बन की खादी बुनी गयी। पजाब में कोटआडू केन्द्र में सामान्यतः सूत के बदले में खादी दी जाती रही, सन् १९३३ में खादी के बदले में करीब ४००० रतल सूत मिला। सियालकोट खद्दर सभा द्वारा ११० परिवारों की १८८६ वर्गगज खादी बुनी गयी। गाधी खद्दर सेवा आश्रम, गुरुदासपुर द्वारा ३५२७ वर्गगज खादी बुनी गयी। आदमपुर के आसपास के क्षेत्रों में बहुत-से लोग अपना सूत अपने उपयोग के लिए बुनवाते रहे। ऐसा हिसाब लगा कि सालभर में हरएक कत्तिन करीब ८ वर्गगज कपडा तैयार करवा लेती है। बिजोलिया में श्री जेठालालभाई द्वारा जो वस्त्र-स्वावलम्बन का कार्य हुआ, उसका उल्लेख पहले आया है। ११००० व्यक्तियों में से करीब ६५०० ने अपने लिए कुल मिलाकर ९८५०० वर्ग-गज कपडा एक वर्ष में बनाया। इसी प्रकार राजस्थान में रीगस में भी तीन साल प्रयत्न हुआ। इस क्षेत्र में करीब ३५०० व्यक्तियों ने अपने लिए अशत या पूर्णत. कपडा बनवाया। वहाँ सन् १९३३ में १३३ देहातों में वस्त्र-स्वावलम्बन के १५७२ चरखे चले। बिजोलिया के बाद श्रीजेठालाल-भाई ने मध्यप्रान्त के अनन्तपुर गाँव में सन् १९३० में काम शुरू किया। वहाँ इसके पहले कताई का काम चालू नहीं था। सन् १९३३ में ५५०० व्यक्तियों में से फी सदी करीब ८० व्यक्ति कातना और ६० धुनना सीखे। २५००० वर्गगज कपडा तैयार हुआ। छोटे-मोटे प्रयोग श्री दास्तानेजी की देखभाल में पूर्व खानदेश खादी-सेवा-सघ द्वारा हातेड में और श्रीशकर-

राव टकार की देखभाल मे पश्चिम खानदेश जिला मण्डल द्वारा सवाई मुकुटी मे हुए। श्री गाधी आश्रम द्वारा मेरठ जिले के रागना नामक गाँव मे एक प्रयोग हुआ। बिहार मे गोमियाँ और उसके नजदीक के स्थानो मे सथाल लोगो ने तकली से सूत कातना शुरु किया। उस काम मे काफी विघ्न आये। अन्त मे यह रिपोर्ट मिली कि ३५ गाँवो मे अधिकाश लोग अपने सूत का कपडा बनवाने लगे थे। बिहार शाखा मे १७९ परिवारो का करीब ३००० वर्गगज कपडा बना। जयपुर राज्य के अन्तर्गत वनस्थली मे जीवन कुटीर द्वारा वस्त्र-स्वावलम्बन का काम हुआ। करीब १०० देहातो मे ३२६०० वर्गगज कपडा तैयार हुआ। काठियावाड मे श्री रामजीभाई हसराज के द्वारा काम हुआ। वह १११ गाँवो मे करीब २००० परिवारो मे फैला। ८४६५० वर्गगज खादी तैयार हुई।

ऊपर की तफसील से मालूम होगा कि चरखा सघ की प्रत्येक शाखा वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से कमी-वेशी प्रयत्न कर रही थी। काम का परिमाण थोडा रहा। काम बढाने मे बाधा यह थी कि कत्तिने गरीबी के कारण पैसे की जरूरत अधिक महसूस करती, वे मजदूरी के लिए सूत कातना ज्यादा पसन्द करती। इस काम के लिए बडी योग्यतावाले कार्यकर्ता चाहिए, जो कि खादी की सब प्रक्रियाओ मे कुशल हो और वर्षो तक श्रद्धा से इस काम मे लगे रहे। ऐसे कार्यकर्ताओ का मिलना आसान नहीं। इसके अलावा ऐसे कामो मे खर्च भी बहुत ज्यादा करना पडता है। मिल के कपडे के मुकाबले का भय तो हरदम बना ही है।

राहत की तादाद

सन् १९३३ मे काम की व्याप्ति नीचे लिखे मुताबिक रही : खादी के केन्द्र ५१७, जिनमे २३८ चरखा सघ के, ३८ सहायता प्राप्त और २४१ स्वतत्र थे। ५७८९ गाँवो मे काम होता था। कत्तिनो की सख्या २१४१०८ और बुनकरो की १२९३२ थी। कत्तिनो मे ६५३५५२ रुपये और बुनकरो मे ६४२६२७ रुपये मजदूरी बाँटी गयी।

चरखा सघ मे कुल मिलाकर ११९५ कार्यकर्ता थे, जिनका वेतन सालभर का २६१०५३ रुपये था।

माल मे सुधार

आन्ध्र में पहले किसी किस्म का स्टैंडर्ड नहीं था, अब तीन किस्म का माल बनाने की कोशिश होने लगी—बारीक माल, मध्यम माल और मोटा माल। माल के पोत मे सब दूर सुधार हुआ। शाखा ने बडी और मध्यम आकार की जाजिमे बनायीं और अच्छे खूबसूरत आसन भी। बिहार मे बुनाई गफ होने लगी। सूत का औसत नम्बर १२ तक पहुँचा। ४० से ६० नम्बर के सूत की साडियो का पोत सुधरा। उत्कल शाखा ने कुपडम किनारी के चद्दर, जामदारी साडियाँ, बुने हुए चित्र के पर्दे और कुछ शाखाओ ने नाना प्रकार के चेक और बटे कोटिंग का कपडा बनाना शुरू किया। बगाल मे महीन खादी के लिए भी प्रयत्न होने लगा। खादी-प्रतिष्ठान के माल मे तरक्की हुई। कश्मीर मे बहुत अच्छा ट्वीड, महाराष्ट्र मे अच्छे-अच्छे तर्ज की साडियाँ और कोट का कपडा, पजाब मे अच्छी गफ बुनाई का कपडा तथा राजस्थान मे भी अच्छा कोटिंग बनने लगा। सिन्ध के गद्रो आश्रम द्वारा सस्ते और अच्छे ऊनी कम्बल बनाये गये। तमिलनाड मे सूत के नम्बर मे, समानता मे और मजबूती मे सुधार हुआ। बुनाई का स्टैण्डर्ड अच्छा रहा। महाराष्ट्र और तमिल-नाड मे बटे रगीन सूत का कोट का कपडा इतनी अच्छी डिजाइन का बनने लगा कि उनके कुछ तर्जो की मिले भी नकल करने लगी और उनका वह खादी-कोटिंग मूल्य में मिल के वैसे कोटिंग का मुकाबला करता। राजापालयम के बारीक माल मे, जो पहले बहुत कमजोर होता था, सुधार हुआ। युक्तप्रान्त मे सूत का नम्बर बढा तथा थोडासा सूत २० से ४० नम्बर तक का भी मिलने लगा। कई शाखाओ मे सिले-सिलाये तैयार कपडे बिकने लगे। ब्लीचिंग पाउडर से कपडा धोने मे कमजोरी आती थी, उसमे सुधार हुआ और कई जगह देशी पद्धति से धुलाई होती रही। आन्ध्र मे रूई के नैसर्गिक रंग और टिकाऊपन के कारण बिना धुला

कपडा काफी चल्ता रहा और जो धुलाई होती थी, वह अधिकतर देशी पद्धति से ही होती थी। महाराष्ट्र शाखा ने कोरा माल चलाने की काफी कोशिश की। बगाल के खादी-प्रतिष्ठान ने भी वैसा प्रयत्न किया। पजाब मे देशी धुलाई बहुत बढ़िया होती रही। युक्तप्रान्त मे ब्लीचिंग पाउडर का उपयोग होता रहा। उसे रोकने का कुछ प्रयत्न किया गया। रॅगाई और छपाई के काम मे बहुत तरक्की हुई। आध्र मे इडनथ्रेन डिस्चार्ज छपाई का प्रयत्न किया गया। इस पद्धति से छपी हुई साडियॉ, छींट और पर्दे बहुत चले। बिहार में मूँगा और मुकटा रग की इंडनथ्रेन रॅगाई सफल हुई। खादी-प्रतिष्ठान के रॅगे और छपे माल की विशेषता रही। उसकी क्रीम खाकी खादी ने ख्याति पायी। पंजाब शाखा ने पलग-पोश, दरवाजे के पर्दे, जाजिम और छींट मे विभिन्न प्रकार की बढिया छपाई की। तमिलनाड मे तीन-तीन, चार-चार, पॉच-पॉच रगो की छपाई की शाले होती थीं। युक्तप्रान्त मे दर्जनो नये नमूनो की छपाई का काम हुआ।

कई जगह खादी की प्रदर्शनियॉ की गयीं। कताई और बुनाई की स्पर्धाऍ होती थी और उनमे गति और ऊॅचे नम्बर के सूत के लिए पुरस्कार दिये जाते थे। बारडोली टाइप के चरखे और धनुप चलाये गये। बारडोली के खादी सरजाम कार्यालय द्वारा बहुत अच्छा सरजाम सस्ते भाव से मिलता रहा।

देशी रियासतो मे मैसूर का काम अच्छा चलता रहा। वहॉ सालाना करीब ५०००० की खादी बनने और बिकने लगी। बडौदा और भावनगर की सरकारो ने भी खादीकाम के लिए कुछ पैसा खर्च किया।

अध्याय ७ खादी का नैतिक युग

सन् १९३४

इस वर्ष में चरखा संघ की कार्य-पद्धति में महत्त्व के बदल हुए। एक प्रकार से काम की दिशा ही बदली। मामूली कामकाज में तो कोई खास फर्क नहीं होने पाया, पर ऐसी प्रणाली शुरू हुई कि जिससे आगे चलकर, चरखा, जो अब तक विशेषतः गरीबों की राहत के साधन रूप चलाया जाता था ग्रामोत्थान के अंगभूत चलने में परिणत हुआ। सन् १९३३ और '३४ के हरिजन-दौरे में गांधीजी उस समय चलते हुए खादीकाम का कई जगह बारीकी से निरीक्षण कर सके। तब उन्हें दीख पड़ा कि खादीकाम में शहर का खादी-ग्राहक ही केन्द्र बन रहा है, जहाँ खादी पहननेवाले अधिक तादाद में हैं वहाँ वे चाहते हैं उतनी तरह-उस किस्म की, और वह भी कम से-कम दाम में, मुहैया कर देने का हरएक प्रयत्न किया जा रहा है। लगातार प्रयास हो रहा था कि शहरी ग्राहक को आकर्षक हो ऐसी नाना किस्म की, जिसमें सुन्दरता हो और सूत भी महीन हो ऐसी खादी तैयार हो। खादी की बिक्री-दरें भी घटाई जा रही थीं, ताकि ग्राहक अधिक-से-अधिक खादी खरीद सकें।

खादी की स्थानिक खपत

चरखा संघ का लक्ष्य गरीब बेकार देहातियों को काम देकर राहत देने के साथ-साथ यह भी था कि शहरवासियों का देशप्रेम रचनात्मक काम में लगे। वे देहातियों की भलाई के बारे में अपनी जिम्मेवारी महसूस करें और उनका दुःख दूर करने के लिए अपना आराम कम करें। पर इसका मतलब यह तो नहीं था कि सब, खादी को चाहे जिस रीति से बेचकर

गरीबो को थोडीसी राहत पहुँचाकर, सतोष मान ले। मुख्य लक्ष्य तो यह होना चाहिए था कि लोग कपड़े के बारे मे स्वावलम्बी बने और अपने जीवन का विकास कर सके। गाधीजी ने सघ को इस ओर ध्यान देने के लिए प्रेरित किया। सघ का दृष्टिकोण बदला। अब इस बात पर जोर आया कि खादी बाजार के लिए बनाने की अपेक्षा वह खुद के इस्तेमाल के लिए बनायी जाय। इसका व्यावहारिक स्वरूप यह रहा कि जो खादी बनाते हैं, वे उसका उपयोग पहले अपने लिए करे, बचा हुआ माल आसपास मे रहनेवालो के पास पहुँचे। अधिकतर माल तालुके मे या जिले मे ही खप जाय, अत मे प्रान्त तक, प्रान्त के बाहर न जाय। इससे यह आशा की गयी थी कि देहातियो के जीवन मे बदल होकर उनके आचरण और बुद्धि पर असर पडेगा और उनकी काम करने की योग्यता बढेगी। खादी-कार्यकर्ताओ का भी यह कर्तव्य माना गया कि वे देहातियो के जीवन मे प्रवेश कर उनको मार्गदर्शन और मदद करे। कार्यकर्ताओ को इस काम की शिक्षा देने का प्रबन्ध करने का सोचा गया और यह भी तय हुआ कि खादी कामगारो को तथा स्थानिक लोगो को उनके इस्तेमाल की खादी लागत कीमत से दी जाय, उस पर व्यवस्था-खर्च न लगाया जाय। दीखने मे यह योजना सहल-सी दीखती है। पर खादी की महँगाई के कारण उसे अमल मे लाना आसान नही था, तथापि सब प्रान्तो मे इस दृष्टि से काम शुरू हुआ और इसके ऑकडे इकट्ठे किये जाने लगे कि खास उत्पत्ति-केन्द्रो मे खादी की बिक्री कितनी होती है। इसके आगे सघ के सालाना कार्य-विवरणो मे इन ऑकडो को महत्त्व दिया जाता रहा और देहातियो की भलाई के लिए किस प्रान्त में क्या क्या किया गया, इसका उल्लेख होता रहा।

सन् १९३५

इस वर्ष मे पिछले वर्ष तय की गयी नीति अमल मे लाने की कोशिश की गयी। चरखा सघ के अधिकारियो ने कई प्रान्तो मे दौरा करके

कार्यकर्ताओं को नयी नीति समझायी, कत्तिनों और बुनकरों की सभाएँ करके उनको भी संघ का कार्यक्रम समझाया और उनका सहयोग प्राप्त करने की कोशिश की गयी। कत्तिनों में जस कम मिला, पर बुनकर तथा अन्य खादी-कामगार खादी पहनने लगे। कुछ शाखाओं ने सूत के बदले खादी देने की तथा कत्तिनों की मजदूरी का कुछ हिस्सा अपने पास रखकर जब कुछ रकम इकट्ठी हो जाय, तब उसके सूत की खादी देने की पद्धति शुरू की। आसपास के दूसरे देहाती लोगों में भी खादी बेचने का प्रयत्न किया गया।

जीवन-निर्वाह-मजदूरी

इस वर्ष में मुख्य बात जीवन-निर्वाह-मजदूरी की आयी। खादी सस्ती करने की धुन में स्वाभाविकतः कामगारों से कम-से-कम मजदूरी में काम लेने की ओर झुकाव रहता था। आर्थिक मंदी के कारण लोग कम मजदूरी में काम करने को मिल जाते थे। धुननेवाले और बुनकर किसी प्रकार गुजारे लायक मिला लेते थे। कुछ प्रान्तों में बुनकरों को भी कम ही मिलता था। पर कताई की मजदूरी बहुत ही कम थी। कत्तिन को आठ घंटों के काम से मोटे सूत की कताई में करीब तीन-चार पैसे मिलते। मध्यम सूत में चार-पाँच पैसे और महीन सूत में कुछ ज्यादा। जब गांधीजी का ध्यान इन मजदूरी के आँकड़ों पर गया, तो वे कुछ बेचैन हो गये। उन्होंने देखा कि मिल के कपड़े के मुकाबले में खादी को टिकाये रखने की दृष्टि से कामगारों को कम-से-कम मजदूरी देकर खरीददार की सुविधा की जा रही है। सारे जगत् का व्यवहार भी इसी प्रकार स्पर्धा का चल रहा है। क्या यह अर्थशास्त्र नैतिक माना जा सकता है? वास्तविक अर्थशास्त्र तो यही होना चाहिए कि जो उपयुक्त काम करता है, उसका उससे गुजर-बसर हो सके और उतने खर्च के हिसाब से जो माल की कीमत हो, उस दर से माल बिक जाय। माल सस्ते से सस्ता बेचने में कामगार का शोषण रुकना सम्भव नहीं है। चरखा संघ जैसी संस्था, जो शुद्ध परोपकार के लिए जन्मी है, ऐसे मार्ग से क्यों जाय कि जिसमें शोपण होना निश्चित है।

कितनी ही दिक्कते क्यो न हो, पर चरखा सघ को तो अपना काम नैतिक अर्थशास्त्र के अनुसार ही चलाना चाहिए। उस समय का जीवन-निर्वाह-खर्च का हिसाब देखकर गाधीजी की राय रही कि कत्तिन को भी एक घटे के काम का एक आना मिल जाना चाहिए। उन्होने सोचा, एक परिवार प्रायः पॉच छोटे बडे व्यक्तियो का माना जाय, जिसमे दो व्यक्ति कमाऊ होगे। इनमें से हरएक दिनभर मे आठ घटे काम करे। अगर दो व्यक्ति रोजाना एक रुपया कमा ले, तो देश की चालू आर्थिक दशा मे एक परिवार का गरीबी का गुजर-बसर हो सकेगा। अर्थात् आठ घटो के कताई-काम मे भी आठ आने मिल जाने चाहिए'। कातना प्रायः सबके लिए फुरसत के समय का काम होने के कारण वह लगातार आठ घटे नही चल सकता। इस खयाल से कताई की मजदूरी की दर इस तरह मुकर्रर की जाय कि कत्तिन को एक घटे के काम का एक आना मिल जाय।

सिद्धान्त की दृष्टि से तो यह बात ठीक ही थी, पर ऊपर लिखे मुताबिक जब कताई मे तीन-चार पैसे मजदूरी देकर भी खादी बेचना मुश्किल होता था, तो आठ आने मजदूरी की बनी खादी इतनी महँगी हो जाती कि खादी-काम चलना ही मुश्किल हो जाता। बिक्री बिल्कुल बैठ जाती, उत्पत्ति बहुत घटानी पडती और कामगारो को राहत पहुँचाने की मात्रा नाममात्र की रह जाती।- गाधीजी का सुझाव सुनकर खादी-कार्यकर्ता घबरा गये। सुझाव के खिलाफ एक यह दलील थी कि कताई का काम फुरसत के समय का होने के कारण उसकी मजदूरी कम रहे, तो हर्ज नही मानना चाहिए। पर यह दलील सिद्धान्त को काटने जितनी मजबूत नही थी। आठ आने न सही, पर अगर सिद्धान्त मान्य है, तो कताई की मजदूरी विशेष ज्यादा बढाने की जरूरत तो थी ही। खादी-प्रेमियो का मुख्य कहना यही रहा कि अगर सिद्धान्त के पीछे पडकर गरीबो की सेवा करने का मौका ही न रहे, तो फिर वह सिद्धान्त क्या काम आयेगा ? गाधीजी अपने विचार पर दृढ रहे, पर मजदूरी की दर कार्यकर्ताओ के निर्णय पर

छोड़ी गयी। काफी चर्चा होने के बाद तारीख ११-१०-३५ को चरखा संघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया, जिसमें जीवन-निर्वाह-मजदूरी से होनेवाले परिणामों को लेकर अन्य बातों का भी जिक्र किया गया है।

"१. संघ की कार्यकारिणी समिति की यह राय है कि कत्तिनों को अभी जो मजदूरी दी जाती है, वह पर्याप्त नहीं है। इसलिए यह समिति निश्चय करती है कि मजदूरी की दर में वृद्धि की जाय और उसका एक ऐसा उचित पैमाना निश्चित कर दिया जाय, जिससे कत्तिन को उसके आठ घंटों के पूरे काम के हिसाब से कम-से-कम इतना पैसा मिल जाय कि जिससे उसे जरूरतभर का कपड़ा (सालाना २० वर्गगज) और वैज्ञानिक रीति से नियत किये हुए आहार के पैमाने के अनुसार भोजन मिल सके। अपनी-अपनी परिस्थिति के अनुसार सभी शाखाओं को कताई की मजदूरी के अपने-अपने पैमानों को तब तक बढ़ाते जाने की कोशिश करनी चाहिए, जब तक कि ऐसा पैमाना बन जाय, जिससे हरएक कत्तिन के कुटुम्ब का पालन-पोषण उस कुटुम्ब के कार्यक्षम व्यक्तियों की कमाई से हो सके।

२. उपर्युक्त प्रस्ताव के अन्तर्गत जो सिद्धान्त है, उसे अमल में लाने में चरखा संघ के कार्यकर्ताओं को दिशा सूचित करने के लिए संघ की समस्त शाखाओं और संघ से सम्बद्ध या दूसरी किसी भी तरह से संघ के नीचे काम करनेवाली संस्थाओं के लिए संघ की निम्नलिखित नीति तब तक निश्चित समझी जायगी, जब तक यह समिति अपने नये अनुभव के आधार पर इसमें हेर-फेर न करे।

संघ का ध्येय यह है कि हिन्दुस्तान का हरएक परिवार उसकी वस्त्र-सम्बन्धी आवश्यकता खादी द्वारा पूरी होकर स्वावलम्बी बने और खादी बनानेवाले कामगारों में सबसे कम मजदूरी पानेवाली कत्तिनों का तथा कपास बोने से लेकर खादी बुनने तक की तमाम भिन्न-भिन्न क्रियाओं में लगे हुए समस्त स्त्री-पुरुषों का हित-साधन किया जाय।

३ इसलिए यह जरूरी है कि जो लोग बतौर कामगारों की या बेचने-

वालो की हैसियत से या अन्य किसी भी रीति से खादी-उत्पत्ति का काम करते हो, वे दूसरे किसी भी प्रकार का कपडा काम मे न लाये, अर्थात् वे केवल खादी का ही उपयोग करे।

४ सघ की समस्त शाखाएँ और सम्बद्ध सस्थाएँ इस योजना को इस तरह अमल मे लाये कि घाटा बिलकुल न हो, अर्थात् वे उतनी ही खादी बनाये, जितनी खादी की मॉग उनके क्षेत्र मे हो। वे इसका आरम्भ अपने केन्द्र से करे और अपने प्रान्त से आगे कभी न बढे, सिवा उस हालत मे कि जब उन्हे दूसरे प्रान्तो की मॉग पूरी करने के लिए ज्यादा खादी बनानी पडे।

५ अतिरिक्त खादी की उत्पत्ति रोकने के लिए उत्पादक केवल उन्ही कत्तिनो से कताये, जिन्हे साल मे कुछ महीने या बारहो महीने पेट के लिए कताई पर ही निर्भर रहना पडता हो। सघ की शाखाएँ और अन्य सस्थाएँ, जिन कत्तिनो और दूसरे कामगारो से काम ले, उनका ठीक-ठीक रजिस्टर रखे और उनके साथ अपना सीधा सपर्क स्थापित करे। इस बात की चौकसाई के लिए कि उन लोगो को मजदूरी मे जो पैसा मिले, वह उनके भोजन और वस्त्र मे ही खर्च हो, उन्हे सारी मजदूरी या उसका कुछ हिस्सा खादी या गृहस्थी की दूसरी जरूरी चीजो के रूप मे दिया जाय।

६. यह रोकने के लिए कि काम दोहरा न हो जाय, अनुचित होडा-होडी न हो या खर्च ज्यादा न हो, जहाँ खादी-उत्पत्ति की एक से अधिक सस्थाएँ हो, वहाँ हरएक का कार्य-क्षेत्र पहले से निश्चित कर लेना चाहिए। खानगी उत्पादको या विक्रेताओ को सघ प्रोत्साहन न दे। जिन्हे प्रमाण-पत्र दिया जा चुका है, उनमे से केवल उन्हीका प्रमाण-पत्र कायम रखा जायगा, जो सघ की शाखाओ को लागू होनेवाले नियमों का कड़ाई से पालन करेगे, सारी जोखिम खुद उठायेंगे और संघ से आर्थिक सहायता की बिलकुल ही आशा न रखेगे। सो भी इस कड़ी शर्त के साथ कि समय-

समय पर जो नियम बनेंगे या सूचनाएँ दी जायँगी, उनका भग होते ही उनके प्रमाण-पत्र अपने-आप रद्द हो जायँगे।

'७ यह समझ लेना चाहिए कि सघ के नीचे काम करनेवाली तमाम सस्थाओं का यह प्रथम और परम कर्तव्य है कि वे वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना को आगे बढाये। शहर के या दूसरे खुद न कातनेवाले लोगो की माँग पूरी करने के लिए खादी बनाना दूसरे नम्बर का याने गौण काम है। ऐसी खादी पैदा करने या बेचने के लिए कोई भी सस्था वाध्य नहीं समझी जायगी।"

जीवन-निर्वाह-मजदूरी के कारण कताई का काम कुछ कमाई की चीज बनने से कारण खादी उत्पत्ति बहुत कुछ बढ जानी सभव थी, पर वह बिक्री के हिसाब से ही की जा सकती थी। इसलिए खादी की उत्पत्ति करने मे कौन सी नीति बरती जाय, इसका जिक्र ऊपर के प्रस्ताव मे किया गया है। इधर बिक्री टिका रखने के लिए यह सोचा गया कि बिक्री-भाव भी यथासभव कम-से-कम बढने पाये। खादी-उत्पत्ति की प्रक्रियाओ मे तथा औजारो मे सुधार सोचे जाने लगे, ताकि कामगारो को ज्यादा मजदूरी मिलने के साथ-साथ उत्पत्ति और व्यवस्था खर्च भी कम-से-कम हो। कामगारो की कार्यक्षमता बढाने की ओर भी ध्यान गया। उनको अधिक मजदूरी का ठीक लाभ मिलने के लिए यह जरूरी था कि उनमे सुधार किया जाय, ताकि अज्ञानवश जो बरबादी होती है वह टल सके।

प्रारम्भ मे, इस योजना की विचारदशा मे कार्यकर्ताओं के दिल मे कुछ हिचक रही, पर सघ का निर्णय हो जाने पर सब शाखाएँ मजदूरी बढाने के प्रयत्न मे लगी। किस प्रान्त मे खाने-पीने का कितना खर्च आता है, इसकी जाँच होकर आठ घटों के काम के लिए प्रान्त-प्रान्त की परिस्थिति के अनुसार दो आनों से तीन आनों तक कताई-मजदूरी मुकर्रर हुई। महाराष्ट्र शाखा ने मजदूरी की दरे सितम्बर १९३५ मे बढायी, बिहार शाखा ने दिसम्बर मे और सन् १९३६ के प्रारम्भ में सब शाखाओ मे मजदूरी कमी-बेशी परिमाण में बढ गयी। उस समय की मजदूरी की

वृद्धि से खादी की कीमतें औसत दस प्रतिशत बढ़ी। कत्तिनों को खादी पहनाने में जो अड़चन थी, वह मजदूरी बढ़ने से कुछ अंश में कम हुई।

सन् १९३६

इस वर्ष पिछले साल में जो जीवन निर्वाह-मजदूरी की नीति तय की गयी थी, उसका अमल करने का प्रयत्न होता रहा। ऊपर बताया गया है कि आठ घंटों के काम के दो से तीन आने तक, प्रान्त की परिस्थिति के अनुसार मजदूरी देना तय हुआ था। अर्थात् यह मजदूरी कुशल काम की थी। एक घंटे में चार सौ गज सूत काता जाना चाहिए, यह मानकर कताई की दरें मुकर्रर की गयीं। संघ के बहुत-से केन्द्रों में खादी-कामगारों से सीधा सम्बन्ध था ही। पर बंगाल, राजस्थान और हैदराबाद रियासत में कुछ ऐसे क्षेत्र थे कि जहाँ बनी-बनायी खादी खरीद ली जाती थी। कहीं कहीं कमीशन देकर एजन्टों द्वारा सूत खरीदा जाता था। अब यह तय हुआ कि सब जगह कत्तिनों से सीधा सम्बन्ध जोड़ा जाय, ताकि उनको पूरी मजदूरी पहुँच सके और उनके जीवन में सुधार किया जा सके। कामगारों को खादी पहनाने के बारे में जो प्रयत्न किया गया, उसमें बुनकरों में कुछ कामयाबी हुई, कत्तिनों में बहुत कम।

खादी का अप्रमाणित वेपार

मजदूरी बढ़ने से खादी की कीमतें इस वर्ष औसत १५ प्रतिशत चढ़ीं। बिक्री बहुत कम घटी। जीवन-निर्वाह-मजदूरी के सिद्धान्त का खूब प्रचार हुआ। लोगों ने महँगी खादी खरीदकर सहयोग दिया। खादी की बिक्री बढ़ने में एक बड़ी दिक्कत अप्रमाणित वेपारियों की रही। चरखा संघ तो अब नियत की हुई अधिक मजदूरी से ही कताई करा सकता था। पर जहाँ चरखा संघ नहीं पहुँच सकता था, वहाँ से अप्रमाणित वेपारी सस्ते दामों में सूत खरीदकर कम कीमत में खादी बेचने लगे। चरखा संघ कत्तिनों पर सूत-सुधार के लिए तथा उनके जीवन-सुधार की दृष्टि से कुछ पाबन्दियाँ लगाता था, जैसे कि सूत की

खरीद सूत का नम्बर और मजबूती देखकर करना, मजदूरी का कुछ हिस्सा खादी के रूप में चुकाना, कामगारों से खादी इस्तेमाल का आग्रह रखना इत्यादि। अप्रमाणित बेपारियों का इन बातों से कोई वास्ता नहीं था। इस ढंग में उनको सूत मिलना आसान हो जाता, जिससे चरखा संघ के काम में रुकावट आती। जीवन-निर्वाह मजदूरी अमल में आने के कारण खादी-काम में आर्थिक लाभ की गुञ्जाइश नहीं रही थी, इसलिए कई प्रमाणित व्यापारियों ने भी अपना खादी-काम बन्द कर दिया या घटाया।

कामगारों की कुशलता बढाना

मजदूरी बढने से कत्तिनों की कुछ आमदनी बढी, पर मजदूरी की दरों के हिसाब से उनको उसका पूरा लाभ उनके कुशल काम करने पर निर्भर था। यह कुशलता बढने से खादी की महँगाई भी कुछ कम हो सकती थी। कामगारों की कुशलता बढाना चरखा संघ ने अपनी जिम्मेदारी समझी और उसके लिए नीचे लिखे उपाय सोचे गये और व सब शाखाओं में कमी-वेशी परिमाण में अमल में लाये गये .

(१) अच्छी कपास बोना।

(२) कपास चुनने में सावधानी रखना, ताकि स्वच्छ कपास मिल सके।

(३) मध्यम और महीन सूत के लिए ऊँची जाति की कपास का उपयोग करना।

(४) कत्तिनों को धुनाई सिखाना, ताकि वे अपने लिए अच्छी पूनियाँ बना सकें।

(५) पिंजारों की धुनाई में सुधार करना।

(६) तकुवे की गति बढाने के लिए बारीक तकुवे का उपयोग करना और उस पर घिरी लगाना। पुराने चरखों को गतिचक्र लगाना।

(७) कत्तिनों को अच्छी कताई करना सिखाना, ताकि सूत समान और ठीक बट का आये ।

(८) सूत अटेरने मे सुधार करना, ताकि वह काम जल्दी और अच्छा हो सके ।

इस वर्ष चरखा सघ ने यह भी निर्णय किया कि मशीन की ओटी हुई रूई की अपेक्षा हाथ-ओटनी से ओटी हुई रूई का उपयोग होना चाहिए ।

सन् १९३७

इस वर्ष खादी का भाग्य फिर चेता । राजनीतिक परिस्थिति बदली । धारा उभाओ के चुनाव हुए । काग्रेसजनो ने अन्य बातो के साथ खादी का भी प्रचार किया । चुनाव के बाद कई प्रान्तो मे काग्रेसी मन्त्रिमण्डल बने । खादी की मॉग बढी, बिक्री बढी, फलस्वरूप उत्पत्ति बढाने का भी मौका मिला । सघ के पास खादी-काम बढाने के लिए आवश्यक पूँजी नहीं थी । अब तक सघ की यह नीति रही कि कर्ज न लिया जाय । तथापि पूँजी की कमी रहने के कारण बैंको से दो लाख रुपया कर्ज लेना तय हुआ । काम बढाने के लिए अधिक कार्यकर्ताओ की आवश्यकता हुई । इसके सिवा जीवन-निर्वाह-मजदूरी के सिलसिले मे निश्चित किये हुए सारे काम करने के लिए तथा कामगारो से सम्पर्क बढाने के लिए भी अधिक कार्यकर्ताओ की जरूरत थी । करीब पॉच सौ नये कार्यकर्ता दाखिल किये गये ।

प्रान्तीय सरकारो की मदद

चरखा सघ ने काग्रेसी प्रान्तीय सरकारो को खादी-काम मे मदद देने के लिए योजनाएँ दीं । उन्होने आर्थिक मदद देना तय किया । सुधरे हुए औजार बनाना और वे कामगोरो को मुहैया करना, कार्यकर्ताओ को और कामगारो को खादी-काम की शिक्षा देना, कामगारो को जीवन-निर्वाह-मजदूरी देने के कारण तथा चालू केन्द्रों का काम बढाने मे

और नये केन्द्र खोलने मे जो नुकसानी आये, उसकी पूर्ति करना आदि कामो के लिए सरकारो ने मदद देना मजूर किया। नुकसानी की मदद बढे हुए खादी-उत्पत्ति काम पर प्रति वर्गगज एक आना सबसीडी के रूप मे मजूर हुई। भिन्न-भिन्न सरकारो ने इस वर्ष मे नीचे लिखे अनुसार आर्थिक मदद मजूर की।

प्रान्त	कपास बोना	औजार	कत्तिनो की शिक्षा	कार्यकर्ताओ की शिक्षा	शोध	नुकसानी की सबसीडी	कुल
बबई	—	९९००	४८००	२०००	३०००	९३७५	२९०७५
मद्रास	—	८९१७५	७५३३	१५७३	२०६०	१,२५,०००	१,८५,३४१
उत्कल	८३५	९००	२५५	४८०	—	—	२,४७०
युक्तप्रात	—	४४००	२५८८	२३५०	१२५०	२,०००	१२,५८८
	८३५	६४३७५	१५१७६	६४०३	६३१०	१,३६,३७५	२,२९,४७४

मजदूरी मे फिर और वृद्धि

मजदूरी बढ़ाने के फलस्वरूप खादी की कीमते बढने के कारण बिक्री बहुत कुछ गिर जाने का भय था, पर वह उतनी नही घटी। इसके अलावा ऊपर लिखी राजनीतिक परिस्थिति ने साथ दिया, इसलिए जीवन-निर्वाह-मजदूरी के प्रस्ताव के अनुसार सघ ने अपनी शाखाओ से फिर से अधिक मजदूरी बढाने के प्रस्ताव मॉगे। महाराष्ट्र शाखा ने पहले नौ घटो की कुशल कताई के लिए तीन आने मजदूरी रखी थी। अब उसने वह आठ घटो पर तीन आने कर दी और अपने दो केन्द्रो मे अस्सी प्रतिशत मजबूती के सूत पर एक सेर सूत के चार आने अधिक देना तय किया। युक्तप्रान्त शाखा ने पहले साठ प्रतिशत मजबूती पर आठ घटो के दो आने रखे थे, अब मजबूती की शर्त छोडकर औसत सूत पर दो आने कर दी। गाधीजी ने फिर से आठ घटो की कुशल कताई पर आठ आने मजदूरी देने की सलाह दी। पर व्यावहारिक दिक्कतो का विचार कर सघ इतना ही निर्णय कर सका कि शाखा के काम मे हानि न होते हुए अगर वह अधिक मजदूरी देने की योजना भेजे, तो अध्यक्ष और मत्री उसका विचार करके मजूरी दे। महाराष्ट्र शाखा ने ऐसी योजना भेजी कि जिसमे आठ घटो की कताई मे छह आना मजदूरी मिल सके।

इस वर्ष मे सघ की कुछ शाखाओ मे रेशमी और ऊनी माल की उत्पत्ति बढी। कश्मीर मे ऊनी माल की अच्छी तरक्की हुई। पजाब, राजस्थान, युक्तप्रान्त, महाराष्ट्र, कर्नाटक और सिन्ध मे ऊनी कबलो की उत्पत्ति बढी।

सब शाखाओ मे कुल मिलाकर चार सौ इकतालीस कार्यकर्ताओं को खादी-काम की शिक्षा दी गयी।

सन् १९३८ और १९३९

जीवन-निर्वाह-मजदूरी की दरे

इस समय मे चरखा सघ का ध्यान जीवन-निर्वाह-मजदूरी के विषय

पर केन्द्रित रहा। इसका मूल प्रस्ताव सन् १९३५ के अक्तूबर महीने में पास हुआ था। वह पहले उद्धृत किया जा चुका है। मजदूरी क्रमशः धीरे-धीरे कैसे बढ़ी, इसकी कुछ तफसील पिछले दो वर्षों के विवरण में दी गयी है। सन् १९३७ के मार्च महीने में संघ ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया।

"संघ को बहुत संतोष है कि कत्तिनों को और कम मजदूरी पानेवाले कामगारों को क्रमशः बढ़ती हुई मजदूरी देने की जो नयी नीति अख्तियार की गयी थी और जिसके फलस्वरूप कत्तिनों की कमाई बढ़ी है, वह बहुतेरे खादी-कार्यकर्ताओं की उम्मीद से ज्यादा कामयाब हुई है। संघ अपनी शाखाओं को सलाह देता है कि जिनको आत्मविश्वास हो, वे जल्दी अमल में लाने की दृष्टि से फिर और अधिक मजदूरी बढ़ाने की योजना संघ को भेजें।" शाखाओं ने अपनी-अपनी परिस्थिति के मुताबिक मजदूरी बढ़ायी थी। फिर भी अब तक कुछ शाखाओं में आठ घंटों की कताई तीन आनों से कुछ कम ही थी। इसलिए सन् १९३८ के सितंबर माह में चरखा संघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया।

"मार्च १९३७ के प्रस्ताव के मुताबिक कताई की दर बढ़ाने के लिए संघ की शाखाओं ने जो प्रयत्न किये हैं, उन्हें संघ की यह सभा पसंद करती है तथा इसके लिए जो योजनाएँ आयी हैं, उन्हें वह मंजूर करती है। इस दिशा में भिन्न-भिन्न प्रान्तों में जो प्रगति हो चुकी है, उसका खयाल करते हुए यह सभा निश्चय करती है कि आठ घंटों की कुशल कताई की मजदूरी तीन आने मानकर भिन्न-भिन्न अंकों के सूत के लिए कम-से-कम निम्नलिखित कताई की दरें सब शाखाएँ स्वीकार कर लें और वे तारीख १ जनवरी १९३९ से अमल में आ जायँ।

सूत का अंक	प्रतिघंटा गति गजों में	८० तोलेकी कताई	८० तोलेकी धुनाई
६	४८०	०–८–०	०–३–०
७	,,	०–९–३	०–३–०
८	,,	०–१०–६	०–३–०

सूतका अक	प्रतिघटा गति गजो मे	८० तोलेकी कताई	८० तोलेकी बुनाई
९	४८०	०-११-९	०-४-०
१०	४५०	०-१४-०	०-४-०
११	४२०	१-०-६	०-४-०
१२	,,	१-२-०	०-४-०
१३	४१०	१-४-०	०-४-०
१४	३९० से ४००	१-६-०	०-४-०
१५	,,	१-८-०	०-४-०
१६	,,	१-१०-०	०-६-०
१८	,,	१-१३-०	०-६-०
२०	,,	२-०-०	०-८-०
२२	३८५	२-४-०	०-८-०
२४	३७८	२-८-०	०-८-०
२६	३६४	२-१३-०	०-८-०
२८	३४६	३-३-०	०-१२-०
३०	३२२	३-९-०	१-०-०
३२	३०६	४-२-०	१-०-०
३५	,,	४-८-०	१-०-०
४०	३००	५-४-०	१-०-०
४५	२९५	६-०-०	२-०-०
५०	,,	६-११-०	२-०-०
६०	,,	८-०-०	२-०-०

मध्यप्रात-महाराष्ट्र शाखा का विशेष प्रयोग

इस निर्णय के अनुसार ता० १-१-'३९ से कताई और बुनाई की नयी दरे अमल मे आ गयी। युक्तप्रान्त मे वे कुछ समय के बाद अमल मे आयी। तीन आनो से अधिक मजदूरी देने की इजाजत शाखाओ को थी ही। पहले लिखा जा चुका है कि मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा ने

६ आने की दरें कर दी थीं। इस शाखा की यह योजना सन् १९३८ के मई महीने से अमल में आयी। गुजरात-शाखा ने भी सन् १९३८ के जुलाई महीने से लगभग मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा की जितनी ही दरें शुरू कर दी थीं, पर उसने अपने खादी के भाव नहीं बढ़ाये। ज्यादा मजदूरी की भरपाई के लिए प्रान्त के बाहर से आनेवाले माल पर कुछ ज्यादा दाम बढ़ा दिये। मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा को अपनी खादी की कीमत करीब दुगुनी कर देनी पड़ी। बिक्री कम हुई, उत्पत्ति भी घटानी पड़ी। कत्तिनों की संख्या पहले की अपेक्षा करीब ४० प्रतिशत रह सकी। महाराष्ट्र के कांग्रेसी कार्यकर्ताओं तथा अन्य खादी-प्रेमियों ने महँगी खादी बेचने में काफी मदद दी। काम कम होने पर भी जीवन-निर्वाह-मजदूरी के सिद्धान्त के महत्त्व का खयाल करके महाराष्ट्र की शाखा और खादी-प्रेमी भाई-बहन बढ़ी हुई मजदूरी कायम रखना चाहते थे। पर प्रान्त के अन्य लोग, जो केवल खादी पहनकर ही सन्तोष मानते थे, महाराष्ट्र शाखा के इस प्रयास का विरोध करने लगे। कुछ अन्य शाखाएँ भी महाराष्ट्र शाखा की इस बात से अप्रसन्न थीं, क्योंकि एक शाखा में मजदूरी अधिक देने से दूसरी शाखाओं पर भी मजदूरी बढ़ाने का कुछ दबाव पड़ना स्वाभाविक था। इस कठिन प्रयोग में दूसरों की सहानुभूति कम होने के कारण और भविष्य में आनेवाली अड़चनों का खयाल करके मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा को अपना यह अधिक मजदूरी का विशेष प्रयोग सन् १९३९ में छोड़ देना पड़ा। गुजरात शाखा को भी वैसा ही करना पड़ा। अन्त में कताई के बारे में जीवन-निर्वाह-मजदूरी का पैमाना तीन आने पर रुका। यह सब सस्ते जमाने की बात है। बाद में महँगाई बढ़ी और साल-ब-साल बढ़ती ही गयी। कताई की दरें भी दुगुनी या उससे भी अधिक बढ़ानी पड़ीं। पर उस वृद्धि को हम जीवन-निर्वाह-मजदूरी के सिद्धान्त के अंगभूत नहीं मानेंगे। क्योंकि महँगाई बढ़ी, उस परिमाण में कताई की दरें नहीं बढ़ीं।

प्रयोग की महत्ता

यह खयाल मे रहे कि चरखा-संघ ने एक सिद्धान्त को लेकर मजदूरी की दरे बढायी, जब कि कत्तिने कम दाम मे भी कातने को तैयार थी ही, क्योकि फुरसत के समय के काम का उनको जो कुछ भी थोडा पैसा मिल जाता, वह उनके लिए दूसरे किसी काम के अभाव मे अतिरिक्त कमाई ही थी। कामगार कम दामो मे काम करने को तैयार होते हुए भी काम लेनेवाला अपनी खुशी से ज्यादा मजदूरी दे, ऐसा इतने बडे पैमाने पर जगत् मे क्वचित् ही प्रयोग हुआ होगा। चरखा सघने यह काम नैतिक अर्थशास्त्र के सिद्धान्तरूप मे कर बताया, जिसका व्यावसायिक आर्थिक जगत् मे सानी मिलना मुश्किल है। लाखो कत्तिनो की, जो एक आना मजदूरी पर काम करने को राजी थी, तीन आने मजदूरी कर दी गयी।

कांग्रेस की राय और हिदायत

अप्रमाणित खादी-व्यापारियो की स्वार्थनीति पूर्ववत् चलती रही। खादी की माँग बढने से उनको अपना काम अधिक बढाने का मौका मिला। उनकी खादी-विघातक कार्यवाही काग्रेस कार्यसमिति की नजर मे ला देने पर उसने लोगो से अपील की कि वे चरखा-सघ की या चरखा-सघ द्वारा प्रमाणित खादी को ही अपनाये। '

कांग्रेस कार्य-समिति के प्रस्ताव

"अखिल-भारत चरखा-सघ ने कत्तिनो और खादी-उत्पत्ति के काम मे लगे हुए अन्य कामगारो को उचित मजदूरी देने की जो नीति स्वीकार की है तथा उस दिशा मे सघने जो प्रयत्न किये हैं, उनके लिए यह समिति सतोष प्रकट करती है और तमाम काग्रेसजनो व आम जनता से अनुरोध करती है कि वे केवल चरखा सघ द्वारा प्रमाणित खादी को ही खरीद कर उस नीति को सफल बनाने मे सहकार दे।

"इस कार्य-समिति की यह राय है कि अखिल भारत चरखा-सघ ने

खादी के काम में लगी हुई कत्तिनो तथा अन्य कारीगरों को उचित मजदूरी देने की जो नीति स्वीकार की तथा उस दिशा में जो प्रयत्न किये हैं, वे ग्रामीण जनता की भलाई के खयाल से तथा उनकी मजदूरी का एक उचित पैमाना बना देने की पूर्वतयारी के रूप मे अत्यन्त महत्त्व के हैं। इसलिए यह समिति तमाम काग्रेसी सस्थाओ और काग्रेसजनो का यह कर्तव्य समझती है कि वे अखिल-भारत चरखा सघ व उससे प्रमाणित सस्थाओ को इस नीति को सफल बनाने मे तहेदिल से सहकार और सहायता दें।

"यह समिति खादी उत्पन्न करनेवाली और बेचनेवाली अप्रमाणित सस्थाओ के हानिकर व्यापार के प्रति अपना तीव्र विरोध जाहिर करती है, क्योंकि अप्रमाणित सस्थाएँ खादी की बढ़ती हुई माग का नाजायज फायदा उठाकर सस्ता कपडा, जो उन्होंने कम मजदूरी देकर बनवाया होता है, बेचती हैं और उससे उन तमाम काग्रेसी सस्थाओ व काग्रेसजनो को धोखे मे डालती हैं, जिन्हे अब तक चरखा-सघ की खादी और अप्रमाणित सगठनों द्वारा बेचे जानेवाले सस्ते कपडे का अन्तर पूरे तौर से समझ मे नही आता। इसलिए यह समिति नीचे लिखी हुई हिदायतें लिख देना जरूरी समझती है, जो तमाम काग्रेसी सस्थाओ और काग्रेसजनों तथा खादी-प्रेमियों के लिए मार्गदर्शक हो .

(१) काग्रेस की राय मे खादी से मतलब उसी खादी से है, जो काग्रेस के अपने विभाग यानी चरखा-सघ या उससे प्रमाणित सस्थाओ द्वारा तैयार करायी गयी हो। इसलिए तमाम काग्रेसी सस्थाएँ और काग्रेसजन सिर्फ ऐसी ही खादी-स्वय इस्तेमाल करे और जनता से करने को कहे।

(२) जिन सस्थाओ, प्रदर्शनियो या दूकानों मे अप्रमाणित खादी की बिक्री या प्रचार होता हो, उनका उद्घाटन वे न करें, न उनके किसी कार्यक्रम मे भाग ले, न अन्य कोई ऐसा काम करें, जिससे उन्हे प्रत्यक्ष या परोक्ष रीति से प्रोत्साहन मिले।

(३) कोई काग्रेसी सस्था या काग्रेसजन चरखा-सघ की या उमसे प्रमाणित सस्थाओं की खादी के सिवा अन्य किसी भी कपडे का व्यापार खादी के नाम से न करे ।"

अधिक पूंजी का प्रबंध

राजनीतिक परिस्थिति के कारण सन् १९३८ में खादी की मॉग काफी रही, बिक्री बढती गयी। कताई की मजदूरी बढ जाने के कारण उत्पत्ति बढाना आसान था। आगे भी मॉग बढेगी, इस आशा से उत्पत्ति ज्यादा बढायी गयी। कुछ प्रान्तो मे अकाल-पीडितो को सहायता देने के लिए अधिक खादी तैयार हुई। तथापि इस रीति से जितनी उत्पत्ति बढी, उतने परिमाण मे आगे बिक्री नही बढ पायी। माल का स्टाक बढने लगा। जहॉ माल विशेष अधिक नही था वहॉ भी माल की कीमत बढने के कारण रकम ज्यादा लगने लगी। रकम की तगी दूर करने के लिए बैंको से सात लाख रुपया कर्ज लिया गया। यह कर्ज अदा करने की मुद्दत एक या दो वर्षो की ही थी। अर्थात् काम घटाये बिना कर्ज की अदायगी समय पर करना मुश्किल था या कर्ज की मुद्दत बढानी पडती। इस दशा मे दान के रूप मे आर्थिक सहायता मिलने का विचार किया गया।

प्रान्तीय सरकारो की मदद

पिछले वर्ष की तरह सन् १९३९ मे भी काग्रेसी प्रान्तीय सरकारो ने खादी-काम के लिए इन मदो पर सहायता दी :

१. सुधरे हुए औजार बनवाना और उनका वितरण करना।

२. खादी-प्रक्रियाओं की शिक्षा।

३. खादी विद्यालयो को मदद।

४. घटनेवाले काम की तथा अधिक मजदूरी की हानि की पूर्ति।

५. प्रयोगशालाएँ।

६. अकाल क्षेत्रो मे खादी-काम।

७. सूत-सुधार।

८. कपास की खेती।

९ खादी बेचनेवाले एजन्टो को कमीशन।

प्रान्त	रकम
मद्रास	१,९९,२९७–८–०
बबई	७०,३००–०–०
उत्तर प्रदेश	४३,०४०–०–०
मध्यप्रान्त	२२,२६०–०–०
बिहार	१७,५००–०–०
उत्कल	१५,२३०–०–०
	कुल ३,६७,६२७–८–०

ग्राम-सुधार केन्द्र योजना

मध्यप्रान्त सरकार ने मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा द्वारा ग्राम-सुधार केन्द्रो की एक योजना चलायी। उसमें मुख्य बात यह थी कि ग्राम-समिति द्वारा हर साल चन्दा होने पर पहले वर्ष मे चन्दे के चार गुना पर रुपये चार सौ तक, दूसरे वर्ष मे तीन गुना पर रुपये तीन सौ तक, तीसरे वर्ष मे दुगुना पर रुपये दो सौ तक, चौथे वर्ष मे बराबर रुपये एक सौ तक सरकारी मदद मिले। केन्द्र मे एक वेतनभोगी कार्यकर्ता रहे। खादी, तेलघानी, कपास ओटना आदि उद्योग चलाकर सफाई और प्रौढशिक्षा का भी काम हो। सन् १९३९ तक ऐसे ४५ केन्द्र स्थापित हुए और चले। उनमे ८५९ कामगारो को काम मिला। करीब ११००० पौंड सूत कता, १७,००० वर्ग गज खादी बुनी गयी। इसके अलावा वस्त्र स्वावलम्बन के लिए २८७ चरखो पर करीब ९०० पौंड सूत कता।

प्रान्तीय सरकारो और स्थानीय स्वराज्य-सस्थाओ द्वारा खादी-खरीद

प्रान्तीय सरकारे तथा स्थानीय स्वराज्य-सस्थाएँ अपने-अपने काम के लिए खादी खरीदने लगीं। कुछ स्थानीय स्वराज्य-सस्थाएँ कई वर्षो से खादी खरीदती थीं ही।

सन् १९३९ की खादी-खरीदी के आकडे नीचे मुताबिक हैं :

शाखा	प्रान्तीय सरकार	स्थानीय स्वराज्य-सस्थाएँ
	रुपये	रुपये
आन्ध्र	—	७,४४५
उत्कल	१४,२२४	२,७४५
कर्नाटक	—	१९६
कश्मीर	१५,९०४	—
केरल	—	१,३०२
गुजरात	—	१२,१५८
तमिलनाड	६,५६४	२१,४४३
पजाब	—	१३,१०२
बगाल	—	५,९२५
बम्बई	२५,२०२	—
बिहार	७५,८७३	—
मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र	३२	७,२९६
राजस्थान	१५,४१५	२०
उत्तर प्रदेश	१५,३२७	—
कुल	१,६८,५४१	७१,६३२

कामगारो की कमाई बढाने का यत्न

जीवन-निर्वाह-मजदूरी का जो परिमाण मुकर्रर किया गया था, उतनी पूरी मजदूरी कत्तिनो के पल्ले पडने के लिए यह आवश्यक था कि उनकी कताई की कुशलता बढायी जाय। इसमे उनकी कताई की गति बढाने के साथ उनके चरखे बढिया होने की भी जरूरत थी। ऊपर लिखा गया है कि सघ ने उनकी कुशलता बढाने की जवाबदेही अपनी समझी। सब शाखाओ ने इस ओर काफी प्रयत्न किया। पुराने खराब चरखो की जगह नये सुधरे हुए चरखे दिये गये। चरखो पर गति-चक्र लगाये गये। मोटे

खराब तकुवे हटाकर उनकी जगह बारीक अच्छे तकुवे दिये गये। बिन्नी के तकुवे भी दिये गये। जहाँ स्थानीय रूई अच्छी नहीं होती थी वहाँ बाहर से अच्छी रूई मँगाकर कत्तिनों को दी गयी। कहीं कहीं अच्छी कपास दी। जहाँ पेशेवर धुनकर धुनाई करते थे, वहाँ उनकी धुनाई सुधारी गयी। पेशेवरों के अलावा नये धुनिये भी तैयार किये गये। कत्तिनों को स्वयं धुनाई करने को प्रोत्साहित किया और धुनाई सिखायी गयी। कई जगह परिश्रमालय चलाकर वहाँ कत्तिनों की कताई में सुधार किया गया और कताई की गति बढ़ायी गयी। कताई की होड़ें कराकर और इनाम देकर कुशलता लाने का प्रयास तो लगातार होता ही रहा। इस प्रकार नाना प्रयत्नों से उनमें कुशलता लाने की कोशिश की गयी। यह नहीं कि सब जगह सब कत्तिनों में ऐसा किया जा सका। पर हरएक शाखा ने इस दिशा में काम करने का भरसक प्रयत्न किया।

कमाई का सदुपयोग

दूसरी बात यह है कि संघ को यह भी देखना था कि कामगारों के पास अधिक जानेवाली मजदूरी का सदुपयोग हो। इसके लिए संघ के कार्यकर्ता उनसे यथासंभव अधिक संपर्क में आने लगे। उनको उनके घरेलू खर्च में सलाह देते। कहीं-कहीं नगदी की जगह उपयोगी चीजों के रूप में मजदूरी दी जाती। तम्बाकू खाने-पीने और अफीम, ताड़ी, दारू, आदि व्यसनों की आदतें छुड़ाने का प्रयत्न किया जाता। कहीं-कहीं कामगारों की पंचायतें मुकर्रर करके उनके द्वारा व्यसन रोकने का और सामाजिक रीति-रस्म सुधारने का प्रचार किया जाता। संघ की शाखाओं ने खुद भी कामगारों की भलाई के लिए कई काम किये। सस्ते अनाज की दूकानें चलायी गयीं, शुद्ध तेल के लिए बैल घानियाँ चलायी गयीं, बिना कुटे चावल का उपयोग करने के लिए प्रचार किया गया, कहीं-कहीं ग्रामोद्योगी वस्तुओं की दूकानें चलायी गयीं, शास्त्रीय आहार और सफाई का प्रचार किया गया, कहीं कहीं कुएँ और नालियाँ भी बनायी गयीं। आयुर्वेदिक या होमियोपैथिक औषधि मुफ्त देने का काम तो

बहुत कुछ हुआ, प्रायः हरएक शाखा में कुछ औषधालय चले। कहीं प्राथमिक शालाएँ तथा कहीं उद्योगप्रधान शिक्षा की शालाएँ भी चलायी गयी। वाचनालय खोले गये और प्रौढ-शिक्षा तथा साक्षरता का प्रसार किया गया। कुछ जगह ऋणमुक्ति की योजनाएँ भी चलायी गयी और अस्पृश्यता-निवारण का काम तो प्रायः सब जगह रहा।

ऊपर लिखे प्रकार के काम करीब सन् १९३० से शुरू हो गये थे। वे धीरे-धीरे बढते गये और आखिर तक चलते रहे। यह नही कह सकते कि वे बडे पैमाने पर हुए या सबके सब हरएक शाखा मे हुए, फिर भी हरएक शाखा मे उनमे से कुछ न कुछ होते जरूर रहे। बाद मे चरखा-सघ का नवसस्करण हुआ, तब तो खादी समग्र ग्रामसेवा का प्रधान अंग बनी।

मजदूरी बढने से फायदे

यह जीवन-निर्वाह मजदूरी का प्रयोग सक्रिय होने के कारण जनता का ध्यान इस महत्त्व के प्रश्न की ओर जोरो से खींचा गया। न्याय नीति के अर्थशास्त्र का प्रचार हुआ। सब ओर उसका स्वागत हुआ। बहुतो ने बडी प्रसन्नता से महँगी खादी खरीदी। कामगारो की आर्थिक दशा मे कुछ सुधार हुआ। उनको पहले जितने ही श्रम मे ज्यादा पैसे मिलने लगे। कुछ अंश मे खादी का नैतिक पहलू उनके ध्यान मे आया। तथापि अधिकतर उनकी दृष्टि आर्थिक ही रही। यद्यपि चरखा-सघ की परोपकारी वृत्ति का उनको ठीक परिचय मिल गया था, तथापि खेद के साथ कहना पडेगा कि उनका चरखा-संघ के प्रति रुख संतोषजनक नही होने पाया। यह भी आशा की गयी थी कि मजदूरी बढने पर वे अधिक से-अधिक काम करके ज्यादा पैसे कमा सकेंगे। पर यह आशा सफल नही होने पायी। कातनेवालो की संख्या बढी, नये कातनेवाले भी बढे, पर व्यक्तिगत काम का परिमाण बढने के बदले कुछ घटा। कामगार-वर्ग की साधारण वृत्ति यही रही कि कामचलाऊ थोडा मिल जाय तो फिर अधिक कमाने की चिन्ता न रखे। एक यह बात अवश्य हुई कि कताई आदि प्रक्रियाओं मे

चरखा-संघ जो सुधार कराना चाहता था, वह अब ज्यादा मजदूरी के कारण करा लेना आसान हुआ। सूत अधिक नम्बर का कतवाना, ठीक नापकी लच्छियाँ बनवाना, बुनाई में सुधार करना, खुद धुनाई करना, आदि सुधार अधिक मजदूरी के कारण कराये जा सके। मध्यप्रान्त के चाँदा जिले में यह अनुभव आया कि उस शाखा की मजदूरी की दर विशेष अधिक होने के कारण कत्तिने और बुनकर, जो विशेष मौसमों में खेती का काम किया करते थे, वे उसे धीरे-धीरे छोड़ने लगे क्योंकि उधर खेती की मजदूरी बहुत कम थी और खेतों में दिनभर कीचड़ में काम करने की अपेक्षा उनको घर-बैठे कताई-बुनाई में ज्यादा पैसा कमा लेना अच्छा लगा। जब खेती-काम में बाधा आने लगी, तब केन्द्र-व्यवस्थापक को उन्हें समझाना पडा और यह कहना पडा कि जो सदा की तरह खेती का काम नहीं करेंगे, उन्हें कताई का काम नहीं दिया जायगा। वे मान गये और सब काम ठीक होने लगे। कताई के बारे में पहले से अनुभव यह था कि जहाँ कताई की परंपरा चालू थी, वहाँ कताई आसानी से बढ़ जाती थी। नयी जगह प्रयास करने पर भी उसका बढ़ना मुश्किल होता। जहाँ अन्य कामों की मजदूरी की दरें अधिक और आर्थिक दशा कुछ ठीक रहती—जैसे कि गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आदि क्षेत्रों में, वहाँ प्रयत्न करने पर भी फुरसत के समय में भी लोग विशेष संख्या में कताई में नहीं लगते थे। जीवन निर्वाह मजदूरी अमल में आने पर जहाँ पहले कताई दाखिल नहीं होने पाती थी, वहाँ उसकी शुरुआत होने लगी।

मजदूरी बढ़ने से खराबियाँ

इस प्रकार मजदूरी बढ़ने से कई लाभ हुए। पर चरखा संघ के खुद के तंत्र में कुछ खराबी आयी। इसके पहले खादी बेचने में स्पर्धा थी। हरएक संस्था अपना माल सस्ता और अच्छा बनाने की कोशिश करती। सारा काम किफायत से होता। खानगी संस्थाएँ कम खर्च में काम चलाकर कुछ बचा लेती थीं, पर चरखा-संघ का खर्च घटना

मर्यादित ही हो सकता था। इसलिए संघ की कई शाखाओं का काम घाटे में चलता। केन्द्रीय दफ्तर से हानि न होने देने पर जोर दिया जाता। शाखाएँ अपनी ओर से भी किफायत के लिए कोशिश करती थीं, क्योंकि उनको दूसरी संस्थाओं के मुकाबले में अपनी खादी टिकानी थी। इस प्रकार अब तक धीरे-धीरे व्यावहारिक कुशलता बढ़ रही थी, पर अब परिस्थिति बदली। महँगी खादी बेचने के लिए यह प्रचार किया गया और वैसा करना जरूरी था कि कामगारों को मजदूरी ज्यादा देना है, तो महँगी खादी खरीदना लोगों का कर्तव्य है मूल्य के बारे में विचिकित्सा करना उचित नहीं। चरखा-संघ की यह नीति तो स्पष्ट थी ही कि कामगारों को मजदूरी ज्यादा-से-ज्यादा देकर तंत्र का कामकाज कम-से-कम खर्च में चलाया जाय, ताकि ग्राहक को खादी यथासंभव कम दामों में मिल सके। लोगों का भी चरखा-संघ पर विश्वास था। वे उसके बिक्रीदरों के बारे में शंका नहीं करते थे। शंका करने को स्थान भी नहीं था, क्योंकि लागत मूल्य के कोष्टक प्रकाशित होते थे, जिनकी जाँच कोई भी कर सकता था। खादी की जो दरें नियत की जाती थीं, उन्हें जनता मान लेती थी। पर अब जीवन-निर्वाह-मजदूरी के कारण खादी की बिक्रीदरों के बारे में एकाधिकार की-सी स्थिति आ गयी और अपनी सुविधानुसार बिक्री के भाव मुकर्रर कर लेने में बाधा नहीं रही। प्रायः ठीक न्याय-नीति से ही काम चला, पर कहीं-कहीं गफलत भी हुई। कताई की मजदूरी सूत के नंबर के मुताबिक दी जाती थी। कहीं-कहीं नंबर निकालने में गलती रह जाती। एकआध जगह गलती भी की गयी। कहीं-कहीं सूत खराब आने पर मजदूरी के कुछ दाम काटे जाते थे, पर उससे बना हुआ माल पूरे दाम पर बिक जाता था। अब किफायत की ओर पहले जैसा ध्यान नहीं रहा। कार्यकर्ता ज्यादा रखे जाने लगे। यों तो कताई आदि में सुधार करने के लिए ज्यादा कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी ही, पर किफायत का अंकुश ढीला होने के कारण नाना प्रकार के खर्च बढ़ने लगे। मजदूरी बढ़ने पर माल के भाव बढ़े तब

पुराने मालका जो सस्ती मजदूरी मे बना था, भाव भी बढ़ाना पड़ा. क्योंकि बिक्री-भाव में पुराने और नये माल का फरक रखना अव्यावहारिक था। कहीं-कहीं यह सावधानी जरूर रखी गयी कि मजदूरी बढ़ने के कुछ समय के बाद ही बिक्री के भाव बढ़ाये गये, ताकि पुराने माल मे कुछ बचत और नये माल मे कुछ नुकसानी, इस प्रकार हानि लाभ समान हो सके। फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि बिक्री-भाव न बढ़ाने की जितनी सावधानी रखनी चाहिए थी, उतनी नहीं रह सकी। परिणाम यह हुआ कि खादी-काम मे आर्थिक बचत होने लगी और जब बचत होती है तो किफायत की नजर मंद हो जाती है। इस प्रकार चरखा-संघ के तंत्र मे शिथिलता आयी। प्रमाणित संस्थाओं ने इस परिस्थिति मे लाभ उठाया। पहले चरखा संघ को कई बार अपना काम हानि में चलाना पड़ा, पर सन् १९३६ के बाद उसे मुनाफा होता रहा, जो कि आगे चलकर सन् १९४५ से बंद हुआ, जब कि चरखा-संघ की नवसंस्करण की नीति अमल में आने लगी। इस दरमियान संघ की अवस्था संपन्न रही। इसका प्रभाव कार्यकर्ताओं पर पड़ा। तपश्चर्या की वृत्ति कम हुई। पैसे की बचत हुई, पर इस नैतिक हानिकी भरपायी करना कठिन हो गया।

कामगार सेवा-कोष

इस बढ़ती हुई बचत का विचार करके सन् १९३७ के मार्च महीने मे संघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया

"संघ की राय है कि बढ़ायी हुई कीमतों के कारण जो अतिरिक्त मुनाफा हुआ है, उसका उपयोग, कत्तिनों और दूसरे कारीगरों को अधिक बढ़िया चरखे और दूसरे आवश्यक औजार मुहैया कराकर और उनको उनके काम के तरीकों की वैज्ञानिक शिक्षा देने के लिए शिक्षकों को तैयार कर और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो दूसरे उपाय आवश्यक समझे जायँ, उनको काम मे लाकर कामगारों की कार्यक्षमता बढ़ाने में किया जाय।

निश्चित हुआ कि प्रत्येक शाखा के ऐसे मुनाफे का १० प्रतिशत

और जहाँ वह शाखा केवल बिक्री काम करती हो, वहाँ का सारा मुनाफा केन्द्रीय दफ्तर मे लाया जाय और अध्यक्ष तथा मत्री को उसका उक्त उद्देश्यो की पूर्ति करने के लिए उपयोग करने का अधिकार दिया जाय। जो बाकी बचे, उसके लिए प्रान्तीय शाखाएँ अपने कार्य के प्रस्ताव खर्च के अन्दाज के साथ केन्द्रीय दफ्तर को भेजे और अध्यक्ष तथा मत्री को अधिकार दिया जाता है कि वे उन पर विचार करे और कार्यकारी मडल के निर्णय की पूर्वाशा मे उन्हे मजूर करे।"

उक्त प्रस्ताव मे से 'कत्तिन-सेवा-कोष' का जन्म हुआ, जिसको आगे चल कर 'कामगार-सेवा-कोष' नाम दिया गया। यह नियम प्रमाणित सस्थाओ को भी लागू किया गया। यह व्यवस्था करने मे यह भी एक हेतु था कि मुनाफा करने का मोह न रहे। प्रमाणित सस्थाओ के लिए भी तदनुरूप नये नियम बनाने पडे, जो १-१-४१ से अमल मे लाये गये।

खादी-बिक्री मे हुँडी-योजना

ऊपर बतलाया गया है कि इस काल के अत मे उत्पत्ति की तुलना मे बिक्री नही बढने पायी, इसलिए माल का स्टाक बढने लगा। रकम रुक गयी और पूँजी की तगी होने लगी। इसका कुछ अश मे मुकाबला करने मे श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणीजी की बम्बई खादी-भडार की हुण्डी-योजना काम आयी। राष्ट्रीय-सप्ताह और चरखा-जयन्ती के सप्ताह मे खादी-प्रेमियो से नगदी रकम लेकर उस रकम की हुँडियाँ दी जाती, जिनके पेटे हुण्डीवाले माल कुछ मर्यादित समय मे खादी-भण्डारो से ले जाते। मुद्दत प्राय ६ माह की रहा करती। इस योजना में यह सुविधा थी कि उस समय ग्राहको से माल पेटे काफी रकम अग्रिम मिल जाती, जो उत्पत्ति-केन्द्रो मे भेजी जाकर केन्द्रो का काम चलाने के काम आती। ग्राहक फुरसत से जब अपनी रुचि का माल भण्डार मे आता, तब ले सकता था। बम्बई के अलावा कुछ अन्य शाखाओ मे भी हुँडी-पद्धति चलायी गयी।

इस पद्धति मे आगे चलकर कुछ दोष भी खडे हुए। यद्यपि खादी

खरीदने की मुद्दत मुकर्रर रहती, तथापि कुछ लोग मुद्दत में माल नहीं खरीदते थे, बहुत देर से भी माल की मॉग करते। इनकार करना सम्भव नहीं था। जब मामूली रीति से माल खरीदा जाता है, तब जो दूकान में माल हो उसमें से पसन्द कर लिया जाता है। लेकिन हुँडी-पद्धति ने यह वृत्ति खड़ी हुई कि अपनी रुचि का माल मिलेगा, तब लेंगे। विशेष किस्मों के माल की मॉग होने लगी। भण्डार के व्यवस्थापक का काम बढ़ने लगा। हुँडियों का हिसाब रखना भी आसान नहीं था। कभी कभी हुँडी का माल दुबारा चला जाता। काफी कार्यकर्ताओं को इस काम में लगा रहना पड़ता। दूसरी शाखाओं ने एक-दो साल काम करके वह छोड़ दिया। बम्बई का काम काफी वर्ष चला, पर वह भी अंत में बन्द कर दिया गया।

ता० १-१-४० से ३१-१२-४० तक

पूँजी बढ़ाना

सघ के बढ़ते हुए काम के लिए उसकी खुद की पूँजी कम पड़ती थी, इसलिए पहले लिखे मुताबिक बैंको से कर्ज लेकर कुछ समय काम चलाया गया। बैंक एक-एक साल के लिए कर्ज दिया करते थे। इस साल में मुद्दत पूरी होने पर कर्ज लौटाने या उसकी मुद्दत बढ़ाने का प्रश्न खड़ा हुआ। यूरोप की लड़ाई के कारण पैसे के बाजार में ऐसी डावाडोल स्थिति खड़ी हुई कि किसीका कर्ज लेकर काम बढ़ाना सुरक्षित नहीं था। बैंको से रकम लेने में माल गिरवी रखना पड़ता, बीमा कराना पड़ता, ऐसी कई दिक्कतें थीं। अत तय हुआ कि बैंको का पैसा लौटा दिया जाय। काम घटाये बिना पैसा लौटाना मुश्किल था। अत दान के रूप में चन्दा करना तय हुआ। श्री जमनालालजी बजाज, सरदार वल्लभभाई पटेल, श्री शान्तिकुमार मुरारजी, श्री डाह्याभाई पटेल आदि महानुभावों ने चन्दे के लिए प्रयत्न किया, जब गांधीजी सितम्बर महीने में बम्बई गये, तब भी चन्दे के लिए प्रयत्न हुआ। इन सब प्रयत्नों के फलस्वरूप सघ को करीब चार लाख रुपये का दान प्राप्त हुआ।

रकम और काम का अनुपात

पिछले साल कर्ज लेकर काम बढाने की कोशिश की गयी, पर अन्त मे यह पाया गया कि काम मे जितनी रकम लगी, उस परिमाण मे काम नही बढा। कही-कही रकम बेकार रुकी पडी रही। अब यह प्रयत्न होने लगा कि कम-से-कम रकम मे ज्यादा से ज्यादा काम कैसे किया जाय। हिसाब लगाकर अनुपात देखा गया। सामान्य हिसाब देखने से पता चला कि रकम का उपयोग किफायत से किया जाय, तो लगी हुई रकम से लगभग चारगुनी कीमत की सूती-खादी बनायी जा सकती अथवा बेची जा सकती है। अर्थात् सालभर मे एक लाख रुपये से करीब दो लाख रुपये की सूती-खादी तैयार करके उतना ही माल बेचा जा सकता है, ऊनी तथा रेशमी माल के लिए रकम अधिक लगती है। सब शाखाओ द्वारा प्रयत्न किया गया कि रकम का उपयोग किफायत से कर अधिक-से-अधिक माल तैयार किया जाय।

वैयक्तिक सत्याग्रह और खादी

सन् १९४० के अन्त मे राजनीतिक वातावरण बदलना शुरू हुआ। काग्रेस ने एक वर्ष की मुद्दत देकर स्वराज्य देने के लिए सल्तनत को चुनौती दी थी, वह मुद्दत पूरी होती आयी। १९४० के अक्तूबर महीने से विश्वयुद्ध के प्रश्न को लेकर अहिंसात्मक प्रचार करने की दृष्टि से वैयक्तिक सत्याग्रह शुरू हुआ। उन्हीं व्यक्तियो को सत्याग्रह करने की इजाजत दी जाती थी, जो नियमित रूप से सूत कातते। खादी की ओर जनता का ध्यान विशेष रूप से गया। खादी की मॉग बढने लगी। वस्त्र-स्वावलम्बन को भी अधिक प्रेरणा मिली। चरखा-क्लब खुले। कताई सिखाने के लिए शिक्षक नियुक्त किये गये। कहीं-कही स्त्री पुरुष नियत समय पर कातने के लिए इकट्ठे होते और नियमपूर्वक कातते। सन् १९३० की राजनीतिक जागृति के समय एक बार कताई बहुत बढ गयी थी। बाद मे वह घटने का एक कारण बुनाई का प्रबन्ध न होना था। इस बार बुनाई का प्रबन्ध करने की कोशिश की गयी। सफल प्रयत्न तो

इतना ही हो सका कि सूत उत्पत्ति-केन्द्रों में भेजा जाकर वहाँ उसकी बुनाई होकर वह खादी कातनेवालों दी जाने लगी। सूत के बदले में भी खादी दी जाती थी। इस व्यवस्था के खर्च का कुछ अंश चरखा-संघ ने सहन किया।

खादी-परीक्षाएँ

अब खादी-उत्पत्ति का काम कुशलता से होने के लिए ऐसे कार्यकर्ताओं का आवश्यकता बढ़ने लगी, जिनको उसके विज्ञान की पूरी जानकारी हो। बुनियादी तालीम के तथा कांग्रेस के रचनात्मक कार्य के लिए भी खादी-विशारदों की माँग बढ़ने लगी। इस वर्ष चरखा संघ ने यह निश्चय किया कि सब प्रान्तों में खादी-विद्यालय स्थापित करके उनमें खादी-विज्ञान की शिक्षा दी जाय, छात्रों की परीक्षा ली जाय और उत्तीर्ण छात्रों को प्रमाण-पत्र दिये जायँ। तदनुसार खादी-प्रथमा, खादी मध्यमा और खादी-विशारद नामक तीन परीक्षाएँ कायम की गयी। प्रत्येक परीक्षा का एक-एक साल का पाठ्य-क्रम बनाया गया।

कामगार-सेवा-कोष का उपयोग

कामगार-सेवा-कोष की बात पहले लिखी जा चुकी है। सन् १९३८ में संघ ने निश्चय किया था कि चरखा-संघ के काम में जो कुछ बचत रहे उसका लाभ धुनाई, कताई, बुनाई आदि काम करनेवाले कामगारों का दिया जाय। अब उस कोष में जो रकम जमा हो, उसका उपयोग किन-किन कामों में किया जाय, इसका विचार करने के लिए एक समिति नवम्बर १९४० में नियत की गयी। इस समिति की सूचना के अनुसार कोष की रकम निम्नलिखित मदों में खर्च करना तय हुआ। ये मद प्रत्येक मद की अहमियत के क्रम से हैं :

१. कामगारों को परिश्रमालयों में या उनके घरों पर दस्तकारी की सब प्रक्रियाएँ कुशलता से करने की तालीम देना,
२. सरंजाम कार्यालय चलाना और सरंजाम वितरण करना,

३. खादी-विद्यालय चलाना,
४. कामगारो के बच्चो को उद्योग और साक्षरता दोनो दृष्टियो से शिक्षा देना,
५. प्रौढ-शिक्षा,
६. खादी-प्रक्रियाओ के सम्बन्ध मे प्रयोग करना,
७. कामगारो मे औषधि-वितरण, स्वच्छता और खानपान के बारे मे उन्हे योग्य शिक्षा देकर आरोग्य के सम्बन्ध मे उनका ज्ञान बढाना,
८. आवश्यक ग्रामोद्योगी वस्तुओ की सस्ती दूकाने चलाना,
९. ऋण मुक्ति की कोशिश करना।
१०. अन्य ऐसी बाते, जिनके लिए अध्यक्ष मजूरी दे।

यह भी निश्चय किया गया कि माल में दोष रह जाने के कारण होनेवाली बचत यानी जिस माल पर सूत की कम मजबूती या खराब बुनाई के कारण मजदूरी कम दी गयी हो, उसके पूरे दाम पर बिक जाने से होनेवाली बचत पर ग्राहको का हक समझना चाहिए। इसलिए बचत मे कितना अश कामगारो का है तथा कितना ग्राहको का, इसका हिसाब देखकर जिसका जितना लाभ हो, उसको पहुँचाना चाहिए।

कामगार सेवा-कोष की रकम खर्च करने के बारे मे भिन्न-भिन्न शाखाओ से भिन्न-भिन्न सूचनाएँ आती रही। अधिकतर प्रवृत्ति औषधालय तथा मामूली पाठशालाएँ चलाने की रहती, परन्तु सघ के सामने तो खादी-काम को लेकर कामगारो का सर्वाङ्गीण हित कैसे किया जा सकता है, यह बात थी। इसलिए खर्च के मद, ऊपर लिखे अनुसार हरएक के महत्त्व का खयाल करके तय किये गये और प्रत्येक मद की तफसील विस्तारपूर्वक निश्चित की गयी। वह खर्च धीरे-धीरे बढता गया, पर धीमी गति से। ध्यान यह रहा कि खर्च व्यर्थ न जाय।

खादी-काम और खर्च का अनुपात

पहले लिखा जा चुका है कि सघ मे बचत होने के कारण तन्त्र मे

दिखाई आने लगा। बचत की रकम कामगार-सेवा कोष में जाने लगी, तथापि आखिर बचत तो होती ही रही। इसलिए व्यवस्था-खर्च उचित मर्यादा में रखने की लगन घटी, क्योंकि खर्च अधिक होने पर भी अन्त में बचत रहने से दोष छिप जाता है। अब यह बिगाड़ दुरुस्त करने की आवश्यकता खड़ी हुई। ऊपर लिखे अनुसार कितने काम में कितनी पूँजी लगनी चाहिए, इसका बन्धन कड़ा करना पड़ा। हर विभाग में कितना खर्च होना चाहिए, काम के हिसाब से खर्च का अनुपात क्या हो, इसकी छानबीन की गयी और खर्च की मर्यादाएँ बाँधी गयीं। शाखाओं से जो बजट मँगाये जाते थे, उनके फार्म निश्चित किये गये। वास्तव में कितना खर्च किया जाना चाहिए और बजट में कितने व्यय का अनुमान किया गया है, इसकी जाँच-पड़ताल कड़ाई से होने लगी। इस विषय में संघ ने सन् १९४० के नवम्बर महीने में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

"शाखाओं के दफ्तर, वस्त्रागार, उत्पत्ति, बिक्री आदि विभागों में भिन्न-भिन्न प्रान्तों में जो खर्च होता है, उसके अनुपात में बहुत कुछ अन्तर पाया जाता है। विशेष परिस्थिति के कारण कुछ फर्क तो रहेगा ही, तथापि खर्च का हिसाब देखने से मालूम होता है कि बहुत-सी शाखाओं में खर्च घटाने की आवश्यकता है। यह सुधार एकाएक बन आना सम्भव नहीं है। इसलिए निर्णय हुआ कि फिलहाल किसी प्रान्त की परिस्थिति विशेष न हो, तो उसके बने माल की पक्की (फुटकर) बिक्री तक २० प्रतिशत से अधिक और थोक बिक्री पर १४ प्रतिशत से अधिक खर्च न आना चाहिए और दूसरों से खरीदे हुए माल की बिक्री पर यातायात-खर्च (रेल-किराया आदि) के अलावा ८ प्रतिशत से अधिक खर्च न आना चाहिए।

ता० १-१-'४१ से ३०-६-'४२ तक

ता० ३०-६-'४२ को संघ के कार्य-काल का दूसरा खंड पूरा होता है। इसके बाद तीसरा खंड शुरू होगा, जब कि उसकी कार्य-पद्धति में नव-संस्करण हुआ।

सघ का प्रारम्भ हुआ, तब हिसाब का साल अक्तूबर से सितम्बर तक का रखा गया था। बाद मे वह १ जनवरी से ३१ दिसम्बर मे बदल दिया गया। पर खादी-बिक्री की दृष्टि से दिसम्बर और जनवरी महीनो मे काम का दबाव बहुत ज्यादा रहता है। उन्हीं दिनो वार्षिक स्टॉक लेकर साल के हिसाब पूरे करने मे कार्यकर्ताओ को ज्यादा काम करना पडता था। इसलिए १९४१ के जून महीने मे निश्चय हुआ कि हिसाबी साल १ जनवरी से ३१ दिसम्बर के बजाय, १ जुलाई से ३० जून का कर दिया जाय। अतः इस वर्ष का कार्य-विवरण १८ मास का यानी ता० १ जनवरी ४१ से ३० जून ४२ तक का प्रकाशित हुआ।

इस वर्ष मे सघ के विधान मे काफी सशोधन किया गया। ता० १७ दिसम्बर १९४१ को नया विधान स्वीकृत हुआ। इसकी तफसील अन्यत्र छपी है।

उपसमितियाँ

सघ का काम बढ चला और वह अधिक पेचीदा होने लगा। बहुत-सी बातो का निर्णय ट्रस्टी-मडल द्वारा समय पर कराना मुश्किल हो जाता था। दूर-दूर बसनेवाले ट्रस्टियो की बार-बार सभा करना आसान नहीं था और सभाएँ उतने समय तक नही चलायी जा सकती थीं, जिसमे सब बातो का पूरा और तफसील से विचार हो सके। इसलिए कुछ विशेष विभागो का काम सुचारु रूप से चलाने के लिए तथा जरूरी मामलो का निर्णय समय पर करने के लिए नीचे लिखी उपसमितियाँ बनायी गयी, जिनकी बैठक समय-समय पर करायी जाकर काम जल्दी निपटाया जाता रहा।

(क) बजट-समिति : इस समिति को अधिकार दिया गया कि वह केन्द्रीय कार्यालय तथा शाखाओ के सब प्रकार के बजटो, नये मकानात बनाने के प्रस्तावो तथा डूबनेवाली उधारी की रकमो को हानि-खाते लिखने के प्रस्तावो पर अतिम निर्णय दे।

(ख) हिसाब-समिति : हिसाब का काम ज्यादा व्यवस्थित करने की दृष्टि से हिसाब-समिति बनायी गयी, ताकि हिसाब-निरीक्षण का सिलसिला ठीक चल सके। इस समिति का कुछ काम शुरू भी हुआ, पर दो साल के बाद उस पर काम करनेवाले सदस्य तथा चरखा-संघ के काम के लिए जैसे आडिटर चाहिए, वे काफी तादाद में न मिलने के कारण हिसाब-समिति का काम आगे नहीं चल सका।

(ग) शिक्षा समिति : इस समिति को खादी-शिक्षा व्यवस्थित करने का काम सौंपा गया। उसको अधिकार दिया गया कि वह संघ के द्वारा संचालित खादी-कला की विभिन्न परीक्षाओं के लिए पाठ्यक्रम निश्चित करे, खादी-परीक्षाओं के लिए विद्यार्थी तैयार करनेवाले खादी विद्यालयों को मान्यता दे, परीक्षाएँ ले तथा उत्तीर्ण विद्यार्थियों को सनदें दे।

पूँजी बढ़ाना

इस समय राजनीतिक क्षोभ अत्यधिक रहा। व्यक्तिगत कानून-भंग के अलावा देश पराधीनता से मुक्त होने के लिए आखिरी लड़ाई लड़ने को मजबूर हो रहा था। खादी की माँग काफी बढ़ी। राष्ट्रीय जागृति के कारण लोगों का ध्यान देहात की तरफ ज्यादा जाने लगा। यूरोप के युद्ध के कारण देहात की बनी चीजों पर निर्भर रहने का समय आया। खादी-उत्पत्ति दुगुनी हो गयी, फिर भी माँग पूरी नहीं होने पायी। उत्पत्ति बढ़ाने की कोशिश की गयी, मगर उसकी अपनी मर्यादाएँ थीं। नये कातनेवाले तैयार करना, सूत अच्छा होना, ओजार बनाना आदि बातें जल्दी कर लेना आसान नहीं था। बुनाई की दिक्कत थी ही। माल के यातायात की भी कठिनाई थी। संघ ने कठिनाइयों को दूर करने की पूरी कोशिश की, फिर भी यथेष्ट सफलता नहीं मिल सकी। पूँजी की भी कमी थी। जनता से काफी दान मिला। इस डेढ़ साल में करीब ७ लाख रुपया दान में प्राप्त हुआ, फिर भी काम के हिसाब से पैसा कम था। अतः संघ ने निश्चय किया कि पूँजी बढ़ाने के लिए दान इकट्ठा करने के अलावा लम्बी मुद्दत का कर्ज लिया जाय, रुई-स्टाक की जमानत पर भी कर्ज लिया जाय,

तथा कामगारो से छोटी-छोटी रकमे जमा लेकर पूँजी बढावी जाय। सघ का अस्तित्व और सारा काम कामगारो की भलाई के लिए ही था। इसलिए यह उचित ही था कि इसमे वे अपना सहयोग दे। उस समय उनकी सख्या करीब साढे तीन लाख थी। उनमे से हरएक छोटी-सी रकम दे तो भी बहुत बडी रकम बन सकती थी। इस काल मे इस प्रकार की पूँजी बढाने का प्रयत्न किया गया। खादी की बढती हुई माँग पूरी करने के लिए अनेक किस्मो के नाना प्रकार के कपडे बनाने की जगह सामान्य उपयोग की सादी चीजो के लायक खादी बनाने की नीति अपनायी गयी।

राहत की तादाद

सन् १९४१-४२ का वर्ष काम की तादाद की दृष्टि से सबसे बढ कर रहा। इसके बाद चरखा-सघ की नीति बदली ओर परिमाण मे काम घटता गया। इस वर्ष करीब एक करोड साठ लाख वर्ग गज खादी की उत्पत्ति हुई, जिसका मूल्य करीब ९१ लाख रुपया था। बिक्री करीब एक करोड तेरह लाख रुपये की हुई। ये आकडे चरखा-सघ तथा प्रमाणित सस्थाओ के है। इसके अलावा अप्रमाणित खादी का काम भी बडी तादाद मे होता रहा। चरखा-सघ का कार्य करीब १५ हजार गाँवो मे चला, जिनमे कत्तिनो की सख्या करीब सवा तीन लाख थी, बुनकरो की २५ हजार और दूसरे कामगारो की ५ हजार। जातिवार विभाजन यह था : चौबीस हजार हरिजन, एक लाख सतासी हजार अन्य हिन्दू, चौहत्तर हजार मुसलमान और दस हजार दूसरे लोग। करीब साढे तीन हजार कार्यकर्ता प्रत्यक्ष चरखा-सघ की विभिन्न शाखाओ मे काम करते थे।

वस्त्र-स्वावलम्बन का काम धीरे-धीरे बढता रहा। सघ ने भी पहले के मुताबिक उसे प्रोत्साहन देने के लिए नाना प्रकार की कोशिशे जारी रखीं।

बिक्री मे नैतिक दृष्टि

युद्ध के कारण बाजार मे मिल के कपडे के दाम बहुत बढ गये। माल महगा तैयार होता था, पर नफाखोरी भी बेहद बढ गयी थी। फिर भी

चरखा संघ का काम तो नैतिक अर्थ-शास्त्र से चलता रहा। उसके पास कुछ पुराना स्टाक था, जिसका पडता महँगा नहीं था। उस समय खादी के भाव बढाये जाते तो कोई दोष नहीं देता, पर उस पूरे डेढ वर्ष के काल में खादी की बिक्री दरें बिल्कुल नहीं बढायी गयी। संघ के ऊनी माल के दाम तो बाजार से करीब २० प्रतिशत कम रहे। कहीं-कहीं लोग खादी-भण्डार को सस्ते कपडे की दूकान कहने लगे। खादी न पहननेवाले भी वहाँ से माल लेने लगे। भडारो को माल का राशनिंग करना पडा। आदतन खादी पहननेवालों को माल देने के बाद जो बचता, उतना ही दूसरो को दिया जाता। यह प्रबन्ध करने मे इस समय तथा इसके बाद भी भडारो को बहुत दिक्कते उठानी पडी। माँग अधिक और माल कम होने के कारण ग्राहको से संघर्ष बना रहता और कई गलतफहमियाँ खडी होतीं।

जीवन-निर्वाह-मजदूरी का काम पूर्ववत् चलता रहा। अब तक बुनाई की दरो मे इसका मान निश्चित नहीं किया गया था क्योंकि बुनाई मे मजदूरी ठीक पडती ही थी। तथापि एकआध प्रान्त मे वह कम दीखी, इसलिए प्रति कच आठ घंटो की मजदूरी कम-से-कम आठ आना निश्चित कर दी गयी।

शिक्षा और शिविर

शिक्षा-समिति ने सन् १९४० मे खादी-परीक्षाएँ तथा प्रत्येक परीक्षा का जुदा-जुदा पाठ्यक्रम नियत किया था। सन् १९४१ के जून महीने मे प्रथम बार खादी प्रथमा की परीक्षा ली गयी। कताई-कार्यकर्ता परीक्षा में ९, खादी-प्रथमा मे १५ और बुनाई-कार्यकर्ता परीक्षा मे ३ विद्यार्थी उत्तीर्ण हुए। इनको प्रमाण-पत्र २६ जून '४२ को गांधीजी के हाथो दिये गये। जून १९४२ मे हुदली-विद्यालय से कताई-कार्यकर्ता परीक्षा मे ७ विद्यार्थी उत्तीर्ण हुए।

खादी-विद्यालय मे नये व्यक्तियो को तैयार करने के अलावा जो चरखा-संघ मे पुराने कार्यकर्ता थे, उनको भी शिक्षा देने की जरूरत थी।

खादी-कला के अलावा सिद्धातो को भी ठीक रीति से समझ कर उनको जीवन मे उतारने की कोशिश करनेवाले कार्यकर्ताओ के बिना जनता मे खादी-काम सही तौर पर बढना सम्भव नही था। इसलिए सघ ने निश्चय किया कि हरएक शाखा मे एक मास की मुद्दत के शिविर चलाये जायँ, जिनमे शाखा के लगभग १० प्रतिशत कार्यकर्ता एकबार मे शामिल हो, ताकि करीब एक वर्ष मे सभी को बारी-बारी से शिविर-जीवन का लाभ मिल सके। शिविर मे कला की शिक्षा के अलावा यह भी व्यवस्था रहे कि बिना किसी नौकर के पाखानो की सफाई तक के सारे काम कार्यकर्ता स्वय करे। जीवन अत्यत सादगी का हो। व्यसनो की तमाम वस्तुएँ वर्जित हो। मध्यप्रात-महाराष्ट्र शाखा ने ऐसे शिविर चलाये। उस समय अन्य शाखाओ की ओर से इस दिशा मे विशेष कुछ नही बन आया।

जुलाई १९४२ से जून १९४४ तक

काम बढाने की तैयारी

सन् १९४२ के ९ अगस्त को 'अग्रेजो, भारत छोडो' (क्विट इडिया) आन्दोलन को लेकर सरकार ने अपना दमनचक्र जोरो से शुरू किया। १९४२ के जून मे चरखा-सघ का काम बढाने की योजना बनायी गयी थी। पूँजी की अडचन दूर करने के लिए तब तक खासी रकम-दान के रूप मे मिलने के अलावा सार्वजनिक सस्थाओ एव खादी-प्रेमियो से कर्ज के रूप मे करीब आठ-नौ लाख की रकम मिल गयी थी। यह खयाल मे रहे कि कर्ज की यह रकम बैको या साहूकारो से नही ली गयी थी। केवल उन सार्वजनिक सस्थाओ और खादी-प्रेमियो से ही मागी गयी थी, जिनका चरखा-सघ तथा खादी-काम पर पूरा विश्वास था। व्याज की दर तीन प्रतिशत से ज्यादा नही थी। राजनीतिक बादलो को मडराते हुए देखकर यह स्पष्ट कर दिया गया था कि चरखा-संघ रकम अदा करने की पूरी कोशिश करेगा, पर किसी कारण वह रकम लौटाने

में असमर्थ रहा, तो कर्ज देनेवालों को अपनी रकम सार्थक गयी मानकर संतोष कर लेना होगा। इन शर्तों पर भी सब को रकम मिली। इसके अलावा उस साल के चरखा-सप्ताह में करीब १० लाख रुपया चन्दा करने का आयोजन किया गया था। चन्दे की टिकटें छपकर तैयार हो चली थीं कि इसी बीच अगस्त महीने में राजनीतिक गड़बड़ शुरू हुई। नया चन्दा करने का विचार स्थगित कर देना पड़ा। लोगों ने जो कर्ज लिया गया था, वह वापस लौटा दिया गया। कुछ प्रान्तों में लोगों ने जो छोटी-छोटी रकमें जमा की थीं, वे भी लौटा दी गयीं।

संकटकालीन व्यवस्था

सन् १९४०,४१ और ४२ में चरखा-संघ का दफ्तर वर्धा में था। १९४२ के सितम्बर महीने में संघ के मंत्री गिरफ्तार कर लिये गये और उसके कुछ समय बाद ही सहायक मंत्री भी। संघ के १८ ट्रस्टियों में से ११ ट्रस्टी और बहुत से प्रान्तीय मंत्री गिरफ्तार किये जाने के कारण संघ का संगठन एक प्रकार से टूट-सा गया। ट्रस्टी-मंडल की आखिरी बैठक सन् ४२ के अगस्त के अन्त में हुई। उस समय का वातावरण तथा भावी लक्षण देखकर श्री विट्ठलदासभाई जेराजाणी को स्थानापन्न अध्यक्ष चुनकर, ट्रस्टीमंडल काम न कर सकने की दशा में उनको संघ का तमाम काम चलाने का अधिकार दिया गया। वर्धा में संघ का काम देखने के लिए कोई न रह जाने के कारण १९४३ के प्रारम्भ में संघ का दफ्तर श्री जेराजाणीजी के पास बम्बई में ले जाया गया। काम की कठिनाइयाँ बढ़ती गयीं। सन् १९४४ की फरवरी में कामकाज की सुविधा के लिए एक अस्थायी सलाहकार समिति बनी, जिसके मंत्री श्री लक्ष्मीबाबू बने थे। उनको भी अपना काम बहुत कठिनाई से करना पड़ा। १९४४ के जून महीने में संघ का दफ्तर सेवाग्राम में लाया गया। बीच में कुछ ट्रस्टी जेल से बाहर आये। सन् १९४४ की जुलाई में संघ के मंत्री और सहायक मंत्री जेल से छूटे। अध्यक्ष गांधीजी भी १९४४ के अगस्त

महीने मे सेवाग्राम पहुँचे । दो वर्ष के बाद सितम्बर १९४४ मे ट्रस्टी-मडल की बैठक हो पायी ।

राजनीतिक प्रहार की आँच

यो तो सघ की एक भी शाखा नही बची, जिस पर सरकार के प्रहार के कारण कुछ-न-कुछ आँच न आयी हो । तथापि मद्रास प्रात की तमिल-नाड, आन्ध्र और केरल की शाखाएँ काफी बच गयीं । १९४२ के ९ अगस्त को ही बिहार-शाखा के काम पर सरकार ने रोक लगा दी । पैसे का व्यवहार बिना इजाजत करने की मनाही कर दी । प्रान्तीय दफ्तर तथा अन्य कई बिक्री-भडार और उत्पत्ति-केन्द्र जप्त कर लिये गये । कुछ भडार जला दिये गये या नष्ट हो गये । १९४३ के जनवरी महीने मे ७३ उत्पत्ति-केन्द्रो मे से केवल २७ केन्द्र रह गये थे । वैसे ही प्रारम्भ मे ही उत्कल प्रान्तीय सरकार ने उत्कल-शाखा के केदुपटना का उत्पत्ति-केन्द्र और दिघरी, भद्रक और जयपुर के बिक्री-भडार जप्त कर लिये । १९४३ के जनवरी महीने मे वे छूटे, परन्तु जयपुर का भण्डार चलाने की मनाही रही । बगाल मे चितगाँव, टिपरा, ढाका, मुर्शिदाबाद, वीरभूम, मालदा, मिदनापुर ओर बाँकुडा ज़िलो के २८ केन्द्र जप्त हो जाने के कारण बन्द हो गये । बगाल-शाखा का बहुत-सा काम बन्द हो गया । जप्ती के बाद केन्द्र एक-एक कर गैरकानूनी घोषित किये गये । जप्त किये हुए माल की रक्षा का कोई प्रबन्ध नही था, इसलिए काफी माल चोरी गया और खराब भी हुआ । कही-कही सघ की ओर से अदालती कार्रवाई करने पर थोडा-सा माल वापस मिला । गुजरात मे बारडोली का स्वराज्याश्रम जप्त कर लिया गया, जिसमे शाखा का प्रान्तीय दफ्तर था । दफ्तर के कागजात नही मिले तथा खादी-विद्यालय बन्द हो गया । कर्नाटक मे हुदली, मुराढ और ब्याडगी केन्द्र बन्द हो गये । कुछ जगह खाना-तलाशियाँ भी हुई और हिसाब जाँचे गये । पजाब मे प्रान्तीय दफ्तर की तलाशी हुई । राजस्थान मे पाँच उत्पत्ति-केन्द्र बन्द हुए, बाकी केन्द्रो मे भी काम कम करना पडा । अजमेर जिले का सारा खादी-

काम सरकार ने जप्त कर लिया। उत्तर प्रदेश मे १९४२-४३ मे श्री गाधी-आश्रम, मेरठ का सारा काम एक बार बन्द-सा हो गया। कुछ केन्द्र जप्त हुए और लूटे गये। काम इतना कम हो गया कि करीब ⅔ कार्यकर्ताओ को मुक्त करना पडा। महाराष्ट्र-शाखा के प्रान्तीय दफ्तर मे और अन्य कई जगह तलाशियाँ हुई। प्रान्तीय दफ्तर के प्रायः सभी कागजात करीब एक साल तक सरकार के पास रहे। असम मे जो कुछ थोडा सा काम चल रहा था, वह तहस-नहस हो गया। सरहद प्रान्त मे थोडा सा काम शुरू हुआ ही था कि वह जिनके जिम्मे था, वे गिरफ्तार कर लिये जाने के कारण बिल्कुल बन्द हो गया। प्रान्तीय शाखाओ के मत्रियो मे आन्ध्र, तमिलनाड, सिन्ध और केरल-शाखाओ के मत्रियो को छोडकर बाकी १२ प्रान्तो की शाखाओ के मत्री जेलो मे बन्द किये गये, जिनमे से बहुत-से नजरबन्द रहे और कुछ तो ९ अगस्त को ही पकड लिये गये थे। सघ और प्रमाणित सस्थाओ के करीब ४ हजार कार्यकर्ताओ मे से करीब साढे पाँच सौ कार्यकर्ताओ को कारावास भोगना पडा, जिनमे से आधे से अधिक सघ से त्यागपत्र देकर गिरफ्तार हुए थे। उत्पत्ति और बिक्री के करीब १२०० केन्द्रो मे से ४०० बन्द हुए। अन्य कई केन्द्रो में काम कम हुआ। इस कारण कुछ समय के लिए करीब १५०० कार्यकर्ताओं को बेकार होना पडा। १५,००० देहातो मे से ६००० देहातो मे काम बन्द हो गया था। कुर्की, लूट, आग आदि से सघ की सपत्ति का भी काफी नुकसान हुआ। इन आँकडो से पाठको को कल्पना आयेगी कि उस समय सघ का काम चलाना कितना मुश्किल हो गया था।

कुछ कमजोरियाँ

यहाँ सघ की एक-दो कमजोरियाँ भी बतला देना ठीक होगा। सल्तनत के रोष का कुछ कार्यकर्ताओ के मन पर काफी असर हुआ। कुछ ने ऐसा महसूस किया कि अब शायद सघ इस अग्निज्वाला से बच नही सकेगा। चरखा-सघ मे कई वर्षा से प्राविडेण्ट फण्ड की योजना चल रही थी।

बहुतेरे कार्यकर्ताओ ने उससे लाभ उठाया था। प्राविडेन्ट फ़ण्ड की रकम अलग नही रखी जाती थी। बही-खातो मे जमा रहकर वह सघ के काम मे लगी रहती थी। अब कुछ मुख्य कार्यकर्ताओ को यह भय हुआ कि अगर सघ टूट जायगा, तो उनके प्राविडेण्ट फण्ड की रकम खतरे मे पड जायगी। इसलिए यह सूचना आयी कि प्राविडेण्ट फण्ट का ट्रस्ट बनाया जाय और उसकी रकम उस ट्रस्ट के मातहत बैंक मे अलग रख दी जाय। चरखा-सघ के कुछ ट्रस्टियो को भी यह सूचना भायी। यह बतलाना जरूरी है कि कुछ ट्रस्टी इसके खिलाफ भी थे और बाद मे यह मालूम हुआ कि बहुत से कार्यकर्ता भी इससे सहमत नही थे। प्राविडेण्ट फण्ड का ट्रस्ट बनाना तय हुआ और बना दिया गया। कुछ शाखाओं ने अपने सब कार्यकर्ताओ के प्राविडन्ट फण्ड की रकम लौटा दी। ऐसा कुछ वातावरण खडा हो गया कि अब सघ नही बचेगा।

बहुतेरे कामगारो को छोटी मोटी रकमे चरखा-सघ मे जमा रहती थीं। उन्होने अपनी रकमो की मॉग नही की। कहीं-कही चरखा-सघ ने उनकी रकमे वापस लेने को उनसे भी कहा, तथापि उन्होने रकम नही उठायी। कुछ थोडी जगह रकमे वापस दे दी गयी।

दिक्कतें

पिछले साल मे लिखे अनुसार खादी की काफी तगी रही। अब माल भी कम होने लगा था। बाजार मे मिल के कपडे के भाव बहुत ज्यादा बढ गये थे, फिर भी कुछ समय तक खादी के भाव सघ की नीति के अनुसार मर्यादा मे ही रहे। आगे चलकर जब मिल के कपडे पर सरकारी नियत्रण हुआ और वह सस्ता बिकने लगा, तब खादी-भण्डारो पर लोगो की भीड कुछ कम हुई। ज्यो ज्यो खाने-पीने की और गुजारे की दूसरी चीजो महँगाई बढती गयी, त्यो त्यो कताई की मजदूरी भी बढानी पडी। कताई की दर जो पहले तीन आने थी, वह अब छः आने तक आ गयी। इसे हम जीवन-निर्वाह-मजदूरी बढी, ऐसा नहीं कहेगे, क्योकि महँगाई की वजह से सब जरूरतो की चीजो के दाम बढ गये थे। कपडे के भाव

बढ़ने से हाथ-बुनाई को प्रोत्साहन मिला, पर हाथबुने कपड़े पर सरकारी नियन्त्रण न होने के कारण व्यापारी लोगों को उनमें मुनाफा करने की खूब गुंजाइश मिल गयी। मिल का सूत बुननेवालों को मुँह-माँगे दाम मिलने लगे, इसलिए बुनकर हाथसूत बुनने का काम छोड़ने लगे। सब ने बुनाई की दरें दुगुनी तिगुनी और अंत में चौगुनी तक बढ़ायीं, फिर भी पूरी तादाद में बुनकर मिलना मुश्किल हुआ। जब मजदूरी इतनी बढ़ी, तब खादी-बिक्री के भाव भी बढ़ाने पड़े। इसमें गलती यह हुई कि पुराना माल जो स्टाक में था, उसके भी भाव बढ़ गये और सब को मुनाफा हुआ।

खादी-काम में कई नयी रुकावटें खड़ी होती गयीं। कई जगह रेल्वे द्वारा रुई जाना बन्द रहा। रुई समय पर न पहुँचने से कताई के काम में शिथिलता आयी। परमिट मिलने में मुश्किल होती थी और थोड़ा सा माल भी बहुत देर से पहुँचता था। सरंजाम बनाने में लोहे की जरूरत थी, वह न मिलने के कारण कई जगह सरंजाम बनाना रुक गया। चरखा आदि सामान की काफी माँग होते हुए भी लोगों को वह मुहय्या नहीं किया जा सका। एक जगह से दूसरी जगह सरंजाम भेजने की भी रुकावट थी। दूसरे सामान की तरह खादी के आवागमन में भी बड़ी कठिनाई रही। जहाँ मालगाड़ी से माल भेजना मुश्किल हुआ, वहाँ उसे सवारी-गाड़ी से भेजने की कोशिश की गयी। कुछ माल पोस्ट पार्सल से भी भेजा गया।

सत्याग्रहियों की कताई

वस्त्र-स्वावलम्बन का काम कुछ बढ़ा, पर दफ्तर को उसकी जानकारी नहीं मिल सकी। उत्तर-प्रदेश तथा पंजाब में वस्त्र स्वावलम्बन का काम काफी बढ़ा। जेलों में सब तरह के मतों के लोग इकट्ठे रहे। उनमें से बहुतों ने उत्साह से सूत काता। गुजरात के साबरमती जेल में जो सूत काता गया, उससे डेढ़ लाख रुपये की खादी तैयार हुई। सब मिलाकर खादी-उत्पत्ति की तादाद यह रही कि रुपयों के आंकड़ों में वह करीब-करीब टिकी रही, पर दरें बहुत ऊँची थीं, इसलिए गजों के हिसाब में

काफी कम रही। राजनीतिक गडबडी से खादी-विद्यालयो को भी बहुत आँच पहुँची। नये खुलनेवाले विद्यालय खुल नही सके। जो थे, उनमे से भी मछलीपट्टम को छोडकर बाकी सब बन्द हो गये।

देशी रियासतो मे खादी-काम

खादी पर अग्रेजी सल्तनत की नजर टेढी रहती थी। देशी राज्य भी विवश होकर उसका कमी-वेशी अनुकरण करते। आन्दोलन तो अग्रेजी हद की तरह देशी हद मे भी पहुँचता ही था। रियासती जनता खादी को अपनाती थी ही। सघ के कुछ बडे-बडे उत्पत्ति-केन्द्र रियासतो मे थे, पर उनको वहाँ के राज्य की ओर से कोई मदद नही थी। तथापि जैसे अग्रेजी हद मे कुछ म्युनिसिपल कमेटियो ने खादी पर चुगी माफ कर दी थी, वैसे कही-कहीं वह रियासतो मे भी माफ थी। गाधीजी ने रियासतो से अपील की थी कि वे आर्थिक दृष्टि से खादी को अपनाये। उनके खादी-दौरे मे सावतवाडी के राजासाहब और कोचीन के राजपरिवार ने खादी-काम के लिए चन्दा दिया था। उस समय सावतवाडी और ग्वालियर राज्य ने अपनी शालाओ मे कताई भी शुरू की थी। इनमे से पहले ने एक खादी-उत्पत्ति-केन्द्र के लिए कुछ पैसा भी दिया। पर विशेष खादी-काम तो मैसूर राज्य ने किया, जिसका जिक्र पहले आ चुका है।

बडौदा राज्य ने भी अपनी हद में उत्पत्ति-केन्द्र चलाने के लिए कुछ पूँजी और खर्च दिया था। कर्नाटक मे मुधोल के राजासाहब ने वहाँ की एक स्थानिक सस्था को खादी-काम के लिए आर्थिक मदद दी। भावनगर राज्य ने भी वस्त्र-स्वावलम्बन के काम मे कुछ मदद दी। सन् १९३४ मे मैसूर राज्य के केन्द्रो मे १,३२,००० वर्गगज खादी तैयार हुई और १ लाख की बिक्री। सन् १९४० मे ऊपर लिखे राज्यों के अलावा औन्ध, मिरज, फलटन, सागली और ग्वालियर राज्यो ने अपने यहाँ खादी-काम का सिलसिला शुरू किया। इन कुछ वर्षो मे आर्थिक मन्दी के कारण सर्वत्र देहाती जनता को मदद की आवश्यकता थी। बहुत-सी रियासतो की इच्छा हुई कि उनके यहाँ भी खादी-काम चलकर

गरीबों को राहत मिले। इसलिए संघ को उधर काम करने के लिए आमन्त्रण आते रहे। उनके पास कार्यकर्ता नहीं थे और राज्य की ओर से काम चलाना खर्चीला भी होता था। इसके अलावा उनकी हद में खादी-बिक्री के लिए गुंजाइश कम थी। अगर वहाँ माल तैयार किया जाता तो संघ को वह खादी बाहर बेचनी पड़ती। ऐसा करना संघ की नीति के अनुकूल नहीं था। इस परिस्थिति का विचार कर सन् १९४० के नवम्बर महीने में संघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया :

"कुछ समय से कई देशी रियासतें अपने-अपने राज्य में गरीब बेकारों के सहायतार्थ खादी-काम करने के लिए संघ की शाखाओं को कहने लगी हैं। चरखा-संघ रियासतों की इस प्रवृत्ति का स्वागत करता है और इसके लिए उनको धन्यवाद देता है। साथ ही बनी हुई खादी बिकने की अड़चन की ओर रियासतों का ध्यान आकृष्ट करता हुआ उनसे आशा रखता है कि रियासत में बनी हुई खादी वहीं बिकवाने में रियासत के अधिकारी भरसक कोशिश करेंगे। रियासतों का खादी-काम व्यवस्थित होने के लिए संघ अपनी शाखाओं को हिदायत देता है कि वहाँ का खादी-काम बढ़ाने में यह नीति रहे कि किसी भी रियासत में उतनी ही खादी तैयार की जाय, जितनी उसकी हद में बिक सके।"

खादी-काम में बचत और कामगार सेवा-कोष का नियम ज्यों-का-त्यों रियासतों को लागू नहीं किया जा सकता था। इसलिए तय हुआ कि बचत की रकम रहे राज्य के पास ही, पर वह संघ के कोष के नियमों का खयाल करके रियासत की हद के कामगारों के हित में खर्च की जाय।

मैसूर का काम ठीक चरखा-संघ की प्रणाली के अनुसार चलता था। वह राज्य संघ से प्रमाणपत्र भी लेता रहा। पर जब सूत-शर्त आयी तब वहाँवालों को भय हुआ कि अब खादी बिकना मुश्किल होगा। कुछ समय सूत शर्त का पालन करके उन्होंने वह बंद कर दी और फिर संघ की लिखा-पढ़ी से चालू की। अन्त में काम निभने की अड़चन समझकर उन्होंने सन् १९४६-४७ से संघ का प्रमाण-पत्र लेना बन्द कर दिया।

इस प्रकार मैसूर राज्य के करीब बीस वर्षों के खादी-काम का चरखा संघ से सम्बन्ध टूटा।

माल की जाति

सन् १९३३ तक खादी के गुण मे जो सुधार हुआ था, उसका सक्षिप्त उल्लेख पहले कर दिया गया है। बाद मे जब स्थानिक खपत पर जोर दिया जाने लगा तो सुन्दरता की दृष्टि कम होकर देहात के लायक माल ज्यादा बनने लगा। फिर राजनीतिक आन्दोलन बढा। जागतिक युद्ध का जमाना आया। खादी की मॉग बहुत बढ गयी। अप्रमाणित व्यापारियो की स्पर्धा बढने से सूत मे खराबी आयी। बुनकरो को मिल का सूत बुनने मे बहुत कमाई होने लगी। हाथ-सूत की बुनाई बिगडी। कपडे का अकाल रहा। खराब खादी भी बिकती रही। कुछ अश मे अच्छा माल भी बनता, पर अधिकाश माल मे बढियापन कायम नहीं रहने पाया।

प्रायः हरएक शाखा मे एक ही जाति का माल भिन्न-भिन्न किस्मो मे निकलता रहा, जैसे कि २७" अर्ज का शर्टिंग ७ पुजम से लगाकर १० पुजम तक भिन्न-भिन्न प्रकार का होता था। यही बात कोटिंग, धोतियो और साडियो की भी थी। अर्ज न्यारे-न्यारे और सूत के धागे भी कमी-बेशी। एक ही किस्म के माल की हर शाखा मे कीमत भिन्न-भिन्न रहती। एक दूसरे से तुलना करना मुश्किल था, अतः शाखा मे काम किफायत से होता है या नहीं, इसका अदाज लगाने मे कठिनाई रहती। इसलिए सन् १९४२ के जून महीने मे सघ ने तय किया कि हर शाखा एक स्टैंडर्ड का निम्नलिखित किस्मो का माल बनाये और मूल्य भी समान रखा जाय। पर युद्ध की परिस्थिति तथा कपडे के अकाल के कारण यह योजना अमल मे नही आ सकी।

किस्म	सूत-अक	पोत	अर्ज-इच
शर्टिङ्ग	८	३२	२९
,,	८	३२	३२

किस्म	सूत-अक	पोत	अर्ज-इच
शर्टिंग	१०	४०	३२
,,	१०	४०	४५
,,	१२	४०	४५
धोती	१०	३६	४५
,,	१२	३८	४५
,,	१४	४२	४५
,,	१६	४४	६०
साडी	१६	४२	४५
,,	२०	४६	५०

———

अध्याय ८ खादी का आध्यात्मिक युग

ता० १-७-'४४ से ३०-६-'४५ तक

खादी : बल और अहिंसा का साधन

यहाँ से खादी का एक नया युग शुरू होता है, जो 'चरखा-सघ का नवसस्करण' नाम से पहचाना जाता है। गान्धीजी जेल से छूटने के बाद सन् १९४४ के सितम्बर महीने मे सेवाग्राम पहुँचे। वे जेल मे थे, तभी उनके दिल मे खादी और अन्य रचनात्मक कार्यक्रमो के बारे मे काफी उथल-पुथल होती रही। सन् १९४२ के आन्दोलन की गतिविधि देखकर उन्होने महसूस किया कि खादी-काम के लिए चरखा-सघ का जो तंत्र चल रहा है, उसे सरकार अपने दमनचक्र से नष्ट-भ्रष्ट कर सकती है एव खादी को मिटा सकती है। अबतक खादीवाले भी अहिसा की इतनी शक्ति प्रकट नही कर पाये है, जिससे जनता विकट परिस्थिति का मुकाबिला कर सके। उनको यह जरूरी दिखा कि चरखा किसी सगठन द्वारा न चलाया जाकर लोग उसे अपने-आप घर-घर चलाये, ताकि सगठन टूटने पर भी वह चलता रहे और आज जो वह अधिकाशतः मजदूरी के लिए जडवत् चलाया जा रहा है, सोच समझकर वस्त्र-स्वावलम्बन के लिए चलाया जाय। इसके अलावा अभी जो चरखा सघ का काम अधिकतर केन्द्रीय दफ्तर से चलता है, उसका विकेन्द्रीकरण होना जरूरी है। केन्द्र के भरोसे न रहकर अगर गाँव, तालुका या जिला अपनी खुद की प्रेरणा से खादी-काम करे, तो जनता मे स्वयस्फूर्ति से अधिक जागृति आये। गरीबो को राहत पहुँचाने के विचार से जो उत्पत्ति-बिक्री का काम चल रहा है, वह भी शहरवालो की दया पर निर्भर है। ऐसी दशा आनी

चाहिए कि कामगार किसीकी दया के पात्र न रहकर खुद अपने पुरुषार्थ से अपने पैरो पर खडे रहने की शक्ति हासिल करें और जनता की अहिंसा की शक्ति बढे।

समग्र सेवा

दूसरी महत्त्व की बात यह थी कि गॉवों के रचनात्मक कामो के लिए जो चरखा-सघ, ग्राम-उद्योग सघ हिन्दुस्तानी तालीमी सघ आदि सस्थाएं बनी हैं, वे अपने-अपने दायरे का काम अलग-अलग कर रही हैं। एक के काम का दूसरे से सम्बन्ध कम आता है। हरएक का कार्यकर्ता यही मानता है कि उसको अपने सघ का ही विशेष काम करना चाहिए। खेती-काम की ओर तो अबतक ध्यान ही नहीं गया। लेकिन देहात के काम के ऐसे टुकडे नहीं हो सकते। वहॉ का जीवन समग्र है, इसलिए वहॉ जो कुछ भी सेवा करनी है, वह समग्र दृष्टि से होनी चाहिए। कार्यकर्ता किसी भी एक सघ की ओर से भले ही काम करे, पर उसका खयाल सब तरह के कामो की ओर रहना चाहिए। खादी-काम भी समग्र ग्रामोत्थान के अगभूत चलना चाहिए।

नवसस्करण का प्रस्ताव

ऊपर लिखे विचार गान्धीजी ने कार्यकर्ताओ के सामने रखे। उनको लेकर काफी चर्चाएँ हुई। उनकी कुछ तफसील 'चरखा-सघ का नव-सस्करण' नामक किताब मे छपी है। १९४४ के सितम्बर महीने मे और बाद मे दिसम्बर में चरखा-सघ के ट्रस्टी-मण्डल की सभाएँ हुई। सारी बातो का विचार होकर नीचे लिखा प्रस्ताव स्वीकृत हुआ

"चरखे की कल्पना की जड देहात है और चरखा-सघ की पूर्ण कामना-पूर्ति देहातो तक विभक्त होकर देहात की समग्र सेवा करने मे है। इस ध्येय को खयाल मे रखते हुए चरखा-सघ की यह सभा इस निर्णय पर पहुँचती है कि सघ की कार्य-प्रणाली में निम्नलिखित परिवर्तन किये जायॅ:

१ जितने सुयोग्य कार्यकर्ता तैयार हो और जिनको सघ पसद करे, वे देहातो मे जायॅ।

२. विक्री-भडार और उत्पत्ति-केन्द्र मर्यादित किये जायँ।

३. शिक्षालयो मे आवश्यक परिवर्तन और परिवर्धन किये जायँ तथा नये शिक्षालय खोले जायँ।

४. उतने क्षेत्रवाले, जो एक जिले से अधिक न हो, यदि नयी योजना के अनुसार काम करने के लिए स्वतन्त्र और स्वावलम्बी होना चाहे और यदि सघ स्वीकार करे तो उतने क्षेत्र मे चरखा-सघ अपनी ओर से काम न करे और जब तक वहाँ चरखा-सघ की नीति के अनुसार काम चले, सघ उसे मान्यता और नैतिक बल दे।

५. चरखा-संघ, ग्राम-उद्योग सघ, हिन्दुस्तानी तालीमी सघ, गोसेवा सघ और हरिजन-सेवक सघ इन सस्थाओ की एक सम्मिलित समिति बनायी जाय, जो समय-समय पर इकट्ठा होकर नयी कार्य-प्रणाली के अनुकूल आवश्यक सूचनाएँ निकाला करे।"

समग्र ग्राम-सेवा और सेवक

अब सघ ओर कार्यकर्ता अपना ध्यान खादी के अलावा दूसरे ग्रामोद्योग, गाँव का स्वास्थ्य, वहाँ के लोगो की शिक्षा आदि गाँव की सामाजिक और आर्थिक भलाई की योजना मे देने लगे। पर चरखा-सघ की ट्रस्ट सम्पत्ति खास खादी-काम के लिए होने के कारण उसका उपयोग दूसरे कामो मे नही किया जा सकता था। इसलिए सघ की नीति यह रही कि उसके कार्यकर्ता अपना काम-काज ठीक सम्भालते हुए और सघ की सम्पत्ति का उपयोग खादी-काम मे ही करते हुए समग्र ग्राम-सेवा की दृष्टि से जो सेवा बन सके, वह करे। इसके अलावा समग्र ग्राम-सेवा को बल देने के लिए यह तय हुआ कि सघ के जो कार्यकर्ता सघ का मामूली काम छोड कर ग्राम-सेवा मे लगना चाहे, उनको तथा सघ के बाहर के भी जो भाई-बहन इसमे आना चाहे, उनको सघ निर्वाह-व्यय के लिए ५ वर्ष तक क्रमशः उतरती आर्थिक मदद दे, वे धीरे-धीरे स्वावलम्बी बन जायँ। इस योजना के पीछे विचार यह था कि ग्राम-सेवक का उसके क्षेत्र के लोगो से गहरा परिचय हो जाने तक उसका निर्वाह-व्यय सघ चलाये,

ताकि वह अपना काम निश्चिन्तता से कर सके। बाद में उसकी उतने समय की ठोस सेवा से वह अपने क्षेत्र के लोगो का इतना विश्वासपात्र बन जाय कि वहाँ की जनता ही उसके निर्वाह का प्रबन्ध कर दे। उसके निर्वाह के लिए यह भी एक मार्ग खुला था कि वह खुद ट्रस्टी के तौर पर कोई ग्रामोद्योग चलाये या कोई स्थानीय समिति बना कर उसके जरिये चलाये। लेकिन ऐसी व्यवस्था न हो सके तब तक सघ उसे कुछ मर्यादित आर्थिक मदद दे। यह बात यो उसके खुद के निर्वाह की हुई, लेकिन गॉव मे जो सेवा का कार्यक्रम चलाना था, उसके बारे मे तो यही उम्मीद रखी गयी थी कि वह आवश्यक साधन-सामग्री क्षेत्र के लोगो से ही जुटा ले। इसका कारण यह था कि बाहर से मदद मिलने की दशा मे स्थानीय जनता की स्थायी शक्ति बढने की आशा कम रहती है और बाहर से आनेवाली मदद बन्द होने पर वहाँ का काम बन्द हो जाने का भय रहता है। काम का प्रारम्भ करने मे अगर स्थानीय लोग आर्थिक मदद न करे तो सेवक उस क्षेत्र की भलाई के ऐसे ही काम हाथ मे ले, जिनमे पैसे की आवश्यकता न हो। इस योजना के अनुसार काम करना कठिन था, फिर भी ठोस स्थायी काम इसी तरीके से हो सकता था। सघ की नीति इस काम मे परखे हुए चुनिन्दे सेवक ही दर्ज करने की रही। प्रथम वर्ष मे केवल १३ सेवक ही दर्ज हुए। उनमे चरखा-सघ का कार्यकर्ता केवल एक था। इनके अलावा देश मे उस समय कई जगह अन्य कार्यकर्ता ग्राम-सेवा करते रहे, हालाकि सघ की योजना म वे शामिल नहीं हुए।

खादी की स्थानीय खपत

विक्री-भण्डार और उत्पत्ति-केन्द्र मर्यादित करने मे तथा विद्यालयो मे परिवर्तन करने मे कुछ समय लगा। विकेन्द्रीकरण वहाँ तक जाना था कि लोग अपना सूत खुद कात कर उसे पडोस के बुनकर द्वारा बुनवा कर कपडे का इस्तेमाल खुद करें, जैसा कि पुराने जमाने मे होता था। वस्त्र-स्वावलम्बन का लक्ष्य तो सघ के सामने बहुत समय से था ही, पर

मिल के कपडे के मुकाबले मे वह कैसे सध पाये, यह बडी समस्या थी। तत्काल इसी बात पर जोर दिया गया कि खादी की स्थानीय खपत बढाने की कोशिश की जाय। यह निशाना रखा कि जितने क्षेत्र मे चरखा चलता है, उस क्षेत्र की जन-सख्या के हिसाब से प्रति व्यक्ति कम-से-कम एक वर्ग गज खादी की स्थानीय खपत जल्द ही हो जानी चाहिए।

सूत-शर्त

अब कताई व्यापक बनाने की दृष्टि से एक महत्त्व का कदम उठाया गया। यह नियम बना कि खादी की कीमत का कुछ हिस्सा खुद, परिवार मे, मित्रो द्वारा या स्थायी नौकरो द्वारा कते हुए सूत के रूप मे देना चाहिए। आरम्भ मे सूत की मात्रा रुपये पीछे दो पैसे की रख कर बाद मे वह एक लटी कर दी गयी। यद्यपि कई लोग यह सूत-शर्त पसन्द नहीं करते थे, तथापि खादी-प्रेमी लोग अधिक सख्या मे कातने लगे। पूनियो और चरखो की माँग खूब बढी। शाखाएँ वह पूरी नहीं कर सकी। प्रान्त-प्रान्त की स्थिति भिन्न-भिन्न रही। कई जगह खादी ग्राहक नियम के पालन की पर्वाह न कर कहीं से भी सूत मोल लेकर खादी खरीदने के लिए भण्डार मे देते रहे।

स्वतन्त्र खादी-काम

खादी-काम विकेन्द्रित करना था, यानी छोटे-छोटे क्षेत्रों के लिए स्वतन्त्र खादी-सघ बनाने थे, जो चरखा-सघ से स्वतन्त्र स्वयपूर्ण हो। जो सस्थाएँ ऐसा विकेन्द्रित काम करने को तैयार हो, उनको मान्यता देने के नियम बनाये गये। तय हुआ कि ऐसी सस्था का कार्य-क्षेत्र छोटा-सा हो, एक जिले से अधिक कदापि न हो। उसका उद्देश्य खादी, अन्य ग्रामोद्योग, बुनियादी शिक्षा, गो-सेवा, खेती-सुधार, अस्पृश्यता-निवारण आदि कामो द्वारा देहाती जनता की समग्र सेवा करते हुए परस्पर सहयोग और आर्थिक स्वावलम्बन का जीवन साधने का प्रयत्न करना तथा उनकी आर्थिक, सामाजिक, नैतिक एव सर्वाङ्गीण उन्नति करना हो। यह आवश्यक समझा गया कि ऐसी सस्था के सदस्यो मे से कम-से-कम

तीन सदस्य ऐसे हो, जो अपना सारा समय और शक्ति लगा कर प्रत्यक्ष गॉव मे बैठ कर सेवा-काम करते हो। यह भी जरूरी था कि उस क्षेत्र मे खादी-सरजाम बनाने का तथा क्षेत्र का सारा सूत वही बुन लेने का प्रबन्ध हो। इन नियमो के अनुसार काम करने के लिए सूरत जिले मे कराडी के श्री दिलखुशभाई दिवाण की सस्था आगे आयी। उसको मान्यता दी गयी। करीब दो साल तक उस सस्था ने इस रूप मे अपना काम चलाया, पर बीच मे उसको अपना माल बाहर बेचना पडा या बाहर से माल अपने क्षेत्र मे लाना पडा। अन्त मे सब नियमो का पालन करना कठिन जान पडा, इसलिए उसने यह स्वतन्त्र रूप का काम छोड दिया।

चूँकि अब खादी-काम मे व्यापारिक बात कम-से-कम रखनी थी, इसलिए व्यक्तियो को प्रमाण-पत्र देना बन्द कर दिया गया। केवल बिक्री के लिए भी प्रमाण पत्र बन्द हुआ। प्रमाणित सस्थाओ को खादी-उत्पत्ति करना लाजिमी कर दिया गया।

सम्मिलित समिति

ऊपर लिखे प्रस्ताव मे एक धारा सम्मिलित समिति बनाने की है। सम्मिलित समिति, जिसका नाम बाद मे 'समग्र रचना-समिति' रखना उचित समझा गया, इसलिए बनी थी कि सब अखिल भारत रचनात्मक-सघो का कार्य एक दूसरे के पूरक और मदद रूप मे चले और उनकी सामान्य नीति समान रह सके। इस समिति के अध्यक्ष गान्धीजी बने और मन्त्री श्रीयुत नरहरिभाई परीख। समिति मे सदस्य चरखा सघ की ओर से श्री श्रीकृष्णदास जाजू, हिन्दुस्तानी तालीमी-सघ से श्रीमती आशा देवी, ग्रामोद्योग-सघ से श्री जे० सी० कुमारप्पा, हरिजन सेवक-सघ की ओर से श्री ठक्करबाप्पा और गोसेवा-सघ की ओर से श्री यशवन्तराव पारनेरकर थे। समिति का मुख्य प्रस्ताव यह था कि उसकी नीति सदा सत्य और अहिसा को लेकर रहे। उसका मुख्य उद्देश्य और काम यह हो कि ऊपर लिखे पाँचो सघो के सारे कारोबार मे सत्य-अहिसा का पालन होता है या नही, इसकी देखभाल रखे। आगे चल कर समिति ने यह

तय किया कि उन सघो के जो अलग-अलग विद्यालय चलते हैं, उनमे कुछ बातो मे समानता रहे। सब विद्यालयो के विद्यार्थियो को एक सी खुराक देने का विचार किया गया, पर दीख पडा कि भिन्न-भिन्न प्रदेश की आबोहवा और आदत के अनुसार कुछ फरक रखना पडेगा, लेकिन आहार युक्त हो, मिर्च वगैरह गरममसालो का उपयोग न किया जाय और रोजाना दूध ३० तोले और घी १ तोला देने की कोशिश की जाय। यह भी तय हुआ कि सब छात्रो की कुछ नीति-सम्बन्धी शिक्षा एक-सी हो, जैसे कि सत्य, अहिसा, प्रार्थना, सर्व-धर्म सम-भाव आदि। हरएक सघ के छात्रो को अन्य सभी संघों का परिचय होना चाहिए। सभी सघो के सब कार्यकर्ताओ को सब रचनात्मक कार्यक्रमो के मूलतत्त्वो की अच्छी जानकारी होनी चाहिए। हिन्दुस्तानी भाषा आनी चाहिए और सूत कातने की कला—ओटाई, तुनाई, धुनाई और दुबटा करना—अच्छी तरह सीख लेनी चाहिए। समिति के मन्त्री श्रीयुत नरहरिभाई परीख ने कुछ समय तक समिति का काम किया, पर बाद मे स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण उनको यह जिम्मेवारी छोडनी पडी। उनके बाद समिति का काम स्थगित-सा रहा।

शाखा-मन्त्री की काल-मर्यादा

इस समय मे सघ की प्रान्तीय शाखा के सचालन के तन्त्र मे एक बडी महत्त्व की तबदीली हुई। चरखा-सघ का जन्म हुआ तभी से साधारणतः यह प्रथा रही कि सघ की शाखाओ के जो मन्त्री नियुक्त किये जाते थे, वे प्रायः लम्बी मुद्दत तक उसी पद पर बने रहते थे। सघ के कारोबार मे शाखा-मन्त्रियो का पद विशेष महत्त्व का था। शाखा के काम-काज की नीति और कुशलता अधिकाश मे उन्हीं पर निर्भर थी। अनुभवी सुयोग्य व्यक्ति पद पर रहने से शाखा को उसका लाभ मिलता। पर सघ की कार्य-प्रणाली मे समय-समय पर इतना परिवर्तन होता रहा कि कई पुराने कार्यकर्ता नया कार्यक्रम कुशलता से चलाने मे असमर्थ होते। उम्र का और शारीरिक शक्ति का भी कार्य-क्षमता पर असर होता ही है।

पुराने कार्यकर्ता लम्बी मुद्दत तक उसी पद पर बने रहने से काम-काज मे नया जोश, नये विचार दाखिल होना मुश्किल हो जाता है। अगर किसी पदाधिकारी मे दोष हो तो शाखा को उन्हें वर्षो तक सहन करते रहना पडता। इसके अलावा जवाब-देही का काम सम्भालने लायक नये कार्यकर्ता तैयार नही हो सकते। सघ के सामने उक्त प्रथा मे तबदीली करने का विचार रखा गया। कुछ शाखा-मन्त्रियो ने तबदीली करना पसन्द किया, पर कुछ ने पसन्द नहीं किया। सघ के ट्रस्टियो मे भी आरम्भ मे मतभेद रहा, अन्त मे वह धीरे-धीरे हट गया। सघ ने तारीख २६ मार्च १९४५ की अपनी सभा मे तय किया कि किसी भी शाखा-मन्त्री का कार्यकाल ५ वर्ष से अधिक न हो। मन्त्री-पद से हटने मे यह बात नही थी कि वह सघ से अलग हो जाय, पूरी आशा की गयी थी कि निवृत्त होनेवाले पुराने मन्त्री सघ मे ही रहेगे और अपने अनुभव का लाभ शाखा को तथा बाहर व्यापक क्षेत्र मे भी देते रहेगे।

खादी-जगत्

सन् १९४२ मे 'खादी-जगत्', उसके लेख सेन्सर कराने की सरकार की ओर से रोक लगने के कारण, बन्द करना पडा था। सन् १९४४ मे वह रोक उठाने के लिए सरकार से लिखा पढी की गयी, पर उसने यह शर्त लगायी की 'खादी-जगत्' मे केवल खादी-कला के ही लेख प्रकाशित हो। पर इस पत्र के द्वारा चरखे की विचार-धारा का तथा चरखा अहिसा का प्रतीक होने का भी प्रचार करना था, इसलिए सघ ने सरकार की वह शर्त मानना स्वीकार नही किया। अन्त मे जब वह शर्त हटी तब सितम्बर १९४५ से 'खादी-जगत्' फिर से शुरू हो सका। दरमियान बहुत मेहनत और खर्च उठा कर सघ अपने प्रकाशन का काम परिपत्रो द्वारा चलता रहा।

ता० १-७-'४५ से ३०-६-'४६ तक

सघ की कार्य-पद्धति के सस्करण से जो व्यावहारिक बाते निकली,

उनका नीचे लिखा सूत्र बना। वह गान्धीजी ने अपने हस्ताक्षर से लिख दिया

"कातो, समझ-बूझकर कातो, जो काते वे खद्दर पहने और जो पहने वे जरूर काते।"

(१) समझ-बूझ के मानी है कि चरखा यानी कताई अहिंसा का प्रतीक है, गौर करो, प्रत्यक्ष होगा।

(२) कातने के मानी है कपास खेत से चुनना, बिनौले वेलन से निकलना, रुई तुनना, पूनी बनाना, सूत मनमाना अंक का निकालना और दुबटा कर परेतना।

वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से बुनाई

अब नयी नीति के अमल का संक्षेप मे कुछ विवरण देखे। वस्त्र-स्वावलम्बन के लिए बुनाई का ठीक प्रबन्ध हो जाना बहुत आवश्यक था, पर इस समय कपडे की तंगी के कारण तथा हाथ-करघे के कपड़े पर मूल्य का नियन्त्रण न होने से बुनकरो को मिल का सूत बुनने मे बहुत लाभ होने लगा। सूत की चोर-बाजारी भी होने लगी। बुनकर धीरे-धीरे हाथ-सूत की बुनाई से हटने लगे। इसलिए बुनाई की समस्या अत्यधिक कठिन हो गयी। संघ ने यह कोशिश की कि हरएक खादी-बिक्री-भण्डार मे बुनाई का प्रबन्ध हो, उत्पत्ति-केन्द्रो मे तो कुछ प्रबन्ध था ही। इसमे सफलता कम मिली, क्योकि संघ के उन कार्यकर्ताओ को बुनाई की जानकारी नही थी। कहीं वेतन देकर भी बुनकर रखे गये, पर उसमे खर्च बहुत अधिक हुआ। कई जगह करघे बैठाने लायक मकान नहीं मिले। अब हाथ-सूत बुनना आसान हो, इसलिए वह दुबटा करने पर जोर दिया गया। कपडे की दृष्टि से दुबटा सूत काम मे आ सके, इसलिए बुनाई के कुछ नये प्रयोग किये गये। ताने में दुबटा और बाने मे इकहरा ऐसा कुछ कपड़ा बनाया गया। एकटागी या आधे पात की भी बुनाई की गयी। मामूली चरखे मे यह एक सुधार किया गया कि कातने

के साथ-साथ ही पहले कता हुआ दूसरा सूत भी दुबटा हो सके। इससे अलग से दुबटा करने का समय बचता। नये बुनकर तैयार करने का प्रयत्न किया गया। कुछ ऐसे बुनाई-परिश्रमालय चलाये गये, जिनमे स्त्री-पुरुषो को बुनाई सिखायी गयी। स्त्री-पुरुष चुनने मे यथासम्भव वे अपने-अपने परिवार के ही लिये गये, क्योकि किसी बालक या स्त्री की मदद बिना पुरुष बुनाई मे ठीक कमाई नही कर सकता। खादी-विद्यालयो मे बुनाई-कार्यकर्ता अधिक तादाद मे तैयार करने की कोशिश हुई। यह सारा प्रयास किया गया, पर बुनाई का सवाल विशेष मात्रा मे हल नहीं हो सका। यो ही ऐसे काम सफल करने मे समय लगता ही है। वस्त्र-स्वावलम्बन के सूत की अधिकतर बुनाई उसे खादी-उत्पत्ति-केन्द्रो मे भेजकर करनी पडी। लडाई की परिस्थिति के कारण यातायात की काफी दिक्कत रही।

व्यापक कताई-शिक्षा

सघ ने रूई, कपास तथा सरजाम मुहैया कर देने का तथा कताई और धुनाई सिखाने का कार्यक्रम अधिक जोरों से चलाया, पर वह अधिकतर सघ के जहाँ-जहाँ उत्पत्ति और बिक्री-केन्द्र थे, उनके आसपास ही हो पाया। दूर-दूर तक पहुँचने की उसकी शक्ति नहीं थी। बिक्री-भण्डारो मे कताई-बुनाई सिखाने का प्रबन्ध किया गया। वहाँ हररोज नियत समय मे कताई, बुनाई और धुनाई की प्रक्रियाएँ चालू रहतीं, ताकि लोगो के सामने उनका प्रत्यक्ष प्रदर्शन बना रहे। कुछ शाखाओ मे कार्यकर्ताओं की ऐसी टोलियाँ बनायी गयीं, जो एक स्थान मे कम-से-कम दस व्यक्ति सीखने को तैयार होने पर उस गाँव या शहर मे जाकर कताई-धुनाई सिखाने का काम करती। कहीं-कहीं कताई सिखाने के लिए एक-एक महीने के शिविर चलाये गये। इन शिविरो का काम ठीक रहा। कातने-वालो को पूनियो की भी दिक्कत थी। धुनाई पर जोर दिया गया। पूनियो के सिलसिले मे इस प्रश्न का भी विचार करना पडा कि यन्त्र धुनकियो पर जोर दिया जाय या नहीं। अहमदाबाद मे ईजाद की हुई यन्त्र-धुनकी

गुजरात और राजस्थान मे काफी तादाद मे चलायी गयी थी। इस कारण वहॉ हाथ-धुनाई का काम बहुत कम रह गया था। अब लडाई के जमाने- मे वे बिगड कर फिर दुरुस्त नही होने पायीं। वहॉ पूनियो की अडचन विशेप रूप से बढी। सारी बातो का विचार करके तय हुआ कि यन्त्र- धुनकी को उत्तेजन न दिया जाय, तुनाई पर जोर दिया जाय।

कार्यकर्ताओ की कताई-शिक्षा

जब खादी-खरीदी मे सूत शर्त थी और सब खादी पहननेवालो को कातने के लिए कहना था, तो उनको कताई सिखाने का कुछ व्यापक प्रबन्ध करना भी जरूरी था। इतने नये कताई-शिक्षक एकाएक मिलना सभव नही था और सघ के पुराने कार्यकर्ताओ को उत्पत्ति-बिक्री के घटते हुए काम मे वैसे ही बैठे रखकर कताई-शिक्षा के लिए नये आदमी लाना उचित नहीं था। इसलिए सघ के पुराने सब कार्यकर्ताओ से अपेक्षा रखी गयी कि वे कताई-शिक्षा के काम मे हाथ बटाये। पर उनमे से बहुत से इस कला के सब अगो मे इतने निपुण नही थे कि वे शिक्षक का काम कर सकते। अतः सबको अपनी कुशलता बढाने के लिए कहा गया और उनके लिए कताई-धुनाई की एक सादी-सी परीक्षा रखी गयी। कई शाखाओ मे महीने-दो महीनो के शिविर चलाकर कार्यकर्ताओ को इसकी शिक्षा दी गयी। परीक्षा के लिए क्रियात्मक और बौद्धिक दोनो प्रकार के विषय रखे गये। पर अहिन्दी-प्रान्तो मे वहॉ की स्थानीय भाषाओ मे खादीसम्बन्धी पुस्तके न होने के कारण बौद्धिक शिक्षा का काम अधूरा रहा। क्रियात्मक शिक्षा मे भी कार्यकर्ता धीरे-धीरे तैयार हुए।

सूत-शर्त मे सूत की मात्रा

पहले कहा गया है कि आरम्भ मे सूत की मात्रा खादी के मूल्य पर रखी गयी थी। बाद मे सोचा गया कि शास्त्रीय तरीका तो यह मात्रा कपडे मे लगनेवाले सूत के परिमाण मे ही रहना उचित है। इसलिए इस वर्ष यह नियम बना और वह तारीख १-७-'४६ से अमल मे आया कि खरीद की खादी मे जितनी गुड़ियॉ सूत की लगी हैं, उन पर हर गुडी

पीछे ½ यानी आधी लटी सूत मूल्य के पेटे लिया जाय। पहले बताये कारणों से इस समय खादी कम बनने लगी थी और जो बनती थी, वह भंडारों में आसानी से नहीं पहुँच सकती थी। खादी की मामूली माँग तो थी ही। खादी की यह कमी देखकर कुछ शाखाओं ने इस परिमाण में भी अधिक सूत की मात्रा बढ़ा दी। परन्तु यह पाया गया कि जो नियम के मुताबिक सचमुच अपने परिवार में कता हुआ सूत देना चाहते हैं उन्हें वह अधिक मात्रा की शर्त निभाना भारी था। अन्त में यह नीति स्थिर हुई कि सूत की मात्रा ½ से अधिक न बढ़ायी जाय।

कांग्रेसजन और सूत-शर्त

यहाँ इस बात का उल्लेख कर देना जरूरी है कि कांग्रेस के निर्वाचित सदस्यों को प्रमाणित खादी पहनना लाजिमी था। अब उसकी खरीद में सूत-शर्त लागू होने से उन पर कातने का भी बोझ आया। ऐसे कांग्रेसी सदस्यों में से कई केवल अनुशासन के लिए खादी पहनते थे, श्रद्धा से या विश्वास से नहीं। उनके लिए कातना दुस्सह था। अत. कांग्रेसजनों में सूत-शर्त के प्रति काफी असंतोष रहा। इस विषय में गान्धीजी से प्रश्न भी पूछे गये। उनका उत्तर तात्त्विक मीमांसा के अध्याय में छपा है। उक्त आक्षेप के लिए कुछ जगह थी, पर खादी की प्रगति में सूत-शर्त एक सही कदम था। लेकिन जो उसकी विचारधारा नहीं मानते थे या कताई का प्रयास नहीं करना चाहते थे, उनका समाधान कैसे हो सकता था?

ग्रामसेवक

इस वर्ष पिछले वर्ष की योजना के ग्रामसेवकों की संख्या १८ हुई। इनमें कुछ संघ से आर्थिक सहायता नहीं लेते थे। सभी अपनी जरूरत के मुताबिक ही कम-से-कम लेते थे। वे सब अपना ग्रामसेवा का काम बड़ी लगन से करते रहे। इस कम संख्या को लेकर इस प्रश्न का विचार किया गया कि ग्रामसेवा का यह काम अधिक तादाद में अर्थात्

बहुत से सेवक नियुक्त करके किया जाय या कुछ चुने हुए परखे अनुभवी कार्यकर्ताओ तक ही मर्यादित रहे ? दूसरी बात तय रही, क्योकि अगर जल्दी ही सख्या बढाने की कोशिश की जाती तो कम योग्यतावालो से काम चलाना पडता। ठीक योग्यतावाले कार्यकर्ता अधिक सख्या मे नही मिल सकते। इसके अलावा किसी भी सस्था के लिए ऐसा काम बडे पैमाने पर लम्बी मुद्दत तक चलाना आर्थिक दृष्टि से सभव नही है। प्रयोग थोडे अच्छे कार्यकर्ताओ द्वारा कराकर बाद मे वह अनुभव के अनुसार बढाना सुरक्षित था।

ग्रामसेवको का कार्य

इन कार्यकर्ताओ के कार्य का स्वरूप स्थानीय परिस्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न रहा। हरएक ने अपने-अपने क्षेत्र मे वस्त्र स्वावलम्बन बढाने की कोशिश की। कुछ ने प्रौढो तथा बालको को कताई सिखाने के वर्ग शुरू किये। कुछ के प्रयत्न से गाँवो की पाठशालाओ मे कताई की शिक्षा जारी की गयी। सभीके लिए सफाई का कार्यक्रम तो रहा ही। वे स्वय अपना कुछ समय ग्राम-सफाई मे लगाते। कही-कही सप्ताह मे एक दिन सामुदायिक सफाई की जाती, जिसमे गाँव के कुछ लोग भी शरीक होते। कही-कही खाई के पाखाने, गन्दे पानी के निकास के लिए नालियाँ बनाना, कुँओ के आस-पास की दुरुस्ती आदि काम भी किये गये। कुछ ने बुनियादी पाठशालाएँ चलायी, कुछ ने बालवाडी। दो सेवको ने छात्रो के सूखे—अर्थात् बालक भोजन अपने घर करे, बाकी समय सेवको के पास रहे—छात्रालय चलाये। कही-कही प्रौढशिक्षा की दृष्टि से वाचनालय खोले गये। सभी ग्राम को सामुदायिक प्रार्थना चलाते, वहाँ अखबारो की खबरे सुनायी जाती और गाँव के काम की बाबत चर्चा तथा विचार-विनिमय होता। दो जगह सहकारी दूकाने चालू की गयी। कुछ जगह तेलघानी, हाथचक्की, मधुमक्खी-पालन, हाथ-कागज बनाना, घास की टोकनियाँ बनाना आदि ग्रामोद्योग शुरू किये गये। कुछ जगह ग्राम-पचायते स्थापित कर उनके द्वारा गाँव के झगडे मिटाने की कोशिश

की गयी। इनके अलावा अस्पृश्यता-निवारण, नशे का व्यसन छुड़वाना, बीमारों की दवादारू, प्राकृतिक चिकित्सा, स्त्रियों की उन्नति आदि काम भी किये गये।

समग्र ग्राम-सेवक विद्यालय

व्यवस्थित शिक्षा देकर ग्राम-सेवा के लिए नये कार्यकर्ता भी तैयार करने थे। इसके लिए दो वर्ष का पाठ्यक्रम बनाया गया। कुछ समय तक ऐसा वर्ग चलाने लायक आचार्य नहीं मिले। अन्त में श्री नरहरि-भाई परीख ने इस काम के लिए दो वर्ष देना स्वीकार किया। सघ की ओर से यह समग्र ग्रामसेवक विद्यालय सेवाग्राम मे सन् १९४५ की चरखा-जयन्ती यानी तारीख २ अक्तूबर को शुरू हुआ। वह वर्षभर ठीक चला। बाद मे श्री नरहरिभाई स्वास्थ्य ठीक न रहने के कारण गुजरात चले गये। उनके बाद भी कुछ समय तक वर्ग चला, आखिर बन्द कर देना पडा। सेवाग्राम के अलावा गुजरात मे बोचासन के वल्लभ-विद्यालय मे ऐसा ही एक समग्र ग्रामसेवा का वर्ग चलाया गया। वह भी दो वर्ष चलकर अन्त मे बन्द हो गया।

सहयोगियों और वस्त्र-स्वावलबियों की सख्या बढाना

नवसस्करण मे 'समझ बूझ कर कातने' को गति देना महत्त्व का अग था। उसके व्यावहारिक पहलू को प्रोत्साहन देने के लिए १९४५ के नवम्बर महीने मे सघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया

"चरखा-सघ का ट्रस्टी-मडल सघ की शालाओं तथा खादी-प्रेमियों से निवेदन करता है कि वे भरसक कोशिश कर आगामी ७८ वीं चरखा-जयन्ती तक कम-से-कम ७८ हजार सघ के साधारण सहयोगी बनायें, जिनमे कम-से-कम आधे वस्त्र-स्वावलम्बी हों।

"साधारण सहयोगी के मानी है, वह व्यक्ति जो सम्पूर्ण आदतन खादी-धारी होते हुए चरखा-सघ को अपना खुद कता हुआ सूत कम-से-कम ६ गुडी वार्षिक दान दे। वस्त्र-स्वावलम्बी के मानी वह व्यक्ति है जो

सम्पूर्ण आदतन खादीधारी होते हुए, अस्वास्थ्य या ऐसा ही कुछ कारण जिस पर उसका काबू न हो ऐसे समय को छोडकर, बाकी समय मे अपने या अपने परिवार के इस्तेमाल के या दान के हेतु से हर मास नियमपूर्वक कम-से-कम केवल कताई की ७॥ या सयुक्त कताई की ५ गुडी सूत कातता हो।'

(केवल कताई से मतलब पूनी से सूत कातना और सयुक्त कताई से पूनी बनाकर सूत कातना है।)

यह प्रस्ताव अमल मे लाने के लिए कोशिश की गयी। अन्त मे जो ऑकडे मिले, उनका हिसाब यह लगा कि सहयोगियो की सख्या ३५६८६ और वस्त्र स्वावलम्बिओ की ४८५३ दर्ज हुई। यह बात नही थी कि सारे देश मे सम्पूर्ण आदतन खादीधारी या वस्त्र-स्वावलम्बी इतने ही थे। वास्तव मे वे काफी थे। कई खादीप्रेमी सहयोगी नही बने। कइयो के पास संघ के कार्यकर्ता पहुँच भी नही सके। सहयोगियो की सख्या बढाने मे यह भी एक दृष्टि थी कि कार्यकर्ताओ का जनता से अधिक से-अधिक सम्पर्क हो और समझ-बूझ कर कातने एव वस्त्र-स्वावलम्बन तथा खादी के सहचारी भावो का प्रचार हो।

खादी दूर भेजने पर रोक

स्थानीय खपत बढाने का प्रयत्न किया गया, पर उसमे कामयाबी थोडी ही रही। दूसरे प्रान्त मे माल न भेजने की नीति अधिक कडी की गयी। यह पाबन्दी लगायी गयी कि प्रधान दफ्तर की इजाजत के बिना कोई शाखा अपना माल दूसरी शाखाओ को या दूसरे प्रान्त मे न भेजे। इसके अनुसार बहुत थोड़ा माल दूसरे प्रान्त मे जा पाया।

सरकारी नियंत्रण

देशभर मे कपडे की तगी के कारण सभी प्रान्तीय सरकारो को कपडे के मूल्य, वितरण और आवागमन पर नियत्रण करना पडा। सरकार द्वारा मिल का कपडा या खादी मे कोई भेद न होने के कारण नियत्रण के

नियम ज्यों-के-त्यों खादी को भी लागू हो गये। केवल हाथ-करघे के कपड़े के मूल्य पर नियत्रण नहीं था, इसलिए वह खादी को लागू नहीं हो सका।

ता० १-७-'४६ से ३०-६-'४७ तक

कातने के लिए फुरसत

इस वर्ष भी चरखा सघ अपने नवसस्करण की नीति को बढ़ावा देता रहा, वस्त्रस्वावलम्बन पर जोर रहा। इस प्रश्न का अधिक विचार करना पड़ा कि वह मिल के कपड़े के मुकाबले में कैसे टिक सकता है। हल तो यही था कि फुरसत के समय मे (जो बेकार जाता है) कातने मे विशेष खर्च नहीं होता, अगर उस सूत की बुनाई सस्ती हो जाय। यह विचार फिर से सामने आया कि क्या सचमुच लोगो को इतनी फुरसत है? कई स्थानो का अनुभव यह था कि जहाँ कताई की परपरा और और आदत चालू है, वहाँ की स्त्रियाँ काफी सूत कात लेती हैं। तमिल नाड मे अब भी कुछ क्षेत्र ऐसे थे, जहाँ वहाँ की आबादी के प्रतिव्यक्ति आठ वर्गगज कपड़ा बन सके इतना सूत केवल स्त्रियाँ अपना घर का कामकाज करके कात लेती हैं। अगर लड़के और पुरुष भी इस काम मे हाथ बटाये तो फुरसत के समय की हाथ कताई से आवश्यक कपड़े का सूत मिल सकता है। यह सूत कुछ मोटा होगा, महीन के लिए ज्यादा समय चाहिए। कठिन समस्या आलस्य हटने की है, जो कुछ परिस्थितियों का दबाव पड़े बिना हल होना मुश्किल है।

मद्रास सरकार की खादी-योजना

सन् १९४६ के अप्रैल महीने मे धारासभाओ के नये चुनाव होकर देश के ११ सूबो मे से आठ सूबो मे काग्रेसी प्रतिनिधियो के, जो लबे अरसे से खादी को अपनाते रहे, हाथ में राजसत्ता आयी। सन् १९३८ मे जो काग्रेसी मत्रिमडल बने थे, उन्होने खादीकाम को आर्थिक मदद दी थी।

अब फिर से काग्रेसी मन्त्रिमडल बनने पर वे खादी को क्या मदद दे सकते हैं, यह सवाल जैसा खादीप्रेमी जनता के सामने आया, वैसा ही काग्रेसी मन्त्रियो के दिल मे उठना स्वाभाविक था। अब भी वे चरखा-सघ को पैसे की मदद देने को तैयार थे। लेकिन अब परिस्थिति मे बहुत परिवर्तन हो गया था। पैसे की जगह मुख्य बात तो व्यापक वस्त्र-स्वावलबन की थी। इसके लिए यह आवश्यक था कि कपडे की मिलो पर कुछ रोक लगे। चरखा-सघ ने सब सूबो की सरकारो से प्रार्थना की कि वे नयी मिले खडी न होने दे और पुरानी मिलो का काम बढने न दे। केवल मद्रास सरकार ने इस ओर कदम उठाया। उस समय वहाँ के मुख्यमत्री श्री टी० प्रकाशम् थे। उन्होने अखिल भारत खादी-मडल के समय मे आन्ध्र मे खादी का काम किया था। अब मुख्यमत्री होने पर उन्होने मद्रास सूबे के २७ फिरको मे व्यापक वस्त्रस्वावलबन चलाने की योजना बनायी। इसका सम्बन्ध करीब दस लाख लोगो से आता। इतना बडा काम जल्दी कामयाब होना आसान नही था, इसलिए बाद मे चरखा-सघ से मशविरा करके यह हुआ कि वह योजना सिर्फ ऐसे सात फिरको मे ही शुरू की जाय, जहाँ हाथ-कताई बडी तादाद मे चल रही थी। उन क्षेत्रो मे पहले से ही चरखा-सघ काम कर रहा था। तय हुआ कि वे क्षेत्र सरकार के अधीन कर दिये जायँ और वहाँ के सघ के कार्यकर्ता उस योजना मे काम करे और सूबे की हर एक शाखा का मत्री अवैतनिक रीजनल ऑफिसर बनकर योजना का सचालन करे। यह वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना सफल होने के लिए इस बात की जरूरत थी कि उन क्षेत्रो का सूत अप्रमाणित व्यापारी बाहर न ले जायँ और वहाँ क्रमशः मिल का कपडा आना बद हो जाय।

मिले और मद्रास सरकार

सन् १९४६ के अगस्त महीने मे श्री टी० प्रकाशम् के मन्त्रिमडल ने घोषणा की कि मद्रासप्रातीय सरकार अब सूबे मे कपडे की नयी मिले नही खुलने देगी और पुरानी मिलो मे नये तकुवे न बढाये जा सकेंगे। यह घोषणा होते ही बडा तहलका मच गया। मिलवालो, पूजीपतियो
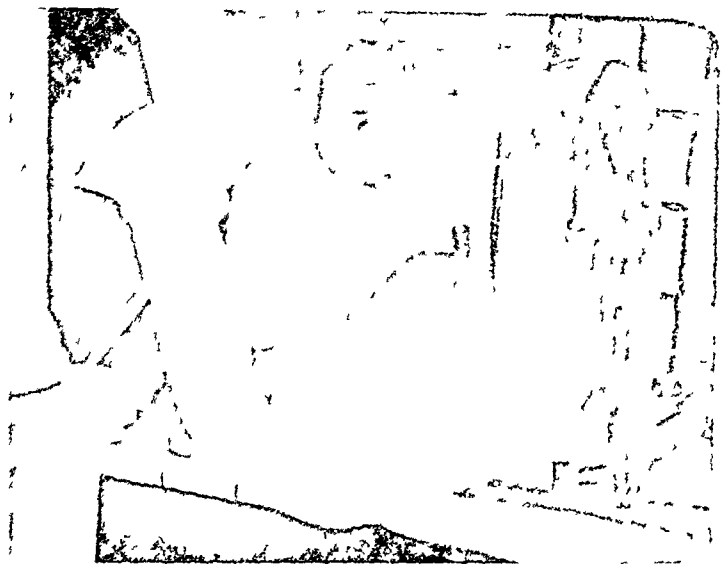
कताई निष्ठा

सन १९२४ की वात है गाधीजी देहलीमे हिन्दू मुसलिम एकताके लिए २१ दिनोका उपवास कर रहे थे, उपवासमे भी वे रोज आधा घटा नियम-पूर्वक काता करते थे उपवास के १३वे रोज डाक्टरोको उनके शरीरमे कुछ खतरनाक चिन्ह दीख पडे सब वहुत चिन्तित हो गये डाक्टरोने सुझाया कि किसीन किसी रूपमे थोडी शक्कर ली जाय और कातना वद कर दिया जाय गाधीजीने कहा, 'शक्कर तो अन्न है वह कैसे ली जा सकती है और कातनेके विषयमे मै इस पवित्र यज्ञमे खंड कैसे पडने दे सकता हूँ, सब प्रार्थना पूर्वक एक दिन राह देखे और फिर सोचे ' दूसरे दिन खतरेके चिन्ह मिटे पाये गये, फिरभी अधिक कमजोरी टालनेके लिए सबने आग्रह किया कि उपवासके वाकीके दिनो मे कातना छोड दिया जाय गाधीजीने कहा डाक्टरलोग पहले मेरी नाडी देख लेवे, कातनेके वाद फिर और देखे मुझे विश्वास है कि जिस भावनामे मै कातता हूँ उससे मेरी नाडी सुधरेगी ' यह उपवास का १४वॉ दिन था सहारा देकर उनको तकियेके आधार वैठाया गया उन्होने आधा घटा ध्यानपूर्वक काता वादमे जाच की गयी तो उनकी नाडी और रक्तका दाव दोनो सुधरे पाये गये

और पढे-लिखे लोगों ने उसका कस कर विरोध किया। बहुतेरे अखबार भी उन्हींका साथ देते रहे। खादी के पक्ष में भी आवाज तो थी ही, पर उसे अखबारवालों का सहारा न मिलने के कारण उसकी खबर जनता तक नहीं पहुँच सकी। उस समय केन्द्र मे अंग्रेजी सल्तनत थी। उसने मद्रास सरकार की मिल्संबधी नीति का विरोध किया। बाद में केन्द्र में जो कांग्रेसी मन्त्रिमडल बना, उसने भी विरोध ही किया। कुछ समय बाद सूबे मे मन्त्रि-मंडल बदला। उसने पुराने मन्त्रियों की मिल्सबधी नीति रद्द कर दी, पर सात फिरकों की खादी-योजना कायम रखी। योजना का अमल धीरे-धीरे होने लगा। बहुत समय बाद अप्रमाणित खादी-व्यापारियों को वहाँ काम बद करने का हुक्म हुआ, पर उन क्षेत्रों में मिल का कपडा न पहुँचने की बात न सध पायी और न सधने की आशा ही रही।

सरकारों को खादी-काम के लिए सघ के सुझाव

चरखा-सघ में भी उस समय की परिस्थिति का खयाल करते हुए सरकारों द्वारा खादी के बारे मे क्या कराया जा सकता है, इसका विचार होता रहा। अंत मे सन् १९४६ के अक्तूबर महीने में चरखा सघ ने नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया

"१. अखिल भारत चरखा-सघ को अपने अनुभव से विश्वास है कि हिन्दुस्तान मे तथा दुनिया के अन्य मुल्कों मे, जैसे कि मलाया आदि मे, अभी जो कपडे की कमी है, वैसी दशा कहीं भी न हो, ऐसी स्थिति बनाने का साधन चरखा और हाथ-करघा है। एक हिन्दुस्तान ही ऐसा मुल्क है, जहाँ पुराने जमाने से हाथ-कताई और हाथ-बुनाई से खादी बनती आयी है और आज कपड़े की मिलों की बहुतायत में भी शुद्ध खादी पैदा हो रही है।

२. जो सरकारें ग्रामोद्योग की आर्थिक रचना को महत्त्व देकर खादी-काम करना चाहती हैं, उन्हें नीचे लिखी बातों की व्यवस्था करना निहायत जरूरी है।

(क) पाँच वर्ष की योजना बनाकर राज्यभर की सब प्राथमिक तथा मिडिल तक की पाठशालाओ और नार्मल स्कूलो मे कताई सिखायी जाय व एक महत्त्व की प्रवृत्ति के तौर पर उसे चलाया जाय और हरएक पाठशाला के साथ हाथ-सूत बुनने का कम-से-कम एक करघा जरूर चले। शालाओ मे बुनियादी तालीम जल्दी-से-जल्दी और अधिक पैमाने पर शुरू करनी चाहिए।

(ख) बहुधन्धी (मल्टीपरपज) सहकारी-समितियाँ स्थापित करके उनके द्वारा ग्राम सुधार के अगभूत खादी-काम करना चाहिए।

(ग) जहाँ अभी कपास की खेती नही होती, वहाँ कपास पैदा होने की व्यवस्था हो तथा ऐसा प्रबन्ध हो कि कातनेवालो को रूई, कपास तथा सरजाम सुविधा से मिल सके।

(घ) खादी-विशारद तैयार करने चाहिए। खादी के बारे मे सशोधन का काम करना चाहिए।

(ङ) ग्रामोत्थान के काम मे कताई का किसी-न-किसी प्रकार सम्बन्ध आयेगा ही, इसलिए सरकार के सहकारी (कोऑपरेटिव) विभाग, शिक्षा-विभाग, कृषि-विभाग तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, लोकल बोर्ड, ग्राम-पचायत आदि के सभी कर्मचारियो को खादी-प्रवेश-परीक्षा पास कर लेनी चाहिए और यह परीक्षा पास किये बिना किसीको इन विभागो मे नये सिरे से नौकरी मे नही लेना चाहिए।

(च) अभी जो मिल के सूत से हाथ-करघे पर बने कपडे के मूल्य पर नियन्त्रण नही है, वह होना चाहिए।

(छ) अप्रमाणित खादी का व्यापार खादी के नाम पर नहीं करने देना चाहिए।

(ज) सरकारी टेक्स्टाइल विभाग मे तथा बुनाई-शालाओ मे केवल हाथ-सूत को स्थान रहे। जेलो मे हाथ-कताई व हाथ-सूत की बुनाई चलनी चाहिए।

३. प्रान्तीय सरकारें तथा देशी रियासतों से प्रार्थना की जाती है कि वे अन्य बातों के साथ ऊपर लिखी बातें करके खादी व्यापक बनाने की कोशिश करें। इस काम को अन्जाम देने के लिए चरखा-संघ और उसकी शाखाएँ भरसक मदद करने को तैयार हैं।

४ चरखा संघ से मशविरा होकर सरकार और मिलों द्वारा ऐसा प्रबन्ध हो कि जिस प्रदेश में हाथ-कताई, हाथ-बुनाई से कपड़े की जरूरत पूरी हो सके, वहाँ मिल का कपड़ा व सूत न भेजा जाय। इसके अलावा नयी मिलें न खोली जायँ तथा पुरानी मिलों में कताई-बुनाई खाली के नये साँचे न लाये जायँ। मिलों का कारोबार सरकार और चरखा संघ की सलाह के मुताबिक चलाया जाय। देश में किसी प्रकार का विदेशी सूत और कपड़ा कतई न आने पाये।

इस काम में सरकार जरूरी कानून पास करे और उस पर अमल करे।

मिलमालिकों से अनुरोध किया जाता है कि वे इस करोड़ों के काम में मदद करें और प्रजा का साथ दें।"

इस प्रस्ताव की नकलें सब सूबों की सरकारों तथा मुख्य मुख्य देशी राज्यों को भी भेजी गयीं और उनसे प्रार्थना की गयी कि वे प्रस्ताव का बन सके, उतना हिस्सा अमल में लाने की कोशिश करें। कुछ थोड़ी जगह इसका विचार हुआ, पर विशेष परिणाम नहीं निकला। केवल बम्बई सरकार ने उसका खास विचार किया।

बम्बई सरकार के खादी के लिए प्रयत्न

बम्बई सरकार ने खादी-प्रेमियों की एक समिति बनाकर खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगों का काम सरकार की ओर से करने का उसे अधिकार दिया और खादी-सम्बन्धी कुछ अन्य योजनाओं के साथ वेडछी क्षेत्र में एक व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना भी मंजूर की।

इसके अलावा उसने हरएक प्राथमिक शाला में—(१) घरेलू बागवानी और खेती, (२) कताई और बुनाई और (३) गत्ते का और लकड़े का काम, इनमें से कोई एक दस्तकारी दाखिल करना तय किया।

कताई-बुनाई दाखिल करना आसान था, इसलिए अधिकतर शालाओ मे कताई शुरू करने की तैयारी होने लगी। कई जिलो मे प्राथमिक शालाओ के अध्यापको को कताई सिखाना शुरू हुआ। इस वर्ष अन्य सूबो की सरकारो द्वारा उल्लेख करने लायक कोई खादी-काम नहीं हो सका।

खादी-सम्बन्धी वातावरण

इस समय देश मे जो खादी-सम्बन्धी वातावरण रहा, उसका यहाँ किंचित् उल्लेख कर देना जरूरी है। यो तो केन्द्र मे तथा सूबो मे काग्रेसी मन्त्रि-मण्डल होने तथा कपड़े की तगी के कारण मौका ऐसा था कि वस्त्र-स्वावलम्बन का काम काफी बढ़ सकता था। पर अब धीरे-धीरे यह बात स्पष्ट होने लगी कि काग्रेसी मन्त्रि-मण्डलो का और काग्रेस के मुख्य अधिकारियो मे से कुछ का अब खादी मे वह विश्वास नही रहा, जो पहले दीख पडता था। इसका प्रभाव छोटी-मोटी काग्रेस-समितियो पर और उनके साथ जनता पर भी पडने लगा। चरखे की प्रतिस्पर्धा मिल पर रोक लगने की बात तो दूर रही, खादी-सम्बन्धी अन्य छोटी-मोटी बातें करने मे भी रस घटने लगा।

विकेन्द्रीकरण

विकेन्द्रीकरण का जिक्र पहले आ चुका है। अब गाधीजी के दिल मे आया कि सघ का विकेन्द्रीकरण जितना जल्द हो सके, उतना अच्छा है। इस विषय मे उन्होने 'हरिजन' मे नीचे लिखा लेख प्रकाशित किया :

"ता० ८, ९ और १० अक्तूबर को दिल्ली मे चरखा-सघ की सभा मे महत्त्व की चर्चाएँ हुई। चर्चा का एक विषय विकेन्द्रीकरण था। विकेन्द्रीकरण खादी की आत्मा है। चरखा सघ यह चाहता है कि हिन्दुस्तान के सात लाख गाँवो मे चरखे और करघे चले, हिन्दुस्तान के करोडो लोग खादी ही पहने और मिलो का नामो-निशान न रहे।

"अब वक्त आ गया है, जब सूबे इसके लिए बिलकुल स्वतत्र या आजाद होना चाहे, तो हो जायँ, सूबे न हो सकें तो जिले, जिले न हो जिले न हो सके तो तालुके और तालुके न हो सके, तो गाँवो के छोटे-

छोटे गिरोह, और वे भी न हो सके तो गाँव स्वतंत्र हो जायँ। हरएक व्यक्ति तो इसके लिए स्वतंत्र है ही।

"यहाँ यह सवाल न उठना चाहिए कि यह कैसे हो? जो चरखा-संघ के मातहत है, वे संघ के मंत्री को ब्योरेवार लिखें, ताकि उसका फैसला किया जा सके। जिनके पास संघ की मिल्कियत हो, उन्हें पैसे लौटाने का इन्तजाम करना पड़ेगा। जो संघ की नीति को अपनायेंगे, उनके लिए नीति का बंधन रहेगा। इस बंधन को मंजूर करना किसीके लिए लाजिमी नहीं। धर्म उसीका, जो उसका पालन करे। धर्म एक ही नहीं होता। मूल या जड़ एक ही होती है, पर शाखाएँ या डालें अनेक हैं। अनेक डालों पर अनेक पत्ते होते हैं। एकता में विविधता संसार का सुन्दर नियम या कानून है। इसलिए चरखा-संघ की नीति यह है कि विकेन्द्रीकरण को जितना बढ़ावा दिया जा सके, दिया जाय। शाखाओं के काम का तरीका ऐसा होना चाहिए, जिससे वे जितने जल्दी स्वाधीनता या आजादी हासिल कर सकें, उतने जल्दी हासिल कर लें।"

उस समय कोई शाखा विकेन्द्रित होने के लिए खुद आगे नहीं बढ़ी। पर विकेन्द्रीकरण का प्रयोग तो करना ही था। बहुत समय से बिहार शाखा स्वतंत्रता चाहती थी। उसे विकेन्द्रित करना तय हुआ। विकेन्द्रित प्रान्त के खादी-काम के बारे में नीचे लिखी नीति तय हुई :

(१) विकेन्द्रित दायरे का काम चरखा-संघ की नीति के अनुसार चलना चाहिए।

(२) जो दायरा विकेन्द्रित होता है, उसमें बनी हुई किसी तरह की खादी दूसरे सूबे या दायरे में नहीं जानी चाहिए और न दूसरे सूबे या दायरे से किसी तरह की खादी उस विकेन्द्रित दायरे में आनी चाहिए।

(३) विकेन्द्रित दायरे का मकसद गाँव-गाँव में ग्रामोत्थान के अंगभूत वस्त्र-स्वावलम्बन के जरिये से खादी बनकर उसका इस्तेमाल बनानेवाले ही करें या उस दायरे में किया जाय, यह होना चाहिए।

(४) विकेन्द्रित काम चलानेवाली संस्था या व्यक्ति देहातियो का ट्रस्टी है, न कि शहरवासियो का।

(५) विकेन्द्रित दायरे मे चरखा-सघ की ओर से किसीको प्रमाणित करना बन्द हो जायगा। विकेन्द्रीकरण करनेवालो को चाहिए कि वे भी प्रमाण-पत्रो का सिलसिला अपनी ओर से न चलाकर जो व्यक्ति या सस्थाए जिस किसी मर्यादित क्षेत्र मे खादी-काम करना चाहे, उस क्षेत्र मे उनको विकेन्द्रीकरण की नीति के मुताबिक काम करने दे।

(६) विकेन्द्रित काम का जिम्मा लेनेवाला व्यक्ति चरखा-सघ का ट्रस्टी न रहे।

(७) कामगार सेवा-कोष की रकम प्रान्त का विकेन्द्रित काम करनेवाली सस्था के अधीन ही रहे और उसका विनियोग चरखा-सघ के कामगार सेवा-कोष के नियमो के मुताबिक हो।

बिहार के साथ साथ उत्तर-प्रदेश को भी विकेन्द्रित करना तय हुआ और वह विकेन्द्रित हुआ। पर दोनो प्रान्तो के विकेन्द्रीकरण मे बडा अतर था। बिहार प्रान्त मे तो चरखा-सघ की सीधी शाखा थी। उत्तर प्रदेश मे वैसी कोई शाखा नही थी। वहाँ केवल एक मत्री रहते थे, जो प्रमाणित सस्थाओ का कामकाज सभाल लिया करते थे। वहाँ की सबसे बडी सस्था श्री गाँधी आश्रम, मेरठ प्रमाणित सस्था के तौर पर बडे पैमाने पर कई जिलो मे काम करती थी। व्यावसायिक सवालो को लेकर उनका चरखा सघ से बहुत दफा मतभेद रहा करता था और चरखा-सघ की नीति उन्हे पसन्द नही थी। इसलिए वे विकेन्द्रित होकर चरखा-सघ से स्वतत्र हो गये। सन् १९४७ के अक्तूबर महीने के आसपास उन्होने सूत-शर्त भी छोड दी। इसके बाद के साल मे उत्कल प्रान्त भी विकेन्द्रित हुआ।

काग्रेस रचनात्मक समिति

१९४७ के फरवरी महीने मे काग्रेस के महामत्री ने रचनात्मक काम को बढावा देने के हेतु सब प्रान्तीय काग्रेस-समितियो के अध्यक्षो और मत्रियो तथा सब अखिल भारत रचनात्मक-सघो के सचालको की

एक सम्मिलित सभा इलाहाबाद मे बुलायी। उसमे रचनात्मक काम के हरएक पहलू पर बारीकी से विचार होकर क्या-क्या करना चाहिए और उसका सगठन क्या हो, इसका निश्चय किया गया। खादी के बारे का अश नीचे मुताबिक था :

"काग्रेस-कमेटियो को खादी के सिलसिले मे यही काम करना चाहिए कि लोग अपने कपडे की जरूरत खुद पूरी कर लें, याने कमेटियाँ केवल वस्त्र-स्वावलम्बन का ही काम करें। अगले साल राष्ट्रीय-सप्ताह के आखिरी दिन याने ता० १३-४-'४८ तक अखिल भारत चरखा-सघ की व्याख्या के मुताबिक एक लाख नये वस्त्र-स्वावलम्बी दर्ज किये जायँ। कार्यक्रम का अमल तारीख ६-४-'४७ से शुरू किया जाय।"

इसके बाद सन् १९४७ के मार्च महीने मे काग्रेस-कार्यसमिति ने उक्त योजना के समर्थन मे एक रचनात्मक कार्यक्रम समिति कायम करके जो प्रस्ताव पास किया, उसका कुछ अश यह है :

"प्रान्तीय काग्रेस-कमेटियो के अध्यक्षो, मत्रियो तथा चरखा-सघ, ग्राम-उद्योगसघ व तालीमी-सघ के प्रतिनिधियो के सम्मेलन ने सर्वसम्मति से रचनात्मक कार्यक्रम के बारे मे जो प्रस्ताव स्वीकृत किया है, उसे काग्रेस-कार्यसमिति सामान्यतः मजूर करती है और अपने मत्रियों को आदेश देती है कि वे नियुक्त की हुई रचनात्मक कार्यसमिति की सलाह के मुताबिक उसे अमल मे लाये।

काग्रेस-कार्यसमिति रचनात्मक समिति को आदेश देती है कि वह हर तीसरे माह अपने कामो तथा रचनात्मक काम की प्रगति का विवरण पेश करे तथा सब काग्रेस-सस्थाओ को आदेश देती है कि रचनात्मक समिति समय-समय पर जो कार्यक्रम बनाये, उन्हे कार्यान्वित करने मे वे पूरा सहयोग दे।"

यहाँ खेद के साथ लिखना पडता है कि इतनी बडी तैयारी से सोचे गये इस कार्यक्रम से कोई फलनिष्पत्ति नही हो सकी। देश की स्थिति कुछ अशान्त जरूर थी, पर विशेष कुछ हो नहीं सका। इस पर से यह

भी अंदाज लगाया जा सकता है कि उस समय काग्रेसजनो मे रचनात्मक काम के लिए कहाँ तक लगन थी।

ता० १-७-'४७ से ३०-६-'४८ तक

राष्ट्रीय झंडा

सन् १९४७ के अगस्त महीने मे भारत को स्वराज्य मिला। यह सबके लिए हर्ष की बात हुई। राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था मे खादी का या खादी की विचारधारा का स्थान क्या रहेगा, यह भविष्य ही बतायेगा।

उसी महीने मे भारत की विधानसभा मे देश का राष्ट्रीय झंडा कैसा हो, इसका निर्णय हुआ। पहले काग्रेसी झंडे पर चरखा अकित किया जाता था, उसकी जगह अब अशोकचक्र रखना तय हुआ। विधानसभा के प्रस्ताव मे लिखा है कि यह चक्र चरखे का अश है। उस प्रस्ताव पर जो भाषण हुए थे, उनमे कहा गया था कि झंडे पर पूरे चरखे का चिह्न रखना झंडा बनाने की प्रथा के अनुसार तथा सुविधाजनक नही है, इसलिए केवल उसका अच चक्र ही रखना सभव हो सकता है। राष्ट्रीय झंडे मे चरखे को इतना महत्त्व देने पर भी उस प्रस्ताव मे यह नहीं लिखा गया कि यह झंडा हाथ-कते सूत के हाथ-बुने कपडे का ही होना चाहिए। कई जगह ये झंडे खादी के बनाये गये, पर नियम मे खादी का बधन न होने के कारण व्यापारियो ने लाखो झंडे मिल के कपडे के बनाये और लोगो ने खरीद कर फहराये।

चरखा-जयंती पर गांधीजी का संदेश

इस साल की चरखा-जयती पर गाधीजी ने यह सदेश दिया :

"खादी का एक युग समाप्त हुआ है। खादी ने शायद गरीबो का एक काम कर लिया है। अब तो गरीब स्वावलम्बी कैसे बनें, खादी कैसे अहिसा की मूर्ति बन सकती है, बताना रहा है। वही सच्चा काम है, उसीमे श्रद्धा बतानी है।"

गांधीजी का निर्वाण

सघ खादी को जनता की शक्ति बढाने और अहिंसा का जरिया बनाने के विविध प्रयत्नो मे लगा ही था कि इतने मे तारीख ३० जनवरी १९४८ को गाधीजी का निर्वाण हुआ। सारे देश मे ही क्या, सारे जगत् मे शोक छा गया। सारे जगत् की हानि तो हुई ही, पर चरखा-सघ के लिए तो वह वज्राघात ही था। उस दिन सघ का एकमात्र आधार टूट गया। क्या यह लिखने की जरूरत है कि चरखा-सघ को अब भी उनकी कितनी जरूरत थी? जिस समय खादी का सितारा तेज नही दीखता था और खादीवालो का रास्ता कुछ धुधला-सा हो गया था, उसी समय वे हमारे बीच से चल बसे। हम यह विश्वास रखे कि उनकी आत्मा लाखो खादी-प्रेमियों को बल देती रहेगी।

रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलन

तारीख १३ मार्च १९४८ को सेवाग्राम मे रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन हुआ। ऐसा सम्मेलन करने का निश्चय गाधीजी के सामने हो चुका था और उसमे वे उपस्थित रहनेवाले थे, पर उनके निर्वाण के कारण वह कुछ देर से हुआ। यह आयोजन, उनके बाद अब रचनात्मक काम कैसा चलाया जाय, इसका विचार करने के लिए था। इसमे देश के राजनीतिक तथा अन्य नेता, रचनात्मक सस्थाओ के सूत्रधार और अन्य बहुत से रचनात्मक कार्यकर्ता सम्मिलित हुए। उसमे काफी गहरा मथन और विचार-विनिमय होकर 'सर्वोदय-समाज' का जन्म हुआ और अखिल भारत रचनात्मक-सघो को जोडनेवाला एक सघ बनाना तय हुआ, ताकि अबतक जो रचनात्मक काम के एक-एक अग का कार्य अपने-अपने दायरे मे अलग-अलग होता था, वह एक दूसरे का पूरक और समग्र दृष्टि से हो और सब सघो का समन्वय हो सके।

सूत-शर्त मे बदल

सन् १९४४ के बाद गाधीजी वस्त्र-स्वावलम्बन पर ही जोर देते रहे

और चाहते थे कि संघ खादी की उत्पत्ति-विक्री से हट जाय। इसी सिलसिले मे खादी-विक्री पर सूत-शर्त लगी थी। पर काग्रेस के निर्वाचित सदस्यों के तथा अन्य खादी पहननेवालो के लिए खादी मिलने का प्रवन्ध रहना जरूरी था। सूत-शर्त वे सब निभा नहीं सकते थे। चरखा सघ को खुद व्यावसायिक काम से हटते हुए भी गरीबो की राहत के और पहननेवालो को शुद्ध खादी मिलने के प्रवन्ध के बारे मे सोचना था ही। इसलिए सघ ने सारी परिस्थिति का विचार करके तारीख १७ मार्च १९४८ को नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया :

"काग्रेस पचायत के उम्मीदवारों के लिए खादी पहनना लाजिमी करके काग्रेस ने भारी कदम उठाया है, ऐसा चरखा-सघ महसूस करता है। इसलिए सबको सहूलियत से खादी मुहैय्या हो, ऐसे खयाल से खादी को प्रमाणित करने की शर्तो मे से सूत-शर्त को चरखा-सघ उठा लेता है। प्रमाणित करने की बाकी शर्तें, जो कि शुद्धता के लिए और मजदूरो के हित मे हैं, रहेगी। इतना करने के उपरात चरखा-सघ अपना पूरा ध्यान इसके आगे वस्त्र स्वावलम्बन के काम पर देगा, यानी उत्पत्ति-बिक्री का काम केवल उत्पत्ति-बिक्री के लिए नहीं करेगा। वस्त्र-स्वावलम्बी लोगो को पूर्ति मे कुछ खादी वह दे सका, तो कुछ समय के लिए देने की कोशिश करेगा। चरखा सघ को इस तरह अपने को परिवर्तित करने मे जो समय लगेगा, उस दरमियान चरखा सघ के द्वारा जो बिक्री होगी, वह उसी तरह सूत-शर्त से होगी जैसी अभी हो रही है।"

कांग्रेस और खादी

काग्रेस ने अपने विधान जो नये परिवर्तन किये थे, उनमें यह एक नियम रखा था कि जो प्राथमिक पचायत के लिए उम्मीदवार हो, उसको आदतन खादी पहनना चाहिए। इसका उल्लेख उक्त प्रस्ताव मे किया है। सघ ने काग्रेस के इस कदम को महत्त्वपूर्ण माना है। पर भविष्य मे इससे खादी का सच्चा कदम आगे कैसे बढेगा, इसकी परीक्षा होना बाकी है; क्योकि खादी को क्यो अपनाना चाहिए, इसके कारण जैसे पहले

गांधीजी और कांग्रेस देश के सामने रखती थी वैसा खुलासा इन दिनों कांग्रेस ने नहीं किया। अब कांग्रेस खादी को वर्दी के सिवा दूसरा कोई महत्त्व देना चाहती है या नहीं, इसका उसके द्वारा कहीं स्पष्टीकरण नहीं मिला। फिर भी संघ ने प्रमाणित संस्थाओं की खादी-बिक्री में सूत-शर्त उठाकर, एक कदम पीछे हटकर, खादी पहननेवालों के लिए सुविधा कर दी तथा प्रमाणपत्र की शर्तें कुछ नरम कीं, ताकि प्रमाणित संस्थाएँ अधिक तादाद में बन सकें।

सरंजाम-सम्मेलन

इस वर्ष चरखा-संघ ने सरंजाम सुधारने के हेतु एक विशेष आयोजन किया। कुछ समय से यह महसूस होने लगा था कि सरंजाम में शोध कुछ व्यवस्थित रीति से किया जाय, स्टेंडर्ड निश्चित किये जायें और मूल्य में भी समानता आये। इसलिए सन् १९४७ अगस्त महीने में सेवाग्राम में एक सरंजाम-सम्मेलन हुआ। उसमें अनेक सूबों के करीब ४० प्रतिनिधि शरीक हुए। यह सिलसिला आगामी वर्षों में भी चालू रखने का निश्चय हुआ। इस सम्मेलन में सरंजामसंबंधी कई महत्त्व की बातें तय हुईं। उनकी तफसील 'खादी-जगत्' के 'सरंजाम-विशेषांक' (अक्तूबर १९४७) में छपी है। इस काम को बढ़ावा देने के लिए एक सरंजाम उप-समिति भी बनायी गयी।

निर्वासितों में काम

पाकिस्तान के बन जाने से सिंध-शाखा बंद हो गयी। बंगाल की खादी-उत्पत्ति का मुख्य हिस्सा पूर्व पाकिस्तान में चला गया। वहाँ की परिस्थिति के कारण तथा कार्यकर्ताओं के अभाव में बंगाल-शाखा बंद कर देनी पड़ी। चरखा-संघ के तथा बिहार खादी समिति के करीब ४० कार्यकर्ता पंजाबी निर्वासितों के काम के लिए सन् १९४८ के अप्रैल महीने में देहली गये। उधर उन्होंने करीब सालभर नाना प्रकार से निर्वासितों की सेवा में मदद की।

जीवन के सुधार की ओर

रचनात्मक काम के विविध सघ जो बाते जनता द्वारा कराना चाहते थे, वे सब चरखा-सघ के कार्यकर्ताओ के जीवन मे भी अमल में लायी जाने की दृष्टि से चरखा-सघ ने तारीख १७ मार्च १९४८ को नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया :

"अखिल भारत (रचनात्मक) सस्थाओ को मिलने का जो विचार उठा है, उसके जड मे एक खास बात यह है कि जुडनेवाली हरएक सस्था के ट्रस्टी, अधिकारी और कर्मचारीगण रचनात्मक काम को समग्र दृष्टि से देखने और सोचने लगे और अपने जीवन मे भी ऐसा बदल करें, जिससे इस काम को केवल प्रचार के ही जरिए नहीं, बल्कि आचार के जरिये बढ़ावा मिले। इस ओर तरक्की हो सकने के लिए यह जरूरी है कि कुछ मूलभूत बातो पर हरएक सस्था के सभी सदस्य और कार्यकर्तागण खुद अमल करे। ऐसे अमल के लिए नीचे लिखी सात धाराएँ तय की जाती है :

(१) महीने मे कम-से-कम एक रोज पाखाना-सफाई का काम करे या गॉव सफाई का कुछ काम करे।

(२) नियमित रूप से सूत काते।

(३) खुद के या परिवार मे कते सूत की या प्रमाणित खादी ही पहने।

(४) जहॉ तक हो सके, ग्रामोद्योगी चीजो का इस्तेमाल करे।

(५) अपने स्थान पर गाय के दूध का इस्तेमाल करना का विशेष प्रयत्न करे।

(६) स्थानीय प्रबन्ध हो, तो अपने बच्चो को बुनियादी तालीम दिलाये।

(७) नागरी, उर्दू तथा दक्षिण प्रान्तो की एक लिपि सीखने का प्रयत्न करे।

"चरखा-सघ की यह सभा निश्चय करती है कि ऊपर लिखी सातो

बातों का पालन सघ के सभी ट्रस्टियो के लिए और तीन लिपियाँ सीखने की आखिरी धारा छोड़कर बाकी छह धाराओं का पालन सभी कार्यकर्ताओं के लिए करना लाजिमी हो। यह आखिरी धारा कार्यकर्ताओ के लिए ऐच्छिक रहे, क्योंकि सघ मे कई ऐसे कार्यकर्ता है जो मातृ-भाषा भी बहुत कम जानते हैं, उनके लिए यह धारा लाजिमी तौर पर लागू करना उचित नहीं।"

सन् १९४८ और १९४९

कांग्रेस और प्रमाण-पत्र

तारीख १९-२-'४८ को काग्रेस कार्य-समिति ने काग्रेस के नये विधान के लिए कुछ मूलभूत बातें तय कीं, जो बाद से महासमिति ने स्वीकार कर ली। खादी-के बारे मे यह नियम बना कि प्राथमिक पचायत के सदस्यो को आदतन हाथ-सूत की बनी खादी पहननी चाहिए। पुराने विधान मे जो सम्पूर्णतया (wholly) शब्द था, वह इसमे शायद गल्ती से रह गया हो। पर मुख्य त्रुटि यह थी कि इसमे खादी के लिए 'प्रमाणित' शब्द नहीं रखा गया। पुराने विधान मे भी यह शब्द नही था, पर कार्य-समिति ने अपने प्रस्ताव द्वारा खादी का अर्थ प्रमाणित खादी ही कर दिया था। अन्त मे जब नया विधान मजूर हुआ तब 'प्रमाणित' शब्द दाखिल कर दिया गया। 'किसके द्वारा प्रमाणित ?' यह प्रश्न बाकी रह गया। महासमिति के एक सदस्य ने चरखा-सघ द्वारा प्रमाणित ऐसा सशोधन पेश किया था, पर वह गिर गया। 'किसके द्वारा प्रमाणित ?' इसका निर्णय करने मे कुछ समय बीता। इधर उत्तर प्रदेश मे श्री गान्धी आश्रम जैसी बडी खादी-सस्था तथा अन्य कुछ पुरानी खादी सस्थाएँ अप्रमाणित रह कर ही बडी तादाद मे खादी-काम करती रही। बिहार खादी-समिति, जिसने उस विकेन्द्रित प्रान्त के खादी-काम की जिम्मेदारी ली थी, विकेन्द्रीकरण की नीति के अनुसार नही चल सकी। उसे खादी-उत्पत्ति-बिक्री पर जोर देते

रहना पडा। अपने प्रान्त की खादी बाहर चरखा-सघ को या प्रमाणित संस्थाओ को भेजने की और बाहर से प्रान्त मे मॅगाने की उसे जरूरत महसूस होने लगी। पर विकेन्द्रीकरण के तथा प्रमाण-पत्र के नियमों के अनुसार ऐसा नहीं किया जा सकता था। इस दशा मे सघ ने उसको सुझाया कि वह प्रमाण-पत्र लेकर काम करे। श्री गान्धी-आश्रम मेरठ को भी प्रमाण-पत्र लेने को सुझाया गया। पर इन दोनो प्रभावशाली सस्थाओ को कुछ समय तक यह बात नही जॅची। इस प्रकार चरखा-सघ के घर मे फूट पडी।

उधर कौन-सी खादी प्रमाणित मानी जाय, इसका निर्णय काग्रेस-महासमिति ने अपनी कार्य-समिति पर छोडा। यो तो चरखा सघ काग्रेस के ही प्रस्ताव से बना था, पर वह स्वतन्त्र था। चरखा-संघ द्वारा खादी-बिक्री पर सूत-शर्त लगने से काग्रेसजन कुछ कठिनाई मे पड गये थे, गोकि बाद मे सघ ने प्रमाणितो के लिए सूत-शर्त हटा कर उसे बहुत कुछ दूर कर दी थी। काग्रेस के सामने यह भी एक प्रश्न था कि काग्रेस के विधान का अमल किसी बाहर की सस्था के प्रमाण-पत्र पर कैसा छोडा जाय। अन्त मे काग्रेस कार्य-समिति ने निश्चय किया कि प्रमाणित मानी चरखा-सघ, प्रान्तीय काग्रेस-समितियॉ, प्रान्तीय सरकारे, श्री गान्धी-आश्रम मेरठ, बिहार खादी-समिति या अन्य कोई सस्था, जिसे काग्रेस कार्य-समिति अधिकार देगी, उनके द्वारा प्रमाणित। अब काग्रेस की दृष्टि से प्रमाण-पत्र देने के लिए अनेक सस्थाएँ खडी होना सभव हो गया। प्रातीय काग्रेस-समितियो तथा सरकारो के पास खादी की या खादी बनवानेवालों की शुद्धता की जॉच के साधन मौजूद नही थे। काग्रेस-कमेटियों मे दलबन्दी की दशा मे किसको प्रमाणपत्र मिलता और किसको नहीं, इसका अन्दाज लगाना मुश्किल था। स्वतत्र चरखा-सघ की स्थापना करने का एक कारण यह भी था कि वह तथा खादी-काम राजनीतिक दलबन्दियों से परे रहे। अब काग्रेस के इस निर्णय से फिर से खादी-काम दलबन्दी मे आने का भय खड़ा हो गया। काग्रेस की इस खादी-व्यवस्था

से सर्वत्र घोटाला होना सभव है और यह भी सभव है कि प्रमाणित-अप्रमाणित का फर्क लुप्त हो जाय। जब प्रमाणित का नियम था, तब भी बहुत से काग्रेसजन अप्रमाणित खादी पहनकर सतोष मान लेते थे। प्रायः उन्हींके लिए जगह-जगह कई अप्रमाणित दूकाने बडी तादाद मे चलती रहीं। अब कहीं से भी प्रमाणपत्र लेना आसान हो गया। जो पहले अप्रमाणित थीं, वे प्रायः सभी अब प्रमाणित हो सकती थीं। इस प्रकार यह कदम शुद्ध खादी को और चरखा-सघ की नीति को गहरी ठेस पहुँचानेवाला रहा। मद्रास सरकार ने एक खादी-नियत्रण कानून बनाया था। वह था तो खादी-व्यापार करनेवालों का नियत्रण करने के लिए, पर उसके आधार पर केवल आन्ध्र-विभाग मे ही करीब एक सौ खादी-व्यापारियो को लायसेस दिये गये, जिससे वे एक प्रकार से सरकार द्वारा प्रमाणित जैसे हो गये। इस गडबड-घोटाले की दशा मे खादी-प्रेमियों की यह राय रही कि प्रमाणपत्र देनेवाली केवल एक ही सस्था चरखा-सघ रहनी चाहिए। भविष्य बतलायेगा कि काग्रेस के इस निर्णय का क्या नतीजा निकलता है।

काग्रेस-कार्यसमिति के उक्त प्रस्ताव को लेकर बम्बई सरकार ने प्रमाणपत्र लेने के लिए एक समिति बनाने का विचार किया था, पर थोडे ही समय में वह विचार छोड दिया गया। सौभाग्य से इसके बाद श्री गाधी-आश्रम मेरठ और बिहार-खादी-समिति ने चरखा-सघ से प्रमाणपत्र ले लिये। पजाब, उत्कल, पश्चिम बगाल और असम-प्रान्तीय सरकारो ने भी इस समय मे जो कुछ खादी-काम शुरू किया था, उसके लिए चरखा-सघ का प्रमाणपत्र ले लिया। मैसूर सरकार ने कई वर्षों तक चरखा-सघ का प्रमाणपत्र लेकर अपना खादीकाम किया था। बाद मे वह सूत-शर्त नहीं निभा सकी, इसलिए उसका सघ से सम्बन्ध छूटा।

प्रान्तीय सरकारें और खादी

सन् १९४७ के जुलाई महीने में ही मद्रास सरकार के प्रधानमन्त्री को चरखा-संघ ने कहा था कि अगर वे अपनी खादी-योजना के सात

फिरको मे व्यापारियो द्वारा मिल का कपडा वेचना रोक नहीं सकते, तो वह वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना कामयाब होना सम्भव नही है। इसलिए वह योजना चलायी नही जाय, इसका फिर से विचार कर लेना चाहिए। मन्त्रीजी ने योजना चलाना तय रखा और व्यापारियो पर रोक लगाने का भी निश्चय किया। पर कुछ बन नही आया। आखिर तारीख २६ अगस्त १९४९ को संघ ने फिर से सरकार को लिखा कि 'या तो उस निर्णय का अमल हो या योजना बन्द करके वे केन्द्र चरखा-सघ को वापस दे दिये जायँ।' फिर से प्रधानमन्त्री ने यही तय किया कि व्यापारियो पर रोक लगानी चाहिए। क्या होता है देखना है। फिर भी मद्रास सरकार ने खादी के लिए जो कुछ किया, उसके लिए वह धन्यवाद की पात्र है। इधर उस योजना के अन्तर्गत कामगारो का वस्त्र-स्वावलम्बन बढाने की दृष्टि से कत्तिनो को सूत के मूल्य के ४० प्रतिशत दाम खादी के रूप मे दिये जाने लगे। मजदूरी के हिसाब से यह हिस्सा करीब आधा होता है। उन फिरको मे खादी-उत्पत्ति काफी होती रही, पर स्थानीय खपत न बढने के कारण माल का स्टाक बढता रहा। मद्रास सरकार के अलावा बम्बई, उत्तर प्रदेश, उत्कल, पश्चिम बगाल और पूर्व पजाब की सरकारो ने भी कुछ-न-कुछ खादी-योजना चलायी। इन योजनाओ मे कम दामो मे चरखे आदि औजार देना, खादी बनाने की प्रक्रियाएँ सिखाना, शिक्षक तैयार करना, नये बुनकर और धुनिये तैयार करना आदि मदद के मद थे। राजस्थान तथा मध्यभारत की सरकारो ने अपने प्रान्त की खादी-संस्थाओ को कर्ज और सहायता के रूप मे मदद की। नेपाल सरकार ने भी खादी-काम को कुछ प्रोत्साहन दिया।

मद्रास की तथा अन्य प्रान्तो की योजनाओ मे एकआध सूबा छोडकर सब जगह यह एक धारा रही कि वस्त्र-स्वावलम्बियो के सूत के बुनाई-खर्च मे कुछ मदद दी जाय। यह बुनाई-मदद भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे एक वर्गगज पीछे चार आने से आठ आने तक थी। हाथ-सूत की बुनाई के लिए बुनकर लोग बहुत दाम माँगते रहे। ग़रीबो को वह ख़र्च भारी

पडता था, इसलिए ऐसी कुछ मदद की जरूरत तो थी ही। पर यह मदद ज्यादा होने मे भी एक खतरा है। वस्त्र-स्वावलम्बी को यह मानकर चलना चाहिए कि उसे या तो बुनाई खुद कर लेनी है या उसके लिए वाजिब खर्च सहन करना है। अगर बुनाई का पूरा खर्च बाहर से मिलता रहे, तो वह बन्द होने की दशा मे जो व्यक्ति वस्त्र-स्वावलम्बन का पूरा महत्त्व नही समझते, उनका कताई-काम छूट जाने का भय है।

बहुत-सी प्रान्तीय तथा रियासती सरकारें इस समय खादी-काम के लिए कुछ-न-कुछ खर्च करती रहीं, पर किसीने भी कपडे की मिलें चलती रहने की दशा मे खादी कैसे टिकेगी, इसका गम्भीरता से विचार किया नहीं दीखता। भारत सरकार ने भी सन् १९४८ मे एक गृह-उद्योग समिति (Cottage Industries Board) नियत की। चरखा-सघ को उसमे अपना एक प्रतिनिधि भेजने को लिखा। मिलो के बारे मे नीति बदले बिना व्यापारिक खादी का क्या सुझाव दिया जा सकता था? सघ ने अपना दृष्टिकोण समझाने के लिए प्रतिनिधि भेजना तय कर समिति को एक अपना बयान भेजा। उसमे यन्त्रोद्योग और ग्रामोद्योग के बीच की आर्थिक व्यवस्था मे प्रधानता किसकी हो, इस सबध की सरकार की नीति स्पष्ट करने को लिखकर सुझाया कि सरकारें चरखा-सघ का सन् १९४६ के अक्तूबर महीने मे पास हुआ प्रस्ताव (पृष्ठ २७३) अमल मे लाने की यथासभव कोशिश करें। पाठशालाओ मे कताई-बुनाई दाखिल करने पर विशेष जोर दिया गया। शिक्षा और किफायत दोनो दृष्टियो से यह सूचना उपयुक्त थी। सघ सब प्रान्तीय सरकारो को भी यह सूचना देता रहा है। कुछने उस पर गौर किया, पर इस दिशा मे विशेष-कुछ बबई सरकार ही कर सकी।

भारत मे विदेशी कपडा

पाठक भूले नहीं होगे कि विदेशी कपडे के बहिष्कार के लिए भारत मे कितना आन्दोलन चला और उसमें कितना त्याग करके कष्ट सहन करना पडा। पौन शताब्दि यह आन्दोलन चला और आखिरी करीब

तीस वर्षो मे उसका स्वरूप बडा तीव्र रहा। उसमे कभी-कभी काफी कामयाबी रही, यद्यपि पूरी कामयाबी तो कभी मिली नही। तथापि अन्त मे जागतिक युद्ध के समय देश मे विदेशी कपडा आना बिलकुल बद हो गया। इतने मे हमे स्वराज्य भी मिल गया, साथ मे विदेशी कपडा रोकने की शक्ति भी। पर इसी समय भारत मे करोडो रुपये का विदेशी कपडा आया। खादीवालो के और देश के लिए भी इससे अधिक कठोर दैव-दुर्विपाक क्या हो सकता है?

प्रमाणित संस्थाएँ

व्यापारिक खादी-काम प्रमाणित सस्थाओ द्वारा कराने की नीति का अमल करने के लिए चरखा-संघ ने इस समय विशेष प्रयास किया। उसके जो उत्पत्ति-बिक्री के केन्द्र चलते थे, उन्हे वह प्रमाणित सस्थाओ को सौपने लगा। उत्तर प्रदेश, बिहार और उत्कल इन तीन सूबो का काम स्वतन्त्र हो चुका था। अब राजस्थान का बहुत-सा काम राजस्थान खादी-सघ तथा अन्य कुछ सस्थाओ को और मध्यभारत का काम मध्य-प्रदेश खादी-सघ को सौंपा गया। गुजरात का बहुत-सा काम पहले से ही स्थानीय सस्थाएँ चलाती थीं। बबई के खादी-भडार मे अधिकतर काम वस्त्र-स्वावलम्बन का ही रहकर खादी-बिक्री नयी प्रमाणित सस्थाओ के हाथ मे गयी। महाराष्ट्र मे भी कुछ थोड़ा-सा प्रयत्न हुआ। मध्यप्रान्त मे नागपुर विभाग को छोडकर महाकोशल का काम नयी सस्थाओ को सौपा गया। आन्ध्र मे कुछ नयी प्रमाणित सस्थाएँ बनायी गयी। तमिलनाड, केरल, कर्नाटक और हैदराबाद में अबतक कुछ विशेष बन नहीं पाया, यद्यपि प्रयत्न होता रहा। प्रमाणित सस्थाओ की सख्या सन् १९४९ मे काफी बढ गयी। इन सस्थाओ का काम पहले की अपेक्षा बहुत अधिक तादाद मे चलने लगा। अब चरखा-सघ के जो कुछ बिक्री-भडार रहे, उनके नाम भी वस्त्र-स्वावलम्बन केन्द्र रखे जाने लगे। उनका स्वरूप भी बदला।

कार्यकर्ताओं की शिक्षा

चरखा-संघ का मुख्य आधार-स्तंभ उसके कार्यकर्ता हैं। वे संघ की नीति का अधिकतर प्रचार अपने जीवन से ही कर सकते हैं। इसमें दो बातें मुख्य हैं एक जीवन की शुद्धता और दूसरा प्रत्यक्ष शारीरिक श्रम। वर्षों से इस ओर संघ का प्रयत्न रहा है। अब इस समय सब कार्यकर्ता खुद बुनाई सीख लें, इस पर जोर दिया जाने लगा। ऐसी भी कुछ योजना बनी कि कार्यकर्ता को कुछ अंश में नियत वेतन देकर बाकी वह बुनाई से कमा ले। यह भी अपेक्षा रखी गयी कि श्रम के जीवन का अमल उसके सारे परिवार में भी हो। सन् १९४८ के नवंबर महीने में सब शाखाओं के प्रधान कार्यकर्ताओं का सेवाग्राम में एक मास का शिविर हुआ। उसके बाद आठ-नौ महीनों में बहुतेरी शाखाओं का एक-एक महीने का शिविर हुआ, जिसमें शाखाओं के कमी-वेशी अधिकांश कार्यकर्ता शरीक हुए। इस प्रकार कार्यकर्ताओं को अपने काम में दक्ष और तत्पर करने का प्रयत्न किया गया। इन शिविरों में संघ के कार्य-कर्ताओं के अलावा बाहर के दूसरे कार्यकर्ता भी शामिल किये गये। उद्देश्य यह था कि उनमें से भी कुछ संघ के काम-लायक तैयार हों।

कताई-मंडल

इस समय चरखा-संघ ने कताई-मंडलों की योजना बनायी। जहाँ वस्त्र-स्वावलम्बी या संघ के सहयोगी कम-से-कम दस हों, वहाँ कताई-मंडल स्थापित किया जा सकता था। यह दस की संख्या बाद में पाँच कर दी गयी। योजना यह थी कि मंडल का एक संचालक रहे, सब सदस्य कम-से-कम एक सप्ताह में एक बार इकट्ठे होकर सूत-कताई करें और रचनात्मक कामसंबंधी चर्चा करके अमल में लाने के लिए कुछ कार्यक्रम बनायें। ऐसे मंडलों को संघ कताई-बुनाई सिखाना, सरंजाम तथा रुई-कपास मुहैया कर देना, सूत की बुनाई का प्रबन्ध करना आदि मदद दे। ऊपर लिखे हुए काम करने के लिए चरखा-संघ के जिन कार्यकर्ताओं को काम करना पड़े, उनका खर्च संघ वहन करे। कताई मंडल को

खादी-बिक्री की एजेन्सी भी दी जा सकती है। सघ का यह खयाल है कि इन कताई-मडलो द्वारा खादीप्रेमियो का रचनात्मक काम के लिए सर्वत्र सगठन बन सकेगा। सन् १९४९ की चरखा-जयती के लिए यही एक कार्यक्रम तय हुआ कि देशभर मे कताई-मडलो की स्थापना की जाय और चू कि यह चरखा जयती ८१ वी थी, इसलिए हर शाखा मे ८१ कताई मडल-स्थापित करने का निशाना रख गया। इस कार्यक्रम के अनुसार करीब तीन सौ कताई-मडल बने और आगे भी उनकी सख्या बढाते रहना तय हुआ।

करीब सन् १९२३ से हर साल चरखा-जयती मनाने का सिलसिला जारी रहा है। इस समय का उपयोग नाना प्रकार से खादी को बढावा देने मे होता रहा। देशभर मे जगह-जगह खादी के विविध कार्यक्रम चलते। तफसील मे जाने की जरूरत नहीं है, फिर भी राजकोट की राष्ट्रीय-शाला के कार्यक्रम का उल्लेख कर देना आवश्यक है। उसके सचालक श्री नारायणदासभाई गाधी रहे। उनका जयती का विशेप कार्यक्रम शायद सन् १९३५ से शुरू हुआ और वह आगे हर साल बढता गया। उसका मुख्य स्वरूप यह रहा कि जयती की जो सख्या हो, उतने दिन पहले से ही हर रोज नियमपूर्वक कातने के लिए लोगो को प्रेरणा दी जाय, कताई की तादाद की खबर उनको तथा चरखा-सघ के दफ्तर मे पहुँच जाय। यह कार्यक्रम वे देशभर के लिए बताते रहे। सोराष्ट्र मे इसका प्रचार विशेप हुआ।

अखिल भारत सर्व-सेवा-सघ

सभी अखिल भारत रचनात्मक सघो को जोडने के प्रयत्न का जिक्र पहले आ चुका है। सन् १९४९ के मार्च महीने मे उसका विधान बन कर यह तय हुआ कि चरखा-सघ, तालीमी सघ, गोसेवा सघ, ग्राम-उद्योग सघ, हरिजनसेवक सघ, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, नवजीवन ट्रस्ट, कुदरती उपचार ट्रस्ट, अखिल भारत आदिवासी सघ और हिन्दुस्तानी मजदूर सघ इन संघो को जोडनेवाला एक अखिल भारत सर्व-

सेवा-संघ बनाया जाय। इसके ५१ तक सदस्य हो सकते हैं, जिनमें जुड़े हुए संघों का एक-एक प्रतिनिधि रहे। यह भी तय हुआ कि सर्व सेवा संघ केवल सलाहकार-मंडल न रहकर वह प्रत्यक्ष काम भी करेगा, समग्र दृष्टि से खुद केन्द्र खोलेगा और चलायेगा। जुड़े हुए संघों की स्वतंत्रता को अबाधित रखते हुए उनका समन्वय और मार्गदर्शन करेगा। जुड़ी हुई संस्था अपने कार्य में स्वतन्त्र रहेगी, पर उसे साधारण नीति के बारे में सर्व-सेवा-संघ का मार्गदर्शन मानना होगा और सब संस्थाओं के समन्वय की नीति का पालन करना होगा। ऊपर लिखे हुए संघों में से कुछ अबतक अपना-अपना मासिकपत्र अलग-अलग चलाते थे। अब तय हुआ कि उन सबका एक ही पत्र चले। यह मिलाने का काम तालीमी-संघ की 'नयी तालीम' और चरखा-संघ के 'खादी-जगत्' से शुरू हुआ। नाम 'खादी-जगत्' ही चालू रहा। बाद में तारीख १५ अगस्त १९४९ को सर्व सेवा संघ की ओर से 'सर्वोदय' मासिकपत्र शुरु हुआ। उसमें वह 'खादी-जगत्' और 'ग्राम-उद्योग पत्रिका' का हिन्दी संस्करण विलीन हो गया।

कपास के प्रयोग

इन दो वर्षों में संघ ने एक नया काम हाथ में लिया। कई वर्षों से सरकारी नीति भारत में मिलों के लायक कपास उपजाने की रही। परिणाम यह हुआ कि पहले जहाँ-जहाँ हाथ-कताई के लायक अच्छे मजबूत रेशे की कपास होती थी, उसका धीरे-धीरे लोप होने लगा। जो नयी किस्म की कपास तैयार होने लगी है, वह हाथ-कताई में कुछ महीन सूत के उपयुक्त तो है, पर उससे बना हुआ सूत तुलना में कमजोर पाया गया। इसके अलावा कुछ क्षेत्रों में, जहाँ हाथ-कताई अच्छी तादाद में चल सकती है, कपास की पैदाइश ही नहीं हो रही है। इसलिए संघ ने विचार किया कि सब सूबों में हाथ कताई के लायक कपास उपजाने के प्रयोग किये जायँ। इस काम के लिए एक कपास-समिति मुकर्रर की गयी है, जो यह काम आगे बढ़ायेगी।

कताई मे सघ का लक्ष्य क्या हो ?

अब इस अध्याय की समाप्ति करते हुए कताई की दृष्टि से सघ का लक्ष्य क्या हो, इसका विचार कुछ सिंहावलोकन करते हुए कर ले। जो अहिंसा मे विश्वास रखते हैं, उनके मन मे चरखा सत्य व अहिंसा का प्रतीक है, इस विषय में विवाद नही होना चाहिए। अबतक किसीने आज के जमाने मे अहिंसक समाज के उपयुक्त ऐसा दूसरा कोई प्रतीक सुझाया भी नहीं है। खादी-शब्द मे इस विचारधारा के सिद्धान्त आ जाते हैं। जिनको खादी का असली रूप अपनाना है, उनको अपना आचरण सत्य, अहिंसा आदि गुणो का विकास करने के सतत प्रयत्नरूप रखना चाहिए।

यहाँ हम इस बात का उल्लेख कर दे कि कई भाई-बहन यज्ञरूप कताई भी करते आये है। यह सिलसिला बहुत समय से चल रहा है। यह कताई निष्ठा और त्याग के तथा नित्यकर्म यानी उपासना के रूप मे चल रही है। बीच मे कुछ समय यह भी विचार रहा कि अगर यह यज्ञ-रूप कताई बडी तादाद मे चले और उसका सूत चरखा सघ को मिल जाय, तो उससे खादी के भाव कम करने मे मदद मिलेगी। पर इसका पैमाना वैसा बढ नही सका। तथापि हजारो भाई बहन यह कताई नियमपूर्वक करते रहे हें और जब से तुनाई पर जोर दिया जाने लगा, इस यज्ञ को 'सूत्रयज्ञ' के बदले 'पूनी-यज्ञ' भी कहने लगे हैं।

सन् १९३५ तक साधारणतः खादी की प्रगति का माप उसकी उत्पत्ति-बिक्री बढने पर अवलम्बित रहा; साथ ही माल का सुधार करना और बिक्री-दरें घटाना भी। इसमे सफलता यहाँ तक मिली कि २७ इच अर्ज की अच्छी सादी खादी का भाव तीन आने गज तक आया और रगीन डिजाइनदार कोटिंग तथा सिले-सिलाये कुछ किस्म के तैयार कपडे मिल के कपडे के मुकाबले मे भी चल सके। बाद के वर्षो मे सघ ने अतिविषम परिस्थिति मे नैतिक अर्थशास्त्र की एक बडे महत्त्व की बात जीवन-निर्वाह मजदूरी का अमल कर दिखाया। चरखा गरीबों को राहत पहुँचाने की

चीज साबित हुआ। पर मिल की स्पर्धा के कारण इस राहत की मात्रा की सदा मर्यादा रही और रहेगी। यह मात्रा खादी-बिक्री पर निर्भर है और बिक्री आर्थिक और राजनीतिक परिस्थिति पर। राजनीतिक तेजी के साथ वह बढ़ती रही और बाद में घटी। इस चढ़ाव-उतार में चरखा-सघ को और खादी-उत्पादकों को कई बार जलील होना पड़ा। ऐसी अनिश्चित परिस्थिति में सघ अपना व्यापारिक काम कहाँ तक और कब तक चलाये? इन पिछले कुछ वर्षों में कपड़े की तगी के जमाने में खादी की माग बढ़ी थी, पर अब १९४९ के अत में खादी के स्टाक फिर से बढ़ने लगे हैं और उनके निकास की चिन्ता खड़ी हो गयी है।

राहत के परिमाण का भी विचार कर लें। सघ किसी एक वर्ष में १ करोड़ रुपये से अधिक मूल्य की खादी पैदा नहीं कर सका है। हम यह मानकर चलें कि चरखा-सघ द्वारा तथा प्रमाणितों और अप्रमाणितों द्वारा सब मिलाकर अधिक-से-अधिक चार करोड़ रुपये मूल्य की खादी का हाथ-सूत तैयार हो रहा होगा, जिसका कपड़ा करीब तीन करोड़ वर्गगज और कामगारों की मजदूरी तीन करोड़ रुपयों से भी कम होगी। देश की आबादी की दृष्टि से इससे कितनों को राहत या काम का कपड़ा मिल सकता है? कुछ लोगों का खयाल दीखता है कि मौजूदा हालत में भी खादी की उत्पत्ति चाहे जितनी बढ़ायी जा सकती है। यह खयाल गलत है। जहाँ कताई की परपरा और आदत कुछ अश में बची थी, वहा वह वेग से बढ़ी। अब उन क्षेत्रों में उसकी सीमा हो चुकी है। अधिक कताई बढ़ाने के लिए प्रयत्न ऐसे क्षेत्रों में करना पड़ेगा, जहाँ कताई सिखाने से आरम्भ होगा और उन लोगों में, जो नयी बात सीखने में उदासीन रहते हैं। महँगाई अत्यधिक बढ़ जाने के कारण मामूली मजदूरी से बहुत थोड़े लोग कातने को तैयार होते हैं। अधिक मजदूरी दें, तो खादी महँगी पड़ती है। बिक्री की मात्रा की मर्यादा तो है ही। अतः व्यापारिक खादी की वृद्धि सदा बहुत मन्द रहेगी।

इस परिस्थिति का भान प्रमुख खादी कार्यकर्ताओं को था ही।

फिर भी खादी के लिए उनकी लगन इस कारण रही कि उसका उपयोग उसकी तादाद की अपेक्षा उसके अन्य सहचारी भावो के लिए अधिक है। यह भी कुछ खयाल रहा कि खादी को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कुचलनेवाली राज-सत्ता के हट जाने पर जब उसे प्रोत्साहन देनेवाले लोगो के हाथ मे सत्ता आयेगी, तब उसके द्वारा परिस्थिति अनुकूल होने से खादी पनप कर बढ सकेगी। इस दिशा मे अब तक आशा नहीं दीखती है। मिल की स्पर्धा हट जाने पर भी यह तो सोचना होगा कि व्यापारिक खादी कहाँ तक बढ सकती है? अगर अधिकाश लोग बेचने के लिए ही सूत कातेगे, तो आखिर उसका कपडा खरीदेगा भी कौन और वे अपने लिए कपडा कहाँ से लायेगे?

इस विवेचन से हमे इस नतीजे पर पहुँचना चाहिए कि चरखा-सघ का मुख्य लक्ष्य तो वस्त्र-स्वावलम्बन ही हो। परिस्थिति के कारण व्यापारिक काम की जो मर्यादाएँ हैं, वे स्वय-कताई मे नही हैं। इसमे तो बेकार समय का सदुपयोग कर लेना, निकम्मेपन मे मनुष्य जिन नाना बुराइयो मे फँसता है, उनसे छुटकारा पाना और उद्यमशील बनना है।

सघ ने वस्त्र-स्वावलम्बन के भी कई प्रयोग किये। उनके मुख्य प्रकार तीन रहे: (१) व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन, (२) कामगारो का वस्त्र-स्वावलम्बन और (३) व्यक्तिगत वस्त्र-स्वावलम्बन।

बिजोलिया, रींगस, अनन्तपुर, वेडछी आदि के प्रयोग व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन के थे। ऐसे ही कुछ प्रयोग अन्यत्र कुछ व्यक्तियो या अन्य संस्थाओ द्वारा भी हुए। व्यापक प्रयोग मे किसी एक क्षेत्र को लेकर वहाँ की अधिकाश जनता को कपड़े के बारे मे स्वावलम्बी बनाने की बात है। यहाँ खयाल रहे कि जब खादी-आन्दोलन शुरू हुआ था, तब भी आन्ध्र, तमिलनाड़ तथा हैदराबाद रियासत मे कुछ ऐसे क्षेत्र थे, जहाँ व्यापक वस्त्र-स्वावलम्बन परम्परा से चलता था। लोग स्वय कातकर वह सूत पडोस के बुनकर से बुनवा कर उस कपडे का इस्तेमाल अपने परिवार

मे कर लेते थे। सूत और बनी-बनायी खादी बाजार में बिकने को आती थी। सूत का उपयोग अन्य फुटकर चीजे खरीदने मे यानी अदला-बदली मे भी होता था। ऐसे क्षेत्र लिखने-पढ़ने मे पिछडे हुए थे। वहाँ आवागमन के साधन कम थे, लोगो मे गरीबी ज्यादा थी। वे मोटा कपडा पहनकर सन्तोष मान लेते थे। धीरे-धीरे इन क्षेत्रो की खादी की दशा बदली। वहाँ मिल का कपडा आसानी से पहुँचने लगा। वस्त्र-स्वावलम्बन का काम क्रमश. घट गया। चरखा-सघ के प्रयोग भी कुछ ऐसे ही क्षेत्रो मे हुए। कार्यकर्ताओ द्वारा अथक प्रयास होने से वहाँ यह काम काफी बढा। पर वे प्रयत्न हट जाने पर वह धीरे-धीरे घट गया। इसमे कोइ आश्चर्य की बात नही है, क्योकि उन लोगो ने यह कताई सोच-समझ कर, स्वावलम्बन की महत्ता मानकर नहीं की थी। वहाँ के बहुत से लोग तो यह गहरी बात समझ भी नहीं सकते थे। उनकी अधिकतर आर्थिक दृष्टि रही। कपास-रूई के दाम या धुनाई-बुनाई की मजदूरी देनी पडती है, तो स्वावलम्बन के कपडे मे मिल के कपडे के मुकाबले मे आर्थिक बचत नगण्य रहती है। बारडोली मे जो व्यापक प्रयोग हुआ था, वह सत्याग्रह की तैयारी को लेकर था। पञ्जाब मे परम्परा से खेस आदि मोटा कपडा बनाने के लिए काफी परिमाण मे सूत-कताई होती रही है। परिस्थितिवश वह भी कम हुई। मद्रास सरकार की खादी-योजना मे भी उन क्षेत्रो मे मिल का कपडा आते रहने के कारण स्वावलम्बन का काम बढा नही। अतः हमे इस नतीजे पर आना पडा कि परिस्थिति का दबाव हुए बिना व्यापक वस्त्र स्वावलम्बन सफल होना मुश्किल है।

कामगारो को खादी पहनाने के लिए चरखा सघ मजदूरी का कुछ अश खादी के रूप मे देता रहा। इसका परिमाण मजदूरी के एक रुपये पीछे दो आने से कहीं-कहीं आठ आने तक भी रहा। कहीं यह भी सिलसिला रहा कि कत्तिन की साडी भर का सूत उसके पास सग्रह हो जाने पर ही उसका अतिरिक्त सूत खरीदा जाता। ये योजनाएँ सघ की सब शाखाओ मे कम-वेशी चलती रही। पर यह स्वावलम्बन स्वय-प्रेरित न

होकर परप्रेरित होने के कारण सघ के दबाव के अभाव मे टिकता नही था।

तीसरा प्रकार व्यक्तिगत वस्त्र-स्वावलम्बन का है। जो व्यक्ति सोच-समझकर वस्त्र स्वावलम्बन के लिए कताई को अपनाता है, वह उसे यथासम्भव नही छोडेगा। यही वस्त्र-स्वावलम्बन स्थायी हो सकता है। गुजरात इसका उत्तम उदाहरण है। अन्य किसी भी प्रान्त की अपेक्षा गुजरात मे वस्त्र-स्वावलम्बन का काम बहुत अधिक रहा और वह लगातार बढता रहा। इसका मुख्य कारण यह है कि वह व्यक्तिगत स्वरूप का और सोच-समझकर कातनेवालो का है।

व्यक्तिगत वस्त्र-स्वावलम्बन में भी कुछ व्यावहारिक दिक्कते हैं। जैसे कि अच्छी पूनियाँ न मिलना और बुनाई के दाम बहुत ज्यादा देने पड़ना। इसके कारण गरीबो को वह आर्थिक दृष्टि से भारी पडता है। चरखा सघ ने इन कठिनाइयो का हल खोजने का अपना प्रयत्न जारी रखा। तुनाई मे समय अधिक लगता है, पर पूनियो के लिए व्यक्ति स्वतन्त्र हो जाता है। इसके अलावा धुनाई-मोढिये का आविष्कार हुआ, जिससे समय बचने लगा और धुनाई अच्छी होने लगी। बुनाई के बारे मे सूत दुबटा करने पर जोर दिया गया। एक ऐसा चरखा भी चलने लगा, जिसमे कताई से अधिक समय न लगते हुए सूत दुबटा होता है। यदि कपास अपनी खेती से या घर के ऑगन से प्राप्त कर लिया जाय और ताना बनाने तक की प्रक्रिया कातनेवाला स्वय कर ले, तो थोडे से बुनाई-खर्च मे कपडा मिल सकता है। बुनाई के लिए करघे भी ऐसे बनाये गये, जिन पर छोटे अर्ज का सादा कपडा घर मे ही आसानी से बुना जा सके। वह करघा इतना सरल था कि उस पर पक्के सूत की बुनाई करीब एक महीने मे सीखी जा सकती थी। इन सबके प्रचार के लिए कताई-मण्डलो के विस्तार पर जोर दिया जाने लगा।

अध्याय ९ उत्पत्ति-बिक्री और माली हालत

चरखा-संघ का तंत्र

अब तक चरखा-संघ के तंत्र का मुख्य स्वरूप पाठकों के खयाल में आ गया होगा। इसका ट्रस्टी-मंडल सर्वोपरि है। तीन वर्षों में एक बार प्रधानमंत्री और अध्यक्ष का चुनाव होता है। कभी-कभी मंत्री की मदद में सहायक मंत्री भी चुने गये हैं। केन्द्रीय दफ्तर में काम करनेवालों में अनेक विभागों को, जैसे कि प्रमाणित, उत्पत्ति, बिक्री आदि, संभालनेवाले कार्यकर्ताओं के अलावा आडिटरों का स्थान महत्त्वपूर्ण है। भिन्न-भिन्न कामों की कुछ उपसमितियाँ भी बनी हुई हैं। एक व्यक्ति मुख्य हिसाब-नवीस रहता है। संघ के फैले हुए काम के लिए अनेक आडिटर चाहिए और वे ऐसे चाहिए, जो खादी-काम के सब पहलुओं को जानते हों। केन्द्रीय दफ्तर का आडिट चार्टर्ड एकाउन्टेण्टों द्वारा होता रहा। संघ ने उनके आडिट को प्रथम स्थान नहीं दिया है। जनता की दृष्टि से और विशेषज्ञ की हैसियत से वैसे आडिट की जरूरत तो है ही, पर वह आडिट गलतियाँ निकालने के काम आता है और केवल कागज-पत्रों पर से होता है। उससे वस्तुस्थिति का ज्ञान नहीं होता और समय पर गलतियाँ रोकी नहीं जा सकतीं। संघ के विशेष काम की यानी खादी-काम की दृष्टि से भी वह पूरा उपयुक्त नहीं हो सकता। इसलिए संघ सदा अन्तरंग आडिट को महत्त्व देता रहा। संघ के ये आडिटर लोग केन्द्रीय हिसाब के आडिट के अलावा शाखाओं के हिसाब का भी आडिट करते हैं। आडिट का यह सारा काम सामान्यतः ठीक होता रहा। फिर भी कहीं-कहीं शाखाओं की शिथिलता के कारण उसमें कमजोरी रही, विशेषतः इस अर्थ में कि कभी-कभी आडिट में

बतलायी हुई गलतियाँ मुश्किल से दुरुस्त होती रहीं। चार्टर्ड एकाउन्टेण्टो द्वारा शाखाओ का आडिट क्वचित् ही हुआ, पर उनका अपना-अपना अन्तरंग आडिटर जरूर रहता था।

शाखाओ के काम-काज मे मुख्य अधिकारी मत्री और कहीं-कहीं प्रतिनिधि (एजेण्ट) भी रहे। इधर कुछ वर्षों मे कई शाखाओ मे सघ के प्रधानमत्री द्वारा नियुक्त किये हुए सहायक शाखामत्री भी रहे। शाखा मे हिसाब लिखनेवाले के अलावा उत्पत्ति, बिक्री और सामान्य काम-काज के भिन्न-भिन्न व्यवस्थापक रहते हैं। हरएक उत्पत्ति-केन्द्र या बिक्री-भडार मे व्यवस्थापक तथा उसके मददगार रहते हैं। कहीं-कहीं अनेक केन्द्रो का एक क्षेत्र बना कर उसका मार्ग-दर्शन करनेवाला कोई निरीक्षक भी रहता है। हिसाब-किताब साधारणतः ठीक रखे जाते रहे। तमिलनाड शाखा इसमे अधिक कुशल रही। माल का स्टाक-बुक रखने की पद्धति रही। उत्पत्ति-केन्द्रो मे यह स्टाक-बुक ठीक रखे जाते रहे, पर बिक्री-केन्द्रो के बारे मे कई दफा उन्हे समय पर तैयार रखना मुश्किल होता था। फिर भी सब शाखाओ से तमिलनाड के स्टाक-बुक अच्छे रहते रहे। महाराष्ट्र शाखा मे तो बिक्री-भडारो मे स्टाक-बुक प्रायः रखा ही नहीं गया। बीच मे थोडे समय प्रयत्न किया, पर वह छोड दिया गया। बिक्री-भडार मे जो हिसाब रखा जाता, वह माल के बिक्री-भाव से रखा जाता रहा। इससे रुपये के हिसाब मे स्टाक की जाँच हो सकती थी, पर माल के स्टाक-बुक के बिना पूरी ठीक-ठीक जाँच नहीं हो सकती थी। कई शाखाएँ बिक्री-भडारो मे माल का स्टाक बुक भी रखती रहीं। सामान्यतः सघ का हिसाब-किताब का काम-काज कुशलता-पूर्वक होता रहा।

खादी की उत्पत्ति-बिक्री

उत्पत्ति-बिक्री का काम ठीक चलने के लिए सघ ने तफसीलवार हिदायतें मार्ग-सूचिका मे प्रकाशित कर दी थीं। उत्पत्ति का काम अनुभव से धीरे-धीरे सुधरा। सूत-सुधार के बारे मे जिक्र पहले आ चुका है।

पहले-पहल कपडा तो जैसे बुनकर बनाकर ला देता था, उसीमे सतोष मान लिया जाता था। कितने नम्बर के सूत के कितने धागे डालने चाहिए, इसका कोई ठीक प्रबन्ध नहीं था। धीरे-धीरे इसमे कुशलता आयी। अलबत्ता जहाँ तहाँ बुनकर कुशल होने के कारण वे अपना काम सामान्यत. ठीक कर लेते थे। कई वर्षो के बाद सब ने इसके लिए प्रयत्न किया कि कपडे की किस्म के लायक अक के सूत के ठीक गिनती के धागे हो। इस तरह कुछ किस्मो का स्टैंडर्ड बना और उसके लेबल पर अक भी ऐसे रहते, जिनसे सूत का नम्बर और एक इच मे कितने धागे है, इसका पता चल जाता। बुनाई भी चौरस, यानी जितने खडे धागे हो उतने ही आडे हों, करने का प्रयत्न किया गया। कपडा आइ-ग्लास मे जॉच कर लिया जाता। अगर धागों की सख्या ठीक न हो, तो उसे कम कीमत लगाकर दूसरे दर्जे मे डाला जाता। यह काम महाराष्ट्र और तमिल्नाड शाखाओं मे अच्छा हुआ। महाराष्ट्र शाखा मे एक ही पोत मे कम-बेशी अक का सूत डालकर शर्टिंग, धोती और साडी तीनो प्रकार के एक ही मूल्य के कपडे बनाये गये। बिक्री-दर मुकर्रर करने मे भी यह कुछ खयाल रखा गया कि गरीबो के लायक कुछ किस्म के कपडे सस्ते रहे, चाहे उनमे कुछ नुकसान भी हो, जो श्रीमानो के लायक किस्म के कपडे मे से निकल आये। महाराष्ट्र शाखा की साडियो मे सुदरता और साथ ही पोत के हिसाब से सस्ताई की विशेषता रही।

भिन्न-भिन्न शाखाओ मे परिस्थिति के कारण खादी कुछ सस्ती-महगी पडती। प्रारभ मे तो एक ही शाखा के भिन्न-भिन्न बिक्री-भडारो मे भिन्न-भिन्न भाव रहते। इसका एक कारण यह था कि किसी मुख्य बडे उत्पत्ति-केन्द्र से प्रान्त भर मे दूर-दूर माल जाता, उसमे यातायात का खर्च कम-बेशी होता। पर धीरे-धीरे प्रयत्न यह हुआ कि शाखाभर के सब बिक्रीभडारो मे एक किस्म के माल का बिक्री-भाव एक ही हो। कुछ शाखाओ के क्षेत्र का विस्तार बहुत बडा रहा। जैसे कि महाराष्ट्र शाखा के बिक्री-भडार गोंदिया से रत्नागिरि तक थे। माल तो बहुत-सा

मध्यप्रान्त के चाँदा जिले मे या हैदराबाद रियासत के जगतियाल तालुका और मेटपल्ली जागीर मे होता था। सब जगह पहुँचने मे खर्च मे काफी फर्क रहता। फिर भी यह व्यवस्था थी कि माल की बिक्री-दरे शाखा के सब भडारो मे समान रहे। व्यक्तिगत भडार की दृष्टि से कुछ घाटे मे चलते, पर सारी शाखा की दृष्टि से नुकसान न हो, यह खयाल रखा जाता।

उत्पत्ति के केन्द्र तो प्रायः जहाँ सूत मिलने की और बुनाई की सुविधा थी, वहीं रहते पर बिक्री-भडारो के बारे मे यह नीति थी कि प्रान्त के मुख्य-मुख्य शहरो मे और जिले की जगह भडार जरूर रहे। यथासभव सर्वत्र मुख्य-मुख्य स्थानो मे खादी मिल सके, ऐसा प्रबन्ध रखने का प्रयत्न होता रहा। सघ के ऐसे भडारों के अलावा खादी-बिक्री के लिए एजेसियाँ दी जाती रहीं। ये एजेण्ट लोग सघ के भडार से खादी लेकर जिले के दूर-दूर के स्थानो तक बेचने की कोशिश करते। एजेन्सी की मुख्य शर्त यह थी कि वे सघ के सिवा दूसरे किसीसे खादी न ले और वह भडार के भाव से ही बेचे। बिना बिका हुआ माल तीन महीनो मे वापस हो सकता था। इन एजण्टो की बिक्री साधारणतः थोड़ी ही रहती, इसलिए इस एजेन्सी मे उनका गुजारा नहीं चल सकता था। मिल के कपडे या सूत को छोड़कर वे अपने दूसरे धधे के पूरकरूप मे ही यह काम कर सकते थे। महाराष्ट्र शाखा मे एजेन्सियो का सिलसिला बहुत अच्छा रहा।

खर्च का प्रतिशत

खादी की उत्पत्ति और बिक्री के खर्च के बारे मे पहले खयाल यह रहा कि उत्पत्ति का व्यवस्था-खर्च लागत के एक रुपये पीछे एक आने मे और बिक्री का दूसरे एक आने मे ही निभ जाना चाहिए। पर यह अनुपात बहुत थोडी जगह निभ सका। खर्च का परिमाण उत्पत्ति के पैमाने पर तथा खादी बनाने की प्रक्रियाओ मे से जितनी प्रत्यक्ष सघ द्वारा करानी पडती हैं, उन पर अवलबित रहता है। किसी केन्द्र का काम कराने के लिए कम-से कम संख्या मे कुछ कार्यकर्ता तो रखने ही पडते

हैं। अगर काम कम हुआ, तो खर्च का प्रतिशत बढ जाता है और अधिक हुआ, तो वह कम दीखता है। वैसे ही जहाँ रुई-कपास मुहैया कर देने से लेकर बुनाई-धुलाई तक की सब प्रक्रियाएँ सघ की ओर से ही करनी पडती हैं, वहाँ कार्यकर्ता अधिक रखने की जरूरत होने के कारण खर्च बढ जाता है। जहाँ कत्तिन रुई-कपास खुद अपनी ओर से सग्रह कर लेती है या कता कताया सूत, अन्य चीजें जैसे बाजार मे मिलती हैं वैसे ही मिल जाता है, वहाँ खर्च कम आता है। सन् १९४० के बाद सघ ने विशेष यत्न किया कि उत्पत्ति-बिक्री का खर्च बढने न पाये। उसने विभिन्न मदो पर खर्च की अधिकतम मर्यादा मुकर्रर करने की कोशिश की। शाखाओ के माल का सारा हिसाब बिक्री-मूल्य पर रखा जाता था। इस-लिए बिक्री की रकम पर प्रतिशत खर्च बाधने का प्रयत्न किया गया। प्रान्तीय शाखाओं मे कार्यकर्ताओ के वेतन के खर्च के मुख्य तीन विभाग रहे और चौथा विभाग माल के यातायात के खर्च का रहा। इन तीन विभागो मे एक प्रान्तीय दफ्तर, दूसरा उत्पत्ति-केन्द्र और तीसरा बिक्री-भडार थे। प्रातीय दफ्तर से चरखा-सघ के केन्द्रीय दफ्तर का खर्च चलाने के लिए प्रतिशत एक रकम देने की प्रथा रही। प्रान्तीय दफ्तर के कार्यकर्ताओ का वेतन-खर्च अधिक-से-अधिक १½ प्रतिशत तथा मकान, सामान आदि सबका घसारा और स्टेशनरी आदि का खर्च १ प्रतिशत माना गया। इस प्रकार प्रान्तीय दफ्तर का खर्च ३½ प्रतिशत से अधिक न होने देना तय हुआ। उत्पत्ति-कार्य मे कार्यकर्ताओं का वेतन तथा मकान-किराया, डाक, स्टेशनरी आदि खर्च की मर्यादा ४ प्रतिशत समझी गयी। बिक्री के लिए इन्हीं सब बातों का फुटकर बिक्री मे खर्च ६ प्रति-शत तक समझा गया। जो बिक्री थोक या एजेटो द्वारा होती थी, उसमे कुछ कमीशन देना पडता था। वह खर्च उस बिक्री की तादाद पर अवलबित था। वह सामान्यत॰ डेढ प्रतिशत समझना चाहिए। इसके अलावा यातायात और पैकिंग के खर्च का अनुमान २½ प्रतिशत था। इस प्रकार कुल मिलाकर शाखा के काम मे बिक्री-मूल्य पर १७½ प्रतिशत

से अधिक खर्च न हो, ऐसी मर्यादा बाधी गयी थी। बहुत-सी शाखाओ ने उसे निभाया, कुछ शाखाएँ नही निभा सकी। तमिलनाड शाखा का काम सदा बड़े पैमाने पर चलता रहा। उसका खर्च करीब १३ प्रतिशत मे निभता रहा।

खादी-कीमत का बँटवारा

खादी के प्रचार की दृष्टि से बहुत समय तक यह तुलना होती रही कि विदेशी या स्वदेशी मिल का कपडा और खादी खरीदने मे उसके मूल्य का वितरण किस प्रकार होता है। यह तो स्पष्ट ही है कि विदेशी कपडे मे देशी व्यापारी का छोटा-सा हिस्सा छोड़कर बाकी सारा पैसा विदेश मे चला जाता है। स्वदेशी मिल के कपडे मे भी यन्त्रो और मिल चलाने के सामान का पैसा बाहर ही जाता है। बाकी कुछ मिलमालिकों को और कुछ व्यापारियो को मिलता है। करीब पॉचवॉ हिस्सा मिल-मजदूर के पास पहुँचता है और थोडा-सा कपास बोनेवाले किसान के पास। इसके उल्टे खादी का सारा पैसा गरीबो के ही घर पहुँचता है। इसमे व्यापारी का स्थान थोड़ा सा ही है। प्रमाणित व्यापारियो के मुनाफे पर अकुश रखने की व्यवस्था है। जो कार्यकर्ता काम करते हैं, वे सामान्यतः गरीब ही हैं और उनका वेतन भी मर्यादित है। अतः कीमत का अधिकतर अश गरीबो मे ही बँटता है। उसके १ रुपये के बँटवारे का हिसाब खादी-काम के हरएक कालखड की दृष्टि से नीचे दिया गया है। यह हिसाब लगाने मे सूत का अक १२ माना गया है।

	१९३३	१९४२	१९४९
	रु आ. पा	रु आ पा	रु. आ. पा.
रुई	०—३—९	०—३—०	०—३—०
कताई-धुनाई	०—४—०	०—६—०*	०—६—६

* यह मजदूरी जीवन-निर्वाह मजदूरी के कारण बढी।

	१९३३	१९४२	१९४९
	रु आ पा	रु आ. पा	रु आ. पा.
बुनाई	०—५—०	०—३—३	०—३—९*
धुलाई	०—०—३	०—०—३	०—०—४
व्यवस्था-खर्च (कार्यकर्ता आदि)	०—२—३	०—२—६	०—२—०❀
यातायात खर्च	०—०—९	०—१—०‡	०—०—५
	१—०—०	१—०—०	१—०—०

प्रमाणित-अप्रमाणित

प्रमाणितो का महत्त्व

अब तक के अध्यायों में प्रमाणित-अप्रमाणित का जिक्र कई बार आ चुका है। इस विषय का महत्त्व भी विशेष है। व्यापारिक खादी में प्रमाणित व्यक्तियों या संस्थाओं का काफी हाथ रहा है। वे चरखा-संघ के प्रबल अंग रहे हैं और मिलो के रहते जब तक और जहाँ तक व्यापारिक खादी का काम चलेगा, उनका महत्त्व रहेगा ही। उनके काम का परिमाण नीचे लिखे आंकडो से मालूम होगा। आखिरी वर्षो में उनका काम घटा है, इसका कारण यह है कि उन दिनो संघ की नीति उन्हें प्रोत्साहन न देने की रही। सन् १९४८ के बाद फिर से उनकी संख्या बढायी जाने लगी।

---

* गज के हिसाब से तो बुनाई बहुत बढ गयी थी, पर यहाँ अनुपात कम दीखता है। इसका कारण है रुपयों में खादी की कीमत बढना।

❀ व्यवस्था-खर्च कम दीखने का कारण है, माल की कीमत बढ जाने के कारण असल में माल कम बनना।

‡ इस समय यातायात की दिक्कत के कारण काफी माल सवारी-गाडी से भेजना पडा।

समय	कुल बिक्री मे प्रमाणित बिक्री का प्रतिशत	समय	कुल बिक्री मे प्रमाणित बिक्री का प्रतिशत
१९३३	४५	१९४१	१९
१९३४	४०	१९४२	३४
१९३५	४१	१९४३	२९
१९३६	३०	१९४४	२७
१९३७	२२	१९४५	३०
१९३८	२४	१९४६	२८
१९३९	२४	१९४७	२०
१९४०	२४	१९४८	१०

अब काग्रेस कार्यसमिति के नये निर्णय से प्रमाणित का प्रश्न कुछ जटिल हो गया। इसलिए हम यहाँ समग्र दृष्टि से इसका कुछ विचार कर ले। सभव है, पहले लिखी हुई कुछ बाते दोहरानी पडे। तथापि यथासभव वे टालने की कोशिश की जायगी।

प्रमाण-पत्र का प्रारम्भ

सन् १९२० मे ही खादी-बिक्री का काम खानगो व्यापारियो तथा अन्य सस्थाओ द्वारा कराने का विचार किया गया था। गाधीजी ने उस सितम्बर मे स्वदेशी भडार चलाने की सूचना दी, जिनमे कपडे मे केवल खादी ही रखनी थी। कई जगह ऐसे भडार खुले। असहयोग के आन्दोलन मे खादी की मॉग बहुत बढी। अशुद्ध खादी काफी बनने लगी। यह प्रश्न खडा हुआ कि किनकी खादी खरीदने के लिए जनता से सिफारिश की जाय। करीब दो वर्ष इस गडबडी मे बीतने पर सन् १९२२ के सितबर महीने मे काग्रेस खादी-विभाग ने खादी के व्यापारियो की एक सूची बनायी और उनको यह सूचना दी कि वे अपने माल की शुद्धता के बारे मे भरोसा दिलाये, नमूने भेजें और कीमते भी मालूम करे। उनको यह भी सुझाया गया कि वे माल की शुद्धता के बारे मे अपनी-अपनी स्थानीय काग्रेस-समिति से प्रमाणपत्र प्राप्त करे। पर यह व्यवस्था ठीक नही चल सकी।

कुछ व्यापारी झूठे प्रमाणपत्रो पर काम करते पाये गये। अन्त मे १९२३ के फरवरी महीने मे जॉच करने के लिए निरीक्षक भेजे गये और उनकी सिफारिश पर कुछ ऐसे व्यापारियों तथा सस्थाओ के नाम घोषित किये गये, जिनकी खादी खरीदना सुरक्षित समझा जाय।

प्रमाणपत्र-पद्धति की आवश्यकता

हाथ-सूत और मिल के सूत की कीमत मे बहुत अन्तर रहता है। हाथ सूत को माडी लगने पर वह हाथ का है या मिल का, इसकी परीक्षा करना कठिन हो जाता है। कपडा बन जाने पर कहॉ तक परीक्षा करते बैठे? इसलिए खादी की शुद्धता के बारे मे उन्हींका भरोसा किया जा सकता है, जो हाथ सूत की पवित्रता महसूस करते हैं। प्रमाणपत्र कभी खादी को नहीं दिया जाता रहा। वह काम करनेवाले शुद्ध कार्यकर्ताओ को ही देने का सिलसिला रहा। चरखा-सघ का कर्तव्य था कि जो खादी पहनना चाहते हैं, उनको शुद्ध खादी मिलने का कुछ प्रबन्ध करे। आरभ मे ही चरखा सघ ने चाहा कि सेवाभाव से काम करनेवाले व्यापारी इस काम मे आये, ताकि खादी का काम बढने मे मदद हो। इसलिए प्रमाणित व्यापारियों को प्रोत्साहन दिया गया। दूर-दूर बसे हुए देहातो मे चलनेवाले खादी-काम मे अगर पूरी निगरानी न हो, तो अन्य रीति से या बुनकरो द्वारा भी मिल के सूत की मिलावट होना कठिन नहीं है। इसलिए जिनका पूरा भरोसा किया जा सकता था, उन्हींको प्रमाणपत्र देने से शुद्धता की रक्षा हो सकती थी। यह भी देखना था कि व्यापारी बेजा मुनाफा न करे। पहले यह शर्त थी कि व्यापारी की खुद की पूँजी पर पॉच प्रतिशत से अधिक व्याज न लगाया जाय और वह खुद पूरे समय काम करे, तो ७५ रुपये मासिक से अधिक मेहनताना न ले। जहॉ हाथ-सूत अधिक तादाद मे और आसानी से मिल सकता था, वही बहुत से व्यापारी पहुँच जाते थे। स्पर्धा होकर उनके आपस मे झगडे होते। व्यापारियो का हिसाब-किताब भी ठीक रखना जरूरी था। प्रमाणपत्र के नियम ये सब बाते साधने की दृष्टि से बने।

प्रमाण-पत्र की नीति मे बदल

जैसे प्रमाणित व्यापारी खादी का काम करते थे, वैसे चरखा-सघ भी अपना व्यापारिक काम बडे पैमाने पर करता था। पर उसका खर्च ज्यादा रहता। उसे खानगी व्यक्तियो की अपेक्षा हिसाब-किताब ज्यादा तफसील से रखना पडता था। व्यापारी लोग तो अपने काम के लिए हाथ-कताई की सुविधा की जगह ही जाते, पर संघ को नये केन्द्र खोलकर काम बढाना था। उन्हे जमाने मे तीन-तीन, चार-चार वर्ष नुकसान सहन करना पड़ता। सघ को काम का सगठन, निरीक्षण और आडिट के लिए ज्यादा कार्यकर्ता रखने पडते। इसके अलावा प्रयोग करना, कार्यकर्ताओ तथा विद्यार्थियो को सिखाना, कामगारो के जीवन मे सुधार लाने के लिए प्रयत्न करना आदि कारणो से चरखा-सघ का खर्च ज्यादा होकर उसकी खादी महँगी पडती। प्रमाणित व्यापारी खादी-बिक्री मे सघ से स्पर्धा करते, जिससे सघ के काम मे कई दिक्कते खडी होती थीं। उनके हिसाब-किताब, मुनाफा आदि के बारे मे भी गडबडी रहती। हरबार उनका नियत्रण कहाँ तक किया जा सकता था? इसलिए पहले जो यह नीति अख्तियार की गयी थी कि प्रमाणित व्यापारियो की सख्या बढायी जाय, वह बाद मे ढीली हुई। यहाँ यह लिख देना भी जरूरी है कि कहीं-कही सघ की शाखाओ द्वारा व्यापारियो की खलल दूर करने के लिए भी उनको हटाने की कोशिश हुई।

जब सन् १९३५ मे जीवन-निर्वाह मजदूरी की बात आयी, तब जो खादी-काम का स्वरूप बदला, उसका जिक्र पहले आ चुका है। मुनाफा करने की गुंजाइश बढी। कामगार सेवा-कोष का नियम बना। मुनाफा हो जाने के बाद जब व्यापारी को उसे कोष मे देने को कहा जाता, तो वह प्रमाणपत्र छोडकर अप्रमाणित काम करने लगता। इसलिए यहाँ तक नियम बनाना पडा कि अगर शाखा आवश्यक समझे, तो मुनाफा हर महीने वसूल कर लिया जाय। इसके पहले प्रमाणपत्र की कोई मुद्दत नहीं रहती थी। वह रद्द होने पर भी व्यापारी पुराने प्रमाणपत्र का दुरुपयोग

करते रहते। अतः सालाना प्रमाणपत्र का नियम बना। व्यापारी को अपना खर्च माल की लागत में जोड़ने का अधिकार था ही, पर उसमें कई गलत रकमें आने लगीं और कर्मचारियों की संख्या अधिक बतायी जाने लगी। इसलिए खर्च के बारे में यह पद्धति मुकर्रर हुई कि काम का स्वरूप देखकर खर्च का प्रतिशत बाँध दिया जाय। इससे ज्यादा खर्च बिक्री-दर में शामिल न हो, अगर बचत रहे तो उसका लाभ व्यापारी को मिले। इस प्रकार के नये प्रमाणपत्र के नियम बनाये गये, जो १-१-'४१ से लागू हुए।

सन् १९४२ के बाद जब कुछ वर्ष कपड़े की बड़ी तंगी रही, तब खादी-काम में मुनाफा करने का बड़ा मौका रहा। बाद में संघ के नव-संस्करण में वस्त्र स्वावलम्बन पर जोर देना था और बिक्री के लिए खादी बनाने की बात धीरे-धीरे हटानी थी। इसके पहले प्रमाण-पत्र उत्पत्ति-बिक्री तथा केवल बिक्री के लिए भी दिये जाते थे, पर अब जब बिक्री के लिए उत्पत्ति कम करनी थी, तो केवल बिक्री का प्रमाण-पत्र देना संघ की नीति से विसंगत था। अतः १९४४ के दिसम्बर में तय हुआ कि केवल बिक्री के लिए प्रमाण-पत्र न दिया जाय। अब तक चरखा-संघ व्यापारियों के मुनाफे का ठीक नियन्त्रण नहीं कर सका था। अब यह सोचा गया कि अगर व्यापारिक काम को उत्तेजन नहीं देना है, तो व्यक्तियों को संघ के प्रमाण-पत्र की प्रतिष्ठा देकर ऐसा मौका क्यों दें कि वे उससे अपना निजी स्वार्थ साध सकें। इसलिए तय हुआ कि प्रमाण-पत्र व्यक्तियों को न देकर सार्वजनिक परोपकारी संस्थाओं तथा ट्रस्ट को ही दिया जाय। इसके बाद सन् १९४८ में जब चरखा-संघ ने अपना उत्पत्ति-बिक्री काम घटाया तथा प्रमाणितों के लिए सूत-शर्त हटाकर उनके द्वारा व्यापारिक काम बढ़ाना तय किया, तब फिर से संस्थाओं को केवल बिक्री के लिए भी प्रमाण-पत्र दिया जाने लगा और प्रमाण-पत्र की कुछ अन्य शर्तें भी नरम की गयीं। अब मुख्य शर्तें ये रहीं : खादी की शुद्धता, जीवन निर्वाह

मजदूरी, बिक्री-दरो का नियन्त्रण, मुनाफा न होने देना, अगर बचत रही तो वह कामगार सेवा-कोष मे डालना।

नियन्त्रण मे ढिलाई

नियमो मे परिवर्तन हुआ, पर कुछ शाखाएँ प्रमाणितो का काम नियमो के अनुसार नही कर सकी। कही प्रमाणित का काम एजेन्सी के नाम से चलने लगा। कई जगह मुनाफे पर भी रोक नही लग सकी। इसके पहले प्रमाणितो के काम की देखभाल प्रान्तीय शाखाएँ करती थी। सन् १९४६ मे यह काम केन्द्रीय दफ्तर को अपने हाथ मे लेना पडा। प्रमाणितो के काम-काज की जाँच मे, उनके द्वारा नियमो के पालन मे कई दोष पाये गये। मुनाफे के बारे मे तो बडी ढिलाई रही। बरसो का मुनाफा उन्हींके पास पडा था। मुनाफा भी बहुत ज्यादा लिया गया था। अब इतना अधिक मुनाफा कामगार सेवा-कोष के लिए उनके हाथ से कैसे छूट सकता था? भविष्य मे मुनाफा ले सकने की उन्हे आशा नहीं रही थी। कई फिर से प्रमाण-पत्र न लेकर अप्रमाणित काम करने लगे। हर साल प्रमाणित सस्थाओ की तथा व्यक्तियो की फेहरिस्त प्रकाशित की जाती थी, ताकि लोगो को खबर रहे कि कौन प्रमाणित है और कौन नहीं। चरखा-सघ की शाखाएँ, प्रमाणित सस्थाएँ या प्रमाणित व्यापारी अप्रमाणित से खादी का व्यवहार नही कर सकते थे।

सच्चे प्रमाणितो द्वारा सेवा

ऊपर विवश होकर हमे कुछ प्रमाणितो व्यक्तियो और सस्थाओ के खिलाफ लिखना पडा है। पर हम यहाँ उन व्यक्तियो और सस्थाओ का स्मरण किये बिना नही रह सकते, जिन्होने खादी-सिद्धान्तो का और प्रमाण-पत्र के नियमो का ठीक-ठीक पालन करते हुए बरसो तक खादी-काम मे चरखा-सघ के साथ हाथ बटाया है। कुछ व्यक्ति अपने काम का विकास चरखा-सघ जैसे तन्त्र मे न रहते हुए स्वतन्त्र रीति से ही अधिक कर सकते थे। गान्धीजी के सिद्धान्तो को माननेवाले और उन्हे अपने जीवन मे उतारनेवाले कई महान् व्यक्तियो ने सस्थाएँ बनाकर खादी-

काम के साथ-साथ अन्य रचनात्मक काम भी चलाये। वे केवल खादी का एक उद्देश्य रखनेवाले चरखा-संघ मे शामिल नहीं हो सकते थे। उन्होंने साधनों के कम होते हुए भी काफी कष्ट सहन करके काम चलाया और खादी-सिद्धान्तों को उनके असली रूप में अपने-अपने क्षेत्र की जनता मे पहुँचाया।

अप्रमाणित खादी-व्यापारी

गान्धीजी, चरखा-संघ और खादी-प्रेमियो के प्रयास से देश मे खादी के लिए राष्ट्रीय भावना उत्पन्न होकर वह स्थिर हो गयी थी और बढ़ती रही। खादी की शुद्धता और सिद्धान्त कायम रखने के लिए संघ ने प्रमाण-पत्रो का आयोजन चलाया। भला मामूली व्यापारी भी इस गुंजाइश के काम मे आये बिना कैसे रहते? प्रमाण-पत्र की परवाह न करते हुए कई लोग अप्रमाणित खादी का काम करते रहे। उनमे कुछ ऐसे भी थे जो चरखा-संघ की नौकरी छोड़कर इस काम मे लगे और उन्होंने अपने पुराने खादी-काम के अनुभव से लाभ उठाया। एक शाखामन्त्री ने भी यह काम किया। कुछ ऐसे भी थे, जिन्होंने वर्षा तक संघ के प्रमाण-पत्र से खादी क्षेत्र मे प्रतिष्ठा पा ली थी और बाद मे स्वार्थ न सधते देखकर अप्रमाणित व्यापार में लग गये। इस अप्रमाणित खादी-काम का गान्धीजी ने, काग्रेस कार्य-समिति ने और अनेक राजनीतिक और अन्य नेताओ ने निषेध किया, पर वह चलता ही रहा। यह तो स्पष्ट है कि ग्राहक के बिना यह व्यापार नहीं चल सकता। खादी पहननेवालो के दोष के कारण ही यह व्यापार पनप सका। कुछ ग्राहक तो प्रमाणित-अप्रमाणित का भेद न जान कर दूकान पर 'शुद्ध' खादी का बड़ा साइनबोर्ड देखकर उसे शुद्ध मान खरीद लिया करते। कुछ अड़ोस-पड़ोस मे प्रमाणित खादी न मिलने के कारण खरीदते। इन ग्राहको मे बहुत से, जिनका मतलब केवल खादी-पोशाक से था, सस्ती देखकर खरीदते। जब १९४४ मे सूत-शर्त लगी, तब सूत देने से बचने के लिए भी अप्रमाणित खादी ज्यादा बिकने लगा। उस समय कपड़े की तंगी के कारण माँग भी इतनी बढ़ा

कि अप्रमाणित व्यापारी अपने कपडे के दाम प्रमाणित खादी की अपेक्षा अधिक बढा सके। अप्रमाणितों को तो वह खादी-कपडा सस्ता ही पड़ता था, क्योंकि जीवन-निर्वाह मजदूरी या शुद्धाशुद्धता की चिन्ता रखने की उन्हे जरूरत नही थी। मुख्यतः खादी की वर्दी काग्रेसजनो के लिए थी। अप्रमाणित खादी के व्यापार को ज्यादा बढावा मिलने का यह भी एक कारण हुआ कि उसके कुछ व्यापारी काग्रेस-कमेटियो मे भी रहे। कही कही काग्रेस कमेटियाँ भी खादी-काम को प्रमाणपत्र देने लगी थीं। यह सिलसिला काग्रेस कार्य-समिति द्वारा रुकवाना पडा।

अप्रमाणितो द्वारा खादी की कुसेवा

अप्रमाणित खादी के व्यापार में अशुद्धता का प्रश्न तो है ही। इसके अलावा चरखा-सघ की कार्य-पद्धति में इसके द्वारा बडी बाधा पहुँचती रही। यह खयाल में रहे कि जहाँ चरखा-सघ के बडे-बडे उत्पत्ति-केन्द्र रहे, वही पर इन अप्रमाणित व्यापारियो का जमघट रहा। सघ को खादी की सब प्रक्रियाओ मे सुधार करना था, कुशलता लानी थी। हमारा अज्ञानी कामगार-वर्ग सुधार करने मे सहसा सहयोग नही देता। उस पर कुछ दबाव लाने की जरूरत रहती है। सघ ने सब जगह कोशिश की कि सूत मजबूत हो, महीन हो, कत्तिन स्वय पूनी बना ले, बुनकर बुनाई सुधारे, कताई की मजदूरी सूत के अक के मुताबिक दी जाय, सूत ठीक नाप की लच्छियों मे आये। इनके अलावा कामगार खुद खादी पहने, उनके जीवन मे सुधार हो, वे व्यसनो से मुक्त रहे, पैसा व्यर्थ बरबाद न हो, आदि-आदि कत्तिनों के हित के कई काम करने का सघ ने प्रयत्न किया। पर ये अप्रमाणित व्यापारी बिना किसी शर्त या पद्धति के सूत खरीदने के लिए कत्तिनो के दरवाजे पर तैयार रहते, जिससे सघ को ऊपर लिखे सुधार कराना मुश्किल हो जाता।

कुछ समय खादी-भावना की लूट इस प्रकार की गयी कि मिल के जाडे-मोटे कपडे पर खादी नाम की छाप लगाकर वह बेचा जाता रहा। भारत सरकार को यह बन्द करने के लिए कानून बनाना पडा। चरखा-

संघ ने यह भी चाहा कि प्रान्तीय सरकारें या देशी रियासते किसी अप्रमाणित व्यापारी को कपडे की बिक्री खादी के नाम पर न करने दे। जब सन् १९४६-४७ मे प्रान्तीय सरकारे और देशी रियासतें खादी-काम को बढावा देने या वह खुद करने का विचार करने लगीं, तब उनके खयाल मे आया कि अप्रमाणित खादी का व्यापार सच्चे खादी-काम के खिलाफ जाता है। जहाँ कहीं सरकारो ने उन्हे रोकने का प्रयत्न किया, इन व्यापारियों ने उनका खूब विरोध किया।

अप्रमाणितो की बहस

पाठकों को स्मरण होगा कि मद्रास सरकार की सात फिरको की वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना मे वहाँ से अप्रमाणित व्यापारियो का काम बन्द करने की एक शर्त थी। यह शर्त बहुत समय तक पूरी न होने का बडा कारण यह था कि वहाँ अप्रमाणित व्यापारियो ने मत्रियो के सामने लम्बी-चौडी बहस रखी। वे अपना व्यापार डूबने की बात तो कुछ धीमी आवाज से कहते रहे, पर उनके काम के बिना कामगारो को राहत कैसे पहुँचेगी, इसकी उन्होंने बडी चिन्ता बतायी और उन फिरको के अडोस-पडोस मे चरखा-सघ या सरकार खादी-काम नही करेगी तो बेकारी बढेगी—ऐसी बहस की। सरकार ने भी बेकारी का तथा इन पुराने व्यापारियो का क्या होगा, इसकी चिन्ता रखी। इस सिलसिले मे मद्रास के प्रधानमत्री को सघ की ओर से ता० २८-६-४७ को जो कुछ लिखा गया, उसका कुछ अश यह प्रकरण स्पष्ट समझ मे आने के लिए यहाँ उद्धृत किया जाता है:

बहस का उत्तर

"अप्रमाणित व्यापारियो के पक्ष मे कोई न्याय-नीति नही है। खादी गाधीजी की और चरखा सघ की बनायी हुई एक विशेष चीज है। यह धन्धा अप्रमाणितो की बुद्धि, उद्योग या पैसे से खडा नहीं हुआ है। गाधी-जी तथा अन्य खादी-प्रेमियो ने जो खादी के अनुकूल भावना बनायी है उसकी ये लोग केवल लूट करते है। वे अपने स्वार्थ के लिए सही तरीके से खादी की प्रगति होने के मार्ग मे सदा आडे आते रहे है।

अप्रमाणित व्यापारियो को या अन्य किसीको भी चरखा-संघ के नियमो के खिलाफ खादी-काम करने का नैतिक अधिकार नही है और न सरकार को ही वेकारी या अन्य किसी नाम पर चरखा सघ द्वारा निश्चित किये हुए सिद्धान्त और कार्य-प्रणाली के खिलाफ कुछ करने का अधिकार है। खादी चरखा-सघ की बनायी हुई एक विशेष चीज होने के कारण अगर कोई खादी-काम करना चाहता है, तो उस पर यह नैतिक जिम्मेवारी है कि वह चरखा-सघ के नियमो के अनुसार ही करे।

"खादी द्वारा वेकारी मिटाने की गाधीजी की अपेक्षा अधिक चिन्ता रखने का दावा कोई भी नही कर सकता। इस बहस मे अप्रमाणित व्यापारियों को खडे रहने का स्थान ही नहीं है, क्योकि उनका मतलब वेकारी हटाने की अपेक्षा मुनाफा करने से ही ज्यादा है। सरकार को स्वाभाविकतया वेकारी की चिन्ता है। पर इसके लिए खादी का आसरा सही तरीके से ही,अर्थात् चरखा सघ की कार्यप्रणाली से ही,लिया जाना चाहिए। इस विषय मे वेकारो का भी कुछ कर्तव्य है। बुनकरो और कत्तिनो को यह अपेक्षा न रखनी चाहिए कि उनकी बनायी हुई महगी खादी के लिए सदा और बडी तादाद मे बाजार बना रह सकता है। उनको अपने खुद के इस्तेमाल के लिए कातने और बुनने को तैयार रहना चाहिए और इतनी ही अपेक्षा रखनी चाहिए कि उनका बचा हुआ माल ही दूसरे खपा सके। इसीलिए वस्त्रावलम्बन पर जोर दिया जा रहा है, जो उनके फुरसत के समय के उपयोग से पूरा हो सकता है।"

अप्रमाणितो की यह भी एक बहस रही है कि चरखा-सघ खादी के धन्धे मे एकाधिकार चाहता है। क्यो न चाहे? सघ यह काम धन्धे के, मुनाफे के या स्वार्थ के लिए नही करता। उसकी प्रवृत्ति शुद्ध सेवा की है और शुद्ध सेवा मे अगर एकाधिकार हो सकता है, तो सघ उसे क्यो न चाहे? सेवा मे दूसरे, कितने ही क्यो न हो, शामिल हो हो सकते हैं।

अप्रमाणित पर गांधीजी की राय

अप्रमाणित खादी का प्रश्न गांधीजी के सामने कई बार आता रहा। उनके निर्वाण के थोडे ही दिन पहले तारीख ५-१-'४८ को उन्होंने इस विषय में एक लेख 'हरिजन-सेवक' में प्रकाशित किया था, वह यहाँ उद्धृत कर यह प्रकरण समाप्त किया जाता है :

"नीचे के सवाल आज उठते हैं, यह जमाने के बदलने की निशानी है :

'आजादी मिलने के बाद शुद्ध खादी, अप्रमाणित खादी, मिल के कपडे और विदेशी कपडे में बहुत फर्क नहीं रह जाता। जितनी जरूरत हो, उतना खुद ही कातकर और बुनकर पहने, तो जरूर फर्क हो जाता है, क्योंकि इससे एक खास विचारधारा का पता चलता है। पर जितना कपडा चाहिए, उतना सूत तो कातना नहीं होता। खादी तो खादी-भंडार से ही खरीदते हैं। उसके लिए भी जितना सूत देना पडता है, खुद नहीं काता जाता। आजकल मजदूरी इतनी ज्यादा हो गयी है कि जीवन-वेतन का भी सवाल नहीं रहता। फिर जरूरत हो, तो अप्रमाणित खादी लेने में क्या हर्ज है? सारे देश में कपडे की काफी कमी है। राष्ट्रीय सरकार खुद विदेशी कपडा मंगाती है। विदेशी कपडा मंगाना न मंगाना सरकार के हाथ में है। फिर भी वह कपडा मंगाती है। तो फिर वह खरीदने में क्या बुराई है?'

प्रमाणित खादी ही प्रमाणित हो सकती है। यहां 'प्रमाणित' शब्द से असली मतलब पूरी तरह जाहिर नहीं होता। प्रमाणित का असली मतलब है : वह खादी, जिसमें सूत पूरे दाम देकर खरीदा गया है, जिसे ठीक दाम देकर हाथ से बुनवाया गया है और खादी का दाम नफाखोरी के लिए नहीं, बल्कि लोक-लाभ के लिए ही रखा गया है। स्वावलम्बी याने अपनी बनायी खादी के सिवा बाकी खादी बाजार से लेनी पडती है। उस खादी के लिए कुछ प्रमाण जनता के लिए जरूरी है। ऐसा प्रमाण

देनेवाली एक ही संस्था हो सकती है। वह है चरखा-सघ। इसलिए चरखा-सघ जिसे प्रमाणपत्र दे, वही प्रमाणित खादी है।

उसे छोडकर जो खादी मिले, वह अप्रमाणित हो जाती है। प्रमाण-पत्र न लेने मे कुछ न-कुछ दोष तो होना ही चाहिए। दोषवाली खादी हम क्यो ले? दोषवाली और बे-दोष की खादी मे फर्क है, इसमे शक के लिए गु जाइश ही नही हो सकती।

यह सवाल किया जा सकता है कि प्रमाण-पत्र की शर्त मे ही दोष हो सकता है। अगर दोष हो, तो उसे बताना जनता का धर्म है। आलस्य के कारण दोष बताने के बदले अप्रमाणित और प्रमाणित का फर्क उडा देना किसी हालत मे ठीक नही है। हो सकता है कि हममे कुचाल इतनी बढ गयी है कि हम ठीक-चाल चल ही नही सकते या जिसे हम ठीक-चाल मानते हैं, वह धोखा ही है। इस हद तक जाना जनता के प्रतिनिधि का काम है ही नही। खादी, स्वदेशी मिल के कपडे और विदेशी कपडे मे फर्क है, इस बात मे शक ही कैसे पैदा हो सकता है? परदेशी राज्य गया, इसलिए परदेशी कपडा लाना ठीक बात कैसे हो सकती है? ऐसा खयाल करना ही बताता है कि हम परदेशी राज के विरोध का असली कारण ही भूलते हैं। परदेशी होने से मुल्क को बडा माली नुकसान होता था। इस माली नुकसान को मिटाना ही स्वराज्य का पहला काम होना चाहिए।

निचोड यह हुआ कि स्वराज्य में शुद्ध खादी को ही जगह है। उसीमे लोक-कल्याण है। उसीसे समानता पैदा हो सकती है।"

उत्पत्ति-बिक्री के अक

सघ के काम के प्रत्येक काल-खड को लेकर तुलनात्मक दृष्टि मे सघ की हरएक शाखा की उत्पत्ति-बिक्री का काम कितना रहा, यह खयाल मे आने के लिए यहाँ कुछ आँकडे दिये जाते हैं।

ये आँकडे केवल चरखा-सघ के काम के हैं। इनमें प्रमाणितो का काम शामिल नहीं है:

सन् १९३०-३१

शाखा का नाम	उत्पत्ति		बिक्री
	वर्गगज	रुपये	रुपये
आन्ध्र	१५,१०,९९०	७६५,३६२	७,१६ ५२०
असम		३७ ४१२	१२ ७६८
बिहार	९,६५ ८६२	३,६६,६०१	३,३६ ६२५
बगाल	८,०७,९९३	३ ४१ ९३८	६,०४ २६१
बबई	..		६ ४५ ३९५
बर्मा			२५ ५००
गुजरात	१,७४,०४७	८२,५००	३,१९,९८८
कर्नाटक	४,६४,९३१	२ ३८,८११	३ ८८ १८७
कश्मीर	१,४५ ८३४	१,५० ४७७	१ ०७ १४८
महाराष्ट्र	३,४३ १२८	१ ३२,१५७	२,५८,३०८
पजाब	८,६७,३२५	२,८९,९५८	२ १६ ४६८
राजस्थान	११ ३३ ०५८	३,५८,११०	१,६९ २९९
सिन्ध	..	३०,४५६	९९,२२३
तमिलनाड	५५,८८,३३३	२३,९७,९८२	१९ २८ ३१०
उत्तर प्रदेश	२०,४२,१४६	६,३०,८५३	७.३२ २८५
उत्कल	१,३४,७६०	६३,२१२	५९,९२६
केरल	...	...	...
महाकोशल	...	.	
हैदराबाद	...	..	
खादी-विद्यालय	.	...	
सेवाग्राम			
जोड	१,४१,५६,४४७	५८,९४,८२९	६६,२०,२७५

सन् १९४१–४२

शाखा का नाम	उत्पत्ति		बिक्री
	वर्गगज	रुपये	रुपये
आन्ध्र	५,४५,२२४	४,०६,४६३	४,८६,०५०
असम	१३,५६७	९,१३६	१०,४५५
बिहार	२५,१८,९९७	१०,८७,७१६	१३,१८,९०५
बंगाल	४,८९,३७२	३,४६,८२६	३,४१,०९१
बंबई	...	...	१०,२५,५८०
बर्मा	...		६८,२३३
गुजरात	४,१०,५१२	३५,५८१	४,३६,५१२
कर्नाटक	२,६८,५२८	१,८५,०८५	२,२९,०७३
कश्मीर	३,२०,६८९	५,१७,३८१	६८,२३३
महाराष्ट्र	१५,६०,९३८	९,५६,७७४	९,०२,८६७
पंजाब	१३,०७,१४४	५,५६,८९३	४,०४,४२५
राजस्थान	६,८२,६८९	३,९६,३६६	३,१९,२९९
सिन्ध	१७,६७७	१६,७७९	२,२१,०९४
तमिलनाड	२८,९८,९८७	१७,३१,०१८	१२,५२,९६५
उत्तर प्रदेश	.		
उत्कल	१,५८,८१३	८१,३९५	१,२६,१८१
केरल	२,९५,९१६	१,६२,७१६	१,७५,०८४
महाकोशल	..	...	.
हैदराबाद	...	.	..
खादी-विद्यालय सेवाग्राम	...	...	...
जोड़	१,११,१०,१३३	६४,९०,१२९	७३,८५,९४०

सन् १९४७–४८

शाखा का नाम	उत्पत्ति		बिक्री
	वर्गगज	रुपये	रुपये
आन्ध्र	१,४७,६४७	३,७३,९७१	३,०३,२३४
असम	..		.
बिहार	...	..	
बंगाल	...	..	
बंबई	.	१०,५८७	२,७४,७६०
बर्मा	.		..
गुजरात	५,८७४	१०,९९२	३,१२,१३८
कर्नाटक	२,३६,५५२	४,६४,८४१	४,०५,२१०
कश्मीर	१०,५५४	१,०३,०८७	४४,०१७
महाराष्ट्र	१,२६,७३२	१,९१,०८८	४,७७,७२४
पंजाब	१,५४,१७६	१,९८,६५०	३,११,३४३
राजस्थान	३,११,८३५	४ २२,०१८	२,४०,९८४
सिन्ध	...	.	
तामिलनाड	२४,१२,७२९	३४,२९,९१३	३४,३९,०५३
उत्तर प्रदेश		...	..
उत्कल	...		
केरल	३,००,३०४	४,३७,७७२	४,१६,८५५
महाकोशल	१,१८,२६४	१,४९,५९२	१,४५,१०५
हैदराबाद	२,५७,०२७	३,८९,६७६	१,०१,५८६
खादी-विद्यालय सेवाग्राम	५,२३०	८,३५९	१०,३०४
जोड़	६५,७४,६८९	६१,९०,५४६	६४,८२,३१३

चरखा-संघ तथा प्रमाणित संस्थाओं की कुल खादी-उत्पत्ति बिक्री
(सन् १९२४ से १९४८ तक)

वर्ष	उत्पत्ति रुपयो मे	उत्पत्ति वर्ग-गज	बिक्री रुपयो मे
१९२४–२५	१९,०३,०३४		३३,६१,०६१
१९२५–२६	२३,७६,६७०	२,२९,५६,१४०	२८,९९,१४३
१९२६–२७	२४,०६,३७०		३३,४८,७९४
१९२७–२८	२४,१६,३८२		३३,०८,६३४
१९२८–२९	३१,५५,४३७	६२,६१,८१२	३९,४९,०७७
१९२९–३०	५४,९१,६१०	१,१६,७६,९३०	६६,१९,८९३
१९३०–३१ (१५ महीने)	७२,१५,५०२	१,७५,७६,५७६	९०,९४,१३२
१९३२	४४,८७,१९५	१,१५,०३,८८६	५८,१२,५३३
१९३३	३८,६८,८१०	१,०२,२४,३४४	५१,७५,९२७
१९३४	३४,०६,३८०	९५,८०,९८६	४६,६७,१२५
१९३५	३२,४४,१०५	८५,६१,७३७	४६,९०,०१३
१९३६	२४,२८,२५७	६२,२३,६९७	३४,४७,७४१
१९३७	३०,१५,३३९	७२,६९ ८७७	४५,३२,७२९
१९३८	५४,९९,४८६	१,२५,५९,५९४	५४,९८,७२०
१९३९	४८,२९,६१०	१,०८,९५,६०८	६४,१३,००२
१९४०	५१,३६,९८३	९५,५१,४३८	७७,६२,७५०
१९४१–४२ (१८ महीने)	१,२०,०२,४३०	२,१५,८४,०७६	१,४९,८५,५१३
१९४२–४३	७८,६२,३६८	१,००,४५,२१४	१,०७,९०,४१०
१९४३–४४	१,२७,५२,२३३	१,०८,८०,७३९	१,३२,६१,६४२
१९४४–४५	१,३४,५८,०६९	१,०२,६३,९०३	१,६७,८७,९७०
१९४५–४६	७०,६३,२१९	५१,७६,९९५	१,०४,८६,५३०
१९४६–४७	१,०५,६८,८७०	७०,०५,४७३	१,११,९५,१३१
१९४७–४८	६५,७४,६८९	४३,५१,६४६	७२,४६,६०४
जोड	१३,११,६३,०४८	२१,४१,५०,६७४	१६,५३,३५,०७४

चरखा-संघ तथा प्रमाणित संस्थाओं द्वारा बाँटी गयी मजदूरी

(सन् १९२४ से १९४८ तक)

रुपये

वर्ष	कत्तिनों को	बुनकरों को	अन्य कामगारों को	कुल
१९२४-२५ १९२५-२६ १९२६-२७ १९२७-२८	२०,०२,५४०	२२,७५,६१४	२,२७,५६०	४५,०५,७१४
१९२८-२९	७,११,८३३	८,३५,१५६	९४,६६२	१६,४१,६५१
१९२९-३०	१३,८८,४६९	१३,८०,४७५	१,९२,२०६	२९,६१,१५०
१९३०-३१ (१५ महीने)	१४,४४,९०८	१७,९५,१२१	३,६०,७७२	३६,००,८०१
१९३२	११,०३,३५१	१२,७६,६११	२,६९,२३१	२६,४९,१९३
१९३३	८,३५,७२७	७,४७,७२७	२,७८,८१६	१८,६२,२७०
१९३४	७,५७,४८९	६,६९,९६७	२,७२,५१०	१६,९९,९६६
१९३५	६,८०,०११	६,७७,१८८	२,९१,१६९	१६,४८,३६८
१९३६	९,२२,०२४	५,२२,१७६	२,४२,४२५	१६,८७,२२५
१९३७	१२,१९,२५६	६,९७,८३७	३,०१,५३३	२२,१८,६२६
१९३८	२३,५४,९०६	१२,१८,८०३	५,७७,१३१	४१,५०,८४०
१९३९	२०,२३,६५०	१०,९८,८७८	५,५२,२०५	३६,७४,७३३
१९४०	२०,९०,३७८	१०,८१,४५४	५,१६,३११	३६,८८,१४३
१९४१-४२ (१८ महीने)	४६,३०,२७३	२४,३१,७३३	१०,५०,५८७	८१,१२,५९३
१९४२-४३	२२,४५,९३४	१४,४१,६६८	५,३२,०५४	४२,१९,६५८
१९४३-४४	४१,८६,४८८	२६,७९,९६९	९,१७,८५९	७७,८४,३१६
१९४४-४५	३६,४१,६७१	३१,२९,७११	९,९२,१५१	७७,६३,५३३
१९४५-४६	२५,०८,०४२	२०,६१,५८३	६,१०,८२६	५१,८०,४५१
१९४६-४७	२१,६७,३०३	२९,४०,७७४	८,०९,१३९	५९,१७,२१६
१९४७-४८	१८,११,३६०	२३,२०,१२७	४,६३,९३९	४५,९५,४२६
कुल जोड	३,८७,२५,६१३	३,१२,८३,१७२	९५,५३,४८६	७,९५,६२,२७१

(पृष्ठ ३१९ से)

सन् १९४७-४८ के वर्ष मे बिहार, उत्तर प्रदेश और उत्कल के ऑकडे नही दिये जा सके, क्योकि वे प्रान्त उस समय विकेन्द्रित हो गये थे।

बगाल और सिन्ध के भी ऑकडे नही हैं, क्योकि वे शाखाएँ उस समय बन्द हो गयी थीं।

यह सारा काम करने के लिए सघ को उत्पत्ति के छोटे-मोटे केन्द्र तथा बिक्री के भण्डार चलाने पडे। इनकी सख्या समय-समय पर और काम के अनुसार कम-वेशी रही। कभी-कभी वह कुल मिलाकर सात आठ सौ तक थी। सबसे बडी सख्या तमिल्नाड मे रही। वहाँ कार्यकर्ताओ की सख्या किसी समय करीब छह सौ तक थी।

खादी की बिक्री-दरे

खादी-आन्दोलन के आरम्भकाल में विभिन्न शाखाओ की बिक्री दरो मे काफी फर्क रहा, क्योकि माल बनाने की लागत कम-वेशी थी। जहाँ कताई की परम्परा और आदत चालू थी, वहाँ काम जल्दी और बडी तादाद मे बढ सका। माफिक मजदूरी देने से निभ जाता था और पैमाना ज्यादा होने के कारण तुलना मे खर्च भी कम पडता। जहाँ काम नये सिरे से शुरू किया जाता, वहाँ वह मॅहगा पडता। इसके अलावा आस-पास मे जो दूसरे कामो की सामान्य मजदूरी कम-वेशी रहती, उसका भी कताई की मजदूरी पर असर होता। बगाल मे खादी बहुत महॅगी तैयार होती रही। अन्य प्रान्तो मे कम-वेशी। पजाब, आन्ध्र, तमिल्नाड आदि कुछ प्रान्तो मे सस्ती होती रही। चरखा-सघ के पहले कालखण्ड मे वैसी कोशिश होने के कारण खादी साल-ब-साल सस्ती बनती गयी। खादी के भाव कम होते जाने का एक कारण तो यह रहा कि प्रारम्भ-काल मे काम नया और थोडा होने के कारण जो ज्यादा मजदूरी देनी पडती थी और अनुभव कम होने के कारण जो ज्यादा खर्च होता था, उसमें धीरे-धीरे फर्क होकर किफायत होने लगी। सन् १९२९ के बाद कुछ वर्षों तक व्यापक आर्थिक-मन्दी का जमाना रहा, कपास और अनाज के भाव

खूब घटे। मजदूरी भी घटी। खादी ज्यादा सस्ती होने पायी। सन् १९३५ के बाद जीवन-निर्वाह मजदूरी की बात आयी, फिर कपास के भाव भी बढ़ने लगे। बाद में लड़ाई के कारण सब चीजें महँगी हुईं, सब प्रकार की मजदूरी बढ़ी। बुनाई की दरें बेहद बढ़ानी पड़ी। माल के यातायात का खर्च बढ़ा, कार्यकर्ताओं के वेतन बढ़े इत्यादि कारणों से बाद में खादी के भाव बढ़ते ही गये। साल-ब-साल इनकी कम-बेशी दरों का अन्दाज होने के लिए नीचे कुछ तालिकाएँ दी जाती हैं। पाठकों को स्मरण होगा कि प्रारम्भ में १९२० के पहले जो खादी बनायी गयी थी, उसकी लागत १ प्रति वर्ग गज करीब १ रुपया पड़ी थी। जिन कुछ शालाओं में खादी सस्ती बन सकती थी, उनके कुछ आकड़े नीचे मुताबिक हैं :

	आन्ध्र	पंजाब	तमिलनाड
	३६ "	२७ "	५० "
साल	फी गज रुपया	फी गज रुपया	फी गज रुपया
१९२२	॥	—	॥।–
१९२३	।≡॥	।=।।।	।।।
१९२४	।≡	।=।	॥≡।
१९२५	।≡	।–।।।	॥=॥
१९२६	।=	।–।	॥–।।।
१९२७	।–॥	। ।।।	॥–
१९३०	—	। ॥	॥ ।।।
१९३१	—	≡	॥
१९३२	—	≡	।≡

सन् १९३३ और १९३४ में खादी की दरें सबसे कम रहीं। १९३३ की कुछ किस्मों की दरें नीचे दी जाती हैं, साथ ही उनकी १९४९ की भी दरें, ताकि तुलना से फर्क स्पष्ट हो जाय।

किस्म	नाप	१९३३ प्रतिगज रुपया	१९४९ प्रतिगज रुपया
आन्ध्र			
पट्टूसाली	५४" × ३२ पुजम	२॥=॥	७≡॥
"	४५" × २२ "	१।≡	४॥।–
वेलमा	५४" × २२ "	१≡॥	४॥।–
"	४५" × १८ "	॥।≡	३॥=॥
विहार			
कोकटी एक सूती	३६"	।=॥	१॥
" दो सूती	३६"	१।	३
कश्मीर			
पट्टू	प्रति नग	७॥'	३०
ट्वीड	प्रति गज	१–॥	३॥
महाराष्ट्र			
सादी खादी	३६"	।'॥	१।–
"	४५"	।=	१॥।=
दो सूती कोटिंग	२७"	।–॥	१।–
साडी, रगीन किनार	५ × ४५" (१५ पुजम)	१॥।=	९॥।
साडी, रगीन किनार	५ × ४८" (२० पुंजम)	३।≡	१२॥।
उत्तरप्रदेश			
सादी खादी	२७"	=॥	॥।–
" "	४५"	।'॥	१।
धोती, रगीन किनार	४ × ४५"	१।=	६
वटा कोटिंग	३०"	॥'।	१॥।
धारीदार शर्टिङ्ग	३२"	।'।	१॥

तमिलनाड		
सादी खादी	४५" ।-॥	१॥-
" "	५०" ।=॥	१॥।
" "	५४" ।≡॥	१॥।≡
उत्कल		
सादी खादी	४५ " ।=॥	१।=
धोती	३॥×४५" १।-	४॥
साडी	४×४५" २≡	६॥।

सन् १९३४ के बाद भाव साल-ब-साल कितने बढ़े, इसके आकड नीचे दिये गये है। यह कीमत एक वर्गगज सादी खादी की है :

साल	फी वर्गगज रुपया	साल	फी वर्गगज रुपया
१९३५	०–६–०	१९४३	०-१२-६
१९३६	०–६–३	१९४४	१–२–६
१९३८	०–७–०	१९४५	१–५–१
१९३९	०–७–२	१९४६	१–५–८
१९४०	०–८–८	१९४७	१–८–०
१९४२	०-८-११	१९४८	१–८–०

संघ की माली हालत

पूँजी तथा नफा-नुकसान

इस प्रकरण मे हम इतना ही बतलायेगे कि चरखा-सघ के पास पूँजी कितनी रही, हर साल नफा-नुकसान क्या रहा और पैसे-टके को लेकर कुछ विशेष बात हुई हो तो।

अखिल-भारत खादी-मडल का ता० १६-१२-'२३ से हिसाब मिल सका है, उस पर से मालूम होता है कि ता० १५-१२-'२३ को उसके पास रु० १२,३४,९६२॥।=॥ थे। यह रकम काग्रेस-महासमिति से मिली हुई रकम

मे से थी। उस वर्ष रुपये ८२१६~॥ नुकसान रहा। साल के अन्त मे ५-१२-'२४ को उसके पास १२,२६,७४६|||~ रहे। इसके बाद का हिसाब ता० १५ अक्तूबर १९२५ तक का बना, जब कि खादी-मडल का काम चरखा-सघ के सुपुर्द हुआ। ता० १५ अक्तूबर १९२५ को चरखा-सघ को खादी-मडल से १२,३६,७४६|||~ मिले। चरखा-सघ का पहले वर्ष का हिसाब ता० १६ अक्तूबर १९२५ से ३० सितम्बर १९२६ तक का बना। इस वर्ष प्रान्तीय खादी-मडलो की कुछ रकम वसूल हुई। देशबन्धु स्मारक-कोष के करीब दो लाख रुपये प्राप्त हुए और नुकसानी व खर्च की रकम रुपये एक लाख से थोडी अधिक हुई। ता० ३० सितम्बर सन् १९२६ को चरखा-संघ के पास पूॅजी रुपये १५,२६,०८७ रही। बाद के ऑकडे नीचे मुताबिक हैं :

साल आखीर तारीख	पूॅजी	नुकसान	बचत	दान करीब रुपये
३०-९-'२७	१७,८१,३८६	१,०८,४१०	–	३,२५,०००
३०-९-'२८	१९,२९,७४९	२,००,७६६	–	३,५०,०००
३०-९-'२९	२३,०७,८०९	८८,५८०	–	४,५०,०००
३०-९-'३०	२३,६०,६७८	१,६८,७३९	–	२,७५,०००
३१-१२-'३१	२२,४५,७०५	१,५८,६७२	–	३,३६१
३१-१२-'३२	२२,४६,५३९	५७,११८	–	३१,७१५
३१-१२-'३३	२१,६६,८१५	९६,०११	–	–
३१-१२-'३४	२०,८८,३७९	८४,२१८	–	–
३१-१२-'३५	२१,११,२१७	–	२,६९५	–
३१-१२-'३६	२१,५८,०५५	–	३५,९३९	–
३१-१२-'३७	२३,०४,३५२	–	१,११,३९९	–
३१-१२-'३८	२४,२०,०८१	–	५६,८२१	३४,८९७
३१-१२-'३९	२३,९५,८५६	२६,८७९	–	–
३१-१२-'४०	२७,७०,९२५	१,३६,३५६	–	३,३६,६१०

साल आखीर तारीख	पूँजी	नुकसान	बचत	दान करीब रुपये
३०-६-'४२	३४,८७,३८९	३४,१८२	–	७,१७,९११
३०-६-'४३	३५,५८,०२३	–	४,३३७	६६,३०५
३०-६-'४४	३६,१५,०८९	–	२०,४९१	३६,५६५
–	–	–	१३,८८,७६५··	–
३०-६-'४५	५३,७७,३६८	–	३,०५,७१८	४६,२३९
३०-६-'४६	५७,६५,६१०	४९,२५१	२,१०,४३९··	१,०७,६०५
				१,१६,३४८ +
३०-६-'४७	५८,१८,६९५	१,०१,६०८	–	१६,३२६ +
३०-६-'४८	६३,७३,८८८ ×	३०,१३०	–	६,८३० +

सब और शाखाओं का पक्का आँकड़ा (Balance Sheet)

हरएक शाखा का सालाना पक्का आँकड़ा तैयार होता रहा, वैसे ही केन्द्र का भी। केन्द्र का पक्का आँकड़ा, नफा नुकसान और खर्च-खाता हर वर्ष प्रकाशित होता रहा। पहले कई वर्षों में केन्द्र और शाखाओं के सपूर्ण हिसाब का सकलन नहीं किया जाता था, बाद मे वह किया जाने लगा। सन् १९४४-४५ का सकलित हिसाब छापकर प्रकाशित भी किया गया था। यहाँ तारीख ३० जून १९४५ का केन्द्र का पक्का आँकडा

·· सन् १९४३-४४ मे नयी उत्पत्ति मँहगी पडने के कारण खादी के भाव बढाने पडे, जिसमें पुराने स्टॉक का भी भाव बढ गया, ये दो आँकडे उस बचत के हैं।

\+ चरखा-जयती दान।

× आखीरी तीन-चार वर्षो मे बाजार मे सब जायदादों की कीमत काफी बढ गयी थी, इसलिए सघ ने अपनी स्थावर जायदाद का बाजार-कीमत के हिसाब से मूल्य लगाकर सन् १९४८ मे जमा-खर्च किया, जिससे कागजी हिसाब मे पूँजी मे रुपया ५,२४,२९७ की रकम बढी।

(Balance Sheet) तथा केन्द्र और शाखाओ का मिला हुआ संकलित पक्का ऑकडा दिया जाता है। यह केवल एक वर्ष का ऑकडा नमूने के तौर पर दिया गया है। पाठक यह तो जानते ही होगे कि हर साल आर्थिक स्थिति मे कुछ-न-कुछ फर्क होता ही रहता है, तथापि इस एक ऑकड़े से सघ की व्यावहारिक व्यवस्था का कुछ अदाज लग सकेगा।

अखिल भारत चरखा-संघ का ता० ३० जून १९४५ का पक्का आंकड़ा

पूॅजी, जमा रकमे तथा देना

	रु० आ० पा०
पूॅजी	५३,७७,३६८—६—१०
कामगार सेवा-कोष	४,०१,०७४-१०— ०
उत्तर गुजरात खादी-अंकित निधि	६०,५७२—००— ६
प्राविडेट फण्ड	७,३१२—४— ६
प्रदर्शनी निधि	१४,७६९-१५— ६
घसारा-निधि	१४,८६१—६— ३
ग्रामोद्योग शिक्षा-अकित निधि	१५,८३२—९— ६
देना	१,१४,५१२-१५— ३
उचत खाते	१७,३९२—३— ९
	६०,२३,६९६—८— १

जायदाद, सामान और लेना

	रु० आ० पा०
नगदी बैको मे, मुद्दती अमानत	४,२२,३५५—५—१
शाखाओं के काम मे लगी रकम	४८,४०,९७७—४—०
प्रमाणित सस्थाओ को कर्ज	४,६२,३८६—२—८
घरेलू विभागो मे	४४,३२७—९—७

	रु० आ० पा०
फुटकर उधार	२,१८२—१०—०
प्राविडेण्ट फण्ड ट्रस्ट मे जमा	७,१८७—४—६
डूबत रकम	१ ७९,९७३—३—०
जमीन की लागत	३, ४३१—५—६
मकानो की लागत	१,०९,३०८-११—६
सामान, असबाब और पुस्तके	१,१०८—५—९
उचत खाते	४५८-१०—६
	६०,२३,६९६—८—१

केन्द्र और शाखाओं का
ता० ३० जून '४५ का संकलित पक्का आँकड़ा
पूँजी, जमा रकमें, देना

		रु० आ० पा०
पूँजी		
केन्द्र मे		५३,७७,३६८—६-१०
शाखाओ मे		
स्थानीय पूँजी और दान		४८,१३६—०—२
शाखाओ का प्राविडेण्ट फण्ड		२,५९,४७४—७—३
देना		
शाखाओ मे		
(सरकारी और स्थानीय	रु० आ० पा०	
स्वराज्य-सस्थाओं का)	२,३७,७८५—६-१०	
केन्द्र मे	१,००,७१४—४—६	३,३८,४९९-११—४

		रु० आ० पा०
कामगार सेवा-कोष		
केन्द्र मे	४,०१,०७४—१०—०	
शाखाओ मे	११,०७,८७७—३—४½	१५,०८,९५१—१३—४½
अंकित-निधि		
केन्द्र मे	१,१३,३४८—४—३	
शाखाओ मे	१,०६,२५६—९—६	
शाखाओमे मकान घसारा	३,०१,२१२—१२—२	५,२०,८१७—९—११
सरकारी मदद		
शाखाओ मे		२,१५,६४७—६—११
लागत फर्क		
शाखाओ मे माल का हिसाब बिक्री-भाव से रखा जाता था, उसकी सही कीमत निकालने के लिए फर्क		७,३४,९५५—१५—०

जायदाद, सामान, लेना

नगदी, बैंको मे तथा मुद्दती अमानत		
केन्द्र की	४,२२,३५५—५—१	
शाखाओ की	१७,१८,५१७—५—१०	२१,४०,८७२—१०—११
आन्ध्र शाखा मे सरकारी कागज		९००—०—०
व्यापारिक माल		
कपडा	५०,८९,२२३—६—१०½	
अन्य माल	४,५४,००७—८—९	
यातायात मे	१,१९,३९५—७—९	५६,६२,६२६—७—४½
स्टेशनरी (शाखाओ मे)		५,४४२—३—६
स्थावर-जंगम जायदाद		
केन्द्र मे जमीन और मकान	१,१२,७४०—१—०	

(पीछे से चालू)

शाखाओं में जमीन और मकान	२,५९,३३८—७—८	
शाखाओं में कच्ची झोपड़ियाँ	२७,७२२—६—४¾	
शाखाओं में साँचे और मशीन	८८,०२८—७–११	
केन्द्र में फर्नीचर और सामान	८९२—७—९	
शाखाओं में फर्नीचर, सामान	२,२६,२११—१—५½	
शाखाओं में जीवित धन	२६,०४९—६—८	
केन्द्र में पुस्तकें	२१५–१४—०	
शाखाओं में पुस्तकें	५,१३८–११—३	
लेबोरेटरी (शाखाओं में)	१०,६६३—७—७	७,५७,०००—७—८
प्राविडेन्ड फण्ड ट्रस्ट में जमा		२,४५,५४०—१–११
कर्ज		
शाखाओं में प्राविडेण्ट फण्ड पर कार्यकर्ताओं को	१२,९६६—१—३	
” संस्थाओं को	७,०४६–१५—०	
केन्द्र में प्रमाणित संस्थाओं को	४,६२,३८६—२—८	
फुटकर	९,३६९–१४—६	४,९१,७६९—१—५

(पीछे से चालू)

जमा		
शाखाओ मे		
कत्तिनो का	५,०३,४०७—६—०	
बुनकरो का	२,८३,८२०-१३—६	
दूसरे कामगारो का	६४,१९१—०—२½	
कार्यकर्ताओ का	४६,८५२-१३—०	
प्रमाणित संस्थाओ और दूसरो का	७४,३४१—५—४	
केन्द्र मे (फुटकर)	२०१—०—०	९,७२,८१४—७—०½
व्यावसायिक और फुटकर देना		
केन्द्र मे	१३,५९७-१०—९	
शाखाओ मे	२,५७,४४८—२-११½	२,७१,०४५-१३—८½
उचन्त खाते		
केन्द्र मे	१७,३९२—३—९	
शाखाओ मे	८०,५११—१—६	९७,९०२—५—३
	जोड	१,०३,४५,६१५—०-१०½
दूसरे खाते		
ब्रह्मदेश शाखा	१८,५८०-१५-११	
बंगाल शाखा (१९४२-४३ के हिसाब मे)	२७,३४९-११—६	४५,९३०-११—५
उधारी (शाखाओ मे)		
कत्तिन	३,२०३-११—०½	

(पीछे से चालू)

बुनकर	२३ ९९३—४—१०	
दूसरे कामगार	१३,३१९—६—२	
कार्यकर्ता	१७,३७६—२—४	
घरेलू विभाग	४३,५५८—१३—७	
घरेलू विभाग केंद्र में	४४,३२७—९—७	
स्वावलंबियों के कपड़े की बुनाई	३४ ७२०—७—१	
किराया, रोशनी आदि के लिए अमानत	२५,५९९—७—९	२,०६,०९८—१४—४¾
ाखाओं का व्याव-ायिक लेना		
एजेन्ट	६,२७१—१५—५	
प्रमाणित संस्थाएँ	१,५०,९३९—२—०½	
स्थानीय स्वराज्य तथा अन्य संस्थाएँ	८३ ५१७—१३—८	
अन्य फुटकर	१,०५,७४७—१०—२¾	३,४६,४७६—९—४
ाकाम्पद तथा ्वत उधारी		
शाखाओं में	१,१२,२५३—१३—२	
केन्द्र में	२,२९,९७३—३—०	
सरकार द्वारा जब्त	१,४९,८६२—११—७	
हानि खाते न लिखी हुई नुकसानी	२,७७२—१०—६	३,९४,८६२—६—३
चन्त खाते		
शाखाओं में	४७,६३६—१२—२½	

(पीछे से चालू)

केन्द्र मे	४५८–१०—६	४८,०९५—६—८½
		जोड १,०३,४५,६१५—०–१०½

चरखा-सघ की साहूकारी (?)

इस प्रकरण को साहूकारी नाम देना सरासर गलत है, पर दूसरा यथार्थ नाम सूझता भी नहीं। चरखा-सघ शुद्ध परोपकारी सस्था है। खादी काम बढाने के लिए जो कर्ज दिया गया था, वह बहुत-सा सार्वजनिक परोपकारी सस्थाओ को और थोडा सा व्यक्तियो को खादी-काम के लिए ही दिया गया था। कर्ज देने और लेनेवाले दोनो का ही इरादा गरीबो की सेवा करना था। इस व्यवहार को हम साहूकारी कैसे कहे? पर कर्ज समय पर अदा न होने से बाद मे सबध साहूकार और कर्जदार का-सा हो गया। कुछ कर्ज लेनेवाली सस्थाओ के सचालको का व्यवहार, निज के स्वार्थ के लिए नही, पर अपनी-अपनी सस्था की दृष्टि से मामूली व्यावहारिक कर्जदारो का सा पाया गया। किसी व्यक्ति या सस्था को दोष न देते हुए यही कहना वाजिब होगा कि कर्ज का लेन देन ही कुछ ऐसी चीज है कि उससे बुराई निकलती ही है।

आरभ मे खादी-मडल या चरखा-संघ का सगठन इतना फैला हुआ नही था कि वह देशभर में खुद खादी काम चला सके। इसलिए नीति यह रही कि जहाँ कोई योग्य व्यक्ति या सस्था खादी-काम करने को तैयार हो, उसको कर्ज दिया जाय। कर्ज की कुछ शर्ते कडी थीं, तो कुछ सुविधा की भी थी। पहले व्याज की दर सालाना एक हजार पीछे एक टका थी, कुछ वर्षो बाद फी सैकडा तीन टका हुई, बाद मे दो टका। जब दर तीन टका थी, तब शर्त यह थी कि अगर काम मे हानि हो तो आधा टका ही व्याज लगाया जाय। सघ की रकम सुरक्षित रहने की दृष्टि से एक शर्त यह थी कि जितनी रकम चरखा-सघ दे, उतनी ही उस काम मे कर्ज लेनेवाले की भी लगनी चाहिए, उसके जगम माल पर

संघ की रकम का चार्ज रहे। रकम लेनेवालों में से कुछ के बारे में अनुभव यह आया कि या तो उनकी खुद की रकम लगी ही नहीं या धीरे-धीरे वापस खींच ली गयी। यह जो कर्ज का संबंध जुड़ा, वह कुछ मामलों में जल्दी ही खतम हो गया। कई रकमें डूबीं। कुछ के लिए अदालत में भी जाना पड़ा। कर्ज की पद्धति शुरू होने के करीब तीन वर्षों में ही संघ को अदालत में जाने की सोचनी पड़ी और कुछ दावे भी करने पड़े। कुछ विशेष हासिल तो नहीं हुआ, पर संघ को उन महाशयों की नाराजगी का पात्र बनना पड़ा। कुछ कर्जों का संबंध बीस-पचीस वर्ष तक भी रहा। यों तो कर्ज अदा करने की मियाद एक-दो साल की ही रहा करती थी, पर वह समय-समय पर बढ़ानी पड़ती थी। बात भी कुछ ऐसी थी कि काम चलता रहता, तब तक रकम का कोई दूसरा इन्तजाम न हो तो संघ की रकम खुली नहीं हो सकती थी। पर आगे चलकर खादी-काम में काफी बचत रहने लगी। तथापि कर्ज लेनेवालों के हाथ में पैसा आने पर भी संघ की रकम की अदायगी में तत्परता नहीं रही। सन् १९३९ में संघ ने प्रस्ताव किया कि जिनकी तरफ पुरानी रकमें लेनी थीं, वे उनकी अदायगी दस वर्षों में सालाना किश्तों में कर दें। कुछ संस्थाओं को कुछ रकमों की छूट भी दे दी गयी। कइयों की रकमें इस प्रस्ताव के अनुसार अदा नहीं हुईं। उनसे फिर से नयी शर्तें तय करनी पड़ीं। हम यहाँ संस्थाओं या व्यक्तियों के नामों का उल्लेख नहीं करना चाहते। इतना ही कह देना काफी है कि रकमों के बारे कई गैरवाजिब उज्र उठे, तकाजा किये बिना रकम नहीं मिली। किश्त होने के कारण सालाना देने की रकमें छोटी-छोटी हो गयी थीं, कहीं-कहीं रुपये एक सौ से पाँच सौ तक ही, पर खादी के मुनाफे के या अन्य रीति से हजारों रुपये हाथ में रहते हुए भी किश्त के समय के पहले या लिखा पढ़ी के बिना रकम नहीं दी गयी। कुछ ने तो अपने काम के लिए प्रमाणपत्र लेना बंद करके अप्रमाणित खादी का काम शुरू किया।

ऊपर लिखे नमूनों से संघ के लेन-देन का किस्सा खयाल में आ

जायगा। सन् १९२३ से शुरू होकर पाच-छह वर्षो तक खादी-काम के लिए कर्ज देने का सिलसिला चालू रहा। पर ज्यो-ज्यो कटु अनुभव आने लगा, त्यो-त्यो वह कम कर दिया गया और सन् १९३० के बाद तो प्राय: बद ही कर दिया गया।

जैसा कि मामूली व्यवहार मे अनुभव आता है, कर्ज की रकम डूबती है और कर्जदार से वैर भी होता है, ऐसा ही कुछ अनुभव सघ के कामकाज मे, दोनो तरफ सार्वजनिक हित की सस्थाएँ होते हुए भी, आया।

कर्ज के अलावा माल के लेन-देन पर से भी उधारी होती रही। वह वसूल करने मे बडी मुश्किल रही और बहुत-सी डूबी भी। कर्ज और उधारी मे सघ की कुल मिलाकर करीब ७-८ लाख रुपयो की हानि हुई।

चरखा-संघ और इनकमटैक्स

यह इनकमटैक्स का प्रकरण, कभी-कभी न्याय मिलना कितना मुश्किल है, इसका एक खासा उदाहरण है।

चरखा-सघ परोपकारी सार्वजनिक सस्था है। वह मुनाफे के लिए बनी नही, न मुनाफा करने की उसकी इच्छा ही रही। इसलिए जब चरखा-सघ पर इनकमटैक्स लगा, तब कई खादी-प्रेमियो को खेद के साथ आश्चर्य हुआ कि चरखा-सघ मुनाफा करे ही क्यो, जिसके कारण उस पर इनकमटैक्स देने की नौबत आये।

हेतु और इच्छा न होते हुए भी मुनाफा क्यो हो जाता है, इसकी जवाबदारी कुछ अश मे नीचे लिखी स्थिति के कारण है :

जहाँ देशभर मे करीब सात-आठ सौ छोटे-छोटे केन्द्रों में फैले हुए काम मे कपास का सग्रह करने से लेकर उसे लुढाना, धुनवाना, कतवाना, बुनवाना, कपड़े को धुलाना, रगाना, छपवाना, दूर-दूर भेजकर फुटकर बेचना आदि सब क्रियाएँ करनी पडती हैं, वहाँ व्यवहार कितनी ही कुशलता से क्यो न किया जाय, ऐसा कोई भी प्रबन्ध नहीं किया जा सकता कि बचत बिलकुल न रहे या घाटा भी बिलकुल न हो।

कभी-कभी तो हानि-लाभ अकस्मात् ही हो जाते है। खादी-काम मे तीव्र चढाव-उतार आते रहे हैं। जहाँ पिछले वर्ष के आधार पर खादी १० लाख की तैयार होगी या बिकेगी, ऐसा अनुमान किया गया हो, वहाँ कभी तो केवल सात लाख की ही तयार हो पाती या बिक्ती है और कभी १२ लाख की तैयार हो जाती है परन्तु माल तैयार करने और बेचने का प्रबन्ध तथा खर्च तो उतना ही कायम रखना पडता है। इस कारण माल कभी पडा रह जाने या अधिक बिक जाने के कारण विवशत हानि-लाभ हो जाता है। जहाँ एक करोड का काम होता है, वहाँ एक प्रतिशत भी बचत रह जाय, तो एक लाख रुपये का नफा हो सकता है और एक प्रतिशत घाटा हो जाय तो एक लाख की पूजी नष्ट हो सकती है। इसके अलावा बचत हुई या हानि, इसका पता साल खतम हो जाने के कई महीनो के बाद हिसाब पूरा हो जाने पर ही लग सकता है। कुछ शाखाओ मे बचत रहती है, कुछ मे घटी। इसलिए जिस वर्ष का हिसाब किया जाता है, उसी वर्ष मे बिक्री के भाव घटा कर बचत टाल भी नहीं सकते।

चरखा-सघ का प्रारम्भ हुआ तब कई वर्षा तक लाखो रुपयो का घाटा सहन करना पडा। १९३६ साल के बाद का समय मुनाफे का रहा। यह मुनाफा कैसे हुआ, इसका जिक्र पहले आ चुका है।

ये बाते तो इसलिए लिख दीं कि इनकमटैक्स प्रकरण की मीमासा पूरी सामने आ जाय। लेकिन इस प्रकरण मे तो सरकार के इनकमटैक्स विभाग से जो सम्बन्ध रहा, उसीके बारे मे विवेचन करना है।

पहले-पहल सघ के खिलाफ इनकमटेक्स की कार्यवाही सन् १९३२ मे शुरू हुई। उस समय सघ का दफ्तर अहमदाबाद मे था। सघ की ओर से यह उज्र किया गया कि चरखा-सघ ऐसी परोपकारी सस्था है, जिस पर कानून के अनुसार टैक्स नहीं लगना चाहिए। अहमदाबाद के इनकमटेक्स ऑफिसर ने यह उज्र नामजूर किया। अपील मे असिस्टेण्ट कमिश्नर ने चरखा सघ का कहना सही माना। उन्होने स्पष्ट

निर्णय दिया कि चरखा-सघ के विधान, नियम और प्रत्यक्ष व्यवहार से यह साबित है कि वह भारत की जनता की भलाई के उद्देश्य से काम कर रहा है। इनकमटैक्स माफ हुआ। इस फैसले की तारीख ६-११-१९३३ है।

इसके बाद सन् १९३८ मे फिर से सरकार की ओर से इनकमटैक्स की कार्यवाही शुरू हुई। यह मामला १९३६-३७ के नफे के बारे मे था। उसके बाद के दूसरे साल के बारे मे भी मामला शुरू हुआ। बाद मे भी हर साल इनकमटैक्स की नोटिस आती रही। पहले साल का मामला लडा गया और यह मान लिया गया कि उसमे जो निर्णय होगा, वह बाद के साल को लागू हो जायगा। उसके बाद के समय के नफे के बारे मे जो नोटिसें आयी थी, वे प्रकरण सरकार ने उस समय हाथ मे नही लिये, क्योकि पुराना मुकदमा चल ही रहा था और उसका निर्णय नही हुआ था।

कानून की जिस धारा के अनुसार इनकमटैक्स की माफी मिल सकती थी, वह परोपकार की व्याख्यासहित, सघ के सम्बन्ध से नीचे मुताबिक है :

This act shall not apply to any income derived from property held under trust or other legal obligation wholly for charitable purposes including relief of the poor, education, medical relief and the advancement of any other object of general public utility.

सघ का कहना था कि हमारा काम 'रिलीफ ऑफ दि पुअर, जनरल पब्लिक यूटिलिटी' गरीबो की राहत और सामान्य सार्वजनिक हित का है। सघ ने अपनी बात साबित करने के लिए सब सामग्री अधिकारियों के सामने उपस्थित की।

अहमदाबाद के इनकमटैक्स ऑफिसर ने निर्णय दिया कि चरखा-

संघ एक व्यापारी संस्था है और अन्य व्यापारियों और उसके व्यवहार के तरीके में कोई भेद नहीं है। अपील में असिस्टेण्ट कमिश्नर ने भी वैसा ही निर्णय दिया। चरखा संघ के कथन का खण्डन करने के लिए उन्होंने बडे अजीब तर्क उपस्थित किये। विस्तार-भय से यहाँ उनका उल्लेख नहीं किया है। उन्होंने यह भी कहा कि चरखा संघ का उद्देश्य राजनीतिक भी है। उसके बाद कमिश्नर ऑफ इनकमटैक्स के पास अपील हुई। उन्होंने बडा परिश्रम करके यह साबित करने की कोशिश की कि चरखा संघ का मुख्य उद्देश्य तो राजनीतिक है, इसलिए वह सार्वजनिक हित की या परोपकार की संस्था नहीं मानी जा सकती। उनके फैसले में एक विशेष बात यह रही कि गान्धीजी ने चरखा संघ का उद्देश्य, वह कार्य-प्रणाली परोपकारी होने के बाबत जो एक एफिडेविट (हलफनामा) दिया था, उसकी सत्यता के बारे में भी उन्होंने शका की।

कमिश्नर के निर्णय पर से मामला हाईकोर्ट में गया। बेंच में न्यायाधीश चीफ जस्टिस ब्यूमान्ट और वाडिया साहब थे। श्री वाडिया साहब ने वस्तुस्थिति के बारे में यह निर्णय दिया कि संघ का सच्चा उद्देश्य देहात के गरीब काश्तकारों को, विशेषतः उस समय में जब कि उन्हें खेती का काम नहीं रहता, लाभ पहुँचाने का है। सर ब्यूमान्ट साहब इस विषय पर मौन रहे। लेकिन दोनों न्यायधीशों ने यह निर्णय दिया कि संघ के विधान और नियमों के मुताबिक कोई 'ट्रस्ट' नहीं बनता है और संघ की जायदाद संघ के उद्देश्यों के अनुसार ही उपयोग में लाने की ट्रस्टियों पर कानूनी जवाबदारी नहीं आती। इसलिए इनकमटैक्स की उक्त कलम लागू नहीं होती। इस प्रकार केवल कानूनी मुद्दे पर संघ की अपील नामंजूर की गयी। यह फैसला ता० ८-४-१९४१ को हुआ।

इसके बाद मामला प्रीवी कौन्सिल के सामने गया। उसका फैसला ता० २७-६-१९४४ का है। उसमें निर्णय हुआ कि ट्रस्ट तो है ही, इसके अलावा संघ के उद्देश्य के अनुसार उसकी जायदाद का उपयोग करने

की कानूनी जिम्मेवारी अधिक ट्रस्टियो पर है। बम्बई हाईकोर्ट ने एक यह भी दलील दी थी कि सघ के विधान मे परिवर्तन करने का सघ को अधिकार दिया गया है इस दशा मे वह परिवर्तन करके अपना उद्देश्य बदल सकता है और उसका परोपकारी स्वरूप भी बदला जा सकता है। इसका उत्तर तो स्पष्ट ही था कि जब तक परिवर्तन नही हुआ है, तब तक विधान जैसा है, वैसा बन्धनकारक है ही। इस बात का प्रीवी कोन्सिल ने भी समर्थन किया। उन्होने यह भी निर्णय दिया कि सघ का मुख्य उद्देश्य गरीबो को राहत पहुँचाने का है और वह सामान्य सार्वजनिक भलाई के लिए है, अब तक सघ इसी उद्देश्य को लेकर काम करते आया है। संघ का उद्देश्य राजनीतिक होने के बारे मे नीचे की अदालतो ने जिक्र किया था। उसके बारे मे उन्होने न्यायाधीश श्री वाडिया के इस विचार का समर्थन किया कि यद्यपि कोई सस्था राजनीतिक सस्था द्वारा (जैसा कि सघ के बारे मे काग्रेस का सम्बन्ध रहा है) खडी की गयी हो और उससे उसका सम्बन्ध भी हो, तथापि अगर उसका सच्चा उद्देश्य गरीबो की राहत है तो राजनीतिक सस्था से सम्बन्ध होने पर भी उसके परोपकार होने मे कोई कमी नहीं आती।

ऊपर का निर्णय १९३६-३७ और ३७-३८ साल के मुनाफो को लागू हुआ। उसके बाद के सालो की कार्यवाही भी सरकार ने चालू रखी थी। १९४० के बाद चरखा-सघ का दफ्तर वर्धा मे आ चुका था। इसलिए बाद के सालो के मुकदमे नागपुर के इनकमटैक्स ऑफिसर के सामने आये। इस अदालत मे कार्यवाही १९४१ और ४२ मे चलती रही। बम्बई हाईकोर्ट का फैसला होने के बाद, हाईकोर्ट के फैसले मे जो नाममात्र की त्रुटि दिखलायी गयी थी, वह चरखा-सघ ने अपने विधान मे सशोधन करके दुरुस्त कर ली थी। इसके अलावा बीच मे इनकमटैक्स कानून मे भी एक महत्त्व का परिवर्तन हुआ था, जिसके अनुसार पुराने कानून का अर्थ कैसा भी किया जाय, तथापि नयी धारा के अनुसार चरखा-सघ को इनकमटैक्स माफ होने मे कोई शका नही रही। इस कानून

को धारा के अनुसार माफ होनेवाले मुनाफे का वर्णन इस प्रकार है.

'Any income derived from business carried on behalf of a religious or charitable institution when the income is applied solely to the purpose of the institution and—

The business is carried on in the course of the carrying out of a primary purpose of the institution.'

यह सब होते हुए भी नागपुर इनकमटैक्स ऑफिसर ने बाद के सालों के लिए चरखा-संघ को इनकमटैक्स से बरी नहीं किया। इन फैसलों में भी चरखा-संघ को इनकमटैक्स ऐक्ट लागू करने के लिए बड़ी अजीब बहस लिखी गयी है। ये फैसले फरवरी १९४२ में हुए। इन फैसलों पर असिस्टेंट कमिश्नर के पास अपील की गयी। ये अपीलें लम्बी मुद्दत तक मुल्तवी रहीं। अंत में जब प्रीवी कौंसिल का फैसला आया, तब चरखा-संघ का इनकमटैक्स से पिंड छूटा। असिस्टेण्ट कमिश्नर का फैसला ता० २३-११-'४४ को हुआ।

अध्याय १० कुछ विविध प्रवृत्तियाँ

औजारो और प्रक्रियाओ मे सुधार

यह इतिहास लिखते समय स्मरण से और पुराने कागज-पत्रो से इतनी घटनाएँ सामने आयी कि उनमे से कौन-सी लिखी जायँ और कौन छोड दी जायँ, इसका निर्णय करना एक समस्या रही। औजारो के बारे मे सोचने लगे, तब तो यह सवाल बहुत ज्यादा कठिन दीख पडा। बातें छोटी-छोटी ही, पर वे मामूली कामगार की दृष्टि से बडे महत्त्व की हैं। कई लगनेवाले विशेषज्ञो ने और सामान्य लोगो ने भी नाना प्रयोग करके औजारो मे सुधार करने की कोशिश की थी। जो बाते तय हुई, वे भी अनुभव के बाद बार-बार बदलनी पडी। एक समय जो चीज अत्यत उपयोग की मानी गयी, वह अपने आसन पर स्थिर नही रह सकी। इतना जरूर कहा जा सकता है कि घरेलू और हाथ-उद्योग की दृष्टि से प्रगति बराबर होती रही। इन सारी बातो की तफसील लिखने की जरूरत भी नही है। यह किताब सामान्य पाठक के लिए लिखी जा रही है, न कि किसी विशेषज्ञ के लिए। जिनको इस विषय की ज्यादा जानकारी कर लेनी हो, उनके लिए इसका कुछ अलग साहित्य भी है। श्री बालूभाई मेहता की 'खादी-मीमासा' मे इस विषय का एक अध्याय आया है, अग्रेजी मे Silpi Publication की Cottage Industries of India मे भी एक अध्याय है और 'खादी-जगत्' मे तथा सरजाम-सम्मेलनो के कार्य-विवरणो मे सरजाम के एक-एक मुद्दे पर तफसील से लिखा गया है। इसके अलावा इस इतिहास की किताब का कलेवर बढाना इष्ट नही है। इसलिए यहाँ सरजाम की जानकारी बहुत सक्षेप मे दी जाती है।

गृह-उद्योग के सरजाम के बारे में श्री विनोबाजी ने अपना मन्तव्य इस प्रकार बताया है :

'जो देहात मे बन सकता है, वह शहर मे नहीं बनना चाहिए और जो घर मे बन सकता है वह गाँव में नहीं बनना चाहिए। ऐसा होगा, तब घर, गाँव और शहर ये सब परिपूर्ण होंगे, उनमे परस्पर सहकारिता होगी और सबको स्वराज्य का लाभ मिलेगा। मतलब यह कि हमारा सरजाम स्थानीय बनना चाहिए, वह स्वावलबी और आसान होना चाहिए और हस्तकला भी बढ़नी चाहिए।'

चरखा-सघ ने तथा इस काम मे लगे हुए बहुत-से खादी-प्रेमियो ने सरजाम के बारे मे यह दृष्टि रखी है कि वह यथासम्भव स्थानीय सामग्री से और स्थानीय कारीगरो द्वारा बनाया जा सके। औजार ऐसे सादे हो कि विशेष शिक्षा के बिना देहाती कामगार उन्हे चला सकें और जरूरत हो, तब उनकी दुरुस्ती कर सके। वे चलाने मे ऐसे हलके हो कि उन्हे अकेला आदमी चला सके। वे ऐसे भारी न हो कि मनुष्य को उनके चलाने मे बहुत थकान का श्रम करना पडे अथवा ज्यादा आदमियों की या पशु की या भाप आदि शक्ति की जरूरत हो। पुराने औजार बिलकुल रद्द करके उनकी जगह नये लाने की कोशिश करने की अपेक्षा जो औजार चालू हैं उन्हींमे दुरुस्ती करके यथासम्भव मजबूत, कुशल काम देने लायक और चलाने मे आसान बनाये जायें। औजार ऐसे हो कि वे सस्ते पडे और ज्यादा जगह न रोकें। उनको काम के लिए जमाने मे अधिक समय न लगे और वे हलके हो।

प्रयोग तो छोटे-बडे, भारी-पेचीदे कई प्रकार के औजार बनाने के हुए पर अन्त मे चल वे ही सके, जो ऊपर लिखे नियमो के अनुसार बने थे। एक लाख रुपया इनाम के चरखे का जिक्र पहले आ चुका है। कुछ ऐसे औजार भी बने जिनका स्वरूप यन्त्र का-सा था और वे थोडा फरक करके आसानी से बिजली आदि शक्ति से चलाये जा सकते थे। पर जिस मकसद से खादी-काम चलाया जाता था, उसमे वे उपयोग के नही

थे, अतः उनका प्रचार नहीं होने पाया। सीधे-सादे ओजारो मे काफी शोध और सुधार हुए और वे खादी मे बहुत काम आये। अब यहाँ कुछ सुधारो का विवरण देगे।

चरखा : खादी-आन्दोलन की शुरुआत मे देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे अलग-अलग नाप के चरखे चलते थे। चरखे के चाक का व्यास बारह इच से लगाकर चौबीस इन्च तक था और तकुवा डेढ सूत से ढाई सूत मोटाई का। तकुओ की लम्बाई दस इच से अठारह इच तक, जिसके फेरे करीब पचास-साठ तक ही होते। अब भी कई जगह ऐसे चरखे चलते हैं। इन चरखो पर दस से अधिक अक का सूत कातना मुश्किल है। पर चिकाकोल के क्षेत्र मे चाक का व्यास तीस इच और तकुआ छोटा और बारीक था, फेरे डेढ सौ तक। यहाँ का बारीक सूत मशहूर था। इससे काफी कम, पर मध्यम अक के सूत के लायक चरखे कुछ अन्य क्षेत्रो मे भी थे। चरखा-सघ द्वारा चरखे के भिन्न-भिन्न अगो मे नीचे लिखे सुधार यथासम्भव अमल मे लाये गये।

चाक : चाक का आकार बढाकर वह हलका किया गया, लकडी कम लगने लगी और चरखा हलका बना। जिस चरखे मे यह सुधार नहीं किया जा सका, उनमे गतिचक्र लगाकर तकुवे की गति बढायी गयी। कुछ तीस इंच व्यास के बॉस के चक्र भी बनाये गये।

तकुआ : कच्चे लोहे के लम्बे और मोटे तकुवे की जगह फौलाद का पतला और छोटा तकुआ आया। पहले मोटे तकुवे पर गोद लगाकर सूत, बाल या कपडे की साडी बनायी जाती थी। वह बार-बार कटती थी और उसे बार-बार सुधारना पडता था। अब उसकी जगह ढलाऊ लोहे की खरादी हुई घिरी लगायी जाने लगी। बारीक सूत के और कताई की गति बढाने के लिए ज्यादा पतले और छोटे तकुवे लगाये जाने लगे।

मोढिया और चमरख : तकुवो के साथ मोढिये भी छोटे होते गये। चमरख के प्रकार भी बदले। आखिर मे चमरख की जगह रस्सी, तॉत

या पक्के चमड़े की बाँधी आयी। इसलिए मोढ़ियों में भी फर्क हुआ। पहले मोढ़िये स्थिर रहते थे। अब चरखे में ठोस और गोल चक्र का उपयोग होने से मोढ़िये स्थिर न रखकर कमानी के जरिये झूलनेवाले रखे जाते हैं, ताकि माल की तकुवे पर की पकड़ ठीक बनी रहे और माल की गाँठ का झटका न लगे।

यह पुराने खड़े चरखे की बात हुई। बीच में घटी करके चरखा पेटी में बन्द हो सके, ऐसी कुछ युक्ति सोची जाने लगी। इस योजना में श्री सतीशचन्द्र दासगुप्ता, खादी-प्रतिष्ठान, सोदपुर का धातु के तार से बने हुए चाकवाला घड़ी-चरखा सबसे पहला पेटी-चरखा था। उसके बाद गति चक्र की व्यवस्था पर कई आड़े और खड़े चरखे बने। इनमें जीवन-चक्र और गाण्डीव चक्र भी एक प्रयोग थे। परन्तु इन गतिचक्रों के साथ कमानी की योजना न होने के कारण काम ठीक नहीं चला। आखीर यरवदा-जेल में गान्धीजी के प्रयत्न से गतिचक्र के साथ कमानी लगा देने से मौजूदा पेटी-चरखा और उसी योजना पर बना हुआ किसान-चरखा बनने लगा। बाद में इनमें दाँये और बाँये दानों हाथों से बारी-बारी कातने की व्यवस्था हुई। सावली-चक्र की तरह तिरछा तकुवा रखने की भी व्यवस्था हुई। इसके अलावा खिसकता मोढ़िया, अलग-अलग ढग से घड़ी किये जानेवाले अरेते, बड़ी माल लम्बी या छोटी हो जाय, तो दूसरे चाक की पकड़ समान रखने की योजना, अलग-अलग ढग की कमानी, नट-बोल्ट और पच्चर की अलग-अलग रचना, ऐसे कई छोटे-मोटे सुधार इन चरखों में किये गये।

मगन-चरखा . श्री प्रभुदासभाई गांधी ने एक ऐसे चरखे की रचना की, जिसमे चाक पैर से घुमाया जाकर दोनो हाथों से दा तकुवों से दो धागे एक साथ खींचे जा सके। इस चरखे का नाम 'मगन-चरखा' रखा गया। बाद में ऐसी ही योजना के कुछ दूसरे भी अलग-अलग प्रकार के चरखे बने। इस पर मामूली चरखे की अपेक्षा करीब पोने दो गुना सूत कत सकता है। ऐसे चरखे अधिक सख्या में नहीं चलने पाये। मद्रास

प्रान्त मे इनका काफी प्रयोग हुआ। महाराष्ट्र शाखा मे भी कई मगन-चरखे बॉटे गये, परन्तु वे चले नही। कारण इसे दोनो हाथों से ध्यान-पूर्वक ऑख का उपयोग करके चलाना पडता है, थकान कुछ जल्दी आती है। ये दोष दूर करके, परन्तु मगन-चक्र के नमूने के आधार पर अधिक सूत देनेवाला, यह चरखा बनाने की कोशिश अब भी चल रही है।

तकली : कताई का अत्यन्त सादा औजार बहुत पुराना है। केवल मिट्टी की टिकरी लगाकर बॉस की सीक से भी बन सकता है। पर उसका सुधरा हुआ चालू प्रकार लोहे की सलाक और पीतल की चकती से बना हुआ है। शास्त्रीय दृष्टि से इसके नाप आदि अब तय हो गये हैं।

धुनकी : इसके सुधारने के कई प्रयोग किये गये, अन्त मे काम देने लायक चार फुट लम्बी मध्यम-धुनकी और तीन फुट लम्बी बाल-धुनकी बनी। यह दूसरी धुनकी सत्याग्रह की लडाई के जमाने मे प्रचारको को साथ ले जाकर काम करने लायक आसान थी, इसलिए इसका नाम 'युद्ध-पिजन' पडा। धुनकी के लिए किस प्रकार की तॉत का उपयोग हो, यह भी एक कठिन प्रश्न रहा। धुनकी के लायक ही तॉत का उपयोग करना पडता है। पतली तॉत से रूई अच्छी है पर खुलती कम धुनी जाती है। मोटी तॉत से रूई ज्यादा धुनी जाती है, पर खुलती कम है। मोटी धुनकी पर पतली तॉत लगाने से वह जल्दी टूट जाती है। अब किस धुनकी को कोन-सी तॉन लगाना चाहिए, यह तय हो गया है। अच्छी तॉत कैसे बनती है, यह भी समझ लिया गया है। पहले पूनी जॉघ पर हाथ से बनायी जाती थी, अब इसके लिए लकडी का एक सादा औजार 'सलाई-पटरी' बनाया गया है, जिससे पूनी समान और अच्छी बनती है। किस धुनकी के लिए मुठिया किस नाप का और किस वजन का हो तथा चटाई, धनुष आदि कैसे हो, इसका भी निर्णय हो गया है। धुनकी के सुधार मे आसरबन्धु श्री लक्ष्मीदास तथा श्री मथुरादास का काफी हाथ रहा है।

यंत्र-धुनकी ' एक रोलर पर ग्रामोफोन की पिनें बिठाकर उसे तेजी से घुमाने से उसके पास की रूई पिनो मे फँसकर खुलती जाती है। इस योजना पर पैर से चलाया जानेवाला धुनाई-यत्र बनाया गया। आगे चलकर सघ के प्रयोग-विभाग के मातहत श्री नन्दलालभाई पटेल द्वारा ऐसा एक यत्र बनाया गया, जिसके द्वारा धुनाई और पुनाई दोनो काम हो सकते थे। यह पैर से चलाया जाता। बाद मे ऐसा भी एक यत्र बना, जिसमे बैल की शक्ति से धुनाई-यत्र, पुनाई-यत्र और ओटाई-यत्र तीनो चलाये जा सकते थे। पर जब बाद मे चरखा-सघ वस्त्र-स्वावलम्बन की ओर अधिक झुका, तो ऐसे यत्रो की ओर ध्यान देना बन्द हो गया। अब एक धुनाई-मोटिया भी श्री विष्णुभाई व्यास द्वारा ईजाद किया गया है, जो मामूली चरखे के मोढिये की जगह लगाकर चाक घुमाने से हलकी-सी यत्र-धुनकी का काम देता है। इससे रूई अच्छी धुनी जाती है और धुनने की गति भी अच्छी है।

तुनाई तुनाई शायद कताई के साथ ही जन्मी हो। यह प्रक्रिया चिकाकोल आदि महीन सूत के स्थानों मे होती रही। स्वावलम्बन की दृष्टि से यह बडे काम की चीज है। विनोबाजी ने खूब प्रयोग करके उसे सुलभ और तेज बना दी है। तुनाई की पूनी से सूत अच्छा मजबूत बनता है। तुनाई मे समय बहुत लगता है। अब इसमे धनुष-तुनाई का एक प्रकार चला है, जिससे तुनाई की गति बढने मे बहुत कुछ मदद हुई है।

ओटाई देशभर पहले भिन्न-भिन्न प्रकार की ओटनियाँ चलती रही, अब भी कही-कही चलती हैं। कपास की न्यारी-न्यारी जाति के लायक न्यारी न्यारी ओटनियाँ रहती हैं। साबरमती आश्रम मे सुधरी हुई ओटनी बनी। यत्र-ओटनी भी बनी, जो पैर से चलायी जा सकती थी। यह यत्र-ओटनी चलाने मे मनुष्य जल्दी थक जाता है।

दुबटना कच्चा सूत, जो इकहरा आसानी से नहीं बुना जाता, वह दुबटा करने से बहुत मजबूत बन जाता है। अच्छा सूत भी दुबटा

करने से उसका कपडा बहुत मजबूत होता है। बुनाई की गति अच्छी बढ जाती है। दुबटे की बुनाई सीखना आसान है। अब ऐसा चरखा बना लिया गया है और चालू हो गया है, जिससे कातने की अपेक्षा अधिक समय न लगाकर सूत दुबटा हो जाता है। मामूली चरखे मे एकआध पुरजा अधिक लगा देने से यह दुबटा चरखा बन जाता है। अब यह भी एक योजना हो गयी है कि अनेक तकुवो पर से सूत दुहरा होकर वह दुबटा किया जा सकता है। यह यत्र पैर से चलाया जाता है। इसमे सूत के अक के अनुसार कम-ज्यादा बट देने की भी रचना है।

कस-यत्र : सूत की मजबूती जॉचने के लिए प्रारभ मे कुछ नाजुक और कीमती यत्रो का उपयोग किया जाता रहा, पर बाद मे घरेलू साधनो से मजबूती देखने की युक्ति खोज ली गयी। मामूली तराजू और छोटे-मोटे वजनो से काम चलाया गया। बाद मे सामान्य देहात का बढई बना सके, ऐसा सादा औजार बना लिया गया।

बुनाई : बुनाई का प्रबन्ध पहले से ही काफी कुशल रहा, पर वह मिल के सूत का ही। बहुत सा हाथ-सूत कमजोर होने के कारण उसके बुनने मे दिक्कत रही। करघो मे अब तक हाथ-सूत की दृष्टि से बहुत कम सुधार होने पाया है, क्योंकि बुनाई का काम ज्यादा मजदूरी देकर चलता रहा। पेशेवर बुनकरो की सख्या काफी है, तथापि वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से बुनाई सस्ती और आसान करना जरूरी है। इधर कुछ वर्षो मे सघ के कार्यकर्ता बुनाई की तरफ ज्यादा ध्यान देने लगे हैं।

करघे मे सुधार : पुराने करघो मे ताना फैला हुआ रखने के लिए मोड बाधा जाता था। अब वह बीम पर लपेटा जा सकता है, जिससे वह व्यवस्थित रहता है और जगह कम लगती है।

घड़ी-करघा : अब तक पेशेवर बुनने की दृष्टि से विचार किया, पर स्वावलम्बन के लिए जैसे अभी हम अपना पेटी-चरखा चाहे जब खोल सकते या बन्द कर सकते हैं, वैसे ही करघा भी तुरन्त चलाये जाने की स्थिति मे लाया जा सके और चाहे जब उसकी घडी होकर वह कोने मे एक जगह

रखा जा सके, ऐसी सुविधा होनी चाहिए। इस दृष्टि से दो प्रकार के वर्डी-करघे बनाये गये हैं, फिर भी काफी सुधार के लिए गुंजाइश है। इसके अलावा बुनाई मे अनेक सुधार करने की जरूरत है, जैसे कि बुनते समय कपड़ा अपने आप लपेटा जाय, मति बार-बार न लगानी पड़े।

प्रक्रियाओ मे सुधार

सन् १९२८ मे माल सुधारने का विशेष प्रयत्न होने लगा। पहला काम सूत सुधारने का था। अधिकाश मे वह न तो मजबूत था और न समान ही। साबरमती-आश्रम मे सूत अच्छा कतने लगा था। जाँच मे पाया गया कि अच्छी धुनी हुई रुई पूनी से सावधानी से सूत काता जाय, तो हाथ-कता सूत मिल-सूत के जितना ही मजबूत हो सकता है। सर्वत्र अच्छी रुई, कुशल धुनाई और ठीक बट देने पर जोर दिया जाने लगा, मजबूती और समानता की परीक्षा होने लगी। सूत महीन करने की भी कोशिश होती रही। तथापि कामगारो ने ये सुधार करने की ओर ध्यान कम ही दिया। बुनाई जो पहले विरल और असमान होती थी, वह घनी तथा चौरस करने का प्रयत्न हुआ। राजस्थान मे पहले से गाढे की बुनाई कुछ घनी होती थी, वह अब अधिक घनी कराने लगे। इस प्रकार के सुधार वर्षा तक चलते रहे। अच्छे कपास का सग्रह रखना भी एक महत्त्व की बात थी। बहुत-सी शाखाएँ तो रुई का ही सचय कर सकती थी, कुछ शाखाओ ने कपास का भी सचय किया, विशेषकर तमिलनाड ने। कई शाखाओ मे पेशेवर बुनियो को छोड कत्तिनो और दूसरो को बुनना सिखाने का प्रबन्ध किया गया। कही खराब रुई से अधिक अक का सूत काता जाता था, कही अच्छी रुई से मोटा। इस ओर भी ध्यान दिया जाने लगा कि रुई की जाति के अनुसार मोटा या बारीक सूत काता जाय। बुनाई मे वह घनी करने के अलावा समान सूत का उपयोग करना जरूरी था। पहले खरीदा हुआ सूत क्वचित् ही छाँटा जाता था, अब सूत छाँटना शुरू हुआ और बुनाई मे समानता लाने की कोशिश होने लगी। कही कही यह अनुभव आया कि रासायनिक द्रव्यो से धुलाई करने

पर कपडे मे कमजोरी आती है इसलिए देशी धुलाई पर जोर दिया जाने लगा। आन्ध्र मे कुछ कपडा तो बिना धुला, रुई के विशेष स्वाभाविक रग का ही खपता है और कुछ अरसे तक धुलाई देशी पद्धति से ही होती रही। महाराष्ट्र शाखा और बगाल के खादी-प्रतिष्ठान मे कोरा माल चलाने की कोशिश की गयी। पजाब मे यह एक सुविधा थी कि वहाँ रेह और गोबर से धुलाई मे अच्छी सफेदी आ जाती थी। १९३४ मे जब कामगारो मे खादी की खपत बढाने की बात आयी, तो कपडा टिकाऊ करने पर विशेष जोर दिया गया। अब अच्छी रूई का इस्तेमाल करना, छोटे धनुष और बारीक तात से धुनाई करना, चरखे का चाक बडा करना तथा नगे तकुवे या घिर्रीवाले बारीक तकुवे से कातना आदि सुधार होने लगे।

जीवन-निर्वाह मजदूरी के समय भी ऊपर लिखा कार्यक्रम अधिक वेग और विस्तार से चलाया गया। सन् १९३७ मे इस काम के लिए सघ ने एक लाख रुपया खर्च करना मजूर किया और कुछ सूबो की काग्रेसी सरकारो ने भी आर्थिक मदद दी। फलस्वरूप कही-कही कपास की नयी खेती होने लगी, बडी तादाद मे अच्छे औजार बना कर कामगारो को दिये गये, कत्तिनो को कुशल कताई सिखायी गयी, कताई-परिश्रमालय चलाये गये, जहाँ कत्तिने चार घण्टो से आठ घण्टो तक लगातार कताई करके कताई मे कुशल होती। इसके बाद तीन चार वर्षों मे लाखो अच्छे सुधरे हुए भिन्न-भिन्न औजार मुहैया कर दिये गये करीब एक लाख कत्तिनों को अच्छा कातना सिखाया गया और करीब पचास हजार को अपने खुद के उपयोग के लिए बुनाई सिखायी गयी। यहाँ इस बात का उल्लेख कर देना जरूरी है कि सर्वत्र कताई-दगल तो बार-बार हुआ ही करते थे। जो ऊँचे नम्बर मे आते, उनको इनाम दिया जाता। खादी-आन्दोलन के प्रारम्भिक काल मे एक भाई सादे चरखे पर करीब एक हजार गज सूत कातता पाया गया। अधिक समय तक तो यह वेग टिक नहीं सकता था, पर घण्टे भर का ऐसा प्रयोग होता। मामूली तौर से भी दगलों मे एक घण्टे मे करीब छह सौ गज सूत कतता।

यह प्रयत्न भी रहा कि कत्तिने अपना सूत ६४० तार की लच्छियो मे दे। उसके लिए उन्हे अटेरन बाँटे गये। तमिलनाड और केरल शाखाओ मे सन् १९४० मे ही यह काम सफल हो गया। बाद मे अन्य शाखाओ मे भी धीरे-धीरे यह सुधार हुआ।

मामूली पिजन से धुनने मे कई दिक्कते है। कुछ कामगार यह काम हीन जातियो का मानते हैं। कुछ ताँत को हाथ नही लगाना चाहते। कई बार अच्छी ताँत मिलना भी मुश्किल होता है। धुनने लायक स्थान मिलने की कठिनाई तथा धुनते समय रुई के बारीक रेशे फेफडो मे जाने से रोग का भय रहता है। तुनाई से ये मुश्किले दूर हो जाती हैं। वस्त्र-स्वावलम्बनवालो मे तुनाई अधिक चल निकली है। प्रथम तुनाई केवल उँगलियो से शुरू हुई, बाद मे वह छुरी और पट्टे से की जाने लगी। इससे तुनाई की गति बढी। सन् १९४२ से यह काम चालू हुआ। बाद मे धनुष-तुनाई का प्रचार अधिक हुआ। कुछ समय तक कातने मे धनुष-तकुवे का भी उपयोग होता रहा, पर धनुष के पट्टे पर लगाने के रोगन की दिक्कत के कारण यह प्रयोग अधिक नही बढ सका। यहाँ इतना लिख लेना जरूरी है कि सघ इस प्रयोग के पीछे अधिक लगा भी नही। बाद मे सूत दुबटा करने पर जोर दिया जाने लगा, जिसका जिक्र पहले आ चुका है।

यहाँ तकली की कताई की प्रगति के बारे मे लिख देना जरूरी है। विनोबाजी ने स्वय लम्बे अरसे तक प्रयोग करके तकली की गति खूब बढा दी और उसका नाम 'वस्त्रपूर्णा' रखा। तकली को गति देने के लिए जाँघ और पिडली का उपयोग होने लगा। इसके अलावा अन्य रीति से भी उसे ज्यादा गति दी जाने लगी। कुशल कातनेवालो की तकली पर गति चरखे से प्रायः आधी से भी अधिक आने लगी। कुछ उदाहरण एक घण्टे मे ४०० गज तक कातने के पाये गये। तकली कही भी साथ मे ले जाना आसान है, उससे कातने मे आवाज नहीं होती। सस्थाओ मे जो कताई-यज्ञ होते हैं, जिनमे बहुत से लोग शरीक होते हैं, उनमे तथा

सभाओ मे तकली से कातने मे किसी तरह बाधा नहीं पहुँचती। विद्यार्थियो के लिए यह बडी काम की चीज है और बुनियादी शिक्षा के कुछ दर्जो मे दाखिल की गयी है।

सरजाम-कार्यालय

अच्छा सरजाम मिलने के लिए सघ की प्रायः हरएक शाखा मे सरजाम बनाने का कार्यालय चलाया जाता रहा। सबसे बडे पैमाने का कार्यालय तमिलनाड शाखा का रहा। कर्नाटक और महाराष्ट्र शाखाओं मे भी यह काम अच्छा चला। सघ के बाहर साबरमती-आश्रम का सरजाम-कार्यालय मशहूर रहा। बिहार के पूसारोड के कार्यालय ने भी यह काम बडी तादाद मे किया।

खादी-विद्यालय

पिछले अध्यायो मे खादी-शिक्षा की कुछ जानकारी आ गयी है। चरखा-सघ के जन्म के पूर्व ही श्री मगनलालभाई गान्धी के सचालन मे विज्ञान-विभाग खोला गया था। उन्होने खुद कुछ काम सीखकर उसमे शोध किये और खादी-शास्त्र बनाने की कोशिश की। पहले-पहल खादी-विद्यालय साबरमती-आश्रम मे खोला गया। प्रारम्भ मे वहाँ अच्छी योग्यता-वाले कॉलेजो के शिक्षाप्राप्त व्यक्ति भी आये और उनमे से कई खादी-काम मे बने रहे। आज भी कुछ कार्यकर्ताओ का परिचय 'साबरमती-आश्रम मे शिक्षा पाये हुए' कह कर दिया जाता है। यह बात जरूर है कि उस समय खादी की अनेक बाते मालूम नही थी, जिनका ज्ञान बाद मे बढा, तथापि उस समय का पाठ्य-क्रम और अनुशासन काफी कडा रहा। शाखाओं के कार्यकर्ता और अन्य सस्थाओ की ओर से भी उक्त विद्यालय मे विद्यार्थी आते रहे। कुछ को वजीफे मिलने और कुछ अपने खर्च से रहते। विद्यार्थियों मे कुछ का उद्देश्य खादी-काम और सगठन की शिक्षा लेकर अपने गॉव के आस-पास खादी-काम करने का रहा और कुछ उस शिक्षा के अलावा आश्रम के कार्य और जीवन को समझकर ज्ञान-

सुधार काम करना चाहते थे। आगे चलकर इसी विद्यालय के विद्यार्थियों को लेकर खादी-सेवक दल का संगठन बढ़ा। शिक्षा में कताई, धुनाई बुनाई के अलावा हिसाब लिखना, हिन्दी भाषा और कुछ बढ़ई और रंगाई काम भी सिखाया जाता था। श्री मगनलालभाई के बाद इस विभाग का काम श्री नारायणदास गान्धी को सौंपा गया। सन १९२९–३० में वहाँ छात्रों की संख्या २०४ थी जिनमें करीब ५० लड़कियाँ और स्त्रियाँ थीं। उन करीब तीन वर्षों में साबरमती के अलावा अन्य स्थानों में भी खादी-विद्यालय शुरू हो गये थे। स्वराज्य-आश्रम बारडोली, सत्याग्रह-आश्रम वर्धा, खादी-प्रतिष्ठान सोदपुर, गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद, काशी विद्यापीठ बनारस, बिहार विद्यापीठ पटना और जामिया मिलिया दिल्ली में खादी-काम सिखाया जाता था। सन १९३० से '३२ तक राजनीतिक विप्लव में शिक्षा का यह क्रम बहुत कुछ कम हो गया। बाद में भी कुछ वर्ष शिथिल रहा। शाखाओं में कुछ थोड़ा-सा होता रहा। विशेषतया कार्यकर्ता लोग प्रत्यक्ष काम करते हुए अनुभव से ही सीखते रहे। १९३७ में संघ के कार्यक्रम के लिए बुनाई-कताई सीखने पर विशेष जोर दिया गया। उस साल में करीब ४५० कार्यकर्ताओं को इस काम की शिक्षा दी गयी। सन् १९४० से फिर से शिक्षा का क्रम बढ़ा। शिक्षा-समिति की स्थापना होकर अनेक परीक्षाओं के पाठ्य-क्रम मुकर्रर हुए।

शिक्षा का स्तर काफी ऊँचा रखा गया। हरएक शाखा में विद्यालय खोलने का यत्न हुआ। विद्यालय में कुशलता लाने के लिए शिक्षा-समिति की मान्यता लाजिमी कर दी गयी। सन् १९४२ तक बिहार में सिमरी, मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र में मूल और सासवड, गुजरात में बारडोली, तमिलनाड में तिरुपुर, आन्ध्र में मछलीपट्टम, कर्नाटक में हुबली और राजस्थान में हरमाडा, इतने स्थानों में चरखा-संघ के खादी-विद्यालय चालू हुए। बोचासण का वल्लभ-विद्यालय भी खादी-परीक्षाओं के लिए मान्य किया गया। १९४२ के राजनीतिक विप्लव में फिर से यह काम शिथिल हुआ।

१९४५ और ४६ में ग्रामसेवक-विद्यालय चलाया गया, जिसका जिक्र पहले आ चुका है। उसमे २८ छात्र थे।

सन् १९४४ में और उसके बाद सेवा-ग्राम, आदमपुर (पजाब), बरकामता (बगाल), रायपुर (महाकोशल), भद्रक (उत्कल) और गोविन्दगढ (राजस्थान) मे भी विद्यालय शुरू हुए। खादी की शिक्षा के लिए जो परीक्षाएँ मुकर्रर की गयी थीं, उनके नाम कताई-कार्यकर्ता, खादी प्रथमा, खादी मध्यमा, खादी-विशारद, खादी-प्रवेश, दुबटा-बुनाई, सरंजाम-कार्यकर्ता आदि थे। इनके अलावा कताई, तुनाई, धुनाई सिखाने के लिए थोडे-थोडे समय के फुटकर वर्ग भी चलाये गये। सन् १९४४ से १९४८ तक ऊपर लिखी भिन्न-भिन्न परीक्षाओ द्वारा करीब एक हजार छात्रो ने शिक्षा प्राप्त की, जिनमे स्त्रियाँ और लडकियाँ भी थी। सन् १९४८ और ४९ मे कुछ प्रान्तीय सरकारो की ओर से सेवा-ग्राम विद्यालय मे विद्यार्थी रहे। उनमे से बहुत से बबई प्रान्त की प्राथमिक शालाओ के अध्यापक थे, क्योकि बबई सरकार ने अपने सूबे की शालाओ मे कताई-बुनाई दाखिल करने का सिलसिला शुरू कर दिया था। उस काम के लिए कुछ विशेष पाठ्य-क्रम भी बने। अब खादी-विद्यालयो मे विज्ञान-शिक्षा के अलावा जीवनसबधी अन्य बातो पर भी विशेष जोर दिया जाने लगा। विद्यालयो मे कोई नौकर नही रखे जाते। रसोई, सफाई, पाखाना-सफाई तक सब काम छात्र ही करते हैं। कुछ खेती और बागवानी भी सिखाई जाती है। आहार-शास्त्र समझाया और अमल मे लाया जाता है। मलमूत्र, कचरे का कपोस्ट बनाना सिखाया जाता है।

प्रदर्शनियाँ

जब खादी-आन्दोलन शुरू हुआ था, तब देश के जिन थोडे हिस्सो मे कताई की परंपरा चालू थी, उसमे कुशलता नही रही। जाडा मोटा किसी तरह का सूत कात लिया जाता था। अलबत्ता चिकाकोल, मधुबनी, नादेड आदि स्थानो मे अच्छा महीन सूत कतता था, तथापि उसमे शास्त्रीय दृष्टि नहीं रही थी। जब कताई-धन्धा प्रायः आखिरी साँस ले

रहा था, तो ये बातें रहतीं भी कैसे ? इसलिए खादी की सब प्रक्रियाओं की लोगों को जानकारी देना और प्रचार करना आवश्यक था। आन्दोलन की शुरुआत से ही प्रदर्शनियां कराने की ओर ध्यान गया। पहली बड़ी प्रदर्शनी अहमदाबाद कांग्रेस के समय १९२१ के दिसम्बर महीने में हुई। इसका जिक्र पहले आ चुका है। बहुत पुराने समय से कांग्रेस के अधिवेशनों के साथ प्रदर्शनियाँ होती रहीं। प्रारंभ में उनमें स्वदेशी विदेशी सब चीजों और यन्त्रों का समावेश होता था। धीरे-धीरे स्वदेशी की ओर झुकाव बढ़ा। खादी को पहले-पहल सन् १९२१ में स्थान मिला। कांग्रेस के खादी विभाग ने और बाद में अखिल भारत खादी-मंडल ने ऐसी मंडलियाँ बनायी थीं, जो घूम घूम कर लोगों प्रत्यक्ष खादी की प्रक्रियाएँ बतातीं। कांग्रेस अधिवेशन के अलावा अन्य कई जगह छोटी मोटी प्रदर्शनियाँ होने लगीं। वहाँ ये मंडलियाँ जातीं। चरखा जयंती और राष्ट्रीय सप्ताह में जो कार्यक्रम बनते, उनमें भी कहीं कहीं प्रदर्शनियाँ की जातीं तथा प्रान्तीय या जिलों के राजनीतिक सम्मेलनों में भी। प्रदर्शनियों में प्रक्रियाओं के साथ नये सुधरे औजार बताये जाते, जो शोध होते थे, उनकी जानकारी दी जाती। सब प्रकार के माल की किस्मों के, कच्चे माल के भी नमूने रखे जाते। पुराने और नये माल की तुलना करके बताया जाता कि काम में कितनी तरक्की हुई है। खादी काम से देहाती जनता को कितना और कैसा लाभ पहुँच रहा है यह भी बताया जाता। कातने की सरलता बताने के लिए वहां कुछ अन्धों द्वारा भी कताई की जाती। दो सौ, तीन सौ अंक के महीन सूत की कताई, जरी-काम, रेशमी काम आदि भी वहाँ देखने को मिलते। खादी भवन सजाये जाते। बिक्री के लिए भी खादी रहती। संघ की शाखाओं से नाना प्रकार का माल वहां आता। ये प्रदर्शनियाँ खादी-बिक्री का एक अच्छा जरिया बन गयी थीं। अन्तिम कुछ वर्षों में स्वावलम्बन पर दृष्टि केन्द्रित करने के लिए प्रदर्शनी में बिक्री का काम बंद हुआ। अखिल भारत ग्राम-उद्योग संघ की स्थापना होने पर सन् १९३४ के बाद इन प्रदर्शनियों में अन्य

ग्रामोद्योगों को भी स्थान मिला। वहाँ बैल से चलनेवाली सुधरी हुई तेल-घानियाँ तथा हाथ-कागज बनाना, चावल और आटे की आसान चक्कियाँ आदि बतायी जातीं। अब प्रदर्शनी का नाम भी खादी और ग्रामोद्योग-प्रदर्शनी रखा जाने लगा। कांग्रेसवालों के अलावा दूसरे लोग भी अपनी प्रदर्शनियों में खादी को स्थान देने लगे। उनमें खादी-सिद्धान्त की विरोधी चीजें भी रहतीं। इनका नाम खादी व स्वदेशी प्रदर्शनी या ऐसा ही कुछ रहता। कांग्रेस-अधिवेशनों के साथ होनेवाली प्रदर्शनियों में भी खादी के अलावा अन्य स्वदेशी वस्तुओं को स्थान दिया जाता। प्रदर्शनी आकर्षक बनाने के लिए उसमें नाना प्रकार की चीजें आतीं। इस पर से स्वदेशी किसको समझें और किसका नहीं, यह प्रश्न खड़ा हुआ। आखिर कांग्रेस कार्यसमिति ने अपनी प्रदर्शनीविषयक नीति अपने तारीख २७ जुलाई १९३४ के नीचे लिखे प्रस्ताव द्वारा निश्चित की:

"स्वदेशी के संबंध में कांग्रेस की नीति क्या है, इस बारे में शंका पैदा होने के कारण कांग्रेस को उस संबंध में अपनी स्थिति साफ शब्दों में फिर से बताना जरूरी हुआ है।

"सविनय अवज्ञा-आन्दोलन के वक्त कुछ भी हुआ हो, लेकिन अब कांग्रेस कार्यसमिति कांग्रेस-मंच पर या कांग्रेस-प्रदर्शनियों में मिल के कपड़े और हाथ-कती, हाथ बुनी खादी में किसी तरह की होड़ मंजूर नहीं कर सकती और कांग्रेसवालों से अपेक्षा रखती है कि वे सिर्फ हाथ-कता, हाथ-बुनी खादी ही पहनें और उसीका प्रचार करें।

"कपड़े के अलावा दूसरी चीजों के संबंध में कांग्रेसी संस्थाओं के मार्गदर्शन के लिए कार्यसमिति नीचे लिखे नियम मंजूर करती है।

"कार्यसमिति की राय है कि जिन उद्योगों को मदद देने के लिए लोगों में प्रचार की जरूरत हो तथा जो अपनी चीजों की कीमतों का नियंत्रण और अपने मजदूरों की भलाई और रोजी के संबंध में कांग्रेसी संस्थाओं का मार्गदर्शन मंजूर करते हों, उन घरेलू उद्योगों या वैसे ही

दूसरे छोटे उद्योगों के जरिये बनी हुई वस्तुओं तक ही कांग्रेसी संस्थाएँ अपनी प्रवृत्तियाँ मर्यादित रखें।

"इस नियम का ऐसा मतलब बिलकुल न लगाया जाय कि देश में स्वदेशी की भावना को बढ़ाने और केवल स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार करने की कांग्रेस की जो नीति चली आ रही है, उसमें किसी तरह की छूट दी जाती है। इस प्रस्ताव द्वारा कार्यसमिति यह स्पष्ट करना चाहती है कि बड़े-बड़े और संगठित उद्योग, जो सरकार से सहायता प्राप्त करते या कर सकते हैं, उनको कांग्रेसी संस्थाओं की मदद की या कांग्रेस उनके लिए कुछ करे, इसकी बिलकुल जरूरत नहीं है।"

अन्त में यह प्रयत्न हुआ कि अन्य सब चीजों को छोड़कर प्रदर्शनी केवल खादी और ग्रामोद्योगों पर ही केन्द्रित हो। कांग्रेस-अधिवेशन के प्रबंध का भार संभालते हुए उसकी स्वागत-समिति को प्रदर्शनी का ठीक प्रबन्ध कर लेना कुछ बोझ-सा था। नयी नीति के अनुसार सारी प्रदर्शनी जुटाना भी मुश्किल था। उतने में कांग्रेस-अधिवेशन भी देहात में होने का सिलसिला शुरू हुआ। स्वागत-समिति की अड़चन देखकर सन् १९३४ में कांग्रेस ने निश्चय किया कि कांग्रेस अधिवेशन के साथ होनेवाली प्रदर्शनी का सारा संगठन चरखा-संघ और ग्राम-उद्योग संघ के अधीन रहे। यह भी तय हुआ कि इन प्रदर्शनियों में विशेषतः देहात की जनता की शिक्षा के साथ-साथ मनोरंजन भी हो, रचनात्मक संघों के कार्यक्रम का प्रचार और प्रात्यक्षिक हो, तथा ग्रामजीवन की शक्ति का विकास कैसे हो सकता है, यह बताया जाय। आगे चलकर जब हिन्दुस्तानी तालीमी संघ और गो-सेवा संघ स्थापित हुए, तब वे भी प्रदर्शनी के प्रबन्ध में शामिल हुए और उनका काम भी वहाँ दिखाया जाने लगा।

मेरठ-कांग्रेस के समय ता० २०-१-'४६ को गांधीजी ने नीचे लिखा लेख प्रकाशित किया था :

"कांग्रेस का अधिवेशन दो तीन मास में होना संभव है, इसलिए सामान्यतः यह प्रश्न उठता है कि देहात की दृष्टि से प्रदर्शनी कैसी होनी

चाहिए। देहाती दृष्टि ही हिन्दुस्तान मे सही हो सकती है, अगर हम चाहते और मानते हैं कि देहातो को जीना ही नहीं, बल्कि मजबूत और समृद्ध बनना है, अगर यह सही है तो हमारी प्रदर्शनी मे शहरी चीजो को और आडबर व जाहोजहाली को स्थान नहीं हो सकता। शहर मे जो खेल तमाशे होते हैं, उनकी जरूरत नही होनी चाहिए। प्रदर्शनी किसी हालत मे न तमाशा बननी चाहिए, न पैसे पैदा करने का साधन, व्यापारियो के लिए जाहिर खबर के लिए तो कभी नहीं। वहाँ बिक्री का काम नही होना चाहिए, खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगो की चीजे भी नहीं बेचनी चाहिए। प्रदर्शनी को शिक्षा पाने का स्थान बनना चाहिए, रोचक होना चाहिए, देहातियो के लिए ऐसी होनी चाहिए, जिसमे देहाती घर लौटकर कुछ-न-कुछ उद्योग सीखने की आवश्यकता समझने लगे, हिन्दुस्तान के सब देहातो मे जो दोष हैं, उन्हे बतानीवाली तथा उन दोषो को कैसे दूर किया जाय, यह बतानेवाली और ग्रामो को आगे ले जाने की प्रवृत्ति शुरू हुई, तब से आज तक क्या-क्या प्रगति हुई, सो बतानेवाली होनी चाहिए। यह प्रदर्शनी देहात का जीवन कलामय कैसे बन सकता है, सो भी बतानेवाली होनी चाहिए।

अब देखे कि इन शर्तों को पालन करनेवाली प्रदर्शनी कैसी होनी चाहिए :

१ दो देहातो के नमूने होने चाहिए। एक देहात आज है, वैसा और दूसरा, उसमे सुधार होने के बाद का। सुधरे देहात मे स्वच्छता होगी—घर की, रास्ते की। देहात के आस-पास की और वहाँ के खेतो की पशुओ की हालत भी बतानी चाहिए। कौन-से धंधे किस प्रकार की आमदनी बढाते हैं, इत्यादि बाते नक्शो, चित्रो व पुस्तको से बतायी जायँ।

२ सब तरह के देहाती उद्योग कैसे चलाये जायँ, उनके लिए औजार कहाँ से मिलते हैं, वे कैसे बनाये जाते हैं, वह सब बताना चाहिए। सब तरह के उद्योगो को चलते हुए बताया जाय। साथ साथ निम्न-लिखित वस्तुएँ भी बतानी चाहिए :

(अ) देहाती आदर्श खुराक ।
(आ) यन्त्रोद्योग और हाथ-उद्योग का मुकाबला ।
(इ) पशुपालन विद्या का पदार्थ-पाठ ।
(ई) पाखानों का नमूना ।
(उ) कला-विभाग ।
(ऊ) वनस्पति खाद विरुद्ध रासायनिक खाद ।
(ए) पशु की खाल, हड्डी आदि का उपयोग ।
(ऐ) देहाती संगीत, देहाती वाद्य, देहाती नाट्यप्रयोग ।
(ओ) देहाती खेल-कूद, देहाती अखाड़े व व्यायाम ।
(औ) नयी तालीम ।
(अं) देहाती औषध ।
(अः) देहाती प्रसूति-गृह ।

आरंभ में बतायी हुई नयी नीति को खयाल में रखकर जो वृद्धि हो सकती है, सो की जाय । जो मैंने बताया है, उसे उदाहरणस्वरूप माना जाय । इसमें चरखे से आरंभ करके जितने देहाती उद्योग हैं, उन्हें जान-बूझ कर नहीं बताया है । इन सब उद्योगों के सिवा प्रदर्शनी निकम्मी मानी जाय ।"

सन् १९४६ में राजनीतिक परिवर्तन होने के बाद कई लोग और कांग्रेसवाले भी अपनी प्रदर्शनियाँ पहले के मुताबिक खादी और ग्रामोद्योगों में सीमित रखना नहीं चाहते थे, तथापि वे प्रदर्शनियों में शरीक होने के लिए चरखा संघ को आग्रहपूर्वक निमन्त्रण देते । कुछ नेताओं का भी दृष्टिकोण बदल गया था । चरखा संघ अपने सिद्धान्त के अनुसार अगर इन प्रदर्शनियों में शामिल नहीं होता, तो वे नाराज होते । इस दशा में संघ को फिर से एक बार अपनी प्रदर्शनी की नीति के बारे में ज्यादा सोच लेना पड़ा । अंत में उसने सिद्धान्त के अनुसार ही चलना तय किया और तारीख २१ अप्रैल १९४७ को यह निश्चय किया कि संघ ऐसी प्रदर्शनी में शरीक नहीं होगा, जिसमें :

(क) संयोजको का लक्ष्य शिक्षा न होकर धन एकत्र करना हो।

(ख) निर्माण, सजावट या प्रचार के लिए मिल का सूत या कपडा इस्तेमाल किया गया हो।

(ग) ग्रामोद्योग-विरोधी वस्तुओ का प्रचार या बिक्री या प्रदर्शन हो।

(घ) ऐसी शिक्षा-पद्धति का प्रदर्शन या प्रचार हो, जो नयी तालीम के सिद्धान्तो के खिलाफ हो।

(ङ) वस्त्र के लिए खादी की खरीद-बिक्री हो।

(च) ऐसे खेल, नाटक, प्रचार, पत्रक आदि को स्थान हो, जिनसे हिंसात्मक तथा अनैतिक वातावरण फैल सके।

सन् १९४८ मे जयपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, तब उसका सगठन और प्रबन्ध ऊपर लिखे सघो की समिति ने ही किया, जिसमे स्वागत-समिति का प्रतिनिधि भी सम्मिलित था। स्वागत-समिति के पूरे सहयोग के साथ वह प्रदर्शनी ऊपर लिखे सिद्धान्तो के अनुसार ही की गयी।

बाद मे प्रदर्शनी के योग्य स्थायी साधन-सामग्री तैयार रहे, ताकि उसका उपयोग जब प्रदर्शनीवालो से मॉग आये, तब उनके लिए किया जा सके—इसके लिए एक उपसमिति बनायी गयी। उसने इस दिशा मे कुछ काम कर भी लिया है।

खादी-साहित्य

जब तक चरखा-सघ का दफ्तर साबरमती या अहमदाबाद मे रहा, तब तक खादी-साहित्य वही से प्रकाशित होता रहा। बाद मे जब वह वर्धा या सेवाग्राम मे रहा, तब प्रकाशन वहॉ से हुआ। प्रधान कार्यालय की ओर से जो प्रकाशन हुआ, उसके अलावा खादी साहित्य मे मध्यप्रान्त-महाराष्ट्र शाखा का हाथ काफी रहा। खादी की किताबों मे से कुछ का अनुवाद आखिरी कुछ वर्षों मे प्रान्तीय शाखाओं द्वारा स्थानीय भाषाओ मे होता रहा। चरखा-सघ के काम की व्याप्ति और समय की दृष्टि से साहित्य का परिमाण कम ही रहा, ऐसा कहना पडेगा। एक तो इस काम को शास्त्रीय दृष्टि धीमे-धीमे बढी। जो मुख्य कार्य-

कर्ता इस काम में लगे थे उनको समय कम मिलता था, लिखने की रुचि और अभ्यास भी कम था। दूसरे, प्रचार का प्रायः सारा काम गांधीजी ही करते थे, इसलिए दूसरों को अधिक लेखन करने की चिन्ता नहीं रही। तीसरे, जब तक खादी-विद्यालयों का स्वरूप खादी की विचार-धारा की दृष्टि से ठीक व्यवस्थित नहीं हुआ था, तब तक साहित्य की कमी महसूस नहीं हुई। परीक्षाएँ होने लगीं, तब उसकी जरूरत बढ़ी और फिर किताबें अधिक पैमाने पर तैयार होने लगीं।

जब खादी-आंदोलन शुरू हुआ था, तब जनता को उस काम की जानकारी देना आवश्यक था। आरम्भ के समय मे कुछ बुलेटिन निकाले गये। बाद में 'खादी-गाईड' नाम की किताब अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। 'खादी क्यों?' की भूमिका स्पष्ट की गयी, उससे लोगों का हित कैसे होगा, यह बताया गया और उस समय के चलते काम का दिग्दर्शन कराया गया। उसकी दूसरा संस्करण सन् १९२५ में और तीसरा १९३१ में प्रकाशित हुआ। खादी-मंडल और चरखा संघ के सालाना वार्षिक विवरण छपते ही थे। उस समय के खादी के शास्त्रीय ज्ञान की पहली किताब श्री मगनलाल-भाई ने गुजराती भाषा में लिखी हुई 'वणाट-शास्त्र' है। उसका अनुवाद हिन्दी और अंग्रेजी मे भी हो गया था। उन्होंने सन् १९२६ मे 'तकली-शिक्षक' किताब लिखी थी। उसी वर्ष श्री पुणतांबेकर और श्री वरदाचारी की Essay on Hand Spinning and Hand Weaving किताब छपी, जिसका जिक्र पहले आ चुका है। सन् १९२९ के आस पास बम्बई खादी-भंडार ने अंग्रेजी, हिन्दी और गुजराती मे मासिक 'खादी-पत्रिका' प्रकाशित करना शुरू किया। यह पत्रिका आखिर तक कम-बेशी परिमाण मे चलती रही। इसके बाद संघ की अनेक शाखाओं द्वारा मासिक-पत्रिकाएँ निकलने लगीं, जिनमें प्राय उनके अपने-अपने काम की जानकारी रहती। कभी-कभी खादी-सिद्धान्तों का और सामान्य खादी-काम का भी जिक्र रहता। शाखाओं की पत्रिकाओं मे महाराष्ट्र शाखा की खादी-पत्रिका की विशेषता रही। सन् १९४१ से केन्द्रीय दफ्तर की

ओर से 'खादी-जगत्' शुरू हुआ। इसके द्वारा खादीविषयक मूल्यवान् साहित्य निर्माण होता रहा।

सन् १९४२ मे सघ के कामकाज के बारे मे 'मार्ग-सूचिका' के दो भाग प्रकाशित हुए। अधिकतर खादी-साहित्य इसके बाद के समय में तैयार हुआ है। नीचे हमने उसकी फेहरिस्त देने की कोशिश की है। सम्भव है, इसमे कुछ किताबे छूट गयी हो। जितनी जानकारी मिली, उतनी दे दी है। इससे मालूम होगा कि संघ ने तो प्राय: शास्त्रीय किताबें ही प्रकाशित करने का प्रयास किया है। लेखको मे अधिकतर साबरमती तथा वर्धा के सत्याग्रहाश्रमवाले तथा संघ के केन्द्र और महाराष्ट्र शाखा के कार्यकर्ता रहे। खादीसम्बन्धी आम जनता के उपयोग का साहित्य सघ के बाहर के लेखको द्वारा भी प्रकाशित होता रहा। अखबारो तथा मासिक-पत्रिकाओ मे खादीविषयक काफी लेख आते रहे। अंग्रेजी Young India और Harijan तथा उनके अन्यभाषीय सस्करण आखिर तक खादी के प्रबल प्रचारक रहे। गाधीजी आखिर तक लिखते रहे, कुछ किताबे उनके लेखो के संग्रहरूप भी छपी हैं।

प्रकाशन-सूची

प्रकाशन-वर्ष	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
१९२३	१. खादी बुलेटिन्स (अंग्रेजी)		२०८
—	२. वणाट-शास्त्र (गुजराती, हिन्दी, अंग्रेजी)	—मगनलाल गाधी	१७६
१९२५	३. खादी गाइड (अंग्रेजी)		
१९२६	४. एसे ऑन हैंडस्पिनिंग एण्ड हैंडवीविंग (अंग्रेजी, हिन्दी)	पुणतावेकर तथा वरदाचारी	

,,	५ तकली-शिक्षक	—मगनलाल गाधी	
१९२८	६. देशी रंगाई व छपाई (हिंदी, गुजराती)	—प्रफुल्लचन्द्र राय	
१९३८	७. मध्यम पिंजन (हिन्दी, गुजराती)	—मथुरादास पुरुषोत्तम	१०२
१९४०	८. मगन-चरखा (गुजराती, हिन्दी)	—नन्दलाल पटेल	५८
,,	९ कताई गणित-प्रकरण १ (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	१३०
१९४२	१० चरखा-सघ मार्ग-सूचिका (हिन्दी)		
	,, भाग १	—केन्द्रीय दफ्तर	७८
	,, भाग २	,,	१२`
१९४४	११. धनुष तकुवा (हिन्दी)	—केशव देवधर	३
१९४५	१२ चरखा-सघ का नवसस्करण (हिन्दी)		११८
१९४५	१३. सावली चरखा (मराठी)	—केशव देवधर	१४
,,	१४ सरजाम परिचय (हिन्दी)	—केशव देवधर	१००
,,	१५. नयी तुनाई (हिन्दी)	—दत्तोबा दास्ताने	९८
,,	१६ अहिंसक स्वराज्य-साधना (हिन्दी)	—कनू गान्धी	३१
,,	१७ सूतरने तोंतणे स्वराज्य (गुजराती)	—कनू गान्धी	३२
,,	१८. स्वराज्य थ्रू चरखा (अग्रेजी)	—कनू गाधी	२६
,,	१९. घरेलू कताई की आम बाते (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	१३६
,	२० कताई गणित-प्रकरण २ (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	७६

,,	२१.	किसान चरखा (हिन्दी)	—प्रभाकर दिवाण	९८
१९४६	२२.	क्रान्तिकारी चरखा (हिन्दी)	—धीरेन्द्र मजूमदार	४०
,,	२३.	घरेलू कताई की आम गिनतियाँ (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	७६
,,	२४.	दुवटा (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	१४
,,	२५.	सुलभ पेळू (मराठी)	—केशव देवघर	११
,,	२६	सुलभ पूनी (हिन्दी)	—केशव देवघर	३०
१९४७	२७	कताई गणित-प्रकरण ४ (हिन्दी)	—कृष्णदास गाधी	६०
,,	२८.	खडा चरखा (हिन्दी)	—केशव देवघर	७०
१९४८	२९.	जमाने की माँग (हिन्दी)	—धीरेन्द्र मजूमदार	५६
,,	३०	ग्राम-स्वावलम्बन की ओर (हिन्दी)	—केन्द्रीय दफ्तर	२४
,,	३१.	चरखा-सघ मार्गसूचिका भाग पहला (हिन्दी) (सशोधित सस्करण)	—केन्द्रीय दफ्तर	१५०
,,	३२.	चरखा-सघ का कार्यक्रम (हिन्दी)		५०
,,	३३.	एलिमेन्ट्स आफ विलेज एडमिनिस्ट्रेशन ऐंड लॉ (अग्रेजी)	—आर० के० पाटील	६८
,,	३४.	बुनाई (हिन्दी)	—दत्तोबा दास्ताने	३४२
१९४९	३५.	खादी के असली मकसद की ओर (हिन्दी)	—केन्द्रीय दफ्तर	१२६
,,	३६.	मलसूत्र-सफाई (हिन्दी)	—वल्लभ स्वामी	४८

---

१ जुलाई '४९ से ३० जून '५२ तक का

कार्य-विवरण

तीन वर्षों का कार्य-विवरण

[१ जुलाई १९४९ से ३० जून १९५२ तक]

प्रास्ताविक

१ जुलाई १९४९ से ३० जून १९५२ तक के तीन वर्षों मे चरखा-सघ ने अपनी प्रवृत्ति खादी-तत्त्व के प्रचार के काम मे विशेष रूप से लगाने की कोशिश की। सारा कार्य केवल चरखा-सघ की शाखाओं और केन्द्रो की मार्फत सचालित करने के बदले सघ स्थानीय जन-शक्ति को इस दिशा मे उठाने की और उसके अनुकूल योजनाएँ चलाने की कोशिश करता रहा। खादी को राष्ट्रीय पोशाक के कपडे के रूप मे आज तक लोगो ने पहचाना। अहिंसक समाज-रचना के और समाज को शोषण-मुक्त करने के मार्ग और तत्त्व के रूप मे खादी-विचार आज बहुतेरो को नया सा लगता है। कहीं-कहीं पुराने ढग का खादी-काम कम हुआ भी जान पडता है। चरखा-सघ ने भी अपना कुछ पुराना काम, नयी दिशा मे आगे बढाने के हेतु समेटने की कोशिश की। यह नया काम नयी बोवाई के रूप मे हो पाया। इसका सही हिसाब और नतीजा तो भविष्य ही बतलायेगा। अभी इस विवरण मे प्रचार आदि कार्यक्रमो का बयान हम अधूरा ही दे सकेंगे, क्योकि कई छोटी-छोटी मण्डलियो से हमे काम का ठीक विवरण नही मिल पाया है।

पाठकों से प्रार्थना है कि केवल मजदूरी के बँटवारे के अको और खादी की उत्पत्ति और बिक्री के अको पर से ही खादी-काम का मूल्य न ऑककर गाधीजी की ग्राम-राज्य की कल्पना की दृष्टि से खादी-क्षेत्र मे शुरू की गयी नयी प्रवृत्तियो के विवरण पर विशेष गौर करे। तीन वर्षों के इस कार्य-विवरण-काल के नीचे लिखी बातें सघ का प्रधान लक्ष्य रहीं :

१. ग्राम-स्वावलम्बन का विचार देश मे फैले।
२. ग्राम-जन अपने नेतृत्व व सहकार से अपना काम चलाये।
३. गाँवो का आर्थिक नियोजन करे और उसके सम्बन्ध की समस्याओ को समझाकर अपने गाँव की आयात-निर्यात की नीति ठहराये।
४. अन्न-वस्त्र की प्राथमिक आवश्यकता के लिए गाँवो का पैसा बाहर न जाय, इसलिए कारखानो की बनी वैसी चीजो का त्याग करे।
५. खादी-कारीगरो मे मिल-वस्त्र का बहिष्कार और खादी का इस्तेमाल बढे।
६. खादी-ग्राहको मे खुद कताई का प्रचार हो।
७. वस्त्र-स्वावलम्बन के लिए बुनाई और खादी की सभी प्रक्रियाएँ स्थानीय हो, ऐसी तालीम दी जाय।
८. सब जगह पैदा हो सके और कपडा मजबूत व टिकाऊ रहे, ऐसे कपास के प्रयोग किये जायँ।
९. देहाती कारीगरो से बन सके और दुरुस्त किये जा सकें तथा स्थानीय कच्चे माल द्वारा प्रस्तुत किये जा सकें, ऐसे सरजाम के प्रयोग किये जायँ।
१०. खादी की उत्पत्ति-बिक्री मे क्षेत्र-स्वावलम्बन हो, तथा
११. खादी-केन्द्रो व खादी-कार्यकर्ताओ मे समग्र ग्रामोत्थान की दृष्टि लायी जाय और उसके लिए जरूरी अमल करने मे प्रोत्साहन दिया जाय।

कताई-मण्डल

इन नयी प्रवृत्तियो मे कताई-मण्डल-योजना सबसे महत्त्व की रही। चरखा-सघ ने कताई-मण्डल योजना सन् १९४८ मे शुरू की। "हिन्दुस्तान देहातो मे बसा हुआ है। देहातों के उत्थान मे ही देश का उत्थान है। हिंसा और शोषण का रास्ता छोडना है, तो स्वावलम्बी, स्वाश्रयी और

स्वयपूर्ण बनकर ही देहात का उत्थान हो सकता है। चरखा इसका प्रतीक है।" इस तरह के गान्धीजी के विचार उनके अनेक लेखो व भाषणों में, खासकर खादीसम्बन्धी लेखो व भाषणों मे भरे हुए पाये जा सकते हैं। फिर भी चरखा-आन्दोलन का आरम्भ स्वय-पूर्ति के योजनानुसार नहीं, बल्कि बाह्य आधार देकर हुआ और चला। चरखा सघ का पहले २५ साल का कार्यक्रम भी इस परतन्त्र देश मे जैसा भी बन पडे, उस प्रकार से चरखे को जिन्दा रखने का रहा। खादी-विचार मे हर गॉव की जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं मे स्वयपूर्णता लाने की कल्पना होते हुए भी उस दिशा मे सर्वाङ्गीण काम नहीं हो सका। किसी गॉव मे कपास पैदा होता रहा तो किसीमे धुनाई, किसीमे कताई या किसीमे केवल बुनाई होती रही। चरखा-सघ के केन्द्रों मे भी इसी 'खण्डित-पद्धति' से काम पनपा। अब तक भी सघ मे ऐसे क्षेत्र मौजूद रहे हैं। सालभर मे लाखों गुडियाँ सूत कातनेवाले सैकडों देहातो का सारा सूत बुनाई के लिए बहुत दूर के किसी क्षेत्र मे भेजना पडता। फिर यह सारा काम कहीं दूर-दूर कार्यकर्ता भेजकर किसी दूर के केन्द्र व केन्द्र-प्रतिनिधि की मार्फत कृत्रिम रूप से चलना पडता। यह सही है कि मिलों की प्रतियोगिता और उनके बारे मे राज्य की कृपादृष्टि ने खादी को इतना कुचल दिया था कि अभी कृत्रिम प्रयत्नों से भी उसे जिन्दा रखना और जहाँ जो अङ्ग विकसित हो सके, उसे पनपाना एक आवश्यक कार्यक्रम माना गया है। लेकिन इसे स्वयपूर्णता का तरीका नहीं कहा जा सकता। वस्त्र की स्वयपूर्णता के लिए गॉव गॉव में कपास पैदा हो और घर-घर सूत कतकर खुद अपने हाथों से या अपने ही गॉव के पडोसी बुनकर से बुनाई हो, यह जरूरी है। साथ ही इस कार्यक्रम का सचालन भी गॉव के लोग खुद करें, समझ-बूझ कर करे, समग्र ग्रामोत्थान की दृष्टि से करें और सस्तेपन के कारण केन्द्रित मिल-उद्योगो से बनी चीजों का आक्रमण अपने गॉव मे रोकने का निश्चय करें, ऐसा कोई सगठन होना जरूरी था। यह लक्ष्य रखकर और कार्यकर्ता भेजकर खुद चरखा-सघ के अपने खादी केन्द्र खोलने व

चलाने के बदले स्थानीय कताई-मण्डलो की योजना चरखा-सघ की ओर से सोची गयी। उसके अनुसार पिछले तीन सालो मे सघ ने कताई-मण्डलो का सगठन किया और उसकी पूर्ति मे खादी-प्रेमियो के सम्मेलन, खादी के मूल उद्देश्य को समझानेवाले साहित्य का प्रकाशन आदि कार्य किया। सर्वोदय-विचार-धारा के अनुसार काम करने की इच्छा रखनेवाले बिखरे हुए कार्यकर्ताओ का सगठन करना भी कताई-मण्डलो का उद्देश्य रहा।

शुरू मे इस सगठन मे कही-कही आज के वायु-मण्डल के पक्षाभिनिवेश की छाया दीख पडी। यह सगठन कोई सत्ता हस्तगत करने के लिए नही, बल्कि शुद्ध रचना कार्य के लिए है, यह समझाने की सावधानी रखने मे कुछ कठिनाई भी मालूम पडी। कई कताई-मण्डलो की मान्यता इसी कारण रोकनी भी पडी। स्वराज्य आ गया है, इसलिए सब काम राज्य सत्ता से होगा या होना चाहिए, जहाँ-तहाँ ऐसी भावना फैल गयी। राज्य-तन्त्र अपने हाथ करना यही आज की समस्याओ का हल है, ऐसी विचार धारा सबको घेरने लगी। ऐसी हालत मे पक्षाभिनिवेश छोडकर और सत्ता से नही, बल्कि शुद्ध सेवा-भावना से ग्रामोत्थान के मार्ग मे लगने की ओर लोगो का व सेवको का ध्यान आकृष्ट करना जरूरी था। चरखा संघ ने कताई-मण्डलो के जरिये इस विचार का प्रसार करने, ग्रामोत्थान की दृष्टि को बढाने व वस्त्र-स्वावलम्बन के कार्यक्रम को चालना देने की इन वर्षों मे कोशिश की। इस प्रचार ने देश मे एक नयी दृष्टि दी। जहाँ एक ओर 'स्वराज्य के बाद खादी क्यो ?' ऐसा सवाल उठने लगा था, वहाँ सघ के प्रयत्न से 'मिल-वस्त्र त्याग' की आवश्यकता का विचार भी फैलने लगा।

दो सौ वर्षों से गुलामी मे रहे इस देश के लाखो देहातो मे अपने ही नेतृत्व व अपने ही आयोजन से स्वयंपूर्णता का कार्यक्रम जारी होने की स्थिति लाना कोई आसान काम नहीं है। कताई मण्डलो का कार्यक्रम भी अभी धीरे-धीरे ही फैलने लगा। ऐसी विपरीत परिस्थिति मे कताई-मण्डल-सगठन का काम जमाने के लिए छोटी-से छोटी इकाई रखी गयी।

अहिंसा तथा चरखे पर विश्वास रखनेवाले ५ खादी-धारी व्यक्ति कताई-मण्डल खडा सकते थे। कई जगह यह भी पाया गया कि एक देहात में ऐसे पाँच व्यक्ति मिलना कठिन हैं। कताई-मण्डलों के लिए सघ ने जो नियम बनाये थे, उन सबकी पूर्ति न कर सकनेवाले लेकिन कताई-मण्डल कार्य को माननेवाले भी इच्छा हो तो एक मण्डल खडा कर सकते थे, जो उम्मीदवार-कताई-मण्डल के रूप में माना जाता था। ऐसे कताई-मण्डल धीरे-धीरे नियम-पूर्ति की तैयारी हो जाने पर मान्यता प्राप्त कताई-मण्डल में परिवर्तित हो सकते थे। कताई-मण्डल सगठन को कडे नियमो में जकडने के बदले कुछ ढीला-सा रखना उचित माना गया। कताई-मण्डल सगठन के नियम ये थे :

१. कताई मण्डल की स्थापना के लिए सहयोगी या वस्त्र-स्वावलम्बी सदस्य पाँच रहे, लेकिन वे अलग अलग परिवार के हो।
२ मण्डल का सदस्य मिल-सूत या मिल-कपडे का व्यापारी न हो। वैसे ही वह शराब का व्यापारी न हो।
३ मडल के वस्त्र-स्वावलम्बी सदस्यो के लिए सालाना चन्दा एक गुडी रहेगा।
४ हर हफ्ते में कम-से कम एक बार कताई मडल के सदस्य सामूहिक कताई करें और आपसी विचार-विनिमय करे।

कताई-मडलो के लिए नीचे लिखा कार्यक्रम दिया गया :

१ स्वावलबी कताई
२ सफाई
३. आपसी सहकार
४ घरेलू बुनाई
५. ग्राम-स्वावलबन

ऐसे कताई-मडलों की सख्या विवरण-काल मे नीचे लिखे अनुसार रही :

वर्ष	मान्यता-प्राप्त	उम्मीदवार
१९४९–५०	७३९	३५७
१९५०–५१	७६७	४४०
१९५१–५२ (अप्रैल तक)	८१९	५४९

प्रान्तवार कताई-मंडलों की संख्या निम्नलिखित तालिका में दी गयी है :

कताई-मंडलों की संख्या

	प्रांत	सन् १९५० जून		सन् १९५१ जून		सन् १९५२ जून	
		मान्यता प्राप्त	उम्मीदवार	मान्यता प्राप्त	उम्मीदवार	मान्यता प्राप्त	उम्मीदवार
१	असम	—	—	३	—	३	—
२	आन्ध्र	८३	४९	८२	५०	८३	५४
३	उत्कल	९३	—	६५	२२	६८	२५
४	उत्तर प्रदेश	—	—	१७	१४	१५	२७
५	कर्नाटक	२५	१२	२५	१२	२२	२५
६	कश्मीर	—	—	—	—	—	—
७	केरल	१०१	३०	१०१	४०	१०१	४०
८	गुजरात	५४	८	५४	८	५४	९
९	तमिलनाड	१६७	—	१६८	—	१६८	—
१०	पंजाब	३१	५	३०	४	३२	५
११	बिहार	—	२८	—	६०	२१	६५
१२	बंगाल	५०	६०	५८	५३	६०	६५
१३	बम्बई	८	—	१२	—	१५	—
१४	महाकोशल	२१	३२	२४	३८	३०	४२
१५	महाराष्ट्र	४८	३२	६५	३६	८१	८१
१६	राजस्थान	३५	९०	४८	९५	५१	१०३
१७	सौराष्ट्र	—	—	—	—	—	—
१८	हैदराबाद	८	११	१५	८	१५	८
	कुल	७३४	३५७	७६७	४४०	८११	५४९

इससे यह भी पता चलेगा कि करीब सारे देश में कताई-मंडल आन्दोलन चल पड़ा था। अनेक वाद-प्रवाद से बचते हुए यह संगठन जम पाया था। कताई-मंडल संगठन का ढाँचा ही ऐसा बना था कि स्वाभाविकतया कताई-मंडल के प्रकार और उनकी प्रवृत्तियों में अनेक भेद पाये जा सकते थे। हरएक कताई मंडल मूल उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार उस ओर बढ़ने की चेष्टा करने लगा। उनसे सम्पर्क साधने के लिए संघ की ओर से प्रान्तीय या प्रादेशिक कताई मंडल-सम्मेलनों का आयोजन विवरण-काल में करीब सभी प्रान्तों में कुल बारह जगहों पर हुआ। इन सम्मेलनों के स्थान आदि की जानकारी नीचे लिखी तालिका में दी गयी है :

प्रादेशिक कताई-मंडल सम्मेलन

	स्थान	प्रान्त	उपस्थिति
१	सेवापुरी	उत्तर प्रदेश	८०
२	मोहझरी	महाकोशल	५०
३	यवतमाल	विदर्भ	६५
४	सावली	नागविदर्भ	४०
५	अकातितरा	केरल	१५०
६	इडुवाई	तमिलनाड	१७५
७	चितलदुग	कर्नाटक-मैसूर	१००
८	कराडी	गुजरात	१००
९	शिपवली	बम्बई	६०
१०	पढरपुर	महाराष्ट्र	१५०
११	बाँसा	राजस्थान	५०
१२	आदमपुर	पजाब	७५
			१०९५

सम्मेलनो के उपरान्त विविध प्रकार के शिविर व चरखा-सघ के कताई-मंडल विभाग के कार्यकर्ताओ का दौरा, पत्र-व्यवहार और खास 'कताई-मडल पत्रिका' का प्रकाशन सघ करता रहा। इन सारे कार्यक्रमो मे संघ का खर्च विवरण-काल मे प्रथम वर्ष १७ हजार और दूसरे वर्ष ५१ हजार हुआ। वह तीसरे वर्ष अधिक बढने लगा। इसमे शाखाओ द्वारा किया गया खर्च शामिल नही है, केन्द्र का ही यह खर्च है। वस्त्र तथा उसके साथ जीवन की मुख्य जरूरतो के बारे मे स्वावलबन की वैचारिक भूमिका तैयार करना खादी-आन्दोलन की विशेष आवश्यकता है। देशभर मे फैले हुए कताई-मडल इसमे महत्त्वपूर्ण भाग लेने लगे। चरखा-सघ ने ऊपर लिखे सभा-सम्मेलन, शिविर, पत्रिका आदि के उपरान्त इस काम के लिए 'कताई-मडल-प्रसारक' भी नियुक्त करना शुरू किया। ये प्रसारक केवल प्रचारक ही न रहकर अपने आस-पास कुछ ठोस काम करे, यह भी खयाल रखा गया। इसके लिए कताई-मडल-सघन क्षेत्र योजनाएँ जारी की गयीं।

वैसे ये सभी कताई-मडल अपने अपने-स्थान पर अपनी शक्ति के अनुसार वस्त्र-स्वावलबन का कार्य करते ही रहे। लेकिन उनका यह कार्य एकाकी हो जाने से उतना प्रभावशाली नहीं हो सकता, यह सोचकर कताई-मडल सघन-क्षेत्र की कल्पना की गयी। इसके लिए कम-से-कम ३०–४० देहातो की इकाई मानी गयी। देहातो की अन्न तथा वस्त्र की पूर्ति आज मुख्यतया मिल से उत्पादित वस्तुओ से की जाती है। उसके बदले यदि यह पूर्ति चरखा तथा ग्रामोद्योगो के जरिये कताई-मडलों की मार्फत कर सके, तो वह कार्य अतराफ के १००–२०० देहातों के लिए मार्गदर्शक हो सकेगा। जिस कल्पना को प्रत्यक्ष कार्यरूप मे लाने के लिए भारत मे अलग-अलग राज्यो मे कुछ सघन-क्षेत्र चुने गये। इस प्रकार बिहार मे ५, उत्तर प्रदेश मे १ और दक्षिण कर्नाटक मे १ ऐसे सात कताई-मडल सघन क्षेत्र तैयार करने की कोशिश हुई। हर जगह की परिस्थिति अलग थी। वस्त्र-पूर्ति के लिए कताई-मडलो द्वारा सूत-उत्पत्ति के उपरान्त बुनाई भी

स्थानीय कर लेने की इन क्षेत्रों मे खास कोशिश की गयी। बुनाई की यह समस्या हल किये बिना कताई-मडलों का वस्त्रपूर्ति का काम आगे बढ़ना कठिन था।

बुनाई की यह कठिनाई देखकर ही घरेलू बुनाई का प्रचार भी चरखा-सघ ने हाथ में लिया। विवरण-काल के शुरू में महाराष्ट्र (मूल) व गुजरात (बारडोली) मे पाँच सप्ताह के 'दुबटा बुनाई-वर्ग' चलाकर इस काम का आरभ किया गया, जिनमें ९२ भाई बहनो ने तालीम ली, जो भारत के करीब सभी प्रान्तो से आये थे। इसके अलावा प्रान्तीय स्वरूप के उत्कल मे ३ और तिरुपुर मे १ ऐसे चार बुनाई-वर्ग हुए। कताई-मडल के करीब ४०-४५ सदस्यो ने दुबटा बुनाई सीख ली और वे आज अपने कपडे खुद अपने हाथों बुनने लगे। पूना व बसुवा (बंगाल) के कताई-मडलों ने अपना पूरा सूत अपने यहीं बुनने का निर्णय किया।

थोडे में सघ की यह कल्पना रही कि खादी का मूल हेतु सिद्ध करने का कार्यक्रम चलानेवाली स्थानीय मडलियाँ कताई-मडल के रूप में जगह-जगह बनें और उनमे चरखा सघ का पूरा कार्यक्रम अतर्भूत हो। साथ ही वस्त्र-पूर्ति का एक ही कार्यक्रम न रखकर सफाई और खाद-सम्पत्ति, परस्पर सहकार, ग्रामोद्योग-स्वीकार व मिल-वस्तु-बहिष्कार का कार्यक्रम भी वे चलायें।

संघ के सहयोगी व स्वावलंबी सदस्य

चरखा सघ ने खादी-काम का स्थान या लक्ष्य महज कुछ बेकारों को रोजी दिलाने का ही नहीं माना था, जिससे सत्ता, आयोजन और नेतृत्व का केन्द्रीकरण न हो। अधिक-से-अधिक विकेन्द्रीकरण हो और उसके लिए स्वावलम्बन तथा स्वयपूर्णता के आधार पर सहकार के साथ सुसगठन हो—ऐसी समाज रचना का खादी एक अनिवार्य अग माना गया है। इसी दृष्टि से सघ का काम चलता रहा। इसलिए सघ ने

कुछ मूलभूत तत्त्वो और सिद्धान्तो को अपने कार्यक्रम मे आग्रहपूर्वक स्थान दिया था। नयी समाज-रचना के लिए उन मूल्यो को छोडना सघ ठीक नहीं समझता था। सघ की सदस्यता भी इन्ही मूल्यो के आधार पर तय की गयी थी। किसी तरह की सत्ता, अधिकार या आर्थिक लाभ पाने के लिए सघ की सदस्यता मे कोई गुजाइश नही रखी गयी थी। लेकिन अपने जीवन की मूलभूत आवश्यकताओ के बारे मे समाज मे जिस तरह के स्वावलंबन और स्वयपूर्णता की जरूरत सघ मानता है, उसमे विश्वास रखकर अपना हिस्सा बँटाने के लिए अमल करनेवाले को सघ अपना सदस्य मानता था। इसके लिए नियमित रूप से सालभर मे २० से २५ गज कपडे का सूत कातनेवाले व्यक्ति को सघ ने अपना स्वावलबी सदस्य माना। देश के कपडे की औसत आवश्यकता प्रतिवर्ष प्रतिव्यक्ति २० से २५ वर्ग गज मानी जा सकती है। हर रोज १६० तार याने ¼ गुडी सूत काता जाय, तो सालभर मे औसत आवश्यकता जितना सूत कतता है। निष्ठापूर्वक, नियमित रूप से जो इतनी कताई करके अपना राष्ट्रीय हिस्सा अदा करता है, वह संघ का स्वावलंबी सदस्य माना गया। इसमे संघ से देने-लेने की कोई बात नहीं। मानी गयी बात है कि वह सदस्य विकेन्द्रित स्वावलबन व स्वयपूर्णता मे निष्ठा माननेवाला होगा। इसलिए वह खादी के सिवा दूसरा कोई कपडा काम मे नहीं लेगा। मिल-वस्त्र या मिल सूत के वस्त्र का पूर्ण बहिष्कार करेगा।

दूसरी सदस्यता सघ ने 'श्रम दान' की मानी थी। समाज-रचना में जरूरी सहकार पर आधारित आदान-प्रदान के लिए पैसे का जरिया ढूँढा गया। पैसा एक अच्छा साधन बना। मगर अपने आप में स्वभावतः भलाई करने का गुण पैसे के साधन मे नहीं है। इसलिए वह सहकार की

जगह शोषण का साधन बन गया और धीरे-धीरे अर्थसत्ता इतनी बढ गयी कि अब उससे कैसे छुटकारा पाया जाय, इसके मार्ग ढूँढे जाने लगे हैं। आजकल जिस परिश्रम से पैसा पैदा होता है, उस परिश्रम पर हावी होकर पैसे ने उसे कुचल दिया है और सर्वत्र पैसे की प्रतिष्ठा फैली हुई है। पैसे की गुलामी आज की समाज रचना मे दिन-दिन बढती ही जा रही है। उसको बदल कर समाज मे श्रम की प्रतिष्ठा करना यह विचार भी उसके विरोध में फैलने लगा है। सूत-कताई का श्रम सबसे ज्यादा सार्वत्रिक होने लायक सुलभ व आवश्यक है, यह देखकर गाधीजी ने श्रम-दान के लिए सूतदान व सूत-चदे का तरीका चलाया। कोशिश तो उनकी यही रही कि काग्रेस जैसी देश की मुख्य सस्था भी इसे अपनाये, पर शायद उसके सदस्य श्रमयुग के आगे थे। उनके बडे-बडे मुख्य साथियो ने भी इसे नहीं अपनाया। पर अब तो साफ ही दीखने लगा है कि स्वेच्छा से श्रमयुग मे शरीक होना या रक्तक्राति का का शिकार बनना, ये दो ही माग बचे हैं। गाधीजी तो अपने आखिर के दो वर्षो मे यही कहने लगे थे कि चरखा सघ का सारा काम श्रम और श्रम-चन्दे पर चलना चाहिए। अब पैसे के दान का सघ को इनकार करना चाहिए। यह शक्ति श्रमदान की सदस्यता मे भरी हुई है और इसलिए शुरू से ही इस तरह की सदस्यता का आग्रह सघ मे रखा गया। जो खादीधारी अपने कते सूत की ६ गुडी सालाना चन्दा सघ को देता है, वह सघ का सहयोगी सदस्य बनता है। सन् १९५०-५१ मे ऐसे सदस्यो मे वस्त्र स्वावलबी की सख्या २२,७२६ तथा सहयोगी की सख्या ५,९९४ रही। प्रान्तवार सख्या आगे की तालिका मे मिलेगी

सहयोगी और स्वावलम्बी सदस्यों की संख्या

[१९५०-५१]

	सहयोग	वस्त्र-स्वावलम्बी	प्रान्त
१	—	२२	असम
२	१,०५२	१,१३८	आंध्र
३	४३	८,८९१	उत्कल
४	१२	३५५	उत्तर प्रदेश
५	२५५	२७४१	कर्नाटक
६	—	—	कश्मीर
७	१,१६४	१,२२४	केरल
८	३०९	२,०८४	गुजरात
९	१६५	१,४४१	तमिलनाड
१०	५६५	३५१	पंजाब
११	४३	९	बिहार
१२	५३	६५७	बंगाल
१३	६८	६६२	बम्बई
१४	६५१	५१६	महाकोशल
१५	७४९	१,०७८	महाराष्ट्र
१६	५५२	२०१	राजस्थान
१७	१३२	१,२९४	सौराष्ट्र
१८	१८१	६२	हैदराबाद
कुल	५,९९४	२२,७२६	

वस्त्र-स्वावलम्बन

चरखा-संघ के सामने वस्त्र-स्वावलंबन का लक्ष्य बहुत वर्षों से रहा, पर उस कार्यक्रम पर विशेष जोर देने का काम सन १९१४ के ८ ८

शुरू हुआ। दरमियान मे खादी बनाने की कला जिन्दा करने का और उसके जरिये कुछ दीन-दुखियो को रोटी देने का काम ही सघ अधिक कर सका। सन् १९४४ के बाद भी वस्त्र-स्वावलबन की ओर अपना काम मोडने मे सघ को काफी अरसा लग गया, क्योंकि खादी को माननेवालो मे भी राहत-भावना ही पिछले वर्षों मे विशेष विकसित हुई थी। सघ के कार्यकर्ता उसी दृष्टि से तैयार हुए और सघ का तन्त्र भी उसी भावनानुरूप पनपा था। धीरे धीरे इसमें बदल होता गया और वस्त्र-स्वावलबन का काम बढता गया। नीचे के अको से पता चलेगा कि बावजूद खादी के लिए बहुत प्रतिकूल जमाना होते हुए, विवरण-काल मे वस्त्र स्वावलबन बढा है

१९४८–४९	३,६२,८००	वर्गगज
१९४९–५०	५,४८,०२६	वर्गगज
१९५०–५१	६,४८,७६२	वर्गगज

राहत की यानी मजदूरी देकर बनवायी गयी खादी के मुकाबले में ये आँकडे बहुत कम हैं। फिर भी यह याद रखना चाहिए कि मजदूरी की खादी बनवाने मे जितनी धनशक्ति और तत्रशक्ति लगायी गयी थी, उतनी अब तक स्वावलम्बन के काम मे नहीं लगायी जा सकी थी। मजदूरी की खादी पैसे के बल पर बढ सकती है, जब कि स्वावलम्बन की खादी विचार के बल पर ही फैल सकती है। यह विचार फैलाने का काम गाधीजी के जाने के बाद किसी बडे प्रभावी नेता ने हाथ मे नहीं लिया। सघ को अपने कार्यकर्ताओं की शक्ति से ही यह काम भी करना पडा। जब तक गाधीजी थे, तब तक सघ को इस विचार-प्रसार के लिए कार्यकर्ता तैयार करने की जरूरत महसूस नहीं हुई। इस कारण इस दिशा मे सघ की कमजोरी बनी

रही। लेकिन अब कार्यकर्ताओ मे, खादी-प्रेमियो मे और खादी-केन्द्रो मे वस्त्र स्वावलम्बन का विचार अपना प्राधान्य लेने लगा। आज तक सघ की शाखाओ मे मजदूरी की खादी बढाने की ही योजनाएँ सोची जाती थीं, उसकी जगह अब वस्त्र-स्वावलम्बन बढाने की योजनाएँ सोची जाने लगीं। अप्रैल १९५१ की चरखा-सघ की शाखाओं के मन्त्रियो और विभाग-सचालको की सभा मे निर्णय किया गया कि सन् १९५१–५२ के वर्ष मे २५ लाख वर्गगज तक वस्त्र स्वावलम्बन खादी बने, ऐसी कोशिश की जाय। यह निर्णय बतलाता है कि इस दिशा मे कार्यकर्ताओ का विश्वास बढ रहा था। अब तक प्राप्त जानकारी से मालूम पडता है कि वस्त्र-स्वावलम्बन की दिशा मे प्रगति हो रही थी। यह भी दीखता है कि कई नयी जगह वस्त्र-स्वावलम्बन का काम शुरू हुआ था, मगर उस काम के आँकडे मिले नही। मजदूरी से बनवायी गयी खादी के काम की अपेक्षा वस्त्र-स्वावलम्बन के काम के आँकडे मिलना कठिन भी है, क्योकि यह बहुत ही विकेन्द्रित पद्धति से ही पनप सकता है। जो आँकडे मिलते हैं, उनमें भी कई प्रकार हैं। कुछ तो सूत-बदल याने सूत के बदले मे खादी लेने के होते है, कुछ कारीगरो की अपनी खादी के रहते हैं, कुछ खादी का सकल्प न किये हुए लोगो के रहते हैं और कुछ पाठशालाओ के भी रहते हैं। कई बार प्रकार के तफ़सील की जानकारी भी नहीं मिलती। कई बार आँकडे दोहराये जाने की आशका भी रहती है। व्यापक काम मे यह कुछ अनिवार्य सा लगता है। अतः वस्त्र-स्वावलम्बन के काम का नाप कुछ अदाज से और केवल वर्गगज की सख्या से नही, बल्कि वैसे केन्द्रो और देहातो की सख्या पर से भी लगाना होगा।

वस्त्र-स्वावलम्बन का सबसे ज्यादा काम गुजरात में हुआ। नीचे लिखी तालिका से इसका पता चलेगा, जिसमें प्रान्तवार वस्त्र-स्वावलंबन खादी के तुलनात्मक अक दिये हैं :

वस्त्र-स्वावलम्बन खादी के तुलनात्मक अंक

	प्रान्त	१९४९–५०		१९५०–५१	
		वर्गगज	रुपये	वर्गगज	रुपये
१	असम	—	—	—	—
२	आंध्र	२९,३२६	४५,७६४	३४,६४२	५६,४८९
३	उत्कल	—	—	५,४५०	६,१२५
४	उत्तर प्रदेश	१०,३५९	१४,९२८	१३,०३७	२२,०२९
५	कर्नाटक	४३,८११	७६,७७१	३३,७८५	५५,२६३
६	कश्मीर	—	—	—	—
७	केरल	३९,३१८	५०,१४४	४२,८३५	६२,५०९
८	गुजरात	१,८८,८६७	२,८४,१६१	२,५८,९११	३,६८,५४४
९	तमिलनाड	१,४१,७३९	१,५४,१६६	१,४०,१९२	१,६९,११८
१०	पंजाब	१४,५५६	१८,६६१	३३,८७४	४४,१३८
११	बिहार	९,९११	१६,५२८	*२,६६३	३,५६०
१२	बंगाल	२,२५५	४,०९६	२,५५९	३,७९५
१३	बम्बई	११,७७८	२०,६१२	९,८८४	१३,२८५
१४	महाकोशल	३,६४६	४,७३८	९,५५३	१३,६९६
१५	महाराष्ट्र	३१,९८८	५२,१३७	३६,३८२	५९,८२४
१६	राजस्थान	१९,२२४	३१,९०९	२०,८१९	३३,५९८
१७	सौराष्ट्र	(गुजरात मे शामिल हैं)		२६,०३१	३९,९४०
१८	हैदराबाद	१,१६८	१,६७१	१,७५९	२,३७६
	कुल	५,४८,०२६	७,७६,२८६	६,७२,४५६	९,५४,३७९

* आंकड़े अधूरे हैं।

गुजरात मे ज्यादा काम होने का कारण यह है कि शुरू से ही उस प्रान्त मे गरीबी के कारण रोजी कमाने के लिए कातने लायक हालत नही थी। मगर साबरमती-आश्रम, बारडोली का आन्दोलन, दाडी का नमक सत्याग्रह आदि के कारण कई छोटी-मोटी सस्थाएँ वहाँ निकली, जिन्होने स्वावलबन की दृष्टि से ही खादी-काम किया। अब दो वर्षों से वस्त्र-स्वावलबन के काम मे बम्बई-सरकार भी काफी सबसीडी देने लगी थी।

खादी में क्षेत्र-स्वावलंबन

यह भी अनुभव आने लगा कि अगर वस्त्र-स्वावलबन बढाना हो, तो मजदूरी के खादी-काम मे भी क्षेत्र-स्वावलबन लाना होगा। आज वह न होने से सघ की, कताई मडलो की और खादी-प्रेमियो की कोशिश के बावजूद वस्त्र-स्वावलबन का काम रुकता है। सूत हो, तो बुनाई नही होती। कातनेवाले हो, तो पूनी होती। कही रुई की दिक्कत, कही सर-जाम की, तो कहीं रगाई की। चरखा-सघ के खादी-उत्पत्ति-केन्द्र भी अब तक ऐसे नही बने कि हर देहात मे ये सारे काम होते हो। अगर खादी-उत्पत्ति का काम वस्त्र-स्वावलबन की पूर्तिरूप और सहायक के रूप मे करना हो, तो कपास से या रूई से लेकर धुले व रगे तैयार कपडे तैयार करने प्रक्रियाएँ हर देहात मे या चद देहातो के क्षेत्र मे जुटानी होगी। अतः कार्य-विवरण के वर्ष मे इस दिशा मे भी प्रयत्न करना चरखा-सघ ने शुरू किया। तमिलनाड जैसी बडी शाखा मे इस बारे मे विशेष प्रयत्न किया गया। वहाँ कई नयी जगहों पर बुनाई, रगाई और सरजाम बनाने का काम शुरू किया गया, किसी एक जगह के केन्द्रित पद्धति से होनेवाला कार्यक्रम कर दिया गया।

याद रहे कि क्षेत्र-स्वावलबन की बात भी नयी नही है। चरखा-सघ के सन् १९३३ और १९३४ के कार्य-विवरण मे क्षेत्र-स्वावलबन के बारे मे ट्रस्टी-मडल की विचारधारा और प्रस्ताव देखने से पता चलेगा कि उस वक्त भी चरखा-सघ क्षेत्र-स्वावलबन की ओर ध्यान देना चाहता था और वैसी कुछ कोशिशे भी हुई। मगर चरखा-सघ के खादी-उत्पत्ति और बिक्री के

काम की नींव इस तरह की थी कि उसकी क्षमता निभाते और बढ़ाते हुए क्षेत्र-स्वावलंबन की बात बहुत आगे नहीं बढ़ सकी। बिक्री की दृष्टि से तो क्षेत्र-स्वावलंबन उस वक्त भी कठिन था और अब भी है, क्योंकि देहाती जनता महँगी खादी पैसे देकर खरीदती रहे, इतनी भावना अभी हमारे देश में नहीं आयी है। लेकिन अगर क्षेत्र-स्वावलंबन की बात पर उस वक्त जोर दिया जाता, तो आज शायद खादी-केन्द्रों का स्वरूप ज्यादा पूर्ण हो जाता और मजदूरी या स्वावलंबन, दोनों तरह की खादी तैयार करने तथा वह कम खर्च और कम परिश्रम में तैयार करने की शक्ति उन केन्द्रों में आ जाती। अब इस ओर अधिक ध्यान देने की कोशिश की जाने लगी। इसका आरंभ भी कार्यकर्ताओं की तालीम से ही संभव था। कार्यकर्ताओं को क्षेत्र-स्वावलंबन का महत्त्व समझ में आ जाय और उसे सिद्ध करने के लिए शास्त्रीय ज्ञान भी उनके पास हो, तभी यह हो सकता था। शिविर और विद्यालयों के द्वारा यह काम संघ करने लगा। साथ ही संघ ने अपनी बड़ी-बड़ी शाखाओं के भी कुछ छोटे विभाग किये और उनको खादी काम में विभाग स्वावलंबन की ओर आगे बढ़ने की हिदायत दी। विभाग-संबंधी अधिक जानकारी आगे स्वतंत्र रूप से दी गयी है।

खादी सघन-क्षेत्र और संघ के काम में बदल

वस्त्र-स्वावलंबन, खादी में क्षेत्र-स्वावलंबन, ग्रामों में अपनी आयात-निर्यात के आयोजन की कल्पना, ग्रामों में सहयोग पद्धति का अमल, ये सब कार्य चरखा-संघ के सभी केन्द्रों में एक साथ जारी हो सकें, ऐसी हालत नहीं थी। कारण संघ के कई केन्द्र खादी-उत्पादन और बिक्री की दृष्टि से ही आज तक संगठित हुए थे और कार्यकर्ताओं को भी उसी काम की तालीम मिली थी। अतः संघ ने व्यापारी खादी के बदले वस्त्र-स्वावलंबन आदि की दिशा में बढ़ना चाहा। तब यह जरूरी हो गया कि सार्वत्रिक रूप से इसका प्रचार किया जाय और कार्यकर्ताओं को तालीम देने के साथ-साथ हर प्रान्त या शाखाओं में कुछ खास क्षेत्र चुनकर वहाँ इस दृष्टि से ज्यादा शक्ति लगायी जाय। कार्यकर्ता की शक्ति व रुचि

के अनुसार हर जगह के ऐसे क्षेत्रों का कार्यक्रम अलग-अलग रहना स्वाभाविक था। फिर भी हर शाखा ऐसा कम-से-कम एक क्षेत्र या कार्यक्रम ले, ऐसी कोशिश विवरण-काल में संघ की रही। उसके सम्बन्ध की कुछ जानकारी यहाँ दी जाती है :

केरल : शुरू में सघन-क्षेत्र न लेते हुए इस शाखा ने अपने एक एक छोटे उत्पत्ति केन्द्र को या उपकेन्द्रों को वस्त्र-स्वावलंबी केन्द्र में बदलना शुरू किया। मुख्य बदल यह रहा कि सूत-कताई के लिए पैसे में मजदूरी देना बिलकुल बन्द किया गया। उसके बदले खादी का कपड़ा, रूई, सरंजाम आदि वस्तुएँ देना शुरू किया गया, जिनसे कातनेवाला और उसका परिवार मिल-वस्त्र छोड़कर संपूर्ण खादीधारी बन सके। जो ऐसे पूर्ण खादीधारी परिवार बने, उनका बचत सूत खरीदने की गुंजाइश रखी गयी। सन् १९४९–५० में ऐसे केन्द्र शाखा ने चलाये और वहाँ का अनुभव अच्छा आया। इसलिए सन् १९५०–५१ में यह संख्या ८ तक बढ़ायी गयी। विवरण-काल में शाखा में कुल ११ केन्द्र चलते रहे, जिनमें से कुछ केन्द्रों के वस्त्र-स्वावलम्बन के काम के आँकड़े नीचे दिये जाते हैं :

केन्द्र	तबदीली का समय	कत्तिन-संख्या		१९५० जुलाई से १५ अप्रैल '५१ तक			
		तबदीली के पहले	तबदीली के बाद	गुण्डी कती	गुण्डी बुनी गयी	गुण्डी बदले, गयी कपड़े के लिए	गुण्डी बदली गयी रूई, सरंजाम आदि के लिए
ओत्तपालम्	२-१०-४८	२२४	२२६	३३,६२५	५,०२९	१४,८९३	१,१६१
कुन्नुग	१-७-४९	२००	४००	१३,४६२	८५९	९,३६८	.....
माजेरी	२-१०-५०	९२	५०	५,६२९	४२९८	८३९	५१२
कल्लेक्करन	१–१–५१	.	२७	७,१२४	२३०	१,५१२	३८२
पोन्नानी	.	२५०	१३०	७,९१९	२९२३	४,१६०	२०४

इन अंकों पर से पाया जायगा कि वस्त्र-स्वावलंबन का आग्रह रखने पर भी कातनेवालों की संख्या कहीं-कहीं बढ़ी है, घटी नहीं है। खास कर कुक्षुतुरा केन्द्र में वह दुगुनी हुई है। यह बतलाता है कि अगर कार्यकर्ता उत्साही हो, सूझ के साथ काम कर सके और लोगों से सम्पर्क बढ़ा सके, तो वस्त्र-स्वावलंबन के काम को भी बढ़वा मिल सकता है।

तमिलनाड इस शाखा में दो तरह से काम हुआ। सन् १९५० के नवंबर में और १९५१ के मई में कार्यकर्ताओं के दो शिविर चलाये गये, जिनमें शाखा के खादी-काम में नये कार्यक्रम अंतर्भूत करने का तय हुआ। ऐसी कुछ बातें कार्यकर्ताओं ने तय कीं कि जो हर खादी-केन्द्र में क्रमशः जारी करना नयी दृष्टि से उन्हें जरूरी लगा। सारी बातें सभी केन्द्रों में एक ही साथ जारी होना कठिन था। अतः यह खयाल रखा गया कि उसमें जिस मद में जो केंद्र प्रथम आगे बढ़ सके, बढ़े। ये बातें केवल मार्गदर्शन के तौर पर और संघ के लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने के लिए प्रेरणारूप थीं। उनका तफसील परिशिष्ट २ में दिया गया है। उन बातों को अमल में लाने के लिए शाखा में से २० कार्यकर्ता चुन कर टोली का आयोजन करने का भी मई १९५१ के उस शिविर में ठहराया गया। उसके अनुसार जो काम हुआ, वह सन् १९५१ के जुलाई में शुरू हुआ। खास करके विवरण-काल तक शाखा में ५०० से ऊपर ऐसे कत्तिन-परिवार हो गये थे, जिन्होंने मिल-कपड़ा न लेने का और खादी का ही इस्तेमाल करने का संकल्प किया था। उनमें से कइयों ने अपने परिवार की जरूरत की खादी बना ली थी और उनका बचत (सरप्लस) सूत शाखा खरीदती। सरंजाम, धुनाई, रंगाई आदि का काम विकेन्द्रित करने की दृष्टि से शुरू हो गया। यह योजना शाखा में व्यापक परिवर्तन की हुई।

दूसरी तरह का काम शाखा के मुल्लूर केन्द्र को सघन-क्षेत्र का रूप देकर हुआ। मुल्लूर केन्द्र, शाखा के प्रधान केन्द्र तिरपुर से ४२ मील के फासले पर है। यहां पर १९५० नवंबर के दो सप्ताह के शिविर के

आये हुए कार्यकर्ताओ मे से १० कार्यकर्ताओ ने उस क्षेत्र के करीब ५० देहातो से सम्पर्क बढाकर नयी दृष्टि से काम करने की तैयारी बतलायी। सबसे पहला काम उन्होने कारीगरो के परिवारो को खादीधारी बनाने का और मिल-वस्त्र-बहिष्कार की आवश्यकता उन्हे समझाने का किया। उन्ही दिनो कपडे का आकस्मिक अकाल रहा। अतः कारीगर भी हमारी योजना के विशेष अनुकूल रहे। उस क्षेत्र के कारीगरो के पूर्ण खादीधारी बनने तक उनका सूत पैसे देकर न खरीदने का हमारा आग्रह रहते हुए सन् १९५१ के जनवरी से ३० जून तक के ६ मास मे यहाँ कताई का काम बढा और कारीगरो की खादी-खरीदी भी बढी। सन् १९४९-५० के दूसरे ६ मास में मुलनूर क्षेत्र मे १,७१,७०९ गुडी सूत कता था, उसकी जगह सन् १९५०-५१ के दूसरे ६ मास मे २,५६,७७५ गुडी सूत कता, जिसमे १,१०,३९९ गुडी की खादी केवल कत्तिनो ने ली और बाकी मे से भी अधिकतर हिस्से की रूई, सरजाम आदि लिया गया। मूलनूर क्षेत्र मे वार्षिक करीब चार से पाँच लाख गुंडी सूत कतता था। मगर वहाँ बुनाई नहीं होती थी। बुनाई वही हो, ऐसा प्रयत्न शुरू हुआ और कातनेवालो तथा ग्राम के कुछ नवयुवको मे अब तक कुल १४ करघे शुरू हुए। खड्डा पाखाना, मिश्र-खाद, ग्राम-सफाई आदि के कार्यक्रम भी यहाँ हमारे कार्यकर्ता चला रहे थे।

कत्तिनो को खुद खादी इस्तेमाल करने की ओर आकृष्ट करने के लिए तमिलनाड शाखा के कुछ केन्द्रो मे एक खास पद्धति चलायी गयी। वहाँ कत्तिने आठ गजी साडी पहनती हैं। गुडी मे उनकी कीमत ७०-८० गुडी जितनी होती है। इसके लिए १५-२० कत्तिनो की ऐसी टोलियाँ बनायी गयी, जिनमे हरएक कत्तिन अपने हिस्से की गुडी हर सप्ताह जमा करे, जिससे कुल टोली की गु डी मिलाकर किसी एक कत्तिन को उसके दाम मे एक साडी प्राप्त हो सके। इस तरह बारी-बारी से उस-उस टोली की हर एक कत्तिन को एक एक साडी मिलने के कारण यह पद्धति वहाँ की

कत्तिनों में काफी प्रिय हुई थी और उस प्रकार मिलनेवाली साड़ियाँ वे खुशी से पहनने लगी थीं।

कर्नाटक सारे कर्नाटक प्रान्त में बुनाई के लिए एक बड़ा और एक मध्यम दर्जे का ऐसे केवल दो बुनाई-केन्द्र थे। कताई कई जगह होती थी। लेकिन बुनाई के लिए सारा सूत इन दो केन्द्रों में भेजना पड़ता। कताई साल में केवल ६ मास होती है और वर्षा के दिनों में दूर दूर देहातों का सूत वहीं संग्रहित करना पड़ता है। अतः इस शाखा में पूँजी की दृष्टि से और उत्पादन-खर्च की दृष्टि से भी काम कभी कार्यक्षम नहीं हो सका। व्यापारी खादी-काम में भी सदा बहुत नुकसान आता रहा। इसलिए इस शाखा की एक महत्त्व की समस्या थी कि सूत जहाँ कतता हो, उसी क्षेत्र में वह बुना भी जाय। इस बुनाई के पहलू को विशेष प्राधान्य देकर इस शाखा के कलादगी (बीजापुर क्षेत्र में सघन क्षेत्र की योजना बनायी गयी। वहाँ ग्राम-सम्पर्क का कुछ काम भी हुआ। कार्यकर्ताओं के प्रचार से कत्तिनों में खादी का इस्तेमाल थोड़ा बढ़ा। जो पहले अपने लिए ३० गज खादी तैयार कर ले, उसी कत्तिन से बाद में सूत खरीदने का नियम वहाँ बनाया गया। मगर आशा रखी थी, जैसी उसके अनुसार सघन क्षेत्र की दृष्टि से वहाँ काम न हो सका। खास कारण यह रहा कि शाखा के मंत्री बीमारी और अन्य कारणों से इस काम में जरूरी ध्यान नहीं दे पाये और कार्यकर्ताओं में ऐसा दूसरा कोई मार्गदर्शक नहीं निकला।

इस तरह सघन-क्षेत्र की योजना इस शाखा में ज्यादा सफल नहीं हुई, तथापि शाखा का एक दूसरा छोटा सा विभाग—कल्हाल विभाग नयी दृष्टि से काम पनपाता गया और वहाँ अच्छी प्रगति होने लगी। वस्त्र-स्वावलंबन के साथ क्षेत्र-स्वावलंबन, अपने ही क्षेत्र के गाँव के कार्यकर्ता तैयार करना, अपने ही वहाँ बुनाई खड़ी करना और साथ ही सारे महत्त्व के ग्राम-पहलुओं को समझ कर यथाशक्ति उनके हल के लिए प्रयत्न करना या ग्राम-जनों का संगठन करना—ये सभी प्रवृत्तियाँ

वहाँ चलीं। कल्हाल गाँव मे कुछ जागृति आयी। व्यसन-मुक्ति, आटे की मिल चक्की गाँव मे न लाना, बिना कचरे का कपास खेत मे से चुनना, आदि छोटे-छोटे कई कार्यक्रम ग्राम-जनो ने सगठित किये।

आन्ध्र : सघन क्षेत्र की दृष्टि से कोई योजना नहीं की गयी। मगर इस शाखा के तेनाली-विभाग को एक स्वतत्र विभाग कर दिया गया। वहाँ के सचालक कई वर्षो से ग्राम समस्याओ मे दिलचस्पी लेते आये थे। वस्त्र-स्वावलंबन के कार्यक्रम के साथ-साथ उस विभाग मे ग्राम-जनो मे सहकार-पद्धति से काम करने की शक्ति व वृत्ति पैदा करना, ग्राम के मल-मूत्र व कूडे से खाद का उत्पादन करने की रुचि पैदा करना, यत्रोत्पादित 'फर्टिलाइजर्स' के साथ इस ग्राम-खाद के तुलनात्मक प्रयोग आदि कार्यक्रम चलाये जाने लगे।

महाराष्ट्र : इस शाखा के चान्दा-विभाग मे वस्त्र-स्वावलबन की दृष्टि से विशेष प्रचार करने का सोचा गया और विवरण-काल मे खास प्रचारक नियुक्त किये गये। फलस्वरूप करीब मान्यताप्राप्त १० और उम्मीदवार ६ मिलकर १६ कताई-मडल बने। इस विभाग मे पेशेवर कातनेवाले व्यक्तियो के सिवा खुद के वस्त्र के लिए कातनेवाले २५० व्यक्ति विवरण-काल मे तैयार हुए। इसी प्रकार इस विभाग के २०० जनसख्यावाले छोटे-से चितेगॉव गाव मे एक प्राइमरी मराठी स्कूल चलाया गया। वहाँ के विद्यार्थीगण अपनी-अपनी कताई के काम के पैसे मे से स्कूल की फीस देने लगे और खुद के कपडे के लिए भी उसका उपयोग करने लगे। स्कूल के मास्टर ने अपनी फुरसत के समय मे से विद्यार्थियो के कुछ सूत की बुनाई कर उसका कपडा तैयार कर दिया।

मूल-केन्द्र मे विद्यार्थियो के लिए एक वसति-गृह 'खादी-भवन' नाम से चलाया गया। देहात के लडके उत्तम नागरिक बनें, उनकी सर्वाङ्गीण उन्नति हो, इस दृष्टि से वहाँ यत्न किये गये। इर्दगिर्द के करीब ३५-४० लडके सघ के सान्निध्य मे रहे। मल-मूत्र सफाई, कताई व प्रार्थना के

कार्यक्रम में वे नित्य नियमानुसार भाग लेते रहे। जातिभेद भूल कर वे सब विद्यार्थी भाईचारे के साथ रहने लगे।

पंजाब शाखा खास सघन-क्षेत्र या वस्त्र-स्वावलम्बन केन्द्र का कोई आयोजन यहाँ नहीं किया गया। लेकिन वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से अन्य प्रचार के साथ कत्तिनों को बुनाई सिखलाने का विचार किया गया। शाखा में पहले करीब ७ कताई-परिश्रमालय (स्कूल) चलाये जाते थे, वह संख्या विवरण-काल में १७ तक बढ़ायी गयी। उनमें एक दो जगह बुनाई दाखिल करने की कोशिश की गयी और ३६ बहनों ने बुनाई सीखी। हरएक कत्तिन को सालभर में अपने लिए २४ वर्गगज कपड़ा बना लेना चाहिए, उससे ज्यादा सूत ही खरीद किया जायगा—ऐसा नियम बनाया गया।

इस प्रान्त में कई जगह बिजली से चलनेवाले यन्त्रों पर धुनाई करके पूनियाँ बेचने का व्यापार चल निकला है। हमारी कत्तिनें भी ऐसी पूनियाँ खरीद करने लगी थीं। लेकिन खादी-काम के लिए वह तरीका हानिकर होने से शाखा ने उस तरह की पूनी का सूत खरीदना बंद किया और हाथ से धुनी हुई पूनियों का ही सूत खरीदने का खास प्रबंध किया। इसके लिए खास धुनाई-परिश्रमालय चलाने की ओर उसमें बनी पूनियाँ कत्तिनों को मुहैया करने की योजना की।

खादी-शिविर

चरखा संघ के पचीस साल के इतिहास में यह एक नया आयोजन व कार्यक्रम रहा। १९४१ के जुलाई मास में इस काम के लिए संघ ने एक

शिविर-समिति नियुक्त की गयी। शिविर मे श्रीयुत कनुभाई गाधी की सहायता भी विवरण-काल मे सघ को मिली। उनके साथ सघ के अन्य कुछ कार्यकर्ता दिये गये। वह टोली बराबर भ्रमण करती रही और कर्नाटक, आन्ध्र, तमिलनाड, केरल, गुजरात, उडीसा, बगाल, पजाब, महाराष्ट्र आदि प्रान्तो मे कही एक, तो कहीं अधिक ऐसे कुल २५ शिविर चलाये गये।

इन शिविरो का असर चरखा-सघ के कार्यकर्ताओ पर, खादी-प्रेमियो पर और आम-जनता पर भी अच्छा पडा। खादी के प्रति लोगो को आकृष्ट करना, खादी की मूल दृष्टि से उन्हे परिचित कराना, वस्त्र-स्वावलबन की ओर प्रेरित करना और खादी-प्रक्रियाएँ सिखलाना—ये काम शिविरो मे किये गये। साथ-साथ ग्राम-सफाई, कूडे व मैले का खाद बनाना और ग्रामोद्योगी पदार्थों के इस्तेमाल का प्रचार भी इन शिविरों मे हुआ। तीन रोज से लेकर सात रोज तक के शिविर चलाये गये।

जगह-जगह से शिविर के लिए माँग आने लगी, लेकिन हर जगह पहुँचना एक ही केन्द्रीय टोली के बस की बात न थी। इस अनुभव से यह महसूस होने लगा कि ऐसी शिविर-टोली हर प्रान्त मे बनायी जाय। अनगुल के सर्वोदय-सम्मेलन के वक्त प्रान्तीय मन्त्रियों के साथ इसकी चर्चा होकर प्रान्तीय टोलियाँ बनाना निश्चित हुआ। प्रान्त में ऐसी टोली बना कर शिविर का कार्य अधिक जोरो से चालू किया गया। विवरण-काल मे केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शिविर-टोलियो ने कुल ६६ शिविर आयोजित किये जिनमे बास-चरखा शिक्षण-शिविर अधिक रहे। प्रान्तवार शिविर तथा शिक्षार्थियो की संख्या आगे की तालिका मे दी गयी है :

खादी-शिविर और सदस्यों की संख्या

[१९५०–५१]

प्रान्त	शिविर-संख्या	शिविर-विद्यार्थी	बाँस-चरखे बने
असम	—	—	—
आन्ध्र	८	४२	४९४
उत्कल	९	२३०	११०
उत्तर प्रदेश	—	—	—
कर्नाटक	—	—	१४३०
कश्मीर	—	—	—
केरल	३	९१	७७
गुजरात	५	१०४	१०२
तमिलनाड	७	३३१	४४५
पंजाब	३	७०	—
बिहार	१०	१५१	—
बंगाल	३	३९	८७
बम्बई	—	—	—
महाकोशल	—	—	५७
महाराष्ट्र	१०	४४५	५१६
राजस्थान	५	१२२	१२६
सौराष्ट्र	३	८०	१६
हैदराबाद	—	—	६७
	६६	१,७०५	३,५२७

चरखा-जयंती

यह कार्यक्रम चरखा-संघ कई वर्षों से देशभर मे चलाता आया है। शुरू में चरखा-जयंती के दिनों में अधिक-से अधिक खादी बेचने का कार्यक्रम विशेष रूप से रहा करता था। पर इधर कुछ वर्षों से खादी-विचार का प्रसार और स्वावलम्बी कताई का कार्यक्रम प्रधान मानकर उसमें ज्यादा-

से ज्यादा शक्ति लगायी जाने लगी। इसके लिए प्रार्थना, गाधीजी के साहित्य का वाचन और सूत्र-यज्ञ के कार्यक्रम सगठित किये जाने लगे। विवरण साल मे अक्तूबर १९५० मे ८२ वी चरखा-जयन्ती थी। अतः २ अक्तूबर १९५० के ८२ दिन पहले से शाखाओ के भिन्न-भिन्न केन्द्रो मे ८२ दिनो का सामूहिक स्वरूप का अखण्ड सूत्रयज्ञ रखा गया था। सब जगह के कताई के आँकडे नहीं मिल पाये हैं। कुछ केन्द्रो मे कताई-यज्ञ के अलावा जयन्ती-काल मे बुनाई का भी आयोजन किया था। लोगो की सूत्रयज्ञ व बुनाई की अभिरुचि देखकर सघ ने दूसरे वर्ष यानी ८३ वीं चरखा-जयन्ती मे पूरे वर्ष मे ८३ गुडी कताई का सकल्प करने का प्रचार किया तथा साथ-साथ कम-से-कम १०० जगह सघ के बुनाई-प्रसारक भेजकर 'बुनाई-सेवा' का आयोजन किया। दफ्तर मे जो अक मिले हैं, उन पर से १३ शाखाओ के १३३ विभिन्न केन्द्रो मे यह कार्यक्रम किया गया। सफाई आदि कार्यक्रमो के साथ सूत्रयज्ञ मे १०,३५० गुडियो की कताई हुई, पर ८३ दिन तक जो अखण्ड सूत्रयज्ञ किया गया, उसमें १,३५,१५९ गुडियाँ कती। सेवा का कार्यक्रम २२ शाखाओ तथा विभागो के ७६ केन्द्रो मे चलाया गया, जिसमे ४६२ भाई-बहनो ने भाग लेकर ३,३२६ वर्गगज खादी खुद बुनी। हमने अनुभव किया कि ८२ और ८३ दिनो के अखण्ड सूत्रयज्ञो मे 'कताई' तथा ८३ वी जयन्ती मे 'बुनाई' के लिए खादी-प्रेमियो ने बडे उत्साह से भाग लिया। इन कार्यक्रमो के अलावा प्रार्थना, सफाई, मिश्र खाद के गड्ढे बनाना, सभाओ का आयोजन तथा कताई-प्रतियोगिताएं भी कई केन्द्रो मे की गयी। दोनों जयन्तियो के विवरण क्रमशः 'सर्वोदय' तथा 'कताई-मण्डल'-पत्रिका मे प्रकाशित किये गये।

सर्वोदय-पक्ष

चरखा जयन्ती की तरह ३० जनवरी से १२ फरवरी तक के सर्वोदय-पक्ष मे भी विशेष कार्यक्रम करने की सघ कोशिश करता रहा। चरखा-जयन्ती के निमित्त खुद के वस्त्र-स्वावलम्बन और सर्वोदय पक्ष मे समग्र ग्राम-

स्वावलम्बन के लिए उपर्युक्त कार्यक्रमो पर शक्ति केन्द्रित करने की दृष्टि रखकर सघ साल ब साल उसके अनुरूप काम व प्रचार करता रहा है। इसलिए सर्वोदय-पक्ष मे कताई के उपरान्त सफाई व ग्रामो मे घूमकर प्रचार करने पर विशेष जोर दिया जाता रहा। इसके लिए टोलियो के रूप मे पैदल यात्रा करने का व रास्ते मे गाँवो में उपर्युक्त कार्यक्रम करते जाने का सिलसिला पिछले दो वर्षो से शुरू किया गया। इन टोलियो को सर्वोदय-टोली नाम दिया गया था। प्रत्यक्ष ३० जनवरी को सुबह सफाई दोपहर सूत्रयज्ञ व शाम को प्रार्थना का आयोजन किया जाता था। इस सम्बन्ध मे जो आँकडे मिल सके, उनका सकलन नीचे लिखे अनुसार है :

वर्ष	कितने गाँवमे कार्यक्रम हुआ	उपस्थिति सफाई	सूत्रयज्ञ	प्रार्थना
१९५१	१,७६८	११,९०६	१,२५,४०५	१,१३,८९७
१९५२	६५४	९,०८४	१९,७१७	४९,[illegible]

दूसरे वर्ष यानी १९५२ मे ३० जनवरी का कार्यक्रम पहले वर्ष जितनी सख्या मे नही हो पाया। आम चुनावो के कारण ज्यादा लोगो को इस ओर आकृष्ट नहीं किया जा सका। लेकिन कार्यकर्ताओ ने सर्वोदय-टोली का कार्यक्रम काफी अच्छी तरह कार्यान्वित किया। १९५१ मे टोली की यह कल्पना नहीं थी और बहुत कम जगहो मे टोलियाँ घूमी थी। परन्तु १९५२ के सर्वोदय-पक्ष मे उनकी सख्या और काम के आँकडे नीचे लिखे अनुसार रहे :

कुल टोलियाँ निकली		३९३
कुल देहातो मे भ्रमण किया		४,१९३
कितने लोगो ने कार्यक्रमो मे भाग लिया		२,५६,५९२
कितनी सूताजली मिली	गुडियाँ	५९,७५६
कुल भूदान मिला	एकड	६८३

इन सब कार्यक्रमो को जोडकर १९५२ के सर्वोदय-पक्ष मे विनोबा के ही शब्दो मे तैयार किया हुआ "भूदान-यज्ञ" पर एक प्रवचन पढने की

व्यवस्था की गयी, जिससे भूमिदान-आन्दोलनसम्बन्धी विचार लोगो तक पहुँचने मे मदद हो। इसके अलावा सूत्रयज्ञ के कार्यक्रमो के बाद सूताजलि इकट्ठी करने का कार्यक्रम भी रखा गया था। घूमती टोलियों ने अपने प्रवास मे गॉव-गॉव मे ये कार्यक्रम किये और ३० जनवरी को हर केन्द्र मे ये कार्यक्रम किये गये।

सूताञ्जलि

तारीख १२ फरवरी को होनेवाले सर्वोदय-मेलो (जो गाधीजी की अस्थियॉ जहॉ जहॉ प्रवाहित की गयी थी, वहॉ लगते हैं) के लिए विनोबा ने "एक गुडी (६४० तार की लच्छी) समर्पण" का कार्यक्रम सुझाया। उसकी शुरुआत नाग-विदर्भ मे पवनार के मेले मे १९५० मे हुई। इसके लिए उस प्रान्त मे कुछ प्रचार भी किया गया। फलस्वरूप पवनार-मेले में उस वर्ष करीब छह हजार गुंडी सूत जमा हुआ। उससे उत्साहित होकर दूसरे साल यानी १९५१ में यह कार्यक्रम सारे देश के लिए जाहिर किया गया। वह सफल करने मे सघ के देशव्यापी सगठन का काफी उपयोग हुआ। यह भी लिखने मे हर्ज नहीं कि सघ के कारण ही यह कार्यक्रम देशव्यापी हो सका।

सूताजलि समर्पण के पीछे जो विचार है, वह विनोबाजी के शब्दो मे ही यहॉ उद्धृत किया जा रहा है :

"जो गुडी देगा, वह हमारे विचारो का वोटर माना जायगा। उसका नाम, पता हमारे दफ्तर में रहेगा। इस तरह यह एक अत्यत सुव्यवस्थित और ठोस कार्यक्रम आपके सामने रख रहा हूँ। आज वोटर केवल अठारह करोड़ हैं। हमारी इस योजना के अनुसार तो पॉच बरस का बालक भी हमारा वोटर हो सकता है। वह वोटर खादीवाला ही हो, यह जरूरी नहीं है। वह वोटर शराबी हो, तो उसकी शराब छुडवाना मेरा काम है। जिस तरह एक परिवार के लोग अलग-अलग गॉव मे रहते हैं और खास प्रसगो पर एकत्र मिलते है, वैसे ये हमारे सारे गुडी-दाता कुटुबी-जन

सर्वोदय-मेले के अवसर पर परस्पर मिला करेंगे और हमारे कार्यकर्ता बीच-बीच में उनके गाँवों में जाकर मिल आया करेंगे। वे खास कर उन गाँवों में जायेंगे, जहाँ एक ही गुंडी देनेवाले लोग रहते हैं, क्योंकि विभीषण की तरह उस गाँव में वह अकेला रहता है।

यह मैं एक अत्यंत व्यापक कार्यक्रम आपको दे रहा हूँ। इससे देश में काफी शक्ति निर्माण हो सकती है।"

संघ के कारण सूताजलि का कार्यक्रम तो सफल होने लगा। परंतु जैसा कि विनोबाजी ने लिखा है, सर्वोदय विचार के इन वोटरों के पास पहुँच कर उनमें जो काम करना चाहिए, वह अभी तक नहीं हुआ।

खादी-विद्यालय और शिक्षा-समिति

खादीसंबंधी विभिन्न पहलुओं और कारीगरी के जानकार कार्यकर्ता तैयार करने की दृष्टि से कई वर्षों से संघ खादी विद्यालय चलाता रहा है। सेवाग्राम में संघ का केन्द्रीय विद्यालय रहा और समय-समय पर अन्य शाखाओं में भी खादी-विद्यालय चले। खादी-प्रवृत्ति में जैसे जैसे दृष्टि व्यापक होती गयी और चरखा-संघ के कार्यक्रम में नये-नये पहलुओं पर जोर दिया जाने लगा, वैसे वैसे खादी के पाठ्य-क्रमों में भी समय-समय पर परिवर्तन होते रहे। खादी-विद्यालयों की प्रवृत्ति चलाने और उसके संबंध के हर पहलू पर विचार करने के लिए सन् १९४० में चरखा-संघ ने अपनी एक खादी-शिक्षा-समिति की स्थापना की। समिति के सदस्य भी समय-समय पर बदलते रहे। विवरण-काल की समिति में ९ सदस्य थे। संघ के अध्यक्ष श्री धीरेन्द्र मजूमदार, श्री रघुनाथ श्रीधर धोत्रे, श्री

वल्लभस्वामी, श्री नन्दलाल पटेल, श्री रामदेव ठाकुर, श्री नटराजन, श्री नारायण देसाई, श्री देवेन्द्र गुप्त और चरखा-सघ के मन्त्री।

चरखा-सघ के खादी-विद्यालयो के अलावा कही-कही स्वतत्र विद्यालयो मे भी सघ का पाठ्य-क्रम व सघ की परीक्षाएँ चलायी गयीं। शिक्षा-समति ने उन विद्यालयो को मान्यता दी और सघ ने ऐसे मान्यता लेनेवाले विद्यालयो को अधिक सहायता देने की नीति भी बनायी। पाठ्य-क्रम की मोटी जानकारी ,परिशिष्ट ३ मे दी गयी है। पाठ्य-क्रम विद्यालय के नियम, विद्यार्थी-भरती तथा छात्रवृत्ति के नियम, मान्यता के नियम आदि पूरी जानकारी स्वतत्र पुस्तिका के रूप मे सघ की ओर से प्रकाशित की गयी थी। मान्यताप्राप्त विद्यालयो को सहायता परीक्षा उत्तीर्ण करनेवाले विद्यार्थियो के हिसाब पर नीचे लिखे अनुसार दी जाती थी :

पाठ्यक्रम	प्रत्येक उत्तीर्ण छात्र के पीछे सघ से दी जानेवाली सहायता
१ खादी-प्रवेश	रु. २००
२ बुनाई-कार्यकर्ता	,, १५०
३ दुपटा बुनाई	,, १००
४ कताई-कार्यकर्ता	,, १००

विवरण काल मे चरखा-सघ की ओर से मुख्यतः सेवाग्राम का विद्यालय ही चला। १९५०-५१ मे करीब डेढ वर्ष बारडोली मे भी गुजरात-शाखा की ओर से विद्यालय चला, पर यह विद्यालय सेवाग्राम के शिक्षक

भेजकर ही चलाना पड़ा। पहले उम्मीद थी की गुजरात-शाखा से ही शिक्षक, कार्यकर्ता और सचालक मिल जायेंगे। मगर वे न मिलने से बारडोली का विद्यालय बद करना पड़ा। कर्नाटक शाखा विद्यालय चलाती रही मगर वह पूरे नियमों का पालन नहीं कर सकी। इसलिए उसे शिक्षा-समिति ने मान्यता नहीं दी। इनके अलावा चरखा-सघ के मान्यता-प्राप्त चिनलहुग (मैसूर) तथा रायपुर व अकोला (मध्यप्रदेश) के तीन स्वतन्त्र विद्यालय चले। इन सबमें सीखकर परीक्षा देनेवालों की सख्या नीचे लिखे अनुसार रही

नाम	१९४९–५०			१९५०–५१		
	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत
१. पाठशाला शिक्षक						
खादी-प्रवेश	२५	२४	–	–	–	–
कताई	२५	२४	–	२६	२६	–
दुवटा बुनाई	२५	२४	–	१२	६	–
२ खादी-प्रवेश	१३	९	१	–	–	–
३ कताई-कार्यकर्ता	६६	३६	५	३५	२४	५
४ बुनाई-कार्यकर्ता	२९	२२	२	१९	१६	१
५ दुवटा बुनाई	२५	२२	–	६	३	–
कुल	२०८	१६१	८	९८	६५	६

विद्यालयवार तफसील आगे की तालिका मे दी गयी है

अ० भा० चरखा-संघ खादी-शिक्षा-समिति की परीक्षाएँ

[जुलाई १९४९ से जून १९५१ तक]

खादी-विद्यालयों के नाम	पाठशाला-शिक्षा						खादी-प्रवेश			कताई कार्य-			बुनाई कार्य-			दुबटा बुनाई विद्यार्थी			कुल जोड विद्यार्थी		
	खादी प्रवेश विद्यार्थी		कताई विद्यार्थी		दुबटाबुनाई विद्यार्थी		विद्यार्थी संख्या			कर्ता विद्यार्थी संख्या			कर्ता विद्यार्थी संख्या								
	बैठे	उत्तीर्ण	बैठे	उत्तीर्ण	बैठे	उत्तीर्ण	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत	बैठे	उत्तीर्ण	अनिर्णीत
खादी-विद्यालय सेवाग्राम	२५	२४	३४	२७	३२	२६	५	३	१	५९	३८	१०	३९	३१	३	१३	९	—	२०७	१५८	१४
खादी-विद्यालय वीरपाडी (तमिलनाड)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	६	३	—	—	—	—	१८	१६	—	२४	१९	—
खादी विद्यालय कोमरगोलू (आंध्र)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	११	५	—	—	—	—	—	—	—	११	५	—
खादी-विद्यालय पालघाट(केरल शाखा)	—	—	—	—	—	—	१	१	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	१	१	—
खादी विद्यालय बारडोली (गुजरात)	—	—	१७	१३	५	४	—	—	—	—	—	—	२	१	—	—	—	—	२४	१८	—
सरस्वती-मंदिर अकोला* (म. प्रदेश)	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	७	६	—	—	—	—	७	६	—
खादी विद्यालय रायपुर*(म. प्रदेश)	—	—	—	—	—	—	७	५	—	२५	१४	—	—	—	—	—	—	—	३२	१९	—
कुल	२५	२४	५१	४०	३७	३०	१३	९	१	१०१	६०	१०	४८	३८	३	३१	२५	—	३०६	२२६	१४

* चरखा संघ से मान्यता-प्राप्त स्वतन्त्र विद्यालय ।

यह भी उल्लेख करना ठीक होगा कि बम्बई सरकार ने पाठशालाओं में कताई दाखिल करने की योजना बनायी और उस सिलसिले में पाठशाला के शिक्षकों में से चुनकर पहले ५० और बाद में २५ ऐसे कुल ७५ व्यक्तियों को सेवाग्राम खादी विद्यालय में कताई व बुनाई की शिक्षा दिलवायी। प्रति विद्यार्थी १० रु० मासिक शिक्षा-शुल्क के रूप में खर्च भी बम्बई सरकार ने संघ को दिया।

पाठ्य-क्रमों के परिवर्तनों का ज्यादा तफसील यहाँ देना ठीक नहीं होगा। थोड़े में उनकी कल्पना इस प्रकार है : खादी-उत्पादन की कारीगरी और शास्त्र की दृष्टि से मूल खादी-पाठ्य-क्रम बने थे। उनमें वस्त्र-स्वावलम्बन के लिए तथा पाठशाला में खादी-कला दाखिल होने के लिए कुछ खास-खास फर्क किये गये। मसलन किसी-किसी पाठ्य-क्रम में धुनाई के बदले धनुष तुनाई रखी गयी। दुबटा सूत कातना व उसकी बुनाई भी शामिल की गयी। किसान व पेटी-चरखे के बदले बाँस-चरखे को स्थान दिया गया। ग्रामसेवा की दृष्टि से सफाई को पाठ्य-विषय माना गया। बाँस-चरखे की कताई के साथ बाँस-चरखा बनाने की तालीम भी पाठ्यक्रम में शामिल की गयी, क्योंकि यह अनुभव आया कि बाँस-चरखा बनाना बहुत आसान है और हर कोई आसानी से उसे बना सकता है। पाठ्य-क्रम के निमित्त और स्वतन्त्र रूप से सेवाग्राम विद्यालय में विवरण-काल में ५३५ भाई बहनों ने बाँस-चरखा बनाने की तालीम पायी। इसमें तालीमी-संघ के विद्यार्थी, कस्तूरबा ट्रस्ट की संचालिकाएँ तथा बम्बई-सरकार के शिक्षकगण भी काफी संख्या में रहे।

कपास विभाग

संघ का खादी काम अधिकतर पिछले वर्षों में बाजार से रुई खरीद कर ही चला। मगर देश में कपास की खेती दिन-दिन केन्द्रित होती गयी। कुछ वर्षों के पहले हर प्रान्त में कपास पैदा होता था। हर जगह स्थानीय जातियाँ होने से उस रुई से मजबूत व टिकाऊ कपड़ा बनता था। लेकिन केन्द्रित पद्धति के कारण कई प्रान्तों में कपास पैदा होना बन्द हो गया।

मिलो के लिए लम्बे ततु की रुई पैदा करने मे छोटे ततुवाली किन्तु मजबूत कपडे के लिए अनुकूल रुई की जातियाँ मारी गयी। धीरे-धीरे यह हालत होती गयी कि काननेवालो को रुई मिलना बहुत मुश्किल हो गया। जो रुई मिल सकी, उसकी खादी बहुत कमजोर बनने लगी। यह सब देखते हुए ट्रस्टी-मडल की तारीख २७ जून १९४९ की सभा मे कपास की समस्या पर विचार किया गया और खादी की दृष्टि से कपास की खेती के सम्बन्ध मे प्रयोग करने के लिए सघ ने एक कपास-समिति नियुक्त की, जिसके सयोजक श्री दादाभाई नाईक चुने गये। समिति को नीचे लिखी दृष्टि से काम करने को सुझाया गया :

१. खादी मजबूत और टिकाऊ बने, ऐसा कपास प्राप्त करना।
२. खेत से बिना कचरे का कपास चुनवाने का प्रयत्न करना।
३. हर प्रान्त मे कपास पैदा करना।
४ किसान की सुविधा और बचत की दृष्टि से कपास की खेती का तरीका तय करना।
५. वस्त्र-स्वावलबन की दृष्टि से घर मे चन्द पौदे या पेड लगाकर कपास उपजा लेना।

कपास-सम्बन्धी सरकारी नीति केवल मिलो के विकास की दृष्टि से तय होती रही है। मौजूदा कपास के सरकारी केन्द्रो मे खादी के लिए ऊपर लिखी दृष्टि से सम्पूर्ण रूप मे प्रयोग हो सकने के बारे मे शका है। इसलिए सम्भव हो, वहाँ उन केन्द्रो की मदद लेकर जरूरत के अनुसार कपाससम्बन्धी स्वतन्त्र प्रयोग करने का भी सघ ने तय किया और इस समिति मे सरकारी प्रयोग-केन्द्रो के एक अवसर-प्राप्त विशेषज्ञ श्री शिवाभाई पटेल को भी लिया गया। उन्होने हमे कपास के प्रयोग के काम मे बहुत सहायता की, उसका साभार उल्लेख खास तौर पर हम यहाँ करते हैं। समिति ने जो प्रयोग किये, उनमे घर-आँगन मे होने लायक वृक्ष-कपास के बारे मे ज्यादा जाँच की। उसके लिए नरसिंहपुर, सेवाग्राम व बिलीमोरा तीनो जगहो मे जुदे-जुदे कपास के नमूने लेकर बगीचे बनाये

गये। प्रयोग में यह अनुभव आया कि वृक्ष-कपास हर कहीं, हर किसी भी जमीन में और मामूली परिश्रम और देखभाल से हो सकता है। जहाँ ओस नहीं पड़ती, उस जगह पहले साल माह दिसम्बर से माह मई तक ऊपर से पानी देना पड़ता है। जहाँ ओस पड़ती है, वहाँ इसकी भी जरूरत नहीं रहती। प्रयोग में यह भी अनुभव आया कि हर जगह छोटे तथा मध्यम रेशेवाला देशी आरबोरियम वृक्ष कपास अच्छी तरह पैदा हो सकता है। इसका अधिक अनुभव पाने के लिए भारत के जुदे जुदे प्रान्तों में करीब ढाई सौ लोगों को प्रयोग की दृष्टि से वृक्ष कपास के बीज बाँटे गये और इसमें दिलचस्पी रखकर प्रयोग करनेवालों को बीज वितरण करने की व्यवस्था संघ के केन्द्रीय दफ्तर से अन्त तक की गयी।

अब श्री दादाभाई नाईक भूदान के काम में लग जाने से और कपाससम्बन्धी अनुभवी कार्यकर्ता के अभाव में इस विभाग का काम निश्चित योजनानुसार नहीं चलाया जा सका। पर कपास का सवाल खादी के लिए बहुत महत्त्व का सवाल है, ऐसा दिन पर दिन महसूस होने लगा। इस दिशा में अधिक काम करने की संघ की इच्छा रही। पर कपास समिति संघ ने विसर्जित कर दी। उस विभाग के एकआध कार्यकर्ता द्वारा थोड़ा-बहुत काम संघ चलाता रहा। विवरण काल में इस विभाग की ओर से कपास-सम्बन्धी दो पुस्तिकाएँ तैयार की गयीं, जो चरखा संघ ने प्रकाशित कीं। एक का नाम है : "कपास-स्वावलम्बन" व दूसरी का नाम है : "कपास की समस्या—खादी की दृष्टि से"।

खादी-सरंजाम के प्रयोग

इस काम के लिए चरखा-संघ ने एक सरंजाम-समिति नियुक्त की। इसमें सात सदस्य थे : सर्वश्री अ० वा० सहस्रबुद्धे, कृष्णदास गांधी, नन्दलाल पटेल, रामाचारी वरखेडी, माधवलाल पटेल, मोहन परीख तथा विष्णुभाई व्यास। सरंजाम समिति के मार्गदर्शन में खादी सरंजाम के प्रयोग पूर्ववत् विवरण-काल में भी चलते रहे। संक्षेप में उनकी जानकारी नीचे लिखे अनुसार है :

बॉस-चरखा ' विवरण-काल मे बॉस-चरखे की ओर सघ ने विशेष ध्यान दिया। परीक्षण से पता चला कि बॉस-चरखा कीमत मे सस्ता और बनाने मे सुलभ है। इतना ही नही, उस पर कताई की गति भी बहुत अच्छी आती है। इस सम्बन्ध के प्रयोग की जानकारी नीचे दी जा रही है। सेवाग्राम-विद्यालय मे सात भाइयो ने किसान-चरखे और बॉस-चरखे पर अपनी कताई का हिसाब निकाला, उसके ऑकडे ये हैं.

क्रमांक	प्रयोग के दिन	बॉस-चरखा				किसान-चरखा			
		औसत तार १ घंटे मे	अक	कस	समानता	औसत तार १ घंटे मे	अक	कस	समानता
१	५	३४३	१५।।।	७०	८२	३००	१४।।।	६६	८०
२	५	३२४	१६	७८	७९	३१०	१६।	७१	७९
३	४	३६८	१४।।	१०२	३	३६३	१३।।।	८३	७८
४	२	३८३।।	१३।	८३।।	८१।।।	३७०	१२	७२।।	७९
५	६	२८९	१३।।	८१	७९	२८८	१३।	८४	८८
६	८	३९८	१५।।।	८५।।	८७	३७८	१५।।।	७८।।	८५
७	४	२९१।।	१६।।	७६।	८५।।	२७६	१६।	६८।।	७६

यह गति परेतने-सहित है। सबकी मिल कर एक घण्टे की औसत गति बॉस-चरखे की ३४२ तथा किसान-चरखे की ३२६ तार हुई।

इस पर से पता चलेगा कि किसान-चरखे से बॉस-चरखे पर कातने की गति और सूत की समानता तथा कस भी ज्यादा आया है। यह

अनुभव करने के बाद चरखा-संघ ने अपने सेवाग्राम-विद्यालय में बाँस-चरखे का पाठ्य-क्रम दाखिल किया। अब वहाँ हर विद्यार्थी अपना बाँस-चरखा बना कर कताई सीखने लगा। चरखा संघ ने इस सम्बन्ध में विशेष प्रस्ताव करके यह भी राय जाहिर की कि पाठशालाओं में भी बाँस-चरखा ही दाखल किया जाय। दूसरा प्रस्ताव संघ ने यह भी किया कि संघ के सरंजाम-कार्यालयों में पेटी व किसान-चरखे बनाना बन्द करके या कम करके बाँस-चरखे का ही प्रचार व शिक्षण बढ़ाया जाय। दोनों प्रस्ताव परिशिष्ट १ में दिये गये हैं। संघ की हर शाखा में बाँस-चरखा तालीम के लिए खास प्रचारक शिक्षक रखे गये और करीब सभी प्रान्तों में इसके वर्ग चलाये गये। अब तक देशभर में अन्दाजन २००० भाई-बहनों को बाँस चरखे की तालीम दी गयी। बाँस चरखे में अब सादा खड़ा-चरखा, पेटी खड़ा चरखा, सादा आड़ा चरखा और पेटी आड़ा चरखा ऐसे सब तरह के नमूने बने। अब इनकी लोकप्रियता बढ़ने लगी। अब तक बाँस पका कर चरखे बनाने का प्रबन्ध सब जगह नहीं हो सका था। यह काम जल्दी ही हाथ में लेने का संघ ने सोचा था।

धुनाई-मोढिया इसके अनेक प्रयोग संघ के सरंजाम-कार्यालय तिरुपुर, हुबली, सेवाग्राम व बारडोली में होते रहे। इनमें तीन नमूने मुख्यत. काम लायक बने। १$\frac{3}{4}$" × १$\frac{3}{8}$" पले का छोटा धुनाई-मोढिया बना, जिसे चरखे में लगा कर कताई के साथ-साथ धुनाई होती है। अगर ३० इन्च चरखे पर वह लगाया जाय, तो गाँठ की रुई से उस पर एक घण्टे में २० अंक के ३४० तार तक धुनाई की गति आयी है। पर इस मोढिये में चरखा इधर-उधर कहीं भी लेकर कातने बैठने की सुविधा नहीं रहती। साथ ही धुनाई के साथ कातने में थोड़ी कला और कुछ थोड़ी शक्ति भी ज्यादा लगती है। फिर भी जहाँ कपास न हो और गाँठ की रुई हो, वहाँ स्वावलम्बी धुनाई करते हुए कातने में यह मोढिया अनुकूल होगा ऐसा लगा। इसका पोल भी अच्छा होता है और उसमें बॉल-बेयरिंग की जरूरत नहीं पड़ती। अगर यह मोढिया बाँस चरखे या

२४” चरखे पर लगाया जाय तो भी काम देता है, पर कुछ कम।

दूसरा मोढिया २”×३” के पखे का बना है और तीसरा ३”×३” पखे का। ये दोनो २४” या ३०” वाले खडे-चरखे पर चलाये जा सकते हैं और पैर से खास बडे चक्के की फ्रेम पर भी चलाये जा सकते हैं। इनमे काकर वेअरिग चल सकते हैं, मगर मोढिया कुछ भारी चलता है। बॉल-वेअरिंग से ये विशेष आसानी से चलते हैं। इन पर हाथ-चरखे पर १० से १२ तोले पोल और पैर-मोढिये पर २० तोले तक पोल प्रतिघण्टा तैयार होता है। पूनी बनाने का वक्त अलग लगता है।

कातनेवाले को पूनी का परावलम्बन न रहे, इस दृष्टि से धुनाई-मोढिया का सशोधन चला। पूनी का व्यापार चलाने लायक पैर की यन्त्र धुनकी कई वर्षों पहले बन चुकी थी और गुजरात और राजस्थान मे उसका ठीक-ठीक प्रचार भी हुआ था। मगर पूनी-स्वावलम्बन के लिए वह यन्त्र-धुनकी अनुकूल नही थी। अब जो मोढिये बने, वे पूनी-स्वावलम्बन के लिए काफी हद तक अनुकूल मालूम पडे। हालाँ कि इनका उपयोग भी, खास कर पैर-मोढिये का, पूनी के व्यापार के लिए हो सकता है, अगर उसी वृत्ति से काम किया जाय और स्वावलम्बन का खयाल न रखा जाय।

बारडोली सरजाम-कार्यालय मे ३”×३” के पखे के मोढिये बिक्री के लिए बनाये जाते थे।

विभिन्न चरखे: विवरण-काल मे जापान के कुछ चरखो की बात भी चरखा-सघ के सामने आयी और हिन्दुस्तान मे भी कुछ प्रयोगकारो ने नये चरखे बनाये। जापान के नमूनों मे पैर से चलनेवाला मगर एक ही धागा कातनेवाला चरखा विशेष तौर पर हमारे यहाँ और ग्रामोद्योग-समिति बम्बई के पूना के प्रयोग-विभाग मे आजमाया गया। हमारे सादे चरखे की अपेक्षा उस पर कातने की गति कम आयी। दूसरा जापान का १० धागे एक साथ कातनेवाला नमूना बारडोरी में आजमाया गया, उसमें सभी धागे मिल कर नीचे लिखा काम हुआ :

कताई के घण्टे	सूत कता तार	सूत का वजन	सूत अंक
२	२६१ (याने ३४८ गज)	३ $\frac{१}{१६}$ तोला	५.३२

इससे पाया जायगा कि ये दोनों चरखे हमारे काम के नहीं हैं। १० धागे कातनेवाला चरखा तो केवल "वेस्ट रुई" कातने के काम का ही है।

हमारे देश में बने चरखों में दक्षिण भारत के एक किसान नवयुवक भाई एकम्बरनाथन् के चरखे ने विशेष ध्यान आकृष्ट किया। उस पर आजमाइश की गयी। उसकी तफसील निम्नलिखित है :

एकम्बरनाथन् के ऑटोमेटिक चरखे का जाँच-विवरण

तिरुपुर में श्रीयुत एकम्बरनाथन् ने एक ऑटोमेटिक चरखा बनाया था। उसकी जाँच का विवरण इस प्रकार है :

हाथ-धुनकी से धुनी हुई कम्बोडिया रुई दी गयी। पतली पूनी बनाने के लिए कुल घण्टे ३, मिनट ९ में २७ तोले पूनियाँ बनीं। कताई में कुल घण्टे ५, मिनट ३८ में गुण्डी ७, तार १२० सूत काता गया। कुल समय में १३३ दफा सूत टूटा था। परेतने का समय अलग है।

कातने के यन्त्र में दो तकुवे लगे हुए थे। पतली की हुई पूनी में से सूत कतता था और साथ-साथ बॉबिन पर लपेटा जाता था। यन्त्र का हत्था एक मिनट में करीब ७५ से ८० दफा घुमाया जाता था।

हत्थे के एक फेरे में तकुवा १२० बार घूमता था। इसलिए तकुवे की गति प्रति मिनट ९००० से ९६०० थी।

हाथ की धुनी रुई होने से टूटन ज्यादा आयी और उससे कताई की गति पर भी असर हुआ।

सूत की जाँच

कुल लम्बाई ..	७ गुण्डी, ३०१ तार	कुल वजन	२६। तोले
औसत अङ्क	११ $\frac{३}{१६}$	औसत मजबूती	१११ फीसदी
औसत समानता	८३ प्रतिशत	छीजन	. $\frac{२}{४}$ तोले

यन्त्र के सामान्य दोष :

१. कातते वक्त रुई के अच्छे तन्तु भी हवा मे उड जाते थे। वह शायद हाई-ड्राफ्ट के कारण होता होगा।

२ रोलर पर बार-बार रुई चिपकती थी।

३ रिंग की रील अपने आप ऊंची होती थी और हाथ से नीचे उतारनी पडती थी। वह ऑटोमेटिक कर सकते हैं।

४. मालाएँ ढीली-तग होती ही थी।

५. परेतने की व्यवस्था साथ मे नहीं थी। वह होनी चाहिए।

६. सिंग के रोल और घिर्रियाँ बनायी गयी हैं। वह शायद जल्दी घिस जायँ, ऐसी सम्भावना है।

अम्बर-चरखे के उपर्युक्त जाँच-विवरण से पता चलेगा कि करीब १२ अक का १११ प्रतिशत कस का ४८७८१ याने करीब ७½ गुडी सूत ५ घण्टे ३८ मिनट मे कता है। सूत की समानता उतनी अच्छी नहीं थी। दो तकुवे के नमूने पर इतनी कताई हो सकी। मगर इस चरखे मे ४ तकुवे भी एक आदमी चला सकना सम्भव दिखा। यह नमूना अभी ऐसा नहीं बन सका था कि हर कातनेवाला इसे आसानी से चला सके। उस चरखे के लायक पूनी का खास आयोजन, मालाओ की फिसलन दूर करना आदि कुछ सुधार इस चरखे मे करने जरूरी थे। सघ के प्रयोग-विभाग मे उसकी कोशिश जारी रही।

श्रीयुत कालेजी का नाम अब चरखा-सशोधन के लिए मशहूर हो चुका था। पिछले ३० वर्षो से वे इस काम के पीछे लगे थे। उन्होने एक नमूना बनाया था, उसमे ४ तकुओ पर कताई होती है और पूनी भी उसी-मे बनती है। उनका कहना था कि यह मनुष्य-शक्ति से भी चल सकेगा। मिल के यान्त्रिक सिद्धान्तो पर यह चरखा बना है। सूत अच्छा कतता है और एक दिन में एक मनुष्य २० अङ्क की १८ गुठी सूत कात सकता है, ऐसा उनका कहना था। मगर देहातो के घरेलू-उद्योग की दृष्टि से यह चरखा

बहुत कीमती और यान्त्रिक गुत्थियों से भरा हुआ था। उसकी रचना भी ऐसी है कि उसे विद्युत्-शक्ति से चलाकर, मनुष्य-शक्ति से उस पर हो सकने-वाले उत्पादन के साथ स्पर्धा सहज हो सकेगी। यह सब देखते हुए ग्रामोद्योग या स्वावलंबन के लिए वह अभी अनुकूल नहीं दिखा। बड़ी-बड़ी मिलों के बदले विकेन्द्रित यन्त्र के तौर पर वह शायद एक हद तक काम दे सकता। लेकिन ये प्रयोग संघ की मर्यादा और दृष्टि के बाहर के थे। अतः इसकी जाँच में संघ नहीं पड़ा। मालूम हुआ था कि बम्बई-सरकार उस दिशा में कुछ जाँच करवा रही है। चरखे के संशोधन में दृष्टि क्या रहे, इस सम्बन्ध में चरखा-संघ के ट्रस्टी-मंडल ने अपनी ता० ७-१-१९५१ की सभा में एक प्रस्ताव पास किया है, जो परिशिष्ट १ में दिया गया है।

करघा करघों के प्रयोगों में पेटी करघे और बाँस-करघे के प्रयोग विशेष उपयोगी मालूम पड़े। पेटी-करघे की विशेषता यह है कि काम के बाद पेटी में करघा बन्द करके हिफाजत से कहीं भी रखा जा सकता है। इसलिए पाठशाला, प्रदर्शनी, शिविर आदि के लिए पेटी-करघा खास उपयोगी मालूम पड़ता है। इसमें ३२" अर्ज तक कपड़ा आसानी से बुना जा सकता है। बाँस करघे की विशेषता यह है कि वह दूसरे करघों से बहुत सस्ता पड़ता है और बनाने में आसान रहता है। इसलिए स्वावलम्बी बुनाई करनेवालों को बाँस-करघा विशेष काम का होगा।

प्रक्रियाएँ घटाना जैसे सरंजाम में सुधार करके काम की गति बढ़ाने के प्रयोग हुए, वैसे ही प्रयोग की एक दूसरी दिशा यह रही कि अभी कपास से कपड़ा बनाने में जितनी प्रक्रियाएँ करनी पड़ती हैं, उनमें कमी करने का सम्भव हो तो वह करके उत्पादन के वक्त की बचत की जाय। करीब पाँच या छह वर्ष पहले ऐसा एक प्रयोग किया गया था कि साफ-सुथरा कपास सलाई-पटरी पर कलापूर्ण रीति से ओट कर उस रुई से सीधी पूनियाँ बना ली जायँ। याने धुनने की प्रक्रिया को पूर्णरूप से उड़ा दिया जाय। इस तरह धुनाई उड़ा कर सीधे पूनी बना लेने की पद्धति को 'पुनाई' नाम दिया गया था। पुनाई की पद्धति में हमारी कल्पना से

कहीं ज्यादा सफलता मिली थी। मगर जहाँ कपास पैदा होता हो और वह भी लम्बे तन्तु का अच्छा कपास पैदा हो सके, वहीके लिए पुनाई की पद्धति काम की मालूम पडी। साथ ही अच्छे कपास की रुई से १६ या अधिक-से-अधिक २० अङ्क तक का सूत कातना हो, तभी वह पद्धति काम की दीखी। याने वह कल्पना प्रयोग मे सफल जरूर हुई, पर सीमित रूप मे।

अब जो प्रक्रिया घटाने का प्रयोग किया गया, वह सूत की गुडी बनाने और फिर खोलने की प्रक्रिया कम करने का था। करीब पिछले ८ मास से यह प्रयोग चला। उसमे खासा अच्छा अनुभव आया। वक्त की बचत के लाभ के अलावा इस प्रयोग मे कपडा बनने की तथा कातनेवाले की कमाई मे ठोस वृद्धि हो सकने की पूरी सम्भावना पायी गयी। इस तरीके मे १ वर्ग गज कपडा बनाने मे करीब १ घण्टे की बचत हाती है और सूत के लेन-देन की व्यवस्था भी बचती है। इसमे दिक्कत यह है कि सूत जहाँ कतता हो, वही उसीके साथ साथ बुनाई का काम चलना चाहिए। लेकिन मजदूरी के लिए कातनेवाले कारीगरो के लिए, खादी-विद्यालयो मे, पाठशालाओ मे और जहाँ चार-छह व्यक्ति सामूहिक रूप से वस्त्र स्वावलम्बन करें, उनके लिए यह पद्धति बहुत फायदे-मन्द मालूम पडती है। सेवाग्राम खादी-विद्यालय के छह शिक्षको ने मिल कर इस पद्धति मे प्रयोग किये। उसमे १२ गज १४ इच लम्बाई का ४५ इची ४२ पोत का एक थान बनाने मे कितना वक्त लगा, उसके ऑकडे नीचे दिये गये हैं :

प्रक्रिया	लागत समय घ० मि०	फी घण्टा गति
धुनाई	१३—०	१२। तोले
कताई	९४ ०	४२३ तार (बिना परेते)
ताना	८–१७	२ पुञ्जम
सॉव	२—८	७॥ ,,

प्रक्रिया	लागत समय घं० मि०	फी घण्टा गति
माडी लगाना	५—८	—
करघा तैयारी	१—०	—
बुनाई	१२—०	१ गज
कुल	१३५—३३	

चरखा-सघ की मौजूदा दरों के अनुसार इस थान को तैयार करने की कुल मजदूरी १७–२–६ होती है। यानी फी घण्टा दो आना मजदूरी पडी। करीब १५॥ वर्गगज कपडा बना। इस हिसाब से करीब ८ घण्टा ४० मिनट मे एक वर्ग गज कपडा बना। सूत का अक १६ था। रुई ओटी हुई तैयार ली गयी थी और धुनाई के लिए पैर से चलनेवाला धुनाई माढिया काम मे लाया गया था।

कमर करघा अगर बुनाई घर-घर आसानी से हो सके, तो वस्त्र-स्वावलम्बन के काम मे बहुत सुविधा हो सकती है। इस खयाल से जैसे विभिन्न जगहो पर पेटी-करघा, बॉस-करघा आदि के प्रयोग हुए, वैसे ही बिहार खादी समिति की ओर से कमर करघा का अनुभव लेने की कोशिश की गयी। कमर-चरखा आसाम प्रान्त का एक पुराना करघा है और आज भी वहाँ लडकियो के लिए कमर-करघे की बुनाई सीखने की रूढि प्रचलित है। उठते-बैठने घर कामो मे से जो कुछ वक्त मिले, उसमे कमर-करघे पर आसानी से बुनाई हो सकती है। यह करघा विशेष जगह भी नही रोकता और काम हो जाने पर खूँटी पर उसका सब सामान टॉग दिया जा सकता है। बिहार के प्रयोगो मे यह करघा भी वस्त्र स्वावलम्बन के लिए उपयुक्त मालूम पडा।

सरंजाम-सम्मेलन

सरजाम-सम्मेलन का सिलसिला चरखा सघ ने १९४७ मे शुरू किया था। वैसे दो सम्मेलन विवरण-काल से पहले हुए थे। विवरण-काल में

तीसरा सरजाम-सम्मेलन सितम्बर १९४९ में सेवापुरी मे और चौथा नवम्बर १९५० मे मथुरा ने किया गया। दोनों सम्मेलनो में देशभर से काफी प्रयोगकार व इस काम मे रुचि रखनेवाले प्रतिनिधि आये थे। इन सम्मेलनो मे खादी सरजाम-सुधार में मूल दृष्टि क्या हो, उस पर और बने हुए सरजाम के तान्त्रिक व व्यावहारिक पहलुओ पर तफसील से चर्चा हुई। सेवापुरी-सम्मेलन का पूरा विवरण छपा हुआ है।

सरंजाम उत्पत्ति-बिक्री

पिछले तीन-चार वर्षों से सरजाम की मॉग कुछ ज्यादा रही। कुछ प्रान्तो मे खास कर बम्बई, मद्रास, बिहार आदि मे पाठशालाओ मे कताई दाखिल करने का कार्यक्रम जारी किया जाने से चरखे, तकुवे, परेते, तकली, अटेरन आदि की बिक्री ज्यादा रही। इस कारण चरखा-सघ के सरजाम-कार्यालयो के अतिरिक्त खानगी सरजाम-कार्यालय भी चलने लगे। सरजाम-सम्मेलन के वक्त उनके प्रतिनिधि भी निमन्त्रित करने की नीति सघ ने रखी। इसके सिवा उन कार्यालयो की ओर से सघ को कोई खास जानकारी नहीं मिलती थी। अत. उनमे उत्पत्ति-बिक्री कितनी हुई, उसके ऑकडे प्राप्त नहीं हैं। चरखा-सघ के कार्यालयो मे नीचे लिखे अनुसार उत्पत्ति हुई :

	रुपयो मे (१९४९–५०)	रुपयो मे (१९५०–५१)
१. तिरुपुर	१,२८,०१६	१,०८,८८०
२. बारडोली	९५ ९६९	९०,४१५
३. हुबली	२४,२१९	४१,७९५
४. सेवाग्राम	६,७५५	९,०३७
५ मूल	५०,२०६	८,६३४
६. आदमपुर	६.३५८	७,७८३
७. कालीकट	२१,७६५	१९,४७२
कुल	३,३३,२८८	२,८६,०२६

इसके अलावा नालवाडी के सरजाम-कार्यालय की उत्पत्ति १९४९–५० में रुपये १०९,९०० और १९५०–५१ में रुपये ९६,३५६ हुई।

सरजाम लोहा-सामान संग्रह

खादी-सरजाम मे लगनेवाली चीजे बाजार मे फुटकर खरीदने मे कभी-कभी मिलना ही कठिन हो जाता था। मिलीं भी, तो महँगी और चाहिए, उसी किस्म व जाति की मिलने मे अक्सर दुश्वारी होती थी। अतः सघ ने अपने सरजाम-कार्यालयों के लिए व दूसरे सरजाम-कार्यालयों के लिए भी उस तरह का लोहा-सामान सग्रह रख कर आवश्यकतानुसार उसे मुहैया करने का सोचा। विवरण-काल मे करीब डेढ लाख रुपये का लोहा-सामान खरीद कर उसके लिए बम्बई मे गोडाउन बनाया गया। विवरण काल मे करीब ३४ हजार रुपयों का का लोहा-सामान विभिन्न सरजाम-कार्यालयों को मुहैया भी किया गया था। कुछ माल सघ ने भारत सरकार की इजाजत से सीधा विदेश मे आयात किया। वैसा माल यहाँ व्यापारी के जरिये लेने से अधिक महँगा पडता था। खास कर तकुआ व तकली के छड सघ की ओर से सीधे आयात किये गये और उसमें सरकार ने खास खादी-काम की सहायता की दृष्टि से आयात-कर का 'रिफड' दिया। इसलिए तकुवे और तकली बनाने के लिए छड काफी सस्ते पड सके, जिसकी वजह से सरजाम काफी सस्ता दिया जा सका। उसी तरह तकली की तैयार चकतियाँ, चिरीं, नाभी-जोड व नाभी-सेट, पूनी-सलाई व ओटनी सलाई के लिए ब्राइट तार, विभिन्न विजागरे व स्क्रू आदि सामान उस गोडाउन मे रखे गये, जो केवल उन्हीं सरजाम-कार्यालयों को बेचा जाता जो खादी का खादी का सरजाम बनाते हो और चरखा-सघ की सरजामसम्बन्धी नीति का पालन करते हो। अगर आम बिक्री के लिए रखा जाता, तो यह माल तुरन्त बिक सकता, पर सघ वैसे व्यापार मे पडना नहीं चाहता था। केवल खादी-काम के लिए सरजाम की सुविधा हो, वही सघ की मर्यादा

हो सकती थी। काफी चीजे विदेश से आयात करने के कारण दो-तीन साल पर्याप्त हो सके, इतना संग्रह मँगवाने की योजना सघ ने की और उसके अनुसार अब गोडाउन मे आवश्यक करीब सभी लोहा सामान का उतना सग्रहीत किया जा सका।

पोत-सुधार

केन्द्र-निरीक्षण मे देखने मे आया कि आजकल हमारे अच्छे-अच्छे उत्पत्ति-केन्द्रो मे भी माल का पोत बहुत बिगड गया है। विचार किया गया, अगर इस ओर ध्यान देकर जरूरी सुधार न किया गया तो न केवल व्यापारी खादी-काम मे, बल्कि वस्त्र स्वावलम्बन के काम मे भी खराब बुनाई के कारण बहुत हानि पहुँचेगी। इस बारे मे सोच कर ट्रस्टी-मण्डल ने खास प्रस्ताव पास किया कि पोत-सुधार के काम तथा माल की निकासी के लिए प्रधान कार्यालय के अन्तर्गत एक अलग विभाग खोला जाय।

उस प्रस्ताव के अनुसार प्रधान कार्यालय ने एक अलग विभाग चालू किया और उसकी जिम्मेवारी बम्बई-शाखा के एक कार्यकर्ता श्री परशुरामजी ठाकुर पर सौपी। विवरण-काल मे उन्होंने महाराष्ट्र, हैदराबाद आन्ध्र, तमिलनाड, राजस्थान आदि प्रान्तो का दौरा किया। केन्द्रो मे रह कर केवल हिदायते न देते हुए प्रत्यक्ष मे कैसा काम करना चाहिए यह बतलाया। परन्तु यह काम अब स्थगित हो गया। श्री परशुरामजी ठाकुर ने सघ छोड कर खेत पर परिश्रमी जीवन बिताने की शुरुआत की।

खादी-प्रतियोगिताएँ

वस्त्र स्वावलम्बन और खादी-उत्पादन मे समय की बचत के लिए चार दिशाओ मे प्रयत्न किया जा सकता है। घरेलू और सस्तेपन की मर्यादा कायम रखते हुए ज्यादा उत्पादन हो सके, ऐसे चरखो और दूसरे साधनो का आविष्कार, कपडा ज्यादा टिकाऊ बने ऐसी रुई की प्राप्ति और धुनने-कातने बुनने की प्रक्रियाओ को घटा देना और मौजूदा साधनो पर उत्पादन की अधिक-से-अधिक गति हासिल करना। चरखा-सघ इन

चारों दिशाओं में प्रगति करने के लिए प्रयत्नशील रहता आया। पाठक देखेंगे कि पहली तीनों दिशाओं में संघ की ओर से जो कोशिशें हुईं, उसका ब्यौरा इसी विवरण में क्रमशः सरंजाम-सुधार, कपास समस्या और खादी-प्रक्रियाएँ घटना इन तीनों विषयों की जानकारी में दिया गया है। अधिक-से अधिक गति लाने की दिशा में प्रगति की दृष्टि से विवरण-काल में संघ ने खादी-प्रक्रियाओं की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया। ओटाई, धुनाई, कताई और बुनाई इन सभी प्रक्रियाओं में विविध तरह की अखिल भारत स्वरूप की प्रतियोगिताएँ करवायी गयीं। पहली प्रतियोगिता नवम्बर १९४९ में सरंजाम-सम्मेलन के वक्त सेवापुरी में, दूसरी प्रतियोगिता अप्रैल १९५० में अनगुल (उत्कल) के सर्वोदय-सम्मेलन के मौके पर और तीसरी प्रतियोगिता अप्रैल १९५१ में हैदराबाद के सर्वोदय सम्मेलन के वक्त हुई। इसके लिए पहले स्थानीय प्रतियोगिताएँ की गयीं और उनमें से चुने हुए प्रतियोगितार्थियों को अखिल भारत प्रतियोगिता में प्रवेश दिया गया।

मुकर्रर किये हुए मान से अधिक गति बतलानेवाले हरएक प्रतियोगितार्थी को अपने स्थान से प्रतियोगिता के स्थान तक जाने आने का रेल किराया संघ की ओर से दिया गया। हर तरह की प्रतियोगिता में नियत मान से अधिक गति दिखानेवाले प्रथम तीन व्यक्तियों को रेलवे-खर्च के अलावा क्रमश. तीन श्रेणियों के इनाम भी संघ की ओर से बाँटे गये। तीनों वर्षों में मिलकर ७२ प्रतियोगितार्थियों ने भाग लिया, जिनमें नियत मान से अधिक गतितक पहुँचनेवालों की संख्या ४३ रही और पारितोषक पानेवालों की २८ रही। कुल मिलाकर रु० १२८५ के पारितोषक दिये गये। प्रतियोगिता में उच्चतम गति बतलानेवालों के कुछ आँकड़े नीचे की तालिका में दिये गये हैं •

खादी-प्रतियोगिताएँ

चरखा संयुक्त कताई (समय दो घंटे) परेतनेसहित गति

	गति	तार-अंक	मजबूती	समानता	प्रतियोगिता-स्थान
१ श्री वैरवल्गिम्, तमिलनाड	७९२	१५।	८७	८९	हैदराबाद, अप्रैल '५१

चरखा संयुक्त-कताई (समय दो घंटे) परेतनेसहित गति

	तार-अक	मजबूती	समानता		प्रतियोगिता-स्थान
२ श्री दानप्पन्नवर, कर्नाटक	७०३	१९॥	८३	८४	हैदराबाद, अप्रैल '५१
३ ,, लक्ष्मण सोलकी, कर्नाटक	६९८	१६॥	८६	८१	,, ,,
४ ,, अजाबराव मुळे, सेवाग्राम	६८५	१७	८७	८३	सेवापुरी, नवबर १९४९
५ ,, यादवराव चोधरी, महाराष्ट्र	६३६	१७	८३	८९	,, ,,

चरखा तेज-कताई (समय दो घटे) परेतनेसहित गति

१ श्री गोविंदराव वानखेडे, महाकोशल	१०२१	१७।	७३	८०	हैदराबाद, अप्रैल १९५२
२ ,, श्रीकान्त झा, बिहार	९९८	१५।	६२	८५	,, ,,
३ ,, सिद्रामप्पा, सेवाग्राम	९९७	१७	७८	८८	अनुगुल, अप्रैल १९५०
४ ,, लक्ष्मण सोलकी, कर्नाटक	९७३	१५।	८४	८८	हैदराबाद, अप्रैल १९५१
५ ,, अजाबराव मुळे, सेवाग्राम	९७२	१८॥	९४	८६	सेवापुरी, नवबर १९४९

तकली-कताई (समय एक घटा) बिना अटेरे गति

१ श्री शकर ताकसाडे, सेवाग्राम	२७२	१९॥	७९	८३	अनुगुल, अप्रैल १९५०
२ ,, गोकुलदास बारसागडे, रायपुर	२६६	१८	८८	७९	,, ,,

तकली-कताई (समय एक घंटा) बिना अटेरे गति

	तार-अंक	मजबूती	समानता	प्रतियोगिता-स्थान
३ श्री रणछोडभाई, गुजरात	२४१	२०	९० ८२	अनुगुल, अप्रैल १९५०

तकली तेज-कताई (समय एक घंटा) बिना अटेरे गति

१ श्री कोडिबा तुकाराम कुकडे, सेवाग्राम	२५७	१८	७८ ८७	हैदराबाद, अप्रैल १९५१

ओटाई सलाई पटरी पर (समय एक घंटा)

१ श्री सिद्रामप्पा, कर्नाटक	५०॥=	तोले	अनुगुल, अप्रैल १९५०
२ ,, दानप्पनवर, कर्नाटक	५०	,,	,, ,,
३ ,, हलकूप्रसाद, महाकोशल	४५॥≡	,,	,, ,,
४ ,, अरुणकुमार भट्ट, गुजरात	४४≡॥	,,	,, ,,
५ ,, चैतराम, महाकोशल	३६-॥	,,	,, ,,

धुनाई मध्यम-धुनकी पर (समय दो घंटे) पूनी बनानेसहित गति

१ श्री कचनगोडा पाटील, कर्नाटक	५४॥=	तोले	अनुगुल, अप्रैल १९५०
२ ,, बलराम, महाकोशल	४१॥-	,,	,, ,,

बुनाई : झटके-करघे पर (सूत खोलने से लेकर बुनने तक)

	पु. वार इंच	घ. मि.	पोत	प्रति० स्थान
१ श्री पांडुरग गोसावी, सेवाग्राम	१६×८×४५	१७–४७	४३	अनुगुल, अप्रैल १९५०
२ ,, लक्ष्मण सोलकी, कर्नाटक	,,	२२–१८	४४	,,
३ ,, अप्पना कडकोल, सेवाग्राम	,,	२३–५७	४२	,,

बुनाई : हाथ-करघे पर (सूत खोलने से लेकर बुनने तक)

१ श्री लक्ष्मण सोलकी, कर्नाटक	९॥×६×२७	१३–४८	४६	,,
२ ,, गणपतराव कोल्हे, सेवाग्राम	,,	१४–४५	४२	,,
३ ,, महादेवराव कोल्हे, सेवाग्राम	,,	२२–४	४२	,,

खादी-उत्पत्ति और बिक्री

अभीतक के विवरण से पाठक देखेंगे कि वर्षों तक खादी-उत्पत्ति और बिक्री मे चरखा सघ ने अपनी ज्यादा-से-ज्यादा शक्ति लगायी थी, उसके बदले मे अब वस्त्र स्वावलम्बन और खादी-विचार-प्रचार की ओर सघ अपनी शक्ति ज्यादा लगा रहा था। यहाँ तक कि कही-कहीं खादी-उत्पत्ति और बिक्री का काम घटा कर भी वह शक्ति विवरण-काल मे सघ ने उपर्युक्त दिशा मे लगाने की कोशिश की। इस कारण प्रत्यक्ष

चरखा-सघ की खादी-उत्पत्ति विवरण-काल मे घटी। लेकिन उत्पत्ति-बिक्री का काम प्रमाणित सस्थाएँ खडी करके उनके जरिये बढाने की ओर सघ ध्यान देता रहा। इसके लिए सघ ने अपना एक प्रमाणपत्र-विभाग १९४९ से ही खास तौर पर जारी किया। नीचे के अको से पाया जायगा कि चरखा-सघ की खुद की खादी-उत्पत्ति और बिक्री का काम घटा है, परन्तु प्रमाणित केन्द्रो का काम बढने से कुल मिलाकर उत्पत्ति-बिक्री बढी है.

		उत्पत्ति (रुपयो मे)	बिक्री (रुपयो मे)
१९४८ ४९			
	चरखा सघ	५४,९४,३७६	४६,४८,२४४
	प्रमाणित	४९,४८,५८९	४४,९३,१६८
१९४९-५०			
	चरखा सघ	५१,९१,५०१	५६,५७,९३९ (एजेण्टसहित)
	प्रमाणित	५९,४९,४३५	७०,९२,२२७
१९५०-५१			
	चरखा-सघ	४४,७८,९०४	५६,४८,६४६ (एजेण्टसहित)
	प्रमाणित	८२,६६,३९१	१,०९,५७,०३२

उपर्युक्त ऑकडो की तफसील आगे की ५ तालिकाओ मे दी गयी है·

खादी-उत्पत्ति के तुलनात्मक अंक (मूल्य में)

	प्रान्त	शाखा		प्रमाणित संस्थाएँ		शाखा तथा प्रमाणित	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	—	—	९,५००	† ३५,५३५	९,५००	३५,५३५
२	आंध्र	४,१२,८५२	२,२१,१८९	१,०३,९७०	९०,४८८	५,१६,८२२	३,११,६७७
३	उत्कल	—	—	—	× १,२३,०९०	—	१,२३,०९०
४	उत्तर प्रदेश	—	—	२१,६७,४४६	‡ ३१,०३,९३१	२१,६७,४४६	३१,०३,९३१
५	कर्नाटक	३,१०,१७२	२,४२,२१७	७२,२५६	३३,७३७	३,८२,४२८	२,७५,९५४
६	कश्मीर	२,९७,४४९	३,५०,२०५	—	१,२६,२१०	२,९७,४४९	४,७६,४१५
७	केरल	२,९५,७४३	२,२५,३९८	२८,८४८	२५,१७५	३,२४,५९१	२,५०,५७३
८	गुजरात	७,०५३	७,४८१	३,९९,८१६	६०,४७६	४,०६,८६९	६७,९५७
९	तमिलनाड	३०,०४,२५६	२८,७६,५५४	२,४३,००१	२,४७,५५१	३२,४७,२५७	३१,२४,१०५
१०	पंजाब	२,५२,५८६	२,७४,८७७	७,८२,८६४	१,९७,०००	१०,३५,४५०	४,७१,८७७
११	बिहार	—	—	१३,८४,२४५	२८,८३,९२६	१३,८४,२४५	२८,८३,९२६
१२	बंगाल	—	५,३७४	१९,५५६	१,५७,०५१	१९,५५६	१,६२,४२५
१३	बम्बई	२,९८०	१,२७९	—	—	२,९८०	१,२७९
१४	महाकोशल	१,७४३	२,८३८	५०,७०५	३७,४३८	५२,४४८	४०,२७६
१५	महाराष्ट्र	१,९६,७९५	७९,९८४	२२,०६६	४८,९८१	२,१८,८६१	१,२८,९६५
१६	राजस्थान	१,१२,३५३	१,०७,१८०	५,५४,९३०	७,६०,१६८	६,६७,२८३	८,६७,३४८
१७	सौराष्ट्र	—	—	—	१,२२,४४०	—	१,२२,४४०
१८	हैदराबाद	२,९७,५१९	८४,३२८	१,१०,२३२	२,१३,१९४	४,०७,७५१	२,९७,५२२
	कुल	५१,९१,५०१	४४,७८,९०४	५९,४९,४३५	८२,६६,३९१	१,११,४०,९३६	१,२७,४५,२९५

खादी-उत्पत्ति के तुलनात्मक अंक (वर्ग गजों में)

	प्रान्त	शाखा		प्रमाणित संस्थाएँ		शाखा तथा प्रमाणित	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	—	—	७,२४०	८,८०४	७,२४०	८,८०४
२	आंध्र	२,३४,५३३	१,२१,४८२	९८,९०४	५०,७९२	३,३३,४३७	१,७२,२७४
३	उत्कल	—	—	—	१,१६,१६२	—	१,१६,१६२
४	उत्तर प्रदेश	—	—	१३,६९,६९५	१७,७३,६२८	१३,६९,६९५	१७,७३,६२८
५	कर्नाटक	१,७०,२०१	१,३३,६३१	३५,९३०	१९,०६४	२,०६,१३१	१,५२,६९५
६	कश्मीर	५०,२५१	५०,२२१	—	२९,६७५	५०,२५१	७९,८९६
७	केरल	१,९९,९१८	१,४३,२३३	१९,०३२	२८,२५१	२,१८,९५०	१,७१,४८४
८	गुजरात	३,५१७	३,७४२	२,२२,८७०	३०,८६०	२,२६,३८७	३४,६०२
९	तमिलनाड	१८,८७,१०६	१६,७४,४९७	१,६२,११४	१,६५,०८०	२०,४९,२२०	१८,३९,५७७
१०	पंजाब	१,७४,६६९	१,७५,७९९	६,५९,२५४	१,४३,९७४	८,३३,९२३	३,१९,७७३
११	बिहार	—	—	९,२४,४८२	१७,०२,७१४	९,२४,४८२	१७,०२,७१४
१२	बंगाल	—	३,९०९	२४,८७९	३७,९३२	२४,८७९	४१,८४१
१३	बम्बई	१,७०२	१,०३१	—	—	१,७०२	१,०३१
१४	महाकोशल	१,३६१	१,६८१	३९,०४५	२४,२०३	४०,४०६	२५,८८४
१५	महाराष्ट्र	१,१८,४६०	४६,२५८	१२,४२३	२६,९५८	१,३०,८८३	७३,२१६
१६	राजस्थान	१,००,४१९	६५,५७२	३,६७,१८०	४,४६,७९५	४,६७,५९९	५,१२,३६७
१७	सौराष्ट्र	—		—	७७,५३३	—	७७,५३३
१८	हैदराबाद	२,०५,२३६	५२,३००	६८,९८६	१,३२,९२०	२,७४,२२२	१,८५,२२०
	कुल	३१,४७,३७३	२४,७३,३५६	४०,१२,०३४	४८,१५,३४५	७१,५९,४०७	७२,८८,७०१

खादी-उत्पत्ति के तुलनात्मक अंक (वजन पौण्डों में)

	प्रान्त	शाखा		प्रमाणित संस्थाएँ		शाखा तथा प्रमाणित	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	—	—	२,४१४	२,८२८	२,४१४	२,८२८
२	आंध्र	६६,६२२	३६,९७५	२२,९५६	१६,२२९	८९,५७८	५३,२०४
३	उत्कल	—	—	—	४२,५६०	—	४२,५६०
४	उत्तर प्रदेश	—	—	४,४७,९४०	५,६२,०८५	४,४७,९४०	५,६२,०८५
५	कर्नाटक	४९,६००	२५,२८२	१२,८९६	५,५०५	६२,४९६	३०,७८७
६	कश्मीर	२३,९३०	३०,९७४	—	११,२२६	२३,९३०	४२,२००
७	केरल	४९,९९०	३५,३८०	४,८०४	७,४११	५४,७९४	४२,७९१
८	गुजरात	६८०	७७९	६६,५०६	७,२४१	६७,१८६	८,०२०
९	तमिलनाड	४,६१,३६०	४,१८,७६५	४१,०९८	४२,०१२	५,०२,४५८	४,६०,७७७
१०	पंजाब	६२,२४०	६६,९८८	२,८८,५१४	७२,३२०	३,५०,७५४	१,३९,३०८
११	बिहार	—	—	२,२९,३८०	३,३४,२०६	२,२९,३८०	३,३४,२०६
१२	बंगाल	—	१,१६२	७,६४२	*५,१५१	७,६४२	६,३१३
१३	बम्बई	४८६	३३०	—	—	४८६	३३०
१४	महाकोशल	३५०	४८१	१२,३७२	४,०९४	१२,७२२	४,५७५
१५	महाराष्ट्र	३०,५२२	१३,७५२	३ ०८८	७,१०६	३३,६१०	२०,८५८
१६	राजस्थान	३४,७९०	२४,३३४	१,३१,९३८	१,६२,६७८	१,६६,७२८	१,८७,०१२
१७	सौराष्ट्र	—	—	—	१९,३१४	—	१९,३१४
१८	हैदराबाद	५९,८७०	१४,५३७	२६,८००	४३,६८२	८६,६७०	५८,२१९
	कुल	८,४०,४४०	६,६९,७३९	१२,९८,३४८	१३,४५,६४८	२१,३८,७८८	२०,१५,३८७

फुटकर खादी-बिक्री के तुलनात्मक अंक (मूल्य में)

	प्रान्त	शाखा		प्रमाणित संस्थाए		शाखा तथा प्रमाणित	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	—	—	४७,५५०	४३,३९९	४७,५५०	४३,३९९
२	आंध्र	३,५९,४३५	२,८१,७४९	२०,३०३	३८,९५६	३,७९,७३८	३,२०,७०५
३	उत्कल	—	—	—	१,७५,३५१	—	१,७५,३५१
४	उत्तर प्रदेश	—	—	३५,७६,५९१	३७,७७,७७५	३५,७६,५९१	३७,७७,७७५
५	कर्नाटक	३,३६,११८	१,४५,७५६	७३,९१९	५५,८०९	४,१०,११७	२,०१,५६५
६	कश्मीर	†२,८३,६३२	† ३५,९२५	—	—	२,८३,६३२	३५,९२५
७	केरल	३,१७,४२९	२,७९,८२८	३१,४०९	२३,४०४	३,४८,८३८	३,०३,२३२
८	गुजरात	२,८१,२००	३,११,११८	६,६८,४८१	९,०४,७०४	९,४९,६८१	१२,२४,७०२
९	तमिलनाड	२८,४९,६४२	३४,३०,३३६	१,२२,२३७	१,६३,१८३	२९,७१,८७९	३५,९३,५१९
१०	पंजाब	२,१०,९६९	१,९३,१५३	१,०७,३३०	५,१७,१४१	३,१८,२९९	७,१०,२९४
११	बिहार	—	—	१९,५३,१८७	२६,०३,१५४	१९,५३,१८७	२६,०३,१५४
१२	बंगाल	—	—	१,८५,८०४	५१,५६१	१,८५,८०४	५१,५६१
१३	बम्बई	७७,७७९	१,२२,१३५	१,३९,२३८	८,७९,३२४	२,१७,०१७	१०,०१,४५९
१४	महाकोशल	५,१२३	५,२४८	१,५६,९९१	१,२१,०४३	१,६२,११४	१,२६,२९१
१५	महाराष्ट्र	२,६६,८१४	१,४६,५४७	१,०७,५००	५,९२,५२१	३,७४,३१४	७,३९,०६८
१६	राजस्थान	२९,२६५	३२,०२२	५,९९,६७७	॥७,५४,५६२	६,२८,९४२	७,८६,५८४
१७	सौराष्ट्र	—	—	—	१,०४,३४२	—	१,०४,३४२
१८	हैदराबाद	१,०७,१५९	७५,८५२	२,०१०	४३,८०३	१,०९,१६९	१,१९,६५५
	कुल	५१,२४,६४५	५०,६८,५४९	७७,९२,२२७	१,०८,५०,०३२	१,२९,१६,८७२	१,५९,१८,५८१
	शाखाओं की एजण्ट द्वारा फुटकर बिक्री	५,३३,२९४	५,८०,०९७			५,३३,२९४	५,८०,०९७

† फुटकर तथा थोक बिक्री | सिर्फ फुटकर बिक्री ॥ इसमें आधी से ज्यादा थोक बिक्री है। कुल बिक्री : १,६४,९८,६७८

एजेण्टो द्वारा खादी-बिक्री के तुलनात्मक अक (मूल्य में)

चरखा-सघ शाखाएँ

	प्रान्त	१९४९-५०	१९५०-५१
१	असम	—	—
२	आन्ध्र	१४,६८७	२२,७३६
३	उत्कल	—	—
४	उत्तर प्रदेश	—	—
५	कर्नाटक	१,३५,९६५	१,५६,१०१
६	कश्मीर	—	—
७	केरल	५,३७८	—
८	गुजरात	२१,७४७	३६,३२५
९	तमिलनाड	१,६०,७२३	१,७६,१३१
१०	पजाब	७७,२१२	९१,१७३
११	बिहार	—	—
१२	वगाल	—	—
१३	बम्बई	३,५५७	२,१७५
१४	महाकोशल	१,७७८	४०२
१५	महाराष्ट्र	६३,००३	३९,६०२
१६	राजस्थान	६,९१७	१७,४७८
१७	सौराष्ट्र	—	—
१८	हैदराबाद	४२,३२९	३७,९७४
	कुल	५,३३,२९४	५,८०,०९७

इन तालिकाओं को देखने पर पता चलेगा कि अन्तिम वर्ष में बिहार प्रान्त में उत्पत्ति विशेष रूप से बढ़ी है। इसका कारण यह है कि वहाँ अकाल के निमित्त कताई के दाम करीब दुगुने देकर सरकार की ओर से बिहार खादी समिति की मार्फत काम करवाया गया।

पंजाब प्रान्त की प्रमाणित उत्पत्ति-बिक्री विवरण-काल के दूसरे वर्ष में बहुत कम हुई। उसका कारण यह है कि पंजाब सरकार ने वह काम बहुत कम कर दिया था।

यहाँ एक उल्लेख कर देना उचित होगा कि मद्रास सरकार के खादी-विभाग का और चरखा-संघ का सम्बन्ध विवरण काल में टूट गया। उनके १९५०-५१ के काम के आँकडे उपर्युक्त आँकडों में शामिल नहीं हैं। अन्दाजन १५ लाख की खादी-उत्पत्ति उस विभाग द्वारा हुई होगी।

यह पाया जायगा कि १९५०-५१ में उत्पत्ति के मुकाबले में बिक्री बहुत ज्यादा हुई है। पिछले दो वर्षों से संघ की कई शाखाओं तथा प्रमाणितों के पास माल संग्रहीत रहा करता था, वह १९५०-५१ में बहुत कुछ बिक गया। मिल का कपड़ा मिलने की कठिनाई के कारण खादी ज्यादा बिकी। यहाँ तक कि कई जगह खादी की माँग पूरी न हो सकी, इस कारण कुछ प्रमाणित संस्थाएँ अपनी उत्पत्ति बढ़ाती चलीं। मगर फिर यह हालत दीखने लगी कि खादी का संग्रह बढ़ रहा है। खादी के पिछले पचीस वर्ष के इतिहास में कई बार ऐसे प्रसंग आये हैं कि थोड़े अर्से के लिए एकाएक बिक्री बढ़ कर फिर घट जाती है। इससे खादी-काम को बड़ा धक्का पहुँचा है। उत्पादन में लगे कारीगरों को इस तरह छोड़ने से उत्पादन की शक्ति ही मर जाती है। खादी की उत्पत्ति और बिक्री के लिए सुरक्षित बाजार की बहुत जरूरत है। स्वराज्य मिलने के बाद भी अब तक यह नहीं हो पाया है। अगर प्रतियोगिता के बाजार में ही खादी को जिलाना हो, तो बेहतर होगा कि खादी की उत्पत्ति बिक्री का काम ही देश में बन्द कर दिया जाय और केवल वस्त्र स्वावलम्बन का ही

काम किया जाय। लेकिन अगर खादी-उत्पत्ति देश मे जारी रखनी है, तो उसे पूरा सरक्षण सरकार की ओर से मिलना चाहिए। वह नहीं मिलता, तब तक खादी की नैमित्तिक मॉग के पीछे खादी-काम का टॉचा खडा करना गल्त होगा। वैसी दशा मे समझ-बूझ कर और नित्य-खादी का आग्रह रखनेवाले ग्राहको के ही आधार पर खादी-काम चलाना चाहिए, भले ही वह मर्यादित हो।

ऊनी तथा रेशमी खादी

यद्यपि सूती खादी का काम चरखा-संघ का मुख्य लक्ष्य रहा है, फिर भी खादी-काम के शुरू मे खादीधारियो की ऊनी तथा रेशमी खादी की आवश्यकता यथासम्भव पूरी करने की नीति सघ की रही है। कश्मीर-शाखा ऊनी खादी के लिए ही मुख्यत. चलती रही। राजस्थान तथा सिन्ध मे थोड़ा ऊनी काम होता रहा, लेकिन वह १९४२ के बाद से बन्द सा रहा। विवरण-काल में रेशमी खादी बिहार, बगाल और असम मे प्रमाणितो द्वारा बनती रही।

विवरण-काल मे कश्मीर-शाखा में १९४९-५० मे करीब तीन लाख रुपये और ५०-५१ मे ३॥ लाख रुपये की ऊनी खादी बनी। १९५१-५२ का जाड़े का मौसम हलका होने के कारण ऊनी खादी की खपत बहुत कम रही। पश्मीना का ऊनी माल धनी लोगो के लिए ही होता है। लेकिन अब उसके दाम इतने बढ गये कि धनी लोग भी उसे अधिक नहीं खरीदते। बम्बई, कलकत्ता तथा दिल्ली में उसकी बिक्री का सगठन होता, तो शायद उसे खपाने मे कुछ आसानी हो सकती। इन स्थानो मे संघ का प्रत्यक्ष बिक्री का सगठन न होने के कारण इस वर्ष पश्मीना की खपत भी बहुत कम रही। परन्तु आगामी साल मे वैसा संगठन करने का सोचा था। आशा थी कि उससे पश्मीने की खपत बढ़ायी जा सकेगी। अभी तो कश्मीर के ऊनी माल की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे सघ ने यह नीति रखी कि मौजूदा परिस्थिति मे

यथासम्भव अधिक-से-अधिक उत्पत्ति करके वहाँ की गरीब जनता को मदद पहुँचायी जाय।

ऊनी पट्टू केवल हाथ से ही बनते हैं। उसमें मिल के सूत का मिश्रण होने की सम्भावना न होने से संघ ने ऊनी पट्टू पर से प्रमाण पत्र हटा लिया। इसलिए प्रमाणित अपने लिए खुले बाजार से पट्टू खरीदने लगे और उस परिणाम में संघ की ऊनी पट्टू की खपत भी घट गयी।

रेशमी खादी सीधे बाजार से खरीद करने की पद्धति रही है। वह रजिस्टर्ड बुनकरों से ही खरीद की जाय, ऐसा संघ ने विवरण काल में में प्रस्ताव किया। बिहार में भागलपुर, बंगाल में मालदा तथा असम में राहा में रेशमी खादी की उत्पत्ति पूर्ववत् होती रही। इस वर्ष कश्मीर-सरकार ने अपना मटका रेशम का एक अलग विभाग खोल कर उसके लिए संघ का प्रमाण पत्र लिया। अन्दर का कीडा उड जाने से टूटे हुए रेशम के कोओं को चरखे पर कात कर जो रेशम बनता है, उसे 'मटका रेशम' कहते हैं। मटका रेशम में कातने की ही क्रिया होती है, रीलिंग की नहीं। इन सब केन्द्रों में दो साल में जो रेशम-उत्पत्ति हुई, उसमें अंटी, मटका, टसर आदि सब तरह के रेशम का समावेश है।

सूत-शर्त

१९४१–४२ में कहीं-कहीं खादी-काम में सूत-चलन और सूत-बदल के प्रयोग हुए। गांधीजी भी उन प्रयोगों में दिलचस्पी लेकर उस दिशा में कुछ ज्यादा सोचने लगे और खादी-कार्यकर्ताओं के सामने अपने खुद के कुछ सुझाव भी रखने लगे। गाँव की टकसाल के रूप में, गाँव की बैंक के रूप में, किसी भी असहाय व्यक्ति के सहारे के रूप में सूत-बदल, सूत-चलन आदि की सम्भावनाएँ जाँचने और सोचने का काम शुरू हुआ। सेवाग्राम में एक सूत-चलन-दूकान चलायी गयी। चरखा-संघ की महाराष्ट्र-शाखा ने सूत के बदले खादी देने का एक खास तरीका चलाया।

उसके लिए सूत-चलन-पत्रक और उसका एक शास्त्र बनाया। लेकिन १९४२ के देशव्यापी आदोलन मे निरीक्षण-परीक्षण की दृष्टि से यह काम बहुत आगे न बढ सका। १९४४ मे खादी-काम मे बारे मे गाधीजी ने एक नया दृष्टिकोण देश के सामने रखा। खादी से राहत देने की अपेक्षा राहत की आवश्यकता न रहे, ऐसे खादी-कार्यक्रम के स्वरूप पर वे सब का ध्यान आकृष्ट करने लगे। उन्ही दिनो महाराष्ट्र-शाखा का अतिम सूत-चलन-पत्रक उनके सामने रखा गया। पता नही, उस बारे मे सोच कर या उन्होने पहले ही स्वतत्र ही सोच रखा था उसके अनुसार, उस पत्रक पर से खादी-काम मे यह शर्त उन्होने लागू करवायी। मगर कइयो को वह नहीं जची। श्री गाधी आश्रम, मेरठ जैसी पुरानी और बडी सस्था ने इसका विरोध करके सूत शर्त के कारण चरखा-सघ का प्रमाणपत्र तक छोड दिया। काग्रेसजनो मे भी इस शर्त पर बहुत नाराजी रही। यह सब देखते हुए और खास करके काग्रेस ने जब अपनी पचायत के उम्मीदवारो के लिए लाजिमी तोर पर खादी ही पहनने का प्रस्ताव किया, तब चरखा-सघ ने १९४८ मे यह नीति अख्तियार की कि प्रमाणित सस्थाओ के लिए यह शर्त लाजिमी न रखी जाय, मगर चरखा-सघ अपना काम सूत-शर्त के आधार पर ही करे। इस सबध का प्रस्ताव परिशिष्ट १ मे दिया गया है। विवरण-काल मे करीबन सभी प्रमाणित सस्थाओ ने सूत-शर्त छोड दी। चरखा-सघ के केन्द्रो मे वह जारी रखी गयी।

जब से प्रमाणित केन्द्रो द्वारा सूत-शर्त छोड दी गयी, तब से वह चरखा-सघ मे भी जारी रखी जाय या बन्द कर दी जाय ? ऐसा सवाल उठता रहा। चरखा-सघ ने १९४८ मे यह भी एक प्रस्ताव किया था कि व्यापारी खादी काम प्रमाणित सस्थाओ की मार्फत चला कर सघ अपनी सारी शक्ति वस्त्र-स्वावलबन के काम मे लगाये। इस दृष्टि से सूत-शर्त एक नियत्रण के रूप मे चरखा सघ के काम मे बदल के लिए अच्छी थी। सूत-शर्त के निमित्त एक ओर से कुछ स्वावलबी कातनेवाले बढ रहे थे और दूसरी ओर खादी-बिक्री पर एक ऐसी मर्यादा आ गयी थी कि केवल व्यापारिक दृष्टि से

वह न बढ़े। वस्त्र-स्वावलम्बी कताई के पूर्तिरूप ही बिक्री बढ़े। यह एक तात्त्विक कारण था, जिससे चरखा-संघ ने सूत-शर्त जारी रखना ही ठीक समझा। लेकिन दरअसल सूत-शर्त में इससे गहरा अर्थ था। उसका यहाँ थोड़े विस्तार से विचार कर लेना सामयिक होगा।

अब तक के विवरण में एक से अधिक बार यह बताया गया है कि संघ का उद्देश्य चरखे से केवल कपड़ा पैदा करना नहीं है, मगर उसके जरिये समाज-हित के लिए और समाज को आगे बढ़ाने के लिए कुछ सिद्धान्तों की और नये मूल्यों की प्रतिष्ठा करना है। अहिंसक समाज-रचना के या शोषणरहित समाज-संगठन के लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्र का हर-एक नागरिक, चाहे वह राष्ट्रपति क्यों न हो, समझ-बूझ कर हरएक दिन कुछ न-कुछ उत्पादक परिश्रम अवश्य करे। इसके लिए कताई का परिश्रम सबसे ज्यादा सार्वत्रिक होने लायक और राष्ट्र के लिए बहुत उपयोगी पाया गया है। सूत शर्त के जरिये देश में इस मूल्य की प्रतिष्ठा बढ़ायी जा सकती है कि जिस किसीको कपड़ा पहनना है, उसे सूत कातना चाहिए और हरएक को पहनना है, इसलिए हरएक को कातना चाहिए। लेकिन सिद्धान्त के रूप में इस विचार का प्रचार संघ अब तक बहुत नहीं कर सका, यह कबूल करना होगा। चरखा संघ का काम अब तक तात्त्विक रूप से ज्यादा चलता रहा। इसलिए स्वाभाविकता ही हमारे सामने सुझाव आते रहे कि या तो सूत-शर्त के जरिये सही वैचारिक प्रचार हो या फिर उसे बंद कर दिया जाय। मगर संघ का लक्ष्य तो विशिष्ट विचारधारा के आधार पर खादी-काम चलाने का है। इसलिए सूत-शर्त को संघ ने बहुत जरूरी समझा।

तत्र-निर्बंध और नयी मूल्य-प्रतिष्ठा के उपरान्त सूत शर्त के बारे में एक व्यावहारिक अनुभव भी विवरण-काल में आया है। खादी के इतिहास में कभी उत्पादन ज्यादा तो कभी बिक्री ज्यादा, यह अनुभव लगातार आता रहा है। अगर आज की बाजार-पद्धति से खादी का काम होता रहा, तो आगे भी यही अनुभव आते रहना लाजिमी है, क्योंकि

उस हालत मे खादी की बिक्री कपडे के बाजार के रुख और हालत पर निर्भर रहेगी। अगर बाजार मे मिल-कपडा कम, तो खादी की बिक्री ज्यादा। अगर वहाँ कपडे की इफरात, तो खादी की माँग कम। पिछले दो वर्षो मे कपडे की तगी बढती गयी, वैसे खादी की खपत बढती चली और इधर छह मास बडी तेजी के साथ वह बराबर घटती जा रही थी। इसके लिए यह जरूरी था कि खादी को बाजार पर निर्भर न रहना पडे, बल्कि उसकी खुद खपत होती रहे। जिस घर मे, जिस गाँव मे, जिस क्षेत्र मे वह तैयार होती हो, उसी घर, गाँव या क्षेत्र मे वह खपत जाय और जो खादी बरतते हैं, वे उसे बना लेते जायँ तो बाजार के आसरे खादी को नहीं रहना पड़ेगा। इस दृष्टि से चरखा-सघ ने देखा कि कातनेवाले कारीगरो को भी खादी पहनने का आग्रह करना और खादी पहननेवालो को खुद कातने का आग्रह करना व्यावहारिक दृष्टि से भी खादी को बाह्य काम मे बहुत सहायक हुआ। जब जब खादी का सग्रह बढा, तब-तब कारीगरो का खादी का इस्तेमाल बहुत मददगार हुआ है। अधिक सोचने से पता चलेगा कि खादी को आत्मनिर्भर बनाने और उत्पत्ति-बिक्री का सतुलन करने के लिए दोनो नियम बहुत महत्त्व के हैं।

यह बात सही है कि आज की कृत्रिम, केन्द्रित और नियंत्रण आर्थिक परिस्थिति मे ऊपर के दोनो नियम हमे काफी हद तक कृत्रिम रूप से चलाने पडते हैं। कृत्रिम रूप के कारण उनमे बुराइयाँ भी पैदा होती हैं। ग्राहको द्वारा सूत-शर्त के लिए खरीदा सूत लाना और कारीगरो द्वारा कताई मजदूरी के हिस्से मे से खुद पहनने के लिए मिली खादी बाजार मे बेच देना, ऐसे किस्से कहीं-कहीं होते हैं। मगर इसका इलाज भी क्षेत्र-स्वावलंबन मे है, यानी छोटे दायरे मे जनसम्पर्क के साथ काम करने मे है।

इस तरह सूत-शर्त मे सैद्धातिक, व्यावहारिक और तत्र-निर्बंध की सभी दृष्टियाँ अतर्भूत हुई हैं। मगर विरोधी और प्रतिकूल वायुमडल मे अब तक सघ उसे उतना कारगार नहीं बन सका। जिस तरह खादी-काम

के लिए सब को जूझना पड़ा, उसी तरह इन नियमों के बारे में भी बहुत शक्ति लगानी पड़ी।

चरखा-संघ की प्रमाणित संस्थाएँ

चरखा-संघ ने जब से अपनी शक्ति वस्त्र-स्वावलंबन के काम में ज्यादा से ज्यादा लगाने का ठहराया, तब से उत्पत्ति और बिक्री का खादी-काम प्रमाणित संस्थाएँ खड़ी करके चलाने का सोचा, यह बात ऊपर बतलायी जा चुकी है। इन वर्षों में प्रमाणित संस्थाएँ और उनके काम के आँकड़े नीचे लिखे अनुसार रहे :

	संख्या	उत्पत्ति	बिक्री	पूँजी
१९४९-५०	८८	५९,४९,४३५	७७,९२,२२७	अप्राप्त
१९५०-५१	१२८	८२,६६,३९१	१,०९,५७,०३२	१४० लाख
१९५१-५२	१३८	–	–	–

इससे मालूम होगा कि इस दिशा में खादी-काम की कुछ प्रगति हो सकी है और इसके जरिये संघ से बाहर को कितनी पूँजी व कितने कार्यकर्ता तथा कितना नया क्षेत्र खादी के काम में लगा है। मगर सारे देश के खादी-काम की दृष्टि से ये आँकड़े भी बहुत संतोषजनक तो नहीं कहे जा सकते। उसके कुछ कारण सोचने व समझने लायक हैं।

खादी-बिक्री की अस्थिरता प्रमाणित संस्थाओं के काम में सबसे बड़ी रुकावट है। खादी-बिक्री के बारे में इसी विवरण में इस अनिश्चितता से होनेवाली रुकावट के बारे में लिखा गया है।

दूसरी रुकावट मत-विभिन्नता व स्वार्थ की है। चरखा-संघ ने अपना काम विशेष सिद्धान्तों पर खड़ा किया था। इसमें जीवन-वेतन, कारीगरों में खादी-परिधान का आग्रह, खादी-काम में व्यक्तिगत स्वार्थ न रहना आदि की नीति चरखा-संघ ने खादी की मूलदृष्टि को सामने रख कर लम्बे अरसे से अपनायी थी। कुछ लोग स्वार्थवश संघ की इस नीति का गैर-फायदा उठा कर अप्रमाणित खादी-काम में लगे। कुछ ऐसा

गैर-लाभ नही उठाना चाहते थे, मगर व्यक्तिगत मालिकी छोड कर ट्र या सहकारी सस्था के रूप मे यह काम सगठित करने मे दिक्कत पाते।

आजकल के मत-भिन्नता के युग मे कई जगह केवल चरखा सघ का प्रमाणपत्र टालकर स्वतत्र काम करने के प्रयत्न होते रहे। कोई प्रान्तीय सरकार खुशी से चरखा-सघ के प्रमाणपत्र को अपनाती, तो कोई संघ के साथ का सम्बन्ध तोड कर स्वतन्त्र काम करने लगती।

यह सब होते हुए सघ का प्रमाणित काम धीरे-धीरे बढ ही रहा था। चरखा-सघ अपनी ओर से इसमे जो कुछ मदद दे सकता था, वह देता आया। इस विवरण मे आगे यह दिया गया है कि पूजी की समस्या मे सहायता पहुँचाने के लिए प्रमाणितो के लिए सघ ने दो-तीन वर्षो से कपास व रुई के सग्रह की क्या योजना बनायी थी। उसी तरह पूजी के निमित्त प्रमाणितो को सहायता पहुँचे, ऐसी दूसरी एक योजना सघ ने केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारो की सेवा मे भी भेजी। यह योजना परिशिष्ट ४ मे दी गयी है।

यहाँ पर इस बात का उल्लेख करने मे भी बडी खुशी होती है कि कुछ पुरानी खादी सस्थाओ ने भी सघ का प्रमाण-पत्र छोड दिया था, वह फिर से अपना लिया। इनमे खादी-प्रतिष्ठान, सोदपुर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। सरकारो मे कश्मीर, पजाब, बिहार, बगाल, असम तथा उत्कल की राज्य-सरकारो ने अपने खादी-काम के लिए सघ से प्रमाण-पत्र लिये।

अब चरखा-सघ ने अपने प्रमाणित विभाग का बढता हुआ काम देख कर एक प्रमाणपत्र-सलाहकार समिति भी नियुक्त की। समिति के सदस्य नीचे लिखे अनुसार थे: सर्वश्री १ विट्ठलदास जेराजानी, २. व्रजकिशोर साहू, ३. भीमसेन वेदालकार, ४. कालिकाप्रसाद शर्मा ५. द्वारकानाथ लेले (सचालक)।

लेकिन, सघ के सब प्रयत्नो के बावजूद प्रमाणित खादी-काम भी तभी बढ सकता था, जब शक्तिशाली व्यक्ति यह काम राष्ट्र के लिए एक

महत्त्व का काम समझ कर अपनी पूरी शक्ति इस काम में लगावें। कई जगह प्रमाणित खादी-काम भी संघ ही अपने प्रमुख व्यक्तियों की शक्ति से चलाता रहे, ऐसी इच्छा प्रकट की जाती थी। संघ के कार्यकर्ता तो अपने से जितना कुछ बन सका उतना करते ही रहे। पर बड़े पैमाने में खादी-काम बढ़ाना था तो नयी पूँजी, नये क्षेत्र नये कार्यकर्ता और नये संचालक गणों को इस काम में आगे आकर संघ की पूँजी, कार्यकर्ता व संचालकों को वस्त्र-स्वावलंबन, खादी-विचार व शिक्षा के प्रचार के लिए मुक्त करना था।

इन तीन वर्षों में संघ ने अपनी हैदराबाद-शाखा का करीब सारा खादी-उत्पत्ति का काम स्थानीय प्रमाणित समिति के सुपुर्द कर दिया। इसी तरह राजस्थान-शाखा में भी मध्यभारत खादी संघ व राजस्थान खादी-संघ के जिम्मे संघ के बहुत सारे भंडार व उत्पत्ति-केन्द्र दे दिये गये हैं। आंध्र का खादी-काम भी बहुत कुछ प्रमाणित संस्थाओं को सौंपा गया। आंध्र में छोटी-छोटी प्रमाणित संस्थाएँ, जिनकी संख्या दस है संघ का काम सँभालने के लिए संगठित हुईं, यह उल्लेखनीय बात है।

इस सिलसिले में एक बात बड़ी सोचने लायक है। आज के जमाने में कोई भी आयोजन बड़े पैमाने में केन्द्रित व्यवस्था पर खड़ा किया जाय, तो वह ज्यादा कार्यक्षम होता दीखता है, बनिस्पत विकेन्द्रित व छोटी इकाई या छोटे दायरों के काम के। इसलिए खादी-काम में भी बड़ी इकाई में बड़ी संस्था बनाने की ओर लोगों का झुकाव स्वाभाविक है और कोशिशें भी ऐसी बड़ी संस्था खड़ी करने की होती हैं। उनमें यह एक बड़ा लाभ भी है कि वैसी बड़ी संस्था में आज के विरोधी वायु-मंडल और अनेक नयी-नयी कठिनाइयों में खड़े रहने व जिन्दा रहने की ताकत ज्यादा रहती है। लेकिन उससे छोटों को स्वतंत्र शक्ति पर जिन्दा रह सकने की जो ताकत नयी समाज-रचना में पैदा करने का खादी का लक्ष्य है, उससे कुछ दूर ही रहना पड़ता है। उस लक्ष्य की दृष्टि से तो खादी-काम की जितनी छोटी और स्वतंत्र इकाइयाँ खड़ी हों,

सके, उतनी खडी करना वाछनीय है। आखिर तो वैसी रचना का ही विरोधी प्रहारो के सामने अधिक-से अधिक टिकना सम्भव है। शुरू मे उसकी नीव डालना कठिन है, मगर खादी-कार्य का लक्ष्य ही वह है। तब हमे चाहिए कि प्रमाणित खादी-काम भी सभवतः छोटी-छोटी इकाइयो मे और स्थानीय उत्पत्ति और बिक्री का मेल बैठा कर खडा हो।

वडी संस्था की तरह खादी के एकागी काम की सस्था भी हम आज खडी कर रहे है, पर परिस्थिति उसमे भी हमे सावधान कर रही है। एक जगह केवल उत्पत्ति और सैकडो मील पर केवल बिक्री का प्रमाणित ढॉचा खडा है। मगर जरा-सी उल्टी लहर उस ढॉचे को क्षणभर मे हिला देती है। आज खादी-बिक्री कम होते ही कई जगह के विक्रेताओ ने खादी लेने से इन्कार करने के कारण उत्पत्ति करनेवाली सस्था को बडी टेस पहुँच रही है। अगर खादी के समग्र विचार की बुनियाद और क्षेत्र-स्वावलम्बन की विचारधारा पर खादी की उत्पत्ति और बिक्री का प्रमाणित काम भी खडा हो, तो वह ज्यादा ठोस और लाभदायी होगा।

विवरण-काल मे प्रमाणित सस्थाओ को सुविधा देने की दृष्टि से प्रमाणपत्र के नियमो मे कुछ परिवर्तन किये गये।

पहले प्रमाणपत्र के नियम के अनुसार सघ द्वारा मजूर किया हुआ व्यवस्था-खर्च लेने के बाद जो बचत रहती थी, वह प्रमाणित सस्था को सारी कामगार सेवा-कोष मे जमा करनी पडती थी। प्रमाणितो की बचत का उपयोग अपने मन के अनुसार करने की गुजाइश कर देने की दृष्टि से सघ ने यह सुविधा कर दी कि सस्था को सघ द्वारा मजूर व्यवस्था-खर्च की मर्यादा मे जो बचत होगी, वह सस्था की रहेगी और सस्था उसका उपयोग अपने मन के अनुसार कर सकेगी।

दूसरी सुविधा प्रमाणितो को पूँजी बढाने की दृष्टि से की गयी। अभी प्रमाणित सस्थाएँ खादी-काम करती थीं, उसमे उनके खर्च के लिए व्यवस्था-खर्च इतना ही मजूर किया जाता था कि जितने मे उनको हानि या लाभ न हो। इस मुकर्रर की हुई मर्यादा मे अगर किफायत से बचत

हो जाय, तो वह उस संस्था को रह जाती और पूँजी बढ़ाने में उपयोगी हो सकती। पर उस मर्यादा से अधिक खर्च हो, तो उसकी हानि उस संस्था पर पड़ती थी। यह व्यवस्था तो ऐसी ही चलती रही। पर इसके उपरान्त यह सोचा गया कि संस्था की फुटकर बिक्री पर रुपये पीछे आधा आना अधिक लेने की इजाजत दी जाय। अगर संस्था अपना काम किफायत से करेगी, तो इस आध आने का उपयोग उसकी पूँजी बढ़ाने में होगा। इस रकम का बोझ ग्राहकों पर पड़ेगा, क्योंकि माल उतना महँगा बेचना पड़ेगा। इस सुविधा का लाभ ४-६ प्रमाणित संस्थाओं ने विवरण काल में उठाया।

श्री गांधी-आश्रम, मेरठ तथा बिहार खादी-समिति जैसी लाखों रुपयों का खादी-काम करनेवाली बड़ी संस्थाओं को प्रमाणपत्र की फीस नियम के अनुसार बहुत ज्यादा देनी पड़ती थी। उन्होंने फीस की कुछ अंतिम मर्यादा बाँधने की माँग की थी। उस पर विचार होकर यह तय किया गया कि प्रमाणपत्र-फीस की दर पहले जैसी ही याने फुटकर बिक्री पर १ रु प्रति हजार तथा थोक बिक्री पर २ रु प्रति हजार रहे, लेकिन जिन संस्थाओं का उत्पादन सालाना पांच लाख रुपयों से अधिक हो, उनसे २५० रु. सालाना से ज्यादा फीस न ली जाय। मगर इस फीस के उपरांत जब चरखा-संघ का कोई निरीक्षक भेजा जाय, तब उसका वेतन और मार्गव्यय प्रमाणित संस्था उठाये।

जो सहकारी संस्थाएँ मिल सूत के वितरण का काम करती हैं, उन्होंने अगर अपनी एक अलग उप-समिति बना कर उसके द्वारा खादी-काम करना चाहा, तो उन्हें प्रमाण-पत्र दिया जाना चाहिए या नहीं, इस संबंध में विवरण-काल में सवाल खड़ा हुआ था। उस संबंध में विचार होकर ऐसी संस्था को प्रमाणपत्र नहीं दिया जा सकेगा, ऐसा संघ ने तय किया। खादी काम के लिए स्वतंत्र समिति ही बननी चाहिए।

विवरण काल में दो तीन प्रमाणित संस्थाओं में अशुद्ध खादी के काम की शिकायतें हुईं, जिनकी संघ की ओर से जाँच की गयी।

एक संस्था का प्रमाणपत्र रद्द किया गया तथा अन्यो को ताकीद दी गयी। ऐसी घटनाएँ आगे न हो, इस दृष्टि से प्रमाणितो के काम का निरीक्षण और हिसाब की जॉच का विवरण-काल मे सघ ने विशेष प्रबंध किया और उसके लिए अपने खास निरीक्षक और ऑडिटर रखे।

सघ की प्रमाणित सस्थाओ की सबको जानकारी हो, अप्रमाणित व्यापारी अपने को प्रमाणित बता कर लोगो की दिशा-भूल न कर सके, इस दृष्टि से सघ ने विवरण-काल मे खादी-केन्द्र-सूची का प्रकाशन शुरू किया। अब तक अधिकृत केन्द्र-सूची के चार सस्करण निकाले गये। प्रमाणपत्र-सबधी नियम व अन्य जरूरी जानकारी उसमे मे दी जाती थी।

रुई-संग्रह योजना

विवरण-काल मे खादी-उत्पत्ति-बिक्री का काम प्रमाणितो के जरिये चलाने की नीति सघ ने निश्चित की और उसके मुताबिक जगह-जगह प्रमाणितो द्वारा खादी उत्पत्ति का तथा बिक्री का कार्य चालू हो गया। इसमे खादी-उत्पत्ति का कार्य अधिक जटिल है और उसमे काफी पूजी फॅस जाती है, जिससे उत्पत्ति का काम करनेवालो को पूजी की विवचना करनी पडती है। खास करके कपास या रुई के मौसम मे खरीदने से ही वह थोडी सस्ती और अच्छी मिलती है। पूरे सालभर मे यह मौसम २-३ महीने ही रहता है और सालभर की खरीद उसी समय करनी पडता है। देशभर मे जो प्रमाणित सस्थाएँ बनी हैं, उनकी पूँजी परिमित है और रुई-खरीद के लिए उन्हे पैसे की बहुत तगी भुगतनी पडती है। यह देख कर विवरण-काल मे सघ ने इन सस्थाओ के लिए रुई खरीद कर सग्रह करने के सबध मे सुविधा कर दी। यह योजना परिशिष्ट ५ मे दी गयी है।

उपर्युक्त योजना जून १९५० मे बनायी गयी। उसके अनुसार सन् १९५०-५१ मे ३९२४ गाठे रुई खरीद की गयी, इसमे सघ को १५$\frac{3}{4}$ लाख रुपये अपनी पूँजी लगानी पडी। इसमे मुख्यतः बारडोली मे २००

गाँठें, राजस्थान मे ४८६ और वर्धा-नागपुर मे ३०८८ गाँठें रुई खरीदी गयी और वह ३० प्रमाणित सस्थाओ को मुहैय्या की गयी ।

सन् १९५१-५२ मे चरखा सघ की रकम लगाने की जितनी शक्ति थी उससे काफी ज्यादा रकम की रुई व कपास-सग्रह की माग प्रमाणित सस्थाओ से आयी । सघ के लिए जितनी सभव थी, उतनी रकम लगा दी । इसके लिए करीब तीन लाख रुपये की सरकारी सिक्युरिटियाँ भी, करीब २६ हजार का नुकसान उठा कर, सघ ने बेच दीं । लेकिन अधिक रकम की जरूरत होने से वह कर्ज के रूप मे गाधी-निधि से ली जाय, ऐसा विचार सामने आया । गाधी-निधि ने इस काम के लिए सूद पर चरखा-सघ को ३० लाख रुपये तक कर्जा देना स्वीकार किया । सामान्यतः कर्ज लेने की चरखा-सघ की नीति नहीं थी, लेकिन प्रमाणितो से २५% रकम पेशगी लेकर रुई मे लगाने का जो तरीका सघ ने शुरू किया, उसमे विशेष खतरा न होने से उसी मद के लिए गाधी-निधि से कर्जा लेना उचित माना गया ।

लेकिन गाधी-निधि से ३० लाख रुपयो का कर्ज उठाने की जरूरत नहीं हुई । केवल ८ लाख रुपयो के कर्ज से ही रुई-खरीद का काम चल गया ।

रुई-खरीद के लिए बिहार खादी-समिति तथा गाधी-आश्रम, मेरठ ने अपने प्रतिनिधि वर्धा भेजे । बाकी सस्थाओ की रुई चरखा सघ के रुई-विभाग द्वारा खरीदी गयी ।

हाथ-ओटाई

सघ का पुराना प्रस्ताव है कि हाथ-ओटाई की ही रुई काम मे लाने

की अधिक-से-अधिक कोशिश की जाय। मगर कई दिक्कतों के कारण इस दिशा मे अब तक खास प्रगति नही हो पायी। उपर्युक्त कपास व रुई-सग्रह-योजना का काम करते हुए यह भी विचार किया गया कि धीरे-धीरे इसमे हाथ-ओटाई का काम बढाया जाय। इसके अनुसार थोडी प्रारंभिक तैयारी हो पायी।

पूँजी रिक्त हो तो ग्रामोद्योगों मे मदद

कपास और रुई के लिए एकदम से जो पूँजी लगानी पडती है, वह जैसे-जैसे खादी-उत्पत्ति होकर बिक्री होती जाती है, वैसे-वैसे खुली होती रहती है। केन्द्रो को रुई भेजने मे तो सघ की रुई मे लगी हुई रकम जल्दी ही खुली हो सकती है। ऐसी खुली रकम बैक मे रखनी पडती है। वह बैक मे रखने के बजाय दूसरे मौसम तक रुई के लिए खुली हो सके, इस तरह यदि अन्य किसी ग्रामोद्योग मे काम मे आये ता अच्छा ही है, ऐसा मानकर रुई की पूँजी की जरूरत पूरी करने के बाद जो रकम खुली रहे, वह ग्रामोद्योगो के कच्चे माल के लिए भी लगायी जा सकेगी—ऐसा निर्णय सघ ने किया।

इस योजना के अनुसार तिल्हन-सग्रह के लिए ७०० रु० की नागपुर की ग्रामोद्योग सहकारी सस्था, सावगा की मॉग पूरी की गयी। लेकिन बाद मे रुई-खरीद मे ही सघ की पूँजी लग जाने से ग्रामोद्योगो के लिए सघ अपनी पूँजी नही लगा सका।

जीवन-वेतन

जीवन-वेतन का सिद्धान्त चरखा-सघ ने १९३५ मे गाधीजी के

मार्ग-दर्शन पर अपने कार्यक्रम में अन्तर्भूत किया। अब समान वेतन या कम-से-कम फर्क का वेतन यह आदर्श सोचा व बोला जाने लगा। जीवन-वेतन तो इन आदर्शों की प्रथम सीढ़ी कही जा सकती है। तथापि अभी राष्ट्र इस प्रथम सीढ़ी तक भी ठीक पहुँचा नहीं है। चरखा संघ भी जीवन-वेतन की कोशिश में बहुत कामयाब नहीं हुआ। बल्कि १९३५ में इस दिशा में संघ जितना आगे बढ़ा था, उस हद तक टिकना भी उस के लिए मुश्किल रहा, क्योंकि संघ ने अपना काम पैसे पर खड़ा किया और पैसा अपनी कीमत बदलता रहा। १९३५ में संघ ने यह तय किया था कि ८ घण्टे की कार्यक्षम (क्षमता का मान अलग-अलग नम्बर के अनुसार संघ ने ठहराया था। उसकी जानकारी आगे की तालिका में देखिये) कताई के लिए तीन आना मजदूरी दी जाय। तीन आने का मान इस हिसाब से ठहराया गया था कि उससे पेटभर खाना व अपना कपड़ा तो कत्तिन पा ही सके। लेकिन अनाज के भाव बढ़ते गये और उस जमाने से चौगुने के आस पास पहुँचे। मगर संघ कताई-मजदूरी चौगुनी नहीं कर सका। उतनी मजदूरी बढ़ा कर खादी बेचना संघ को असम्भव लगा। कुछ अरसे तक दुगुनी याने तीन आने की जगह ६ आना मजदूरी के पैमाने पर संघ काम करता रहा, लेकिन यह पैमाना बहुत कम था। इस पर विनोबाजी ने संघ का ध्यान खींचा। बहुत कोशिश करके जनवरी १९५१ से अप्रैल १९५१ के दरमियान संघ की शाखाओं ने यह पैमाना ८ आने कर दिया। अब बार कताई-दर या गुण्डी खरीद दर क्रमशः आगे की दो तालिकाओं में दी गयी है।

सूत-मजदूरी चार्ट [अंक-वजन पद्धति] नागविदर्भ

नंबर	प्रतिगुण्डी तार	८ घण्टे का काम			सूत-वजन			घटसहित रूई-दर १ सेर की			रूई-कीमत		धुनाई-दर १ सेर की		धुनाई-मजदूरी		सूत-कताई १सेर की		कताई-मजदूरी ८ घंटे की		सूत-कीमत १ सेर		१ गुंडी की कीमत	
		गु	ल	तार	छ.	तो	आ	रु.	आ.	पा.	आ	पा	रु.	आना	आ	पा.	रु.	आ	आ	पा.	रु	आ.	आ	पा
१०	३००	३	३	—	३	—	—	२	०	—	६	—	—	८	१	६	२	१०	७	१०॥	५	२	४	१$\frac{१}{५}$
११	२९७	३	२	१३६	२	४	१४	२	०	—	५	१०	—	८	१	६	३	—	८	९	५	८	४	—
१२	२८८	३	२	६४	२	२	—	२	०	—	४	१०	—	८	१	२॥	३	४	७	९॥	५	१२	३	१०
१४	२८०	३	२	—	२	—	—	२	०	—	४	—	—	१०	१	३	४	—	८	—	६	१०	३	१०
१६	२७४	३	१	११२	१	३	९	२	०	—	३	५।	—	१०	१	$\frac{३}{४}$	४	१०	७	११	७	४	३	११
१८	२७०	३	१	८०	१	२	८	२	६	—	३	५।	—	१०	—	११।	५	६	८	$\frac{३}{४}$	८	६	३	८$\frac{३}{५}$
२०	२६७	३	१	५६	१	१	११	२	६	—	३	२	१	—	१	४	६	—	७	११	९	६	३	९
२२	२६४	३	१	३२	१	१	—	२	६	—	२	१०।	१	—	१	२।	६	१०	८	—	१०	—	३	८$\frac{२}{११}$
२४	२६२	३	१	१६	१	—	७	२	६	—	२	६	१	—	१	१	७	४	७	११	१०	१०	३	६॥
२६	२६०	३	१	—	१	—	—	२	१३	—	२	९॥।	१	४	१	३	८	—	८	—	१२	१	३	९$\frac{६}{१३}$
२८	२४९	३	—	७२	—	४	७	२	१३	—	२	६	१	४	१	२॥	९	—	८	२	१३	१	३	८$\frac{११}{१४}$
३२	२३३	२	३	१०४	—	३	१०	२	१३	—	२	२	१	४	—	११॥	११	—	८	५॥	१५	१	३	९
३६	२६६	३	१	४८	—	३	११	२	१३	—	२	२।	१	४	१	—	१३	—	९	७	१७	१	३	९॥
४०	२५४	३	—	११२	—	३	३	२	१३	—	१	९॥।	१	४	—	१०	१५	—	९	७	१९	१	३	९॥।

सूत-मजदूरी चार्ट [गुंडी-खरीद पद्धति] तमिलनाड

सूत अंक	आवश्यक गति प्रतिघंटा	आवश्यक काम ८ घंटों का			सूत-वजन			घटसहित रूई दाम सेररु २-५-६		धुनाई-दर १ सेर की		धुनाई-मजदूरी		पूनी-कीमत		१ गुंडी की खरीद-कीमत		सूत-कीमत			कताई-मजदूरी ८ घंटों की	
	तार	गुंडी	लटी	तार	छ	तो	आ	आना	पा.	रु.	आ.	आ	पा.	आ	पा	आना	पा	रु	आ.	पा.	आना	पा.
१०	३००	३	३	—	३	—	—	७	—	—	८	१	६	८	६	४	३	१	—	—	७	६
११	२९७	३	२	१३६	२	४	१४	६	१०	—	८	१	६	८	४	४	३	१	—	—	७	८
१२	२८८	३	२	६४	२	२	—	५	८	—	८	१	२॥	६	१०॥	४	३	—	१५	३॥	८	५
१४	२८०	३	२	—	२	—	—	४	८	—	८	१	—	५	८	४	३	—	१४	११	९	३
१६	२७४	३	१	११२	१	३	९	४	—	—	८	—	११	४	११	४	३	—	१४	६	९	७
१८	२७०	३	१	८०	१	२	८	३	६	—	८	—	९	४	३	३	९	—	१२	८	८	५
२०	२६७	३	१	५६	१	१	११	३	२	१	४	१	८	४	१०	३	९	—	१२	७	७	९
२२	२६४	३	१	३२	१	१	—	२	१०	१	४	१	६	४	४	३	९	—	१२	५	८	१
२४	२६२	३	१	१६	१	—	७	२	७	१	४	१	४।	३	११।	३	९	—	१२	३।	८	४
२६	२६०	३	१	—	१	—	—	२	४	१	८	१	६	३	१०	३	९	—	१२	२	८	४
२८	२४९	३	—	७२	—	४	७	२	२॥	१	८	१	४।	३	५।॥	३	९	—	११	८	८	२।
३२	२३३	२	३	१०४	—	३	१०	१	८	१	८	१	१	२	९	३	९	—	१०	११	८	२
३६	२६६	३	१	४८	—	३	११	१	८	१	८	१	२॥	२	९॥	३	९	—	१२	५॥	९	८
४०	२५४	३	—	११२	—	३	३	१	६	१	८	—	११।॥	२	५।॥	३	९	—	११	१०।॥	९	५

कताई के जरिये जीवन-वेतन का सवाल आज की आर्थिक परिस्थिति मे अधिकाधिक कठिन होता जा रहा है। सघ की पूरी कोशिश रही है कि कातनेवालो को जीवन वेतन मिलना चाहिए। लेकिन यह खादी-बिक्री पर अवलम्बित है। इसका खयाल करके खादी के दाम बहुत ज्यादा न बढाते हुए कातनेवालो का ज्यादा मजदूरी प्राप्त हो सके, इस दिशा मे भी विवरण काल मे विशेष प्रचार किया गया। इस विवरण के पिछले पृष्ठो मे खादी बनाने मे प्रक्रिया घटानेसम्बन्धी प्रयोग की जानकारी दी गयी। पुराने जमाने मे कपास से कपड़ा बनाने तक की सभी प्रक्रियाएँ अपने घर मे करके तैयार खादी वेचने का तरीका कई जगह रूढ था। आज भी हैदराबाद व उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्सो मे यह पद्धति पायी जाती है। इस पद्धति से कातनेवाला परिवार कपडे तक का पूरा काम कर ले, तो वह आसानी से जीवन-वेतन प्राप्त कर सकता है।

कताई व धुनाई की दरें

ऊपर को तालिकाओ के ऑकडे देखने से पता चलेगा कि अगरचे ८ घण्टे की कताई के लिए ८ आना प्राति का मान ठहराया गया है, फिर भी अलग-अलग अको के लिए वह थोडा कम-ज्यादा रहता है। यह फर्क हिसाब की व्यावहारिक सुविधा के लिए करना पडा है। दूसरी एक बात यह भी स्पष्ट कर देना जरूरी है कि विवरण-काल मे रुई के दामो मे बहुत चढाव-उतार होता रहा। तालिका में रुई की जो दरे दी गयी हैं, उनमे भी कुछ कमी-वेशी होती रही। रुई की जातियो मे भी फर्क पडता गया। उदाहरणार्थ, शुद्ध रोझिया रुई मिलना ही इन वर्षो मे मुश्किल हो गया। रोझिया के नाम पर जरीला-मिश्रण की रुई और जरीला के नाम पर रोझिया-मिश्रण की रुई मध्य-प्रदेश के बाजार मे आती रही। जिस रुई का परिमाण ज्यादा, उसीके नाम पर ऐसी मिश्रित रुई बिकती रही। ऐसी हालत मे धुनाई की दर क्या हो, किस रुई मे से कौन-से अक निकाले जायॅ, कीमतें कैसे तय को जायॅ, आदि बाते कुछ व्यावहारिक ढग से चलानी पडीं। पूर्ण निश्चित दरे मुकर्रर करना कठिन रहा। तमिलनाड-

शाखा की दरों में पाया जायगा कि १४–१६ आदि अंकों का कताई-मजदूरी का मान ९ आना से भी ज्यादा पाता है। वह भी व्यावहारिक सुविधा के कारण करना पड़ा था। वहाँ पर मोटी और महीन गुण्डी के क्रमश: ०–४–३ और ०–३–९ दाम ठहराये गये थे। गुण्डी-पद्धति की छटाई और संग्रह में इस तरह कीमत के दो प्रकार रखने में भी कुछ कठिनाई थी। लेकिन एक ही दर रखी जाती तो विभिन्न अंकों के लिए ८ घण्टे की प्राप्ति के मान में अभी जो फर्क है, उससे भी ज्यादा दीखता। दो से ज्यादा प्रकार किये जाते तो स्टॉक व हिसाब में दिक्कत आती। इसलिए मध्यम मार्ग के तौर पर तमिलनाड शाखा ने अभी वह तालिका ठहरायी। उसमें एक विचार यह भी था कि १४ व उसके आस-पास के अंक के सूत की शाखा को ज्यादा जरूरत रहती थी। उस शाखा में धुनाई की दर १८ अंक तक ०–८–० सेर रखी गयी, वह कुछ कम मालूम पड़ना सम्भव था। लेकिन वहाँ कत्तिनें खुद सादे धनुष से बहुत मोटी धुनाई कर लेती थीं। घण्टे में २० से ३० तोले पूनी वे उस तरीके से बना लेती थीं। इस गति की दृष्टि से ०-८–० दर कम नहीं था। यह धुनाई अच्छी तो नहीं कही जा सकती थी, मगर वहाँ की रुई अच्छी होने से और आदत पड़ जाने से कत्तिनें उसमें से मोटा सूत ठीक निकाल लेती थीं। महीन सूत के लिए अच्छी धुनाई की जरूरत होने से उसके लिए धुनाई की दर १८ अंक से ऊपर के सूत के लिए एकदम ज्यादा रखी गयी। उपर्युक्त दोनों तालिकाओं में धुनाई-दर के कॉलम के बाद के कॉलम में धुनाई-मजदूरी दी गयी है। ८ घण्टे में सूत-कताई का जो परिमाण माना गया है, उसके लिए लगनेवाली पूनी बनाने की धुनाई-मजदूरी के वे आँकड़े हैं।

बुनाई-दर

कताई-दरो का मान ऊपर दिया गया है। विवरण-काल मे ही बुनाई-दरे बदलती रहे और अलग अलग प्रान्तो मे वे अलग-अलग रही। कही-कही फी पुञ्जम फी गज ६ पाई अर्थात् फी-विशी फी-गज ८ पाई दर रही, तो कही-कही इससे सवाये-ड्योढे तक बुनाई-दर देने के बावजूद कुछ अरसे तक बुनाई की बहुत दिक्कत रही। बुनाई के लिए मिल-सूत मिलने की अनिश्चितता, कपडे के बाजार-भावो का चढाव-उतार, सूत और कपडेसम्बन्धी कण्ट्रोल की सरकारी नीति आदि कारणो ने हाथ-बुनाई पर इन वर्षो मे बहुत ही खराब असर डाला। इसी कारण पुराने अच्छे-अच्छे खादी-केन्द्रो को भी बुनाई की दृष्टि से क्षति पहुँची। बुनाई के लिए मिल-सूत अपर्याप्त मिलता रहा, लेकिन साथ-साथ नियत मात्रा मे मिलनेवाला सूत चोर-बाजार मे बेच कर बुनकर कई जगह खासी अच्छी आमद करने लगे। उससे उनका आलस्य भी बढा और बुनाई का परिश्रम करने की वृत्ति कम हुई। ऐसी परिस्थिति मे कई जगह खादी बुनने की मजदूरी भी बढानी पडी। ज्यादा बुनाई के कारण खादी के दाम भी बढे और स्वावलम्बी कातनेवालो को भी बुनाई की ज्यादी दर बोझ-रूप मालूम पड़ी। विवरण-काल के आखिरी दिनो मे यह हालत कुछ सुधरी। अगर कातनेवालो मे आसान किस्मो का कपडा खुद बुन लेने की रुचि पैदा हो, तो काफी हद तक यह समस्या सुलझ सकती है और कातनेवालो की आदम भी उससे कुछ बढ सकती है। चरखा-सघ ने विवरण-काल मे इस दिशा मे भी कुछ प्रयत्न शुरू किया।

कामगारों की संख्या

चरखा-संघ तथा प्रमाणित संस्थाओं की कत्तिनों की संख्या १९४९-५० में १ लाख ९० हजार और १९५०-५१ में २ लाख २२ हजार रही, बुनकरों की संख्या क्रमशः करीब ११ हजार और १८ हजार रही। कुल कामगारों की संख्या २ लाख और ४० हजार रही। १९४९-५० और १९५०-५१ में खादी-उत्पत्ति क्रमशः वर्ग-गज ६१॥ लाख और ७३ लाख की हुई है। दोनों वर्ष की उत्पत्ति में विशेष अन्तर नहीं है। फिर भी कामगारों की संख्या १९४९-५० से १९५०-५१ में ४० हजार याने करीब २० प्रतिशत बढ़ी है।

इसका कारण यह है कि विवरण-काल में चरखा-संघ ने अपनी व्यापारी खादी-उत्पत्ति काफी घटायी, लेकिन उस परिमाण में कत्तिनों और बुनकरों की संख्या कम नहीं हुई। पुराने कत्तिन-बुनकर कम नहीं लेकिन काम करते रहे। यानी काम घटने पर भी कामगारों की संख्या नहीं घटी। दूसरी ओर प्रमाणितों ने उत्पत्ति बढ़ाने के लिए कामगारों की संख्या बढ़ायी, लेकिन नये कामगार होने के कारण उत्पत्ति उतने परिमाण में नहीं बढ़ी। और भी एक बड़ा कारण यह है कि बिहार में अकाल-पीड़ितों को राहत देने की दृष्टि से बहुत बड़े पैमाने पर कताई शुरू की गयी, जिसमें हजारों की तादाद में लोग शामिल हुए। लेकिन यह काम विवरण-काल में दो तीन महीने ही चला, इसलिए सालभर काम करनेवाले कामगारों से जितने परिमाण में खादी का उत्पादन हुआ होता, उस अनुपात में दो-तीन महीने काम करनेवालों का काम कम ही रहा। यह बात अन्य जगह भी जो नये कामगार लगाये गये और जिन्होंने पूरे साल काम नहीं किया, उनको भी लागू होती है। इसलिए उत्पत्ति उतनी ही होने पर भी कामगारों की संख्या इतनी बढ़ी हुई दीखती है। प्रान्तवार तफसील आगे की तालिका में दी गयी है। दोनों वर्षों में कत्तिनों और बुनकरों की संख्या का अनुपात १०० . ६ रहा। याने एक बुनकर के पीछे करीब १६ कत्तिनें रहा।

कुल कामगारों की संख्या

चरखा-संघ शाखाएँ तथा प्रमाणित संस्थाएँ

	प्रान्त	कत्तिन		बुनकर		अन्य		कुल	
		१९४९-५०	१९५०-५१	१९४९-५०	१९५०-५१	१९४९-५०	१९५०-५१	१९४९-५०	१९५०-५१
१	असम	—	१,६५१	—	४४३	—	५	—	२,०९९
२	आंध्र	८,७८४	६,९८४	४६४	३४५	१२०	१०५	९,३६८	७,४३४
३	उत्कल	—	४,९६४	—	५३९	—	३	—	५,५०६
४	उत्तर प्रदेश	४२,२२१	४७,६१५	२,११५	२,६१९	२९६	३५६	४४,६३२	५०,५९०
५	कर्नाटक	८,५००	३,३९५	५६०	३७५	५०	१४२	९,११०	३,९१२
६	कश्मीर	७६९	७६९	९०	९०	७७	७७	९३६	९३६
७	केरल	६,९०३	१,३४३	५२१	९००	६३	१००	७,४८७	२,३४३
८	गुजरात	३,०००	३,२३५	४००	३६१	२१५	११६	३;६१५	३,७१२
९	तमिलनाड	६२,९४०	६२,९४५	१,७२६	१,७४९	४७७	४५७	६५,१४३	६५,१५१
१०	पंजाब	७,५००	६,५००	१,७५०	१,७५०	२०	३०	९,२७०	८,२८०
११	बिहार	३०,३१२	५६,३९७	१,२००	१,८६९	१०३	१३३	३१,६१५	५८,३९९
१२	बंगाल	५००	१,०५०	३३	६३	२२	२२	५५५	१,१३५
१३	बंबई	—	—	७	७	—	—	७	७
१४	महाकोशल	८६५	८६५	१५०	१५०	२०	२०	१,०३५	१,०३५
१५	महाराष्ट्र	२,५८५	१,९१५	२७७	२५१	६७	७९	२,९२९	२,२४५
१६	राजस्थान	८,५८४	१३,५७१	७५५	१,५०१	१८९	४००	९,४६८	१५,४७२
१७	सौराष्ट्र	—	२,२८४	—	३३१	—	८११	—	३,४२६
१८	हैदराबाद	६,६२५	७,००१	९१३	१,१०७	२७४	२८०	७,८१२	८,३८८
	कुल	१,९०,०२८	२,२२,४८४	१०,९६१	१४,४५०	१,९९३	३,१३६	२,०२,९८२	२,४०,०७०

कामगारों को दी गयी मजदूरी (रुपयों में)

चरखा-संघ शाखाएँ

	प्रान्त	कत्तिनों को		बुनकरों को		अन्यों को		कुल	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	—	—	—	—	—	—	—	—
२	आंध्र	१०,०११	५६,७५३	१,०१,७०२	४९,१८४	३४,२६०	१६,६३०	२,२५,९८१	१,२२,५६७
३	उत्कल	—	—	—	—	—	—	—	—
४	उत्तर प्रदेश	—	—	—	—	—	—	—	—
५	कर्नाटक	१६,९६८	२८,३४७	८८,७६२	४५,१५२	१०,७७२	११,९६९	१,१६,५०२	९३,४६८
६	कश्मीर	३५,१२२	३५,०४५	२४,९३८	२४,०११	१२,६७७	३७,४६७	७२,७३७	९६,५२३
७	केरल	८७,४८९	४८,९८९	७४,०२३	१२,८१५	५,७१३	८,७८६	१,६७,३०५	७०,५९०
८	गुजरात	४२,८५८	४५,३४०	९२,१४१	२,११,७०३	५,४५३	३३,१४७	१,४०,४५२	१,९८,१९०
९	तमिलनाड	१०,२४,०७०	१०,४१,३९२	८,१३,७७७	५,६४,६८६	१,२०,९८९	१,३७,४२१	१९,५८,८३६	१७,४३,४९९
१०	पंजाब	७५,७२८	४२,९७१	६७,१३३	६९,०१०	१६,६३३	—	१,५९,४९४	१,११,९८१
११	बिहार	—	—	—	—	—	—	—	—
१२	बंगाल	—	—	—	—	—	—	—	—
१३	बम्बई	—	—	५,९४९	४,९९१	२,७१५	२,३४५	८,६६४	७,३३६
१४	महाकोशल	२३	१०२	४१५	—	६१	९७२	४९९	१,०७४
१५	महाराष्ट्र	६५,५१०	१८,३२२	४६,६५१	१८,२१५	१७,५६९	४,२१४	१,२९,७३०	४०,७५१
१६	राजस्थान	३२,६०९	२६,८३४	३२,४५२	१८,६६६	५,११५	११,४३१	७०,९७६	५७,०३१
१७	सौराष्ट्र	—	—	—	—	—	—	—	—
१८	हैदराबाद	६६,८५८	६,९६८	७३,२२७	१९,६०५	२१,२०७	२,८४७	६१,०१२	२८,६२०
	कुल	१६,१७,२५४	१३,५०,२६३	१४,२१,०७०	९,४६,१३८	२,७३,९४४	२,७५,२९९	३३,१२,२६८	२५,७१,६३०

कामगारों में बाँटी गयी मजदूरी

१९४९-५० मे कुल कामगारो को ६७ लाख ३१ हजार रुपये मजदूरी के रूप मे बाँटे गये, जिसमे कत्तिनो को ३०॥ लाख और बुनकरो को ३० लाख मिले। १९५०-५१ मे वही आँकडे कुल कामगारो को ७३ लाख, कत्तिनो को ३५ लाख और बुनकरो को ३१ लाख रहे, (तफसील पीछे की तालिका मे, पृष्ठ ४४७ पर दी गयी है)।

कत्तिनो और बुनकरो की मजदूरी का अनुपात दोनो वर्षो मे करीब ७ : ६ रहा। याने जितना सूत कातने के लिए कत्तिनो को १ रुपया मिला, उतना सूत बुनने के लिए बुनकरो को करीब चोदह आने देने पडे हैं, ऐसा दीखता है। लेकिन पूरे अक नहीं मिल सके हैं। सम्भव है, जितना सूत काता गया, उससे ज्यादा बुना गया हो जो कि पहले वर्ष इकट्ठा हो गया था। कुछ प्रान्तो मे वस्त्र-स्वावलम्बन के सूत की कताई नही देनी पडी है, मगर बुनाई काफी देनी पडी है।

संघ के कार्यकर्ता

चरखा-सघ के नये कार्यक्रम को सुचारू रूप से चलाने की दृष्टि से सघ के कार्यकर्ताओ को खादी की तान्त्रिक तथा तात्त्विक ट्रेनिंग देने की ओर विवरण-काल मे सघ ने विशेष ध्यान दिया। सघ के अध्यक्ष तथा मन्त्री ने कार्यकर्ताओ के साथ चर्चाएँ और विचार-विनिमय किये तथा भाषणो द्वारा नयी भूमिका समझायी। जगह-जगह कार्यकर्ताओ के शिविर चलाये गये तथा कार्यकर्ताओ के सम्मेलनो के आयोजन भी किये गये।

ग्राम-स्वावलम्बन और अर्थ की जगह श्रम की प्रतिष्ठा बढाने की दृष्टि से खादी की तात्त्विक भूमिका पर चरखा-सघ ने जोर देना शुरू किया, तब उनके अमली कार्यक्रम का सवाल भी सघ के ट्रस्टी-मण्डल के और सघ के कार्यकर्ता के सामने आया। उस पर विचार कर सघ ने क्रमश. मिल वस्त्र-बहिष्कार और भोजन मे मिल वस्तु-बहिष्कार का कार्यक्रम सोचा और श्रमिकों मे जाकर उन्हीकी तरह हर मार २४ घण्टे परिश्रम करने का कार्यक्रम अपने कार्यकर्ताओं को सुझाया। बहिष्कार-सम्बन्धी कोई प्रस्ताव चरखा-सघ ने नहीं किया। मगर सघ के अध्यक्ष ने अपने दौरे मे, व्याख्यानो मे और संघ के कार्यकर्ताओं के साथ की बातचीत मे लगातार दो साल तक उस सम्बन्ध का खूब प्रचार किया। फलतः इस दृष्टि से विचार करने की जागृति न केवल चरखा-सघ के कार्यकर्ताओ मे, वरन् सभी रचनात्मक सस्थाओं मे आयी। अप्रैल १९५२ के सर्वोदय-सम्मेलन मे इस सम्बन्ध का विशेष प्रस्ताव पास किया गया और देश के सामने रखा गया। उस सम्मेलन के बाद सर्व-सेवा-सघ की कार्यकारिणी समिति ने अपने और जुडे हुए सभी सघो के सदस्यो और कार्यकर्ताओं के लिए इसका अमल लाजमी हो, ऐसा प्रस्ताव पास किया। श्रमिकों मे जाकर कार्यकर्ता स्वय परिश्रम करें, इसके लिए चरखा-सघ ने अपनी सितम्बर १९५१ की ट्रस्टी-मण्डल की सभा मे एक खास प्रस्ताव किया। यह प्रस्ताव अन्त मे परिशिष्ट १ मे दिया गया है।

इसमे शक नही कि सघ के कार्यकर्ता आज तक कई वर्षो से बहुत परिश्रम-पूर्वक कम-से-कम वेतन मे गरीबीपूर्वक खादी-सेवा करते आये थे। परन्तु उपर्युक्त बातें अधिकतर कार्यकर्ताओं के लिए नयी थीं।

उसके लिए अपने जीवन मे जिस बदल की जरूरत है, वह लाने मे कइयो को कठिनाई भी महसूस होने लगी। लेकिन सारे समाज मे जो बदल लाना है, वह खुद के जीवन मे भी करना होगा, यह बात कार्यकर्ता समझते थे। कई कार्यकर्ताओ ने कुछ आरम्भ तो स्वेच्छापूर्वक शुरू कर दिया।

संघ के कुल कार्यकर्ताओ की सख्या विवरण-काल के प्रारम्भ मे करीब ११०० थी, वह उसके अन्त मे ७५० ही रह गयी। राजस्थान, महाराष्ट्र, हैदराबाद तथा आन्ध्र का बहुत सारा खादी-काम सघ ने प्रमाणितो को सौपा, उसके साथ वहाँ के सघ के कार्यकर्ता भी उनको दिये गये, इसलिए सघ के कार्यकर्ताओ की सख्या इतनी कम हुई है।

कार्यकर्ताओ का अन्तिम वेतन-स्तर विवरण-काल मे पहले जैसा १०० रु० ही रहा। इसके अलावा महँगाई-भत्ता २५%+१५ रु० दिया जाता रहा। १९५१-५२ मे यह स्तर १२५ रु० किया गया, लेकिन महँगाई-भत्ता केवल २५ रुपये ही रखा गया। १९५०-५१ मे सघ ने छाटे कार्यकर्ताओ को ६० रुपये और बडे कार्यकर्ताओ को ९० रुपये अनाज के लिए विशेप भत्ता दिया। कार्यकर्ताओ का वेतन के अनुसार विभाजन आगे की पहली तालिका मे दिया गया है। बाद की दूसरी तालिका मे यह भी दिखाने की कोशिश की गयी है कि प्रति कार्यकर्ता प्रतिदिन उत्पत्ति, बिक्री और स्वावलम्बन का कितना काम हुआ। ये ऑकडे कुछ अधूरे हैं, क्योकि कार्यकर्ताओ की सख्या सालभर समान रही, ऐसी बात नही है। अलावा इसके सरंजाम-कार्यालय आदि के कार्यकर्ताओं की सख्या भी शायद इसमे गिन ली गयी है। फिर भी ये ऑकडे मोटे तौर पर कार्यकर्ता व काम का प्रत्यक्ष अनुपात बतलाते हैं, इसलिए तालिका मे दिये हैं।

चरखा-संघ के कार्यकर्ताओं का
मासिक वेतन के अनुसार विभाजन

	प्रान्त	१९५०–५१					
		रु १५ तक	रु १६ से ३०	रु ३१ से ५०	रु ५१ से ७५	रु. ७६ से १००	
१	असम	–	–	–	–	–	–
२	आंध्र	३	३१	१५	२	–	५१
३	उत्कल	–	–	–	–	–	–
४	उत्तरप्रदेश	–	–	–	–	–	–
५	कर्नाटक	६	१८	१९	११	०	५४
६	कश्मीर	–	११	१७	११	३	४२
७	केरल	–	३०	२५	५	–	६०
८	गुजरात	–	–	९	६	५	२०
९	तमिलनाड	३	९४	१३०	५६	२२	३०५
१०	पंजाब	१	३०	३३	१०	३	७७
११	बिहार	–	–	–	–	–	–
१२	बंगाल	–	–	–	–	–	–
१३	बम्बई	–	–	३	६	२	११
१४	महाकोशल	–	२	२	१	–	५
१५	महाराष्ट्र	१	९	१४	४	२	३०
१६	राजस्थान	–	११	१०	६	२	२९
१७	सौराष्ट्र	–	–	–	–	–	–
१८	हैदराबाद	–	६	४	२	–	१२
१९	प्रधान-कार्यालय सेवाग्राम	५	५	५	२	२	२१
२०	खादी-विद्यालय सेवाग्राम	–	१३	२३	११	३	५०
	कुल	१९	२६२	३०९	१३३	४४	८६७

वेतन के अलावा महँगाई-भत्ता वेतन के २५% + १५ रु था। गुजरात, पंजाब और कश्मीर शाखा में महँगाई-भत्ता ऊपर के परिमाण से ५ रु. ज्यादा था।

फी कार्यकर्ता प्रतिदिन की उत्पत्ति-बिक्री

	प्रान्त	उत्पत्ति (वर्ग-गजो में)		वस्त्र-स्वावलम्बन (वर्ग गजो मे)		फुटकर बिक्री (रुपयो मे)	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	–	–	–	–	–	–
२	आंध्र	१२ ६	६ ४९	१'६३	१'८६	१९'३९	१५'३३
३	उत्कल	–	–	–	–	–	–
४	उत्तर प्रदेश	–	–	–	–	–	–
५	कर्नाटक	८ ६३	७'०९	२ २२	१ ७१	१५ ०७	७ ४
६	कश्मीर	३ ३	३ २८	–	–	२ ५	२ ३४
७	केरल	१० ४८	६'५४	१ ८२	२ २६	१४ ५	१२'७९
८	गुजरात	४८	५१	२५ ८७	३५ ४७	३८ ५२	४३'८३
९	तमिलनाड	१८ १४	१६ ०९	१ ३६	१ ३४	२७ ३९	३२ ९
१०	पजाब	६ २२	६ २५	५२	१ २	७ ५	६'८७
११	बिहार	–	–	–	–	–	–
१२	बगाल	–	–	–	–	–	–
१३	बम्बई	४२	२५	२ ९४	२ ४६	१९ ३७	३०'४२
१४	महाकोशल	७४	९२	२ ०	५ २३	२ ८	२ ८९
१५	महाराष्ट्र	१० ८२	४'२२	२ ९१	३ ३२	२४ ३८	१३'३८
१६	राजस्थान	९ ४८	६ १९	१'८१	१ ९६	२ ७६	३ ०२
१७	सौराष्ट्र	–	–	–	–	–	–
१८	हैदराबाद	१७ ५७	११ ९४	१	३९	९ १७	१७ ३२

ग्राम-संख्या

विवरण-काल में खादी-काम चल रहा हो, ऐसे ग्रामों की संख्या थोड़ी बढ़ी। दर-असल जिस तरह हम वर्गगजों में और रुपयों में खादी कितनी बनी, यह देखते हैं उसी तरह हमें यह भी देखना चाहिए कि कितने ग्रामों में चरखा पहुँचा और उनमें से खास कर कितने ग्रामों में कपास से कपड़े तक थोड़ी मात्रा में सही, मगर सभी प्रक्रियाओं की कला चल निकली। इसका एक बड़ा लाभ यह है कि अगरचे अभी खादी के अनुकूल जन-मानस नहीं बना, मगर वह बने तो गाँव बड़ी आसानी से अपना कपड़ा बना ले सकता है। क्योंकि सारी प्रक्रिया बीजरूप में वहाँ जीवित रहती है। इस दृष्टि से अब तक बीजरूप में चरखा पहुँचा हो, ऐसे गाँवों की संख्या बढ़ाने की ओर ध्यान नहीं दिया गया। अभी जिन ग्रामों का आंकड़ा मिला है, वह तो अधिकतर मजदूरी के चरखे का मिला है। कई जगह स्वावलंबन का चरखा भी पहुँचा है, उसकी संख्या नहीं मिल सकी। अभी मिली हुई ग्रामसंख्या की प्रान्तवार जानकारी आगे की पहली तालिका पृष्ठ ४५४ में मिलेगी।

आज तक का कुल खादी-काम

चरखा संघ की स्थापना से लेकर अब तक कुल कितनी खादी बनी और कितनी मजदूरी उसके जरिये बाँटी गयी, उसके अंक आगे का २, ३ तालिकाओं (पृ० ४५५, ४५६) में दिये गये हैं।

कार्यक्षेत्र के ग्रामो की प्रान्तवार तादाद

चरखा संघ की शाखाएँ तथा प्रमाणित सस्थाएँ

	प्रान्त	ग्राम-सख्या		कत्तिनों की संख्या		बुनकरों की संख्या	
		१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१	१९४९–५०	१९५०–५१
१	असम	७५	७५	–	१,६५१	–	४४३
२	आध्र	१८७	१६७	८,७८४	६,९८४	४६४	३४५
३	उत्कल	३६६	३३६	–	४,९६४	–	५३९
४	उत्तर प्रदेश	१,५२०	१,७२०	४२,२२१	४७,६१५	२,११५	२,६१९
५	कर्नाटक	२०६	१४२	८,५००	३,३९५	५६०	३७५
६	कश्मीर	२०	२५	७६९	७६९	९०	९०
७	केरल	३६१	४७५	६,९०३	१,३४३	५२१	९००
८	गुजरात	२९५	२७५	३,०००	३,२३५	४००	३६१
९	तमिलनाड	३,५६४	३,५६४	६२,९४०	६२,९४५	१,७२६	१,७४९
१०	पजाब	४००	४००	७,५००	६,५००	१,७५०	१,७५०
११	विहार	१,०७१	१,५७१	३०,३१२	५६,३९७	१,२००	१,८६९
१२	बगाल	१३०	१०२	५००	१,०५०	३३	६३
१३	बम्बई	१	१	–	–	७	७
१४	महाकोशल	२९	३०	८६५	८६५	१५०	१५०
१५	महाराष्ट्र	१२५	१०४	२,५८५	१,९१५	२७७	२५१
१६	राजस्थान	१७५	१५४	८,५२४	१३,५७१	७५५	१,५०१
१७	सौराष्ट्र	११०	११०	–	२,२८४	–	३३१
१८	हैदराबाद	३२५	१७५	६,६२५	७,००१	९१३	१,१०७
	कुल	८,९३०	९,४२६	१,९०,०२८	२,२२,४८४	१०,९६१	१४,४५०

चरखा-संघ तथा प्रमाणित संस्थाओं की कुल खादी-उत्पत्ति तथा बिक्री

सन् १९२४ से १९५१ तक

वर्ष	उत्पत्ति (रुपयों में)	उत्पत्ति (वर्गगजों में)	बिक्री (रुपयों में)
१९२४–२५	१९,०३,०३४	२,२९,५६,१४० (१९२४–२५ से १९२७–२८)	३३,६१,०६१
१९२५–२६	२३,७७,६७०		२८,९९,१४३
१९२६–२७	२४,०६,३७०		३३ ४८ ७९४
१९२७–२८	२४,१६,३८२		३३,०८ ६३१
१९२८–२९	३१,५५,४३७	६२ ६१,८१२	३०,४९ ०७७
१९२९–३०	५४,९१,६१०	१,१६,७६,९३०	६६ १९,८९३
१९३०–३१ (महीने १५)	७२,१५,५०२	१,७५,७६,५७६	९०,९८,१३२
१९३२	४४,८७,१९५	१,१५,०३,८८६	५८,१२,५३७
१९३३	३८,६८,८९०	१,०२,२६,३६४	५१,७५,९२३
१९३४	३४,०६,३८०	९५ ८०,९८६	४६,६७,१२५
१९३५	३२,४४,१०५	८५,६१,७३८	४६,९०,०१३
१९३६	२४,२८,२५७	६२,२३,६९६	३४,८७,७४१
१९३७	३०,१५,३३९	७२,६९,८६७	८५,३२,७२९
१९३८	५४,९९,४८६	१,२५ ५९,५९४	५४,८८,७२०
१९३९	४८,२९,६१०	१,०८,९५,६०८	६४,१३,००२
१९४०	५१,३६,९८३	९५,११,४३८	७७ ६२,८५०
१९४१–४२ (महीने १८)	१,२०,०२,४३०	२,१५,८४,०७६	१,४९ ८५,५१३
१९४२–४३	७८,६२,३६८	१,००,४५,२२४	१,०७,९०,४१०
१९४३–४४	१,२७,५२,२३३	१,०८ ८० ७३९	१,३२ ६१,६८२
१९४४–४५	१,३४,५८,०६९	१,०२,६३,९०३	१,६५,८८ ९८०
१९४५–४६	७०,६३,२११	५१,७६,९९५	१ ०४ ८६,५३०
१९४६–४७	१ ०५,६८,८७०	७० ०५,४७३	१ ११ ९५ १३१
१९४७–४८	६५,७४,६८९	४३,५१,६४६	७२,१६ ६०
१९४८–४९	१,०४,४२,९६५	६९,३३,९४८	९१ ८१,४१२
१९४९–५०	१,११,४०,९३६	७१ ५९,४०५	१,३४ ५०,१६६
१९५०–५१	१,२७,४५,२९५	७२,८८,७०१	१,६४ ९८,६७८
कुल	१६,५४,९३,२४४	२३,५५,७२,८२७	२० ४४,०५,३३०

चरखा-संघ तथा प्रमाणित संस्थाओ द्वारा बॉटी गयी मजदूरी

सन् १९२४ से १९५१ तक

वर्ष	कत्तिनो को रुपये	बुनकरो को रुपये	अन्य कामगारो को रुपये	कुल दिये रुपये
१९२४–२८	२२,०२,५४०	२२,७५,६१४	२,२७,५६०	४५,०५,७१४
१९२८–२९	७,११,८३३	८,३५,१५६	९४,६६२	१६,४१,६५१
१९२९–३०	१३,८८,४६९	१३,८०,४७६	१,९२,२०६	२९,६१,१५०
१९३०–३१	१४,४४,९०८	१७,९५,१२१	३,६०,७७२	३६,००,८०१
१९३२	११,०३,३५१	१२,७६,६११	२,६९,२३१	२६,४९,१९३
१९३३	८,३५,७२७	७,४७,७२७	२,७८,८१६	१८,६२,२७०
१९३४	७,५७,४८९	६,६९,९६७	२,७२,५१०	१६,९९,९६६
१९३५	६,८०,०११	६,७७,१८८	२,९१,१६९	१६,४८,३६८
१९३६	९,२२,६२४	५,२२,१७६	२,४२,४२५	१६,८७,२२५
१९३७	१२,१९,२५६	६,९७,८३७	३,०१,५३३	२२,१८,६२६
१९३८	२३,५४,९०६	१२,१८,८०३	५,७७,१३१	४१,५०,८४०
१९३९	२०,२३,६५०	१०,९८,८७८	५,५२,२०५	३६,७४,७३३
१९४०	२०,९०,३७८	१०,८१,४५४	५,१६,३११	३६,८८,१४३
१९४१–४२ (१८महीने)	४६,३०,२७३	२४,३१,७३३	१०,५०,९८७	८१,१२,९९३
१९४२–४३	२२,४५,९३४	१४,४१,६६८	५,३२,०५४	४२,१९,६५६
१९४३–४४	४१,८६ ४८८	२६,७९,९६९	९,१७,८५९	७७,८४,३१६
१९४४–४५	३६,४१,६७१	३१,२९,७११	९,९२,१५१	७७,६३,५३३
१९४५ ४६	२५,०८,०४२	२०,६१,५८३	६,१०,८२६	५१,८०,४५१
१९४६–४७	३१,६७,३०३	२९,४०,७७४	८,०९,१३९	५९,१७,२१६
१९४७–४८ ज्ञाला	१८,११,३६०	१३,२०,१२७	४,६३,९३९	४५,९५,४२६
१९४८–४९	२७,६९,२३७	२५,७६,४३९	५,३४,४९०	५८,८०,१६६
१९४९–५०	३०,३१,८२८	३०,०२,३१३	६,९६,८९१	६७,३१,०३२
१९५०–५१*	३५,०४,४८८	३१,१६,२७१	६,७३,७६९	७२,९४,५२८
कुल	४,९०,३१,७६६	३,८९,७७,५९५	१,१४,५८,६३६	९,९४,६७,९९७

* अधिकतर प्रमाणितों के ऑकडे न मिल्ने से अदाजी हिसाब करना पडा है।

ट्रस्टी-मंडल और चरखा-संघ का तंत्र

चरखा-संघ के आरम्भ-काल से याने सन् १९२५ से संघ का विधान बना हुआ है और बाद में परोपकारी संस्था के रजिस्ट्रेशन कानून के अनुसार उसका रजिस्ट्रेशन भी किया गया है। विधान में समय समय पर कुछ तबदीलियाँ होती रही हैं। उस विधान के अनुसार बना हुआ ट्रस्टी-मंडल संघ का नीति-निर्णय और कार्य-संचालन करता आया है। कार्य-संचालन के लिए संघ के तंत्र में भी जरूरत के अनुसार कुछ बदल ट्रस्टी-मंडल करता रहा है। विवरण-काल में खादी-काम की अनेकविध प्रवृत्तियों के संचालन की दृष्टि से तंत्र में ऐसे कुछ फर्क किये गये। १९५२ का ट्रस्टी-मंडल और तंत्रसंबंधी जानकारी थोड़े में यहाँ दी जाती है।

ट्रस्टी-मंडल : विवरण-काल में आजीवन ट्रस्टियों में से श्रीमती आशादेवी ने अपनी सदस्यता से त्यागपत्र दिया। उनकी जगह तारीख ७-८ जनवरी १९५१ की ट्रस्टी-मंडल की सभा में श्री अनंत वासुदेव सहस्रबुद्धे को आजीवन सदस्य चुना गया। शेष आजीवन ट्रस्टी वैसे-के-वैसे कायम रहे।

१९४९-५० में सालाना ट्रस्टी श्री ठाकुरदास बंग तथा श्रीमती अमलप्रभा दास का समय समाप्त होने के कारण वे स्थान खाली हुए। उनकी जगह श्री ध्वजाप्रसाद साहू, श्री सिद्धराज ढड्ढा तथा श्री आर. गुरुस्वामी पिल्लै को तारीख ७-८ जनवरी १९५१ की ट्रस्टी-मंडल की सभा में सालाना ट्रस्टी चुना गया। १९५२ के ट्रस्टी ये थे

आजीवन ट्रस्टी

१ श्री. धीरेन्द्रभाई मजूमदार, (अध्यक्ष) खादीग्राम, पो. मलेपुर, जि. मुंगेर, बिहार।

२. श्री. वि. वि. जेराजाणी, ३९६, काल्बादेवी रोड, बम्बई २।

३ श्रीमती रमादेवी चौधरी, बरीकटक, जिला कटक।

४. श्री खान अब्दुल गफ्फार खान, चारसद्दा, जिला पेशावर (पाकिस्तान)।
५ श्री. रघुनाथ श्रीधर धोत्रे, बजाजवाडी, वर्धा (मध्यप्रदेश)।
६. श्री. नारायणदास गांधी, राष्ट्रीय शाला, राजकोट (काठियावाड)।
७. श्री जुगतराम दवे, स्वराज्य-आश्रम, वेडछी, पो वालोड, जिला सूरत।
८. श्री श्रीकृष्णदास जाजू (कोषाध्यक्ष), बजाजवाडी, वर्धा।
९. श्री. कृष्णदास गांधी, सेवाग्राम, (वर्धा)।
१०. श्री. अनंत वासुदेव सहस्रबुद्धे, (मंत्री) सेवाग्राम, (वर्धा)।

सालाना ट्रस्टी

११. श्री. सिद्धराज ढड्ढा, सर्वोदय केन्द्र, खीमेल (राजस्थान)।
१२ श्री. ध्वजाप्रसाद साहू, खादी-बोर्ड, पुनाई चक, पटना-३।
१३ श्री. आर गुरुस्वामी पिल्ले, गान्धी-निकेतन, टी. कल्लुपट्टी, पोस्ट मदुराई, जिला दक्षिण भारत।

खान अब्दुल गफ्फार खाँ पाकिस्तान सरकार के जेल में बंद होने से उनसे संघ का संबंध टूट गया। अन्य ट्रस्टी विवरण-काल में संघ के काम में सक्रिय हिस्सा लेते रहे।

सभा की अवधि : ट्रस्टी-मंडल की सभा विवरण-काल के पहले साधारणतः साल में दो बार हुआ करती थी। सन् १९४९-५० और १९५०-५१ में मिल कर वह पाँच बार हुई। अब यह निर्णय किया गया कि साधारणतः तीन महीने के बाद ट्रस्टी-मंडल की सभा रखी जाय।

उपसमितियाँ. विवरण-काल में ट्रस्टी-मंडल द्वारा बनायी गयी नीचे लिखी पुरानी और नयी उपसमितियाँ काम करती रहीं : १. बजट समिति, २ शिक्षा समिति, ३ सरंजाम-सुधार समिति, ४. कपास समिति, ५. प्रमाणपत्र समिति और ६. पोत-सुधार समिति।

इनके अलावा केन्द्रीय दफ्तर में १. कताई-मंडल विभाग, २. शिविर

विभाग, ३. प्रमाणपत्र विभाग, ४. प्रयोग विभाग तथा ५. कपास विभाग ये कार्य-विभाग भी बनाये गये। इन उपसमितियों तथा विभागों के काम के बारे मे विवरण मे जानकारी दी ही गयी है। बजट समिति के अलावा उन-उन समितियों के सदस्यों के नाम भी उनकी जानकारी के साथ विवरण मे दिये हैं। विवरण-कालीन बजट-समिति के सदस्यों के नाम इस प्रकार रहे : १. श्री धीरेन्द्र मजूमदार, २. श्री अ० वा० सहस्रबुद्धे, ३ श्री र० श्री० धोत्रे, ४ श्री कृष्णदास गांधी, ५ श्री द्वा० वि० लेले।

प्रान्तीय एजेण्ट (प्रतिनिधि) : महाराष्ट्र तथा पंजाब मे क्रमशः श्री रघुनाथ श्रीधर धोत्रे तथा श्री गोपीचन्द भार्गव ये दो प्रान्तीय एजेण्ट रह गये थे। बाकी प्रान्तों मे एजेण्ट पहले ही बन्द हो गये थे। इसलिए एजेण्ट की पद्धति रखने या न रखने के सम्बन्ध मे अप्रैल १९५१ की हैदराबाद की सभा मे विचार होकर प्रान्तीय एजेण्ट-पद्धति बन्द करना तय हुआ। उसके अनुसार अब प्रान्तो मे कोई एजेण्ट नहीं रहा।

अध्यक्ष विवरण-काल मे मार्च १९५१ मे अध्यक्ष श्री धीरेन्द्र मजूमदार का तीन साल का कार्यकाल समाप्त हुआ। जनवरी १९५१ की सभा में उनको फिर से तीन साल के लिए चरखा-संघ का अध्यक्ष चुना गया।

मंत्री तथा सहायक-मंत्री : संघ के मंत्री श्री कृष्णदास गांधी की तीन वर्ष की अवधि पूरी होने पर जून १९५० की बारडोली की सभा मे उनको फिर से मंत्री चुना गया। बाद मे जनवरी १९५१ मे उन्होंने तिरुपुर मे रह कर प्रयोग के काम मे तथा दक्षिण की शाखाओं के काम परिवर्तन लाने की दृष्टि से विशेष रूप से कार्य करने का विचार किया और कई महीने अपना मुकाम दक्षिण मे ही रखा। इस कारण प्रधान कार्यालय के हिसाब-विभाग का काम श्री द्वारकानाथजी लेले के सुपुर्द किया गया। बाद मे सितम्बर १९५१ मे श्री द्वारकानाथजी लेले सहायक-मंत्री नियुक्त हुए। उसी वक्त प्रधान-मंत्री का कार्यकाल छह साल से अधिक न हो, ऐसा प्रस्ताव हुआ। लेकिन शाखा-मंत्री के लिए पांच साल की

अवधि रखी है, वही सघ के विद्यमान मत्री के लिए लागू रहे, इस मान्यता के अनुसार श्री कृष्णदास गाधी का मन्त्रिपद का पाँच साल का कार्यकाल समाप्त होते आया था। इसलिए उनकी जगह श्री अनन्त वासुदेव सहस्रबुद्धे को प्रधानमत्री चुना गया।

प्रबन्ध-सहायक : प्रान्तो मे प्रधानमन्त्री का प्रतिनिधित्व कर सके, इस दृष्टि से नीचे लिखे अनुसार प्रबन्ध-सहायक की योजना विवरण-काल मे की गयी।

सघ के मौजूदा काम का स्वरूप देखते हुए प्रधान कार्यालय के कार्य-कर्ता के तौर पर कुछ ऐसी नियुक्तियाँ करना जरूरी मालूम पडा, जो जब जहाँ जरूरत पडे, उस क्षेत्र मे और प्रधानमत्री जरूरत समझे उन कामो मे, प्रधानमन्त्री का प्रतिनिधित्व कर सके। विचार यह था कि काम के सुविधानुसार ये प्रबन्ध-सहायक कुछ मुकर्रर क्षेत्र मे ही सामान्यतः प्रधानमन्त्री की सहायता करते रहेगे। लेकिन नीति के तौर पर उनके लिए कोई मुकर्रर क्षेत्र नही रहेगा। बल्कि जहाँ कही जरूरत पडे, वहाँ जाकर मन्त्री की सहायता करना उनका काम रहेगा। यह जरूरी नही है कि प्रबन्ध-सहायक अपना निवास केन्द्रीय दफ्तर के स्थान मे ही रखे। मोटे तौर पर जिस क्षेत्र मे काम करना पडेगा, उसी क्षेत्र के किसी खादी-विद्यालय मे या किसी सघन क्षेत्र मे या सघ के किसी खास खादी-केन्द्र मे उनका निवास रहना लाभदायी होगा। जहाँ तक हो सके, प्रबन्ध-सहायक पर सचालन व रुटीन का बोझ न रहे, मगर मन्त्री और सचालक-गणो को मार्गदर्शन तथा सहारा देने का रहे।

इस प्रस्ताव के अनुसार श्री आर० श्रीनिवासन् को विवरण काल मे प्रबन्ध-सहायक नियुक्त किया गया और उन्हे केरल, तमिलनाड तथा आन्ध्र के नये विभागो का सगठन और प्रचार का काम सौपा गया। शुरू मे इस पद का नाम मत्री सहायक रखा गया था, लेकिन सहायक-मत्री और मत्री-सहायक का भेद समझने मे मुश्किल होने से बाद मे मन्त्री-सहायक के बदले प्रबन्ध सहायक नाम रखा गया।

शाखा के विभाग : प्रान्तीय शाखाओं की जगह अपने नये काम की दृष्टि से छोटे-छोटे विभाग बनाने की नीति संघ ने विवरण-काल में अख्तियार की। विभाग बनाने के पीछे चरखा संघ की दृष्टि इस प्रकार रही :

चरखा-संघ का नया काम (वस्त्र-स्वावलम्बन) करने की दृष्टि से जब विचार करते हैं, तब यह महसूस होता है कि आज की प्रान्तीय शाखा-व्यवस्था कार्यक्षम नहीं रह सकेगी। कारण सारे क्षेत्र में वस्त्र-स्वावलम्बन तथा क्षेत्र-स्वावलम्बन की दिशा में कार्य करने के लिए क्षेत्र के करीब-करीब समूचे गाँवों से सम्बन्ध रखना होगा, वहाँ की परिस्थिति का अध्ययन करना होगा और जन-सम्पर्क बढ़ाना होगा। यह सारा काम प्रांतीय दफ्तर की ओर से करना कुछ कठिन सा होगा। प्रान्त में विभिन्न परिस्थिति के अलग-अलग क्षेत्र रहना स्वाभाविक है। इस दृष्टि से अलग-अलग क्षेत्रों के कार्यक्रम में भी कुछ भेद रहना स्वाभाविक हो जाता है। इस विचार से प्रान्तीय शाखा की मार्फत काम चलाने के बदले विभिन्न विभागों की योजना बनायी गयी।। यह योजना परिशिष्ट ६ में दी गयी है।

इस नीति के अनुसार जैसे-जैसे सम्भव हुआ, वैसे-वैसे शाखाओं को विभागों में बाँटा गया। अब तक जिन जिन शाखाओं के विभाग बनाये गये, उनकी सूची और मुख्य केन्द्र नीचे लिखे अनुसार है :

१ आन्ध्र शाखा . कृष्णा विभाग, मछली-पत्तनम्। गोदावरी विभाग, काकिनाडा। नेल्लोर विभाग, नेल्लोर। तेनाली विभाग, तेनाली। श्रीकाकुलम् विभाग, श्रीकाकुलम्।

२ कर्नाटक शाखा : हुबली विभाग, हुबली। कल्हाल विभाग, कल्हाल। गुर्लहोसुर विभाग, गुर्लहोसुर। कलादगी विभाग, कलादगी। दक्षिण कर्नाटक विभाग, चिक मगलूर।

३. केरल : पालघाट विभाग, पालघाट। कोझीकोड विभाग, एरानी-पालम्। नागरकोइल विभाग, नागरकोइल।

४. तमिलनाड तंजावर विभाग, कुंभकोणम्। तिरुनेल्वेल्ली विभाग,

कोविलपट्टी । तिरुपुर विभाग, तिरुपुर । मदुरा-रामनाड विभाग, मदुराई । मद्रास विभाग, मद्रास ।

५. महाराष्ट्र : बम्बई विभाग, बम्बई । पूना विभाग, पूना । नाग-विदर्भ विभाग, मूल ।

इनके अलावा कश्मीर तथा गुजरात शाखाएँ अब शाखाएँ नही रही, उनको विभाग नाम दिया गया । गुजरात मे अभी क्षेत्र के आधार पर विभाग नही बनाये जा सके थे । लेकिन यहाँ कताई-मण्डल, सरजाम, प्रमाण-पत्र और खादी-बिक्री के लिए चार कार्य-विभाग किये गये ।

यह अनुभव आया कि विभाग कर देने के कारण पहले जो केन्द्रित अनुशासन और आर्थिक लेन-देन की कार्य-क्षमता रहती थी, वह कहीं-कहीं घटी है । लेकिन दूसरी ओर अधिक कार्यकर्ताओ पर जिम्मेदारी बॉटी जाने से उनकी शक्ति क्रमशः बढाने का और अपनी सूझ के अनुसार काम करने का उन्हे मौका मिला । इस चीज की जरूरत अब सघ जिस तरह का काम करना चाहता था, उसमे बहुत ही थी और विभागो की योजना के कारण उस ओर प्रगति दीख पडी थी ।

सघ का प्रतिनिधित्व : सरकारी समितियो तथा अन्य रचनात्मक संस्थाओ की ओर से सघ के प्रतिनिधित्व की मॉग आती रहती थी । विवरण-काल मे अलग-अलग सस्थाओ पर सघ के जो प्रतिनिधि नियुक्त किये गये या चालू रहे, उनकी सूची नीचे लिखे अनुसार है :

	प्रतिनिधि
१. कॉटन इडस्ट्रीज बोर्ड, भारत सरकार :	श्री सिद्धराज ढढ्ढा
२ इडियन स्टैंडर्ड इस्टिट्यूशन, भारत सरकार	श्री द्वारकानाथ लेले
३. रचनात्मक समिति, अ० भा० काग्रेस कमेटी :	श्री कृष्णदास जाजू
४. सयुक्त प्रदर्शन समिति :	सघ के मन्त्री (अभी श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे)
५. अ० भा० सर्व-सेवा-सघ :	श्री धीरेन्द्र मजूमदार
६. मगन-संग्रहालय, वर्धा :	श्री कृष्णदास गाधी

राष्ट्रीय झण्डा

राष्ट्रीय झडा १९२१ से खादी का ही बनता रहा और चरखा-सघ द्वारा उसे बनाने व बेचने का काम होता रहा। आजादी के बाद राष्ट्रीय झडा केवल जनता तक न रह कर वह सरकार के अधिकार-क्षेत्र मे चला गया। सरकार ने राष्ट्रीय झण्डे का स्टैंडर्ड निश्चित करने के लिए एक कमेटी मुकर्रर की, जिसमें चरखा-सघ के प्रतिनिधि का भी समावेश किया गया। सघ ने श्री द्वारकानाथ लेले को प्रतिनिधि मुकर्रर किया। राष्ट्रीय झण्डा खादी का ही हो, इसके लिए चरखा-सघ ने विशेष प्रयत्न किये और उसे बनाने तथा वितरण करने की जिम्मेवारी भी स्वयम् उठाने का भार स्वीकार किया। कमेटी ने राष्ट्रीय झण्डे की खादी की बनावट का तथा रंग और आकार आदि का स्टैंडर्ड निश्चित किया और उस सम्बन्ध मे एक पुस्तिका प्रकाशित की। झण्डे के स्टैंडर्ड की सूती खादी बनाने का प्रबन्ध चरखा-सघ ने अपने केन्द्रों मे किया और उसके रगाने-छपाने की व्यवस्था भी बम्बई मे की गयी। सिर्फ सिलाई का काम सरकार अपने लिए खुद कर लेगी।

झण्डे की ऊनी तथा रेशमी खादी के स्टैंडर्ड अभी तक निश्चित नहीं हुए थे। वे तय होने पर उस लायक कपडा बनाने की दृष्टि से सघ ने बीकानेर मे एक ऊनी केन्द्र चालू किया था।

प्रकाशन

१९४९ के अगस्त मे चरखा-सघ ने अपने मुख-पत्र "खादी-जगत्" का प्रकाशन बन्द किया और सभी रचनात्मक सघों का मुख-पत्र एक हो, इस विचार से सर्व-सेवा-सघ ने "सर्वोदय" का प्रकाशन शुरू किया। खादी और सर्वोदय की मूल विचारधारा एक ही है। अतः विचार-प्रचार के लिए 'सर्वोदय' मासिक चरखा-सघ के व खादी-प्रेमियो के लिए विशेष उपयुक्त होने से 'खादी-जगत्' बन्द करने में चरखा-सघ को आपत्ति नहीं मालूम हुई। मगर कताई-मण्डलों के व्यापक कार्यक्रम मे

उनके आपसी व चरखा-संघ के साथ के सम्पर्क के लिए छोटे से पत्रक की जरूरत दीखी। इसी पूर्ति के लिए 'कताई-मण्डल पत्रिका' जनवरी १९५१ से शुरू की गयी। $\frac{१}{८}$ डेमी के ८ पृष्ठों की यह पत्रिका नियमित रूप से पाक्षिक के तौर पर चरखा-सघ के कताई-मण्डल विभाग की ओर से प्रकाशित होती थी। उसका वार्षिक चन्दा १ रुपया था। ग्राहक-सख्या और मुफ्त वितरण मिला कर मासिक १८५० तक अक विवरण-काल के अन्त मे प्रकाशित होते रहे। हाथ कागज व ८ पृष्ठ होने से पत्रिका का वार्षिक खर्च करीब रुपया २-८-० प्रति अक आता रहा। मगर प्रचारार्थ चरखा-सघ घाटे मे ही पत्रिका निकाल रहा था।

विवरण-काल मे पुस्तक-बिक्री घटती गयी। प्रथम वर्ष रुपये ११,६९५ की और दूसरे वर्ष रुपये ८,८६१ की बिक्री हुई। प्रधान कार्यालय के प्रकाशन विभाग की ओर से विवरण-काल मे पुरानी और नयी किताबे मिला कर १४ किताबे प्रकाशित की गयीं। सघ के प्रकाशन की सूची निम्नलिखित है :

खादी-साहित्य

विचारात्मक		मूल्य
१ अ भा चरखा-सघ का इतिहास	श्री कृष्णदास जाजू	३-८-०
२. अ भा. चरखा-संघ और उसका कार्य	,,	०-६-०
३ चरखा-सघ का नव-सस्करण	,,	१-८-०
४ चरखे की तात्त्विक मीमासा (हि)	,,	१-०-०
५. The Ideology of Charkha	,,	०-१४-०
६ क्रान्तिकारी चरखा (हिं.)	श्री धीरेन्द्र मजूमदार	०-५-०
७ Revolutionary Charkha	,,	०-६-०
८. Demand of the Times	,,	०-१२-०
९. बापू की खादी	,,	०-८-०
१०. आजादी का खतरा	श्री कृष्णदास जाजू	०-८-०
११. ग्राम-स्वावलम्बन की ओर (आकडो की दृष्टि से)		०-४-०

१२	ग्राम-सेवा की योजना	• बालकोबा	०—२—०
१३	Swaraj through Charkha (गु अ)	• कनु गांधी	०—४—०
१४.	कपास की समस्या—खादी की दृष्टि से •	दादाभाई नाईक	०—८—०
१५	कपास स्वावलम्बन	,,	०—२—०
१६	चरखा सघ का कार्यक्रम (हिंदी)		०—६—०
१७.	New Programme of work of A.I S A		० १०-०
१८	अ भा चरखा-सघ मार्गसूचिका		१—८—०
१९	सर्वोदय-प्रदर्शनी, जयपुर कार्य-विवरण		१—०—०
२०	खादी शिक्षा समिति पाठ्य-क्रम तथा नियमावली		०—८—०
२१	खादी-शिविर		०—२—०
२२	चरखा-आदोलन की दृष्टि और योजना		०—३—०
२३.	सरकार और खादी		०—२—०
२४	गांधीजी का फोटो (चरखा कातते हुए)		२—८—०
२५	खादी-केन्द्र सूची (चौथा सस्करण)		०—४—०
२६	Elements of Village Administration and Law	. by R.K Pati	१—०—०

क्रियात्मक			मूल्य
२७	घरेलू कताई की आम बातें :	कृष्णदास गांधी	१—४—०
२८	घरगुती कताईच्या सामान्य गोष्टी (मराठी)	,, ,,	१—०—०
२९	घरेलू कताई की आम गिनतियाँ	,, ,,	०-१२-०
३०	कताई गणित प्रकरण १ (हिं म)	,, ,,	१—०—०
३१	,, ,, प्रकरण २ (हि म)	,, ,,	०-१२-०
३२.	,, ,, प्रकरण ३	,, ,,	१—०—०
३३	,, ,, प्रकरण ४	,, ,,	०—८—०
३४.	दुबटा	,, ,,	०—२—०

३५	कताई-प्रवेश (मराठी)	केशव देवधर	१-८-०
३६	सरजाम-परिचय (हिंदी मराठी)	,, ,,	१-०-०
३७.	किसान-चरखा	प्रभाकर दिवाण	१-०-०
३८	वस्त्रविज्ञान लेख-सग्रह	,, ,,	१-०-०
३९	खडा-चरखा	केशव देवधर	१-०-०
४०.	सावली चरखा (मराठी)	,, ,,	०-१-६
४१	मध्यम पिजन	मथुरादास पुरुषोत्तम	१-४-०
४२	सुलभ पूनी	केशव देवधर	०-३-०
४३.	सुलभ पेळू (मराठी)	,, ,,	०-३-०
४४	वणाट-शास्त्र (गुजराती)	मगनलाल गाधी	९-१० ०
४५.	बुनाई	दत्तोबा दास्ताने	५-०-०
४६	१९४५-४६, १९४६-४७, १९४७-४८, १९४८-४९ साल की 'खादी-जगत्' की जिल्दें	प्रति जिल्द	८-०-०

प्रकाशन का कुछ कार्य प्रान्तीय भाषाओ मे, खास कर दक्षिण भारत की भाषाओ मे करना विशेष आवश्यक था। उसके अनुसार तमिल में "खदर मलर्" और मलयालम् मे "खादी-जगत्" का प्रकाशन सघ की वहाँ की शाखाओ की ओर से चलाया गया। इन दोनो भाषाओ मे कुछ पुस्तक प्रकाशन भी होता रहा।

विवरण-काल के अन्त म "खादी-वर्ल्ड" नामक एक अग्रेजी मासिक भी चरखा-सघ की ओर से तमिलनाड के भूतपूर्व मन्त्री श्री रामस्वामी के सम्पादन मे तिरुपुर से प्रकाशित करना शुरू किया गया। उसका वार्षिक चन्दा तीन रुपया था।

ग्राम-सेवक

सन् १९४४ मे गाधीजी ने चरखे की अपनी मीमासा अधिक स्पष्ट करने की कोशिश की, खादी-काम मे आमूलाग्र परिवर्तन करने का सुझाव रखा और चरखा-सघ को गाँव-गाँव मे बँट जाने की एव विसर्जित हो जाने की सलाह दी। खादी को समाज मे अहिसक-जीवन सिद्ध करना है

और उसके लिए हिंसक मूल्यों से छुटकारा पाते हुए समाज के गुजारे के तरीके बनाना है। अन्न-वस्त्र जैसी गुजारे की मूल आवश्यकता से इसका आरम्भ होता है और नींव भी बनती है। इसलिए स्वावलम्बन और स्वयपूर्णता पर आधारित खादी-काम की दृष्टि से और जिनके लिए वह काम करना है, जैसे देहातों की दृष्टि से, चरखा-सघ का कार्यक्रम होना चाहिए, इस बात पर उन्होंने जोर दिया। उससे समग्र ग्राम-सेवक की कल्पना निकली और चरखा-सघ ने एक नयी योजना बनायी। चरखा-सघ ने देखा कि पुराने सब कार्यकर्ता यह नया काम नहीं कर सकेंगे। इसलिए एक ओर से पुराने काम में धीरे-धीरे परिवर्तन लाने और दूसरी ओर से नये सेवक लेकर काम करने का सघ ने विचार किया। जो सेवक इस नयी दृष्टि से खादी-काम करना चाहे, गाँव मे बसना चाहे, उन्हे ५ वर्ष तक उनके गुजारे लिए निर्वाह-व्यय देते हुए अपनी सूझ बूझ से पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ काम करने का मौका देने की यह योजना थी। मगर यह एक नया विचार था और उसमे कूदने के लिए काफी साहस, त्याग व ज्ञान की जरूरत थी। इसलिए बहुत ज्यादा कार्यकर्ता इसमे नहीं मिले। शुरू मे १८ कार्यकर्ता इस योजनानुसार गाँवो मे काम करने लगे, जिनमे से कुछ ने बाद मे यह काम छोड दिया और कुछ ने यह योजना ही छोड दी।

बाद मे अहिंसक समाज रचना के सर्वतोमुखी कार्यक्रम के लिए जब सर्व-सेवा-सघ बना, तब ग्राम-सेवक की योजना उसीके अधीन व मार्ग-दर्शन मे चलाना उचित मालूम पडा। विवरण-काल मे अपना ग्राम सेवक-विभाग चरखा सघ ने सर्व सेवा सघ के सुपुर्द कर दिया और जो सेवक थे, उनके खर्च की उतनी रकम भी सर्व सेवा-सघ को दे दी, जो उन सेवकों की ५ साल की मियाद पूरी होने तक काम आ सके।

सर्व-सेवा-सघ से सम्बन्ध

रचनात्मक कार्यक्रम के अलग-अलग कामों के लिए चलनेवाली

संस्थाएँ सम्मिलित करने की कल्पना से १९४८ मे सर्व-सेवा-सघ की स्थापना हुई। चरखा-सघ सर्व-सेवा-सघ मे विलीन हो जाय या जुडी हुई, मगर स्वतन्त्र सस्था के रूप मे काम करता रहे—यह सवाल विवरण-काल मे बार बार उठता रहा। उसका निर्णय करना आसान नही था। एक ओर से तो चरखा सघ का उद्देश्य भी अहिसक समाज रचना की स्थापना था। इसी उद्देश्य से, मगर उसके लिए जरूरी सारे रचनात्मक कार्यक्रम चलाने की दृष्टि से सर्व-सेवा सघ की स्थापना हुई। तब उसीमे चरखा सघ का विलीन हो जाना सयुक्तिक व सुसगत लगा। फिर भी कुछ कारण ऐसे थे, जिनसे चरखा सघ ने निर्णय किया कि सर्व-सेवा सघ मे विलीन होने के बदले उससे जुडे हुए रहकर अपने जिम्मे के विशेप काम को ही प्राधान्य दे। वे कारण ये थे :

१. चरखा-सघ के लिए जनता से जो चदा माँगा गया था, वह खादी-कार्य के लिए ही माँगा गया था और उसे उसी काम मे लगाया जा सकता था। सर्व-सेवा-सघ के क्षेत्र मे आनेवाले दूसरे कामो मे नहीं लगाया जा सकता था। इसलिए विलीनीकरण का पूर्ण उद्देश्य नही सध सकता था।

२. सारे रचनात्मक कामो मे खादी का काम सबसे ज्यादा कठिन है। चरखे के सामने मिले खडी है। इसलिए खादी काम को एकमात्र और प्रधान लक्ष्य बना कर उसमे अधिक-से-अधिक शक्ति लगानेवा-ी स्वतत्र सस्था की जरूरत थी। समग्र प्रवृत्तियो मे मिला देने से खादी काम की ओर दुर्लक्ष्य होना सम्भव था।

३ सर्व सेवा सघ की रचना-सगटना ऐसी है, जिसमे ऐसे व्यक्तियो का भी अतर्भाव हो सकता है, जो खादी पर वैसा विश्वास न रखते हो, जैसा कि चरखा-सघ रखता है।

४. सर्व सेवा सघ के मुख्य सदस्यो मे अनेक दृष्टिकोण पाये जाते थे, जो कभी-कभी तीव्र मतभेद का स्वरूप भी ले लेते थे। ये मतभेद खादी-कार्य के सचालन मे विघ्नरूप हो सकते थे। और

५ सर्व-सेवा सघ गाधीजी की समग्र रचनात्मक प्रवृत्ति चलाने के लिए बना। यह रचनात्मक प्रवृत्ति जीवन मे उनका अमल किये बिना पनप नहीं सकती। चरखा-सघ पचीस साल की पुरानी संस्था थी। उसके सारे कार्यकर्ता एकाएक समग्र दृष्टि का अमल कर सकेंगे, ऐसी हालत बदती नही थी। वह अमल किये बिना चरखा सघ के विलीन होने से सर्व-सेवा-सघ की शक्ति नहीं बढती, बल्कि कमजोरी ही बढने की अधिक सभावना थी।

चरखा सघ की राय मे ये बाते इतने गम्भीर स्वरूप की थीं कि सघ के ट्रस्टी सर्व-सेवा-सघ के प्रति पूरी आत्मीयता रखते हुए भी उसमे विलीनीकरण के लिए सम्मत नहीं हो सके।

चरखा सघ जो काम कर रहा था, वह कुछ सीमित मर्यादाओ मे करते आया था। लेकिन उसीसे वह एक विशेष प्रकार से पनप सका और इतने अधिक विपरीत वायुमडल मे खादी को निभाता रहा। समग्रता के विचार से उसका विरोध नहीं था, पर अपने काम मे समग्रता के अमल की शक्ति अभी चरखा-सघ के पास नही थी। सर्व-सेवा सघ एक ऐसी संस्था बननी चाहिए, जिसमे यह अमल सर्वस्पर्शी व अधिक से-अधिक हो। उस अमल की पूर्व तैयारी के बिना किया हुआ विलीनीकरण खादी और समग्र-सेवा दोनों कामो के लिए हानिकर होता। क्योंकि समग्रता के नाम से खादी पर की केन्द्रित दृष्टि भी विचलित होकर अपने जिम्मे आया हुआ काम भी शिथिल या विसघटित होता और प्रत्यक्ष अमल के अभाव की त्रुटि रहती। तब समग्रता का विचार भी अपनी जडे नहीं जमा पाता। इसलिए चरखा-सघ ने यही उचित माना कि अपने मुख्य काम के साथ अन्न-वस्त्र के लिए मिलो से बनी वस्तुओ का त्याग, व्यसन-मुक्ति, उत्पादक परिश्रम करने का आग्रह, देहाती जीवन के हर पहलू का अभ्यास, खेती और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक सफाई व खाद बनाना आदि कार्यक्रमो को जोडा जाय। विवरण-काल मे सघ इस बारे मे विशेष कोशिश करता रहा और अत तक भी वह इस ओर क्रियाशील रहा।

सर्व-सेवा-सघ के काम मे साथ देने का और पोषक बनने का यही तरीका चरखा सघ ने उचित माना ।

समग्रता के नाम पर खादी के बारे मे दुर्लक्ष्य होता, इस विचार के बारे मे भी यहाँ थोडा स्पष्टीकरण करना जरूरी है । इसमे दो राये नहीं हो सकती कि देश के उत्थान के लिए और नवसमाज निर्मिति के लिए अनेक कार्य देश मे करने की जरूरत है । लेकिन विभिन्न कामो के विभिन्न पहलू और समस्याएँ रहती हैं । पर दूसरे कामो के लिए वह कठिनाई, वह उदासीनता, वह विरोध देश मे खडा नहीं है, जो खादी के बारे मे है । कपडे की मिलो के कारण खादी का काम एक अति विकट समस्या का रूप ले रहा है । उसके लिए बहुत ज्यादा व विशेष प्रकार से शक्ति लगाने की जरूरत है । आसान कामो की ओर झुकना यह मनुष्य-स्वभाव है । समग्रता के नाम पर आसान कार्यक्रमो मे वह जाने और खादी के बारे मे उदासीनता या निष्क्रिय वृत्ति आ जाने का खतरा भी विलीनीकरण मे चरखा सघ ने महसूस किया । इसके अलावा इतनी बडी-बडी समस्याओ के लिए एक सघ बना कर केन्द्रीकरण करने के बदले स्वतन्त्र इकाइयाँ रख कर याने विकेन्द्रित रह कर आपस मे वह सम्बद्ध व जुडी हुई रहे, यही कार्य-पद्धति ज्यादा लाभदायी होगी, ऐसा भी एक मूलभूत विचार चरखा सघ के सामने रहा ।

इन सब विचारो से चरखा-सघ ने विलीनीकरण के बदले स्वतन्त्र-सस्था के रूप मे, मगर सर्व-सेवा-सघ से जुडे रह कर उसकी नीति व मार्गदर्शन लेकर काम करने मे ही सर्व सेवा सघ की और देश की ज्यादा सेवा होगी, ऐसा माना । चरखा सघ के जो कार्य विभाग सर्व सेवा-सघ मे विलीन कर देना लाभदायी मालूम पडता था, उन विभागो को सर्व-सेवा सघ के सुपुर्द कर देने का निर्णय चरखा-सघ ने किया और उसके अनुसार विवरण काल मे समग्र ग्रामसेवक विभाग पूर्ण रूप से उसे सुपुर्द कर दिया गया । प्रकाशन का बिक्री-विभाग भी सुपुर्द कर देने की योजना बन गयी । सर्व सेवा-सघ की तैयारी होने पर पूरा प्रकाशन विभाग

उन्हें सुपुर्द कर देना तय किया गया। आगे चलकर विद्यालयों का काम भी सर्व-सेवा-संघ में मिला देने का विचार था। पर खादी-उत्पत्ति, बिक्री व केवल खादीसम्बन्धी अनेक व्यावहारिक काम आज की तरह स्वतंत्र रखना इस कठिन हालत में चरखा-संघ को बहुत जरूरी लगा, जब कि मिलों की संस्कृति खादी को मारने के लिए कटिबद्ध है।

सर्व-सेवा संघ के नियमानुसार चरखा संघ में जो सालाना वेतन दिया जाता था, उस पर ५% के हिसाब से करीब ३० से ३२ हजार रुपये सालाना चन्दा विवरण-काल में चरखा संघ द्वारा सर्व-सेवा संघ को अदा किया जाता रहा।

गांधी स्मारक-निधि

इस निधि का विनियोग गांधीजी के सुझाये विविध रचनात्मक कामों के लिए करने का और कुल निधि का कितना हिस्सा उन-उन मदों में खर्च किया जाय, इसका निर्णय गांधी स्मारक-निधि के ट्रस्टी-मण्डल ने कर लिया। खादी के लिए रुपये में आधा आना यानें कुल निधि का ३२ वाँ हिस्सा अंकित रखने का तय किया गया। इस अंकित रकम के विनियोग के बारे में निधि की ओर से पूछे जाने पर चरखा-संघ ने अपने ट्रस्टी-मंडल में विचार करके निधि को यह सुझाव भेज दिया कि केवल वस्त्र-स्वावलम्बन के काम में और वह भी आज की हालत को देखते हुए वस्त्र स्वावलम्बियों के सूत की बुनाई में सुविधा हो, ऐसे संगठन के काम में खर्च किया जाय। इस सम्बन्ध की एक तफसीलवार योजना बना कर वह चरखा-संघ की ओर से निधि को भेज दी गयी।

मद्रास सरकार और चरखा-संघ

चरखा-संघ ने अपने पिछले कई विवरणों में मद्रास सरकार की खादी-योजना के बारे में जानकारी दी है। उसका फिर से यहाँ कुछ उल्लेख करना होगा, क्योंकि इस विवरण-काल में मद्रास सरकार की इस योजना से चरखा-संघ का सम्बन्ध छूटा और वह भी कुछ कटुता पैदा करके।

भारत की आजादी के प्रसग मे जब १९४६ मे काग्रेसी मन्त्रिमण्डल बने, तब मद्रास राज्य मे श्री टी० प्रकाशम् मुख्यमन्त्री थे। उनका खादी-काम से परिचय था। पुराने जमाने मे कुछ समय तक वे चरखा-सघ की आन्ध्र-शाखा के मन्त्री भी रह चुके थे। उन्होने खुद होकर मद्रास सूबे के २७ फिरको मे १८ महीनो मे खादी द्वारा पूर्ण वस्त्र-स्वावलम्बन करने की योजना बनायी। २७ फिरको की जनसख्या करीब १० लाख थी। इतनी बडी योजना कामयाब होने की चरखा सघ को आशा नहीं थी, और एक बार बडी योजना लेकर असफल होने की दशा मे खादी के कार्यक्रम को हानि पहुँचती। इस दशा मे चरखा-सघ ने उनको कुछ छोटी योजना सुधार कर बनाने को लिखा। उन्होने इस काम के अपने मुख्य अधिकारी को चरखा-सघ के दफ्तर मे और गान्धीजी के पास भी भेजा। इस सलाह-मशविरे के फलस्वरूप सात फिरको की वस्त्र-स्वावलबन की योजना बनायी गयी और मद्रास सरकार ने घोषणा की कि इसके बाद मद्रास राज्य मे कपडे की नयी मिले खडी नही करने दी जायँगी और पुरानी मिलो का विस्तार नहीं हो सकेगा। खादी के लिए इतना अनुकूल वातावरण हो जाने पर सात फिरको की वस्त्र स्वावलबन की योजना सफल होने की पूर्ण आशा बँधी और उसके बारे मे अधिक शर्ते डालना जरूरी न देखकर चरखा-सघ ने योजना सफल बनाने मे पूरा सहयोग देना स्वीकार किया। उसने अपने खादी-उत्पत्ति के छह बडे केद्र मद्रास-सरकार को अपने कार्यकर्ताओसहित सुपुर्द कर दिये। प्रान्त की तीनो शाखाओ के मन्त्री इस काम के लिए 'आनररी रीजनल आफिसर' मुकर्रर किये गये। ज्यादा उत्पत्ति के उत्तम केन्द्र सरकार को सौंपने का उद्देश्य यह था कि वहाँ कताई बडे पैमाने पर चलती ही थी, लोगो को उसका खुद उपयोग करने की प्रेरणा देने से बहुत कुछ काम आसान हो जाता। आस-पास मे विशेष तादाद मे कताई चलने रहने के कारण जिन घरो मे कताई नही चलती थी, वहाँ भी उसे दाखिल करना आसान होता।

ऊपर लिखी मद्रास सरकार की मिलसम्बन्धी नीति का घोर विरोध

हुआ। योजना शुरू होने के थोड़े ही समय के बाद मन्त्रि-मंडल बदला और श्री ओ० पी० रामस्वामी रेड्डियार नये मुख्यमन्त्री बने। उनकी सरकार ने श्री प्रकाशम् की मिलसम्बन्धी नीति को पलट दिया। पर सात फिरकों की वस्त्र-स्वावलम्बन की योजना कायम रखी। उस दशा में भी चरखा-संघ का सहयोग पूर्ववत चालू रहा। १९४७ के जुलाई महीने में चरखा संघ ने मुख्यमंत्री के सामने यह बात पेश की कि अगर बदली हुई परिस्थिति में यह वस्त्र स्वावलम्बन की योजना सफल करना हो, तो दो बातें करना अत्यन्त आवश्यक है :

१. अप्रमाणित व्यापारी उन क्षेत्रों से सूत खरीद कर बाहर ले जाते हैं, इससे स्थानीय इस्तेमाल के लिए सूत बच नहीं पाता। उन व्यापारियों पर रोक लगनी चाहिए।

२. उन क्षेत्रों में मिल का कपड़ा नहीं पहुँचने देना चाहिए।

अगर ये शर्तें स्वीकार नहीं की जा सकतीं, तो योजना सफल होने की आशा नहीं रखनी चाहिए और उसे बंद कर देने का विचार करना चाहिए। मुख्यमंत्री ने योजना चालू रखना तय किया और दोनों शर्तें अमल में लाने का आश्वासन दिया। उसके बाद अप्रमाणित व्यापारियों पर रोक लगाने का कानून बना, पर उसका अमल करने में बारह महीने से अधिक देरी यह कहकर हुई कि पुराने चलते अप्रमाणित व्यापार का माल खपाने को उन व्यापारियों को समय मिलना चाहिए, हालां कि माल खपाने पर तो कोई रोक थी ही नहीं। प्रश्न तो उन क्षेत्रों में नया सूत खरीदने पर रोक लगाने का ही था। दूसरी शर्त याने मिल का कपड़ा उन क्षेत्रों में न आने देने के बारे में अमल होने के कोई चिह्न नहीं दीखे। दरमियान में श्री रामस्वामी रेड्डियार की जगह श्री कुमारस्वामी राजा प्रधानमंत्री बने, अर्थात् नया मन्त्रिमंडल बना। चरखा-संघ ने फिर से उनके सामने वही बात रखी। बहुत देर के बाद उस मन्त्रिमंडल ने तय किया कि वह शर्त किसी रूप में पूरी नहीं की जा सकती। तब मूल योजना सफल होने की आशा न देखकर चरखा-संघ

उससे हट गया और सरकार को कहा कि जब वस्त्र-स्वावलबन की योजना नही रह जाती, तो वस्त्र-स्वावलबन योजना के लिए दिये गये केद्र चरखा-सघ को वापस दे दिये जायॅ। कानून और न्यायनीति से केद्र वापस करना उनका कर्तव्य होते हुए भी उन्होने वैसा करने से इन्कार कर दिया और अब वे केद्र व्यापारिक खादी-उत्पत्ति के तौर पर सरकार ही चलाने लगी।

चरखा सघ ने उस योजना से अपना सबध तोडा, तब वह काम मद्रास सरकार के मत्री श्री परमेश्वरन् के सुपुर्द था। ऐसा दिखाई पडा कि उन्हे खादी-काम का ज्ञान कम था। जब धारासभा मे उनसे इस योजना के बारे मे अनेक प्रश्न किये गये, तब उन्होने एक विधान यह किया कि खुद चरखा-सघ ही मिल का कपडा उन क्षेत्रो मे न आये, इस पर दृढ नहीं था। उनका यह बयान बिलकुल गलत था। चरखा-सघ ने मद्रास सरकार से जो सबध छोडा, वह एक प्रकार से प्रेम के साथ ही छोडा था। उसने अपना कोई बयान शाया नही किया, न उसकी इच्छा इस विषय मे खुले तौर पर बोलने की थी। पर जब मन्त्रि-महोदय चरखा-सघ के खिलाफ बोले, तब चरखा सघ को भी 'हरिजन'-पत्रो मे एक लेख प्रकाशित करके अपनी स्थिति साफ करनी पडी। उस लेख मे मद्रास सरकार के लिखितो का ही उपयोग किया गया था। वास्तव मे मन्त्रि-महोदय का अपना गलत बयान दुरुस्त कर लेना चाहिए था। पर सरकार की ओर से उसके जवाब मे एक प्रेसनोट प्रकाशित किया गया, जिसमे मुख्य प्रश्न का तो कोई उत्तर नही था, पर चरखा-सघ का योजना चलाने मे जो सहयोग था, उसमे कई त्रुटियॉ बतायी गयी और चरखा-सघ पर दोष दिया गया। उसका भी उत्तर चरखा-सघ ने सरकारी लिखितो के उद्धरण देकर दिया।

यहॉ इस विषय का इतना विस्तार करने का एक कारण यह भी है कि वह सारा अध्याय समाप्त होने पर भी श्री परमेश्वरन् ने १९५२ के मार्च महीने मे भी कुछ पहले जैसी ही बाते कहीं। इतना

लिख देना जरूरी है कि वह योजना चलाने में चरखा-संघ ने अपने दूसरे कामों में कठिनाई सहन करके भी अपने अनुभवी कार्यकर्ता जिनका कि वेतन-स्तर चरखा संघ के सिद्धांत के अनुसार काफी कम था, उस काम में दिये, ताकि वह योजना कम से कम खर्च में चल सके। इतने पर भी मद्रास सरकार अपनी त्रुटि कबूल करने के बदले चरखा संघ का ही दोष देने पर उतरी।

लाइसेन्स : इसके आगे की भी कथा कुछ दिलचस्प है। उसका उल्लेख कर देना उचित होगा, ताकि सरकारों का और चरखा संघ के सम्बन्ध का चित्र जनता के सामने रहे। ऊपर लिखे अनुसार मद्रास सरकार ने अप्रमाणित व्यापारियों पर रोक लगाने का कानून बनाया था, उसमें अर्थात् यह बात आयी कि 'लाइसेन्स' लिये बिना खादी का व्यवसाय न किया जाय। लाइसेन्स देने का अधिकार सरकारी अधिकारियों को दिया गया। चरखा संघ को लाइसेन्स लेने से मुक्त रखा गया। उस कानून के अनुसार आन्ध्र में करीब २०० व्यक्तियों को खादी-काम के लिए लाइसेन्स दिये गये। तमिलनाड में चरखा-संघ का उस योजना से सम्बन्ध रहा, तब तक किसीको लाइसेन्स नहीं दिया गया। चरखा संघ का सम्बन्ध टूटने के बाद वहाँ भी लाइसेन्स देना शुरू हुआ। इधर भारत सरकार ने ऊनी और रेशमी तथा इनके मिश्रण से बनी खादी का भी 'खादी की व्याख्या' में समावेश करके उसकी व्याख्या पूर्ण की और बिना प्रमाणपत्र के खादी के नाम पर कोई व्यापार न कर सके, इसलिए कानून का एक मसविदा बना कर राज्य-सरकारों के पास भेजा। बिहार राज्य-सरकार ने वैसा कुछ कानून बना भी लिया। अब दूसरी सरकारें कानून बनाने के बारे में सोचने लगीं। इधर मद्रास सरकार ने जो ऊपर लिखा कानून बनाया था, उस पर से खादी के एक अप्रमाणित व्यापारी ने हाईकोर्ट में मुकदमा दायर किया। न्यायाधीशों ने निर्णय किया कि अपनी मर्जी पर लाइसेन्स देने से इन्कार करने का सरकारी कर्मचारी का अधिकार नहीं है और चरखा-संघ को लाइसेन्स लेने से मुक्त रखने में भेदभाव

होता है, इसलिए वह नियम रद्द है। खादी-प्रेमी अच्छी तरह जानते हैं की खादी का प्रमाणपत्र खादी का प्रत्येक थान जॉच करके दिया नही जा सकता। वह तो उन भरोसे के व्यक्तियो को ही दिया जा सकता है, जिनका निःस्वार्थ भाव का खादी-प्रेम पुराने परिचय से साबित हो चुका है, ताकि वे पूरा खयाल रख कर शुद्ध खादी ही करवा लेगे। सरकार के पास वैसा कोई जरिया नही है, जिससे वे खादी की शुद्धता सुरक्षित रख सके। अब कानून के मुताबिक जो कोई लाइसेन्स लेना चाहेगा, उसको इन्कार नही किया जा सकता, चाहे लाइसेन्स के नियम कुछ भी हो। नियमो का ठीक अमल करना सरकारी कर्मचारियो की शक्ति के बाहर है। इस दशा मे खादी की शुद्धता को सरक्षण न मिल कर सरकारी लाइसेन्स के भरोसे अशुद्ध खादी का व्यापार खुले आम चल सकता है। इस समस्या का विचार करने के लिए सेवापुरी मे ता १५-४-'५२ को प्रमाणित खादी-सस्थाओं के सचालको की एक सभा हुई। उसमे नीचे लिखा प्रस्ताव पास किया गया और चरखा-सघ ने भी उसे पसद किया :

सेवापुरी-प्रस्ताव : भारत सरकार ने खादी की व्याख्या दुरुस्त करने का कानून सन् १९५० मे बना कर खादी के नाम पर किया जाने-वाला व्यापार नियन्त्रित करने की दृष्टि से हर राज्य-सरकार को उसकी ओर से पास करने के लिए एक कानून का मसविदा भेजा। उसके अनुसार राज्य सरकारे अपने अधिकारियो द्वारा खादी-व्यापारियो को कुछ शर्तो पर लाइसेन्स दे सकती थी।

सन् १९४६ मे काग्रेसी राज्य सत्ता स्थापित होने पर सरकारे खादी के बारे मे क्या करे, इसके सम्बन्ध की सूचनाएँ चरखा सघ के ट्रस्टी-मण्डल ने गाधीजी की अध्यक्षता मे प्रस्ताव पास करके राज्य-सरकारो को भेजी थीं। उसमे यह भी एक सूचना थी कि बिना चरखा-सघ के प्रमाण-पत्र के खादी के नाम पर कपडे का व्यापार न चलने दिया जाय। उस समय राज्य-सरकारो ने इस विषय मे कुछ भी नही किया। अब

१९५२ में भारत सरकार की सूचना पर ऊपर लिखे अनुसार कानून बनाने का कहीं-कहीं राज्य-सरकारें विचार करने लगीं। मद्रास सरकार ने करीब ३ वर्षों से लाइसेन्स देने का कानून बना रखा था और उस पर अमल भी हो रहा था। उस कानून की एक धारा यह थी कि किसी को लाइसेन्स देना या न देना सरकारी कर्मचारी की मर्जी पर अवलम्बित है तथा चरखा-संघ को लाइसेन्स लेने की जरूरत नहीं है। मद्रास हाईकोर्ट में मुकदमा होकर न्यायधीशों ने इस धारा को भारत के संविधान के खिलाफ समझ कर रद्द माना। इस मुकदमे में खादीसम्बन्धी सारे पहलू न्यायाधीशों के सामने थे, ऐसा नहीं दीखता। चरखा संघ को भी उसमें शामिल नहीं किया गया था।

खादी-प्रेमियों की राय थी कि खादी के बारे में नीचे लिखी बातें होना आवश्यक है

१. हाथ-कते सूत में मिल सूत का मिश्रण बिल्कुल न हो।

२ खादी बनाने की सब प्रक्रियाओं में चरखा-संघ के निर्णय के मुताबिक जीवन निर्वाह-मजदूरी के सिद्धान्त पर जो दरें मुकर्रर हुई हैं उनसे कम मजदूरी न दी जाय।

३ खादी के व्यवहार में मुनाफाखोरी न हो तथा खादी का व्यवहार केवल परोपकारी सार्वजनिक संस्थाओं, सरकारी संस्थाओं अथवा ट्रस्टों के ही हाथ में हो ताकि वह व्यक्तिगत स्वार्थ से परे रहे।

४ व्यावसायिक खादी का काम चलाने की पद्धति वस्त्र-स्वावलम्बन के आड़े न आय, बल्कि उसकी समर्थक हो।

अभी जो चरखा संघ के प्रमाण पत्र के नियम बने, वे इन बातों को साधने की दृष्टि से बने।

चरखा-संघ की राय थी कि अगर सरकार अपने खादी के कानून में लाइसेन्स की शर्तों में इन बातों को ला सके अर्थात् चरखा-संघ के प्रमाण-पत्र के नियम अपना सके, तभी राज्य-सरकारें खादी सम्बन्धी कानून बनावें। इसके अलावा खादी की शुद्धता के बारे में सरकार के

पास ऐसा कोई जरिया नहीं है, जिसके द्वारा सरकारे शुद्धता कायम रख सके। हरएक कपडे के थान की जॉच नही हो सकती। जिनका खादी पर पूरा विश्वास है और जिनकी ईमानदारी पर भरोसा किया जा सकता है, उनके द्वारा खादी-काम होने पर ही शुद्धता की रक्षा हो सकती है। ऐसा साधन चरखा-सघ के ही पास है। इसलिए उपस्थित सब भाइयो की एक राय से निर्णय हुआ कि अगर सरकारे लाइसेन्स का कानून बनाये, तो उसमे यह बात जरूर रहे कि जिसको चरखा-सघ का प्रमाण-पत्र प्राप्त है, उसीको लाइसेन्स दिया जाय और जिसका जिस समय तक सघ का प्रमाण पत्र चालू रहता है, उस समय तक ही लाइसेन्स चालू रहे। अगर ऐसा कानून नही बन सकता, तो खादी-सरक्षण के लिए लाइसेन्स देने का कानून बनाया ही न जाय और अगर कहीं बन गया है, तो वह रद्द कर दिया जाय या उसका अमल स्थगित कर दिया जाय।

इधर मद्रास सरकार ने चरखा सघ को लाइसेन्स लेने के बारे मे पूछा। अब चरखा-सघ के सामने प्रश्न यह था कि जो लाइसेन्स की पद्धति सरकार द्वारा चलायी गयी है, उसमे सघ भी शामिल हो या न हो। यह बात तो स्पष्ट थी कि इस पद्धति मे खादी की शुद्धता को कोई सरक्षण नही मिलता। एक तरह से खादी की शुद्धता का नाश ही होता है। क्या चरखा-सघ लाइसेन्स लेकर उसमे भी सहयोग दे?

भारत-सरकार की पंचवर्षीय योजना

भारत सरकार की ओर से यह योजना शीघ्र ही उसके अन्तिम स्वरूप मे जाहिर होनेवाली थी। योजना का पहला मसविदा करीब सालभर पहले प्रकाशित हुआ था। उसके बाद करीब सालभर बीतने आया था और इस दरमियान पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत खादी-योजना तय करने के बारे मे समय-समय पर विचार होता रहा। योजना समिति के कुछ सदस्यों, चरखा-सघ के ट्रस्टी-मडल के सदस्यो तथा श्री विनोबाजी और श्री किशोरलाल मशरूवाला के बीच इस बारे मे अनौपचारिक चर्चाएँ इस वर्ष

होती रहीं। फलस्वरूप चरखा संघ ने खादी-योजना का स्वरूप क्या होना चाहिए और उसे कार्यान्वित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए, उस सम्बन्ध की कुछ मोटी बातें सोचीं। पता नहीं था कि इस बारे में योजना-समिति आखिरी निर्णय क्या करेगी और उस निर्णय पर सरकार किस तरह अमल करेगी। फिर भी अगर योजना समिति कोई खादी योजना बनाये और उसका अमल किया जाय, तो मौजूदा खादी काम पर उसका बहुत असर पड़ना स्वाभाविक था। इसलिए चरखा संघ की सोची हुई बातें थोड़े में यहाँ देना उचित होगा।

यथार्थ में चरखा संघ ने स्वराज्य मिलने की हालत में देश में खादी-काम की नीति क्या हो, इस सम्बन्ध की कुछ मूलभूत बातें गांधीजी के मार्गदर्शन में उसी वक्त तय कर ली थीं, जब कि स्वराज्य बहुत सन्निकट दीख रहा था। खुद गांधीजी के बनाये मसविदे के अनुसार १९४६ के अक्तूबर मास की ९ तारीख को देहली की ट्रस्टी-मंडल की सभा में चरखा संघ ने एक मूलगामी प्रस्ताव पास किया था, जिसमें उन बातों को स्पष्ट किया गया था। वह प्रस्ताव देश की सभी सरकारों को भेज दिया गया था। उक्त प्रस्ताव का महत्त्व और बुनियादी दृष्टिकोण समझने लायक होने से वह नीचे दिया जा रहा है :

"१. अखिल भारत चरखा संघ को अपने अनुभव से विश्वास है कि हिन्दुस्तान में तथा दुनिया के अन्य मुल्कों में, जैसे कि मलाया आदि में, अभी जो कपड़े की कमी है, वैसी दशा कहीं भी न हो, ऐसी स्थिति बनाने का साधन चरखा और हाथ-करघा है। एक हिंदुस्तान ही ऐसा मुल्क है, जहाँ पुराने जमाने से हाथ-कताई और हाथ बुनाई से खादी बनती आयी है और आज कपड़े की मिलों की बहुतायत में भी अखिल भारत चरखा संघ की मार्फत शुद्ध खादी पैदा हो रही है। चरखा-संघ के करीब २० साल के कार्यकाल में लगभग सात करोड़ रुपया देश की गरीब कत्तिनों और बुनकरों में बाँटा गया है।

२. जो सरकारें ग्रामोद्योग की आर्थिक रचना को महत्त्व देकर खादी-

काम करना चाहती हैं, उन्हे नीचे लिखी बातो की व्यवस्था करना निहायत जरूरी है :

(अ) पॉच वर्ष की योजना बनाकर राज्यभर की सब प्राथमिक तथा मिडिल तक की पाठशालाओ मे और नॉर्मल स्कूलो मे कताई सिखायी जाय, एक महत्त्व की प्रवृत्ति के तौर पर वह चलायी जाय और हरएक पाठशाला के साथ हाथ-सूत बुनने का कम-से-कम एक करघा जरूर चले। शालाओ मे बुनियादी तालीम जल्दी से-जल्दो और अधिक से-अधिक पैमाने पर शुरू करनी चाहिए।

(आ) बहुधधी (मल्टीपर्पज) सहकारी समितियॉ स्थापित करके उनके द्वारा ग्राम-सुधार के अगभूत खादी-काम करना चाहिए।

(इ) जहॉ अभी कपास की खेती नही होती, वहॉ कपास पैदा होने की व्यवस्था हो तथा ऐसा प्रबन्ध हो कि कातनेवालो को रुई, कपास तथा सरजाम सुविधा से मिल सके।

(ई) खादी-विशारद तैयार करने चाहिए। खादी के बारे मे सशोधन का काम करना चाहिए।

(उ) ग्रामोत्थान के काम मे कताई का किसी प्रकार सम्बन्ध आयेगा ही, इसलिए सरकार के सहकारी (कोऑपरेटिव) विभाग, शिक्षा-विभाग, कृषि-विभाग तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, लोकल बोर्ड, ग्राम-पचायत आदि के सब कर्मचारियो को खादी-प्रवेश परीक्षा पास कर लेनी चाहिए और यह परीक्षा पास किये बिना किसीको इन विभागो मे नये सिरे से नौकरी मे नही लेना चाहिए।

(ऊ) अभी मिल के सूत से हाथ-करघे पर बने कपडे के मूल्य पर नियत्रण नही है, वह होना चाहिए।

(ए) अप्रमाणित खादी का व्यापार खादी के नाम पर नही करने देना चाहिए।

(ऐ) सरकारी टेक्स-टाइल विभाग मे तथा बुनाई-शालाओ मे केवल

हाथ-सूत को स्थान रहे। जेलो मे हाथ-कताई और हाथ-सूत की बुनाई चलनी चाहिए।

३ प्रान्तीय सरकारो तथा देशी रियासतो से प्रार्थना की जाती है कि वे अन्य बातो के साथ ऊपर लिखी बाते करके खादी व्यापक बनाने की कोशिश करें। इस काम को अजाम देने के लिए चरखा-सघ और उसकी शाखाएँ भरसक मदद करने को तैयार हैं।

४ चरखा-सघ से वार्तालाप होकर सरकार और मिलो द्वारा ऐसा प्रबन्ध हो कि जिस प्रदेश में हाथ-कताई, हाथ बुनाई से कपडे की जरूरत पूरी हो सके, वहाँ मिल का कपडा व सूत न भेजा जाय। इसके अलावा नयी मिले खडी न की जायँ तथा पुरानी मिलो मे कताई-बुनाई के नये साचे न लाये जायँ। मिलो का कारोबार सरकार और चरखा-सघ की सलाह के मुताबिक चलाया जाय। देश में किसी प्रकार का विदेशी सूत और कपडा कतई न आने पाये।

इस काम मे सरकार जरूरी कानून पास कर उस पर अमल करे।

मिल मालिको से अनुरोध किया जाता है कि वे करोडो के इस काम मे मदद करे और प्रजा का साथ दें।"

लेकिन यह दृष्टिकोण हमारी स्वराज्य सरकार को मजूर नही हुआ। सरकार यह तो कहती रही कि देश मे चरखा चलना चाहिए। लेकिन देश मे कपडे की इफरात होनी चाहिए, लोगो को कपडा मुहैया करने की जिम्मेवारी सरकार टाल नही सकती—इस विचारधारा को लेकर मिलो पर या मिल कपडे पर पाबदी लगा देनेवाली कोई भी बात करने को सरकार तैयार न हुई। इतना ही नही, विदेशी कपडे की आयात भी सरकार ने होने दी। चरखा सघ मानता था कि इस नीति के अनुसार चरखे का असली लाभ देश को नही मिल सकेगा और चरखे का काम देश मे ज्यादा फैल भी न सकेगा। एक ओर से देहातो मे चरखे के जरिये मदद पहुँचाना और दूसरी ओर से मिल का सस्ता कपडा देहातों मे भेजकर चरखे को मारना और देहात की सम्पत्ति शहरो मे घसीट ले जाना, ऐसी

दोतरफा नीति से देश की शक्ति और सम्पत्ति का ह्रास होगा। इसलिए चरखा-सघ की पुनः-पुनः यही मॉग रही कि देश मे विदेश का कपडा या सूत बिलकुल नही लाना चाहिए और मिलो पर क्रमशः पाबदियाँ लगा कर चरखे का काम बढने देने मे अधिक-से-अधिक मदद पहुँचाने की नीति सरकार को अख्तियार करनी चाहिए। इस तरह सरकार की नीति और चरखा-सघ की दृष्टि मे अब तक बुनियादी अतर रहता आया। पचवर्षीय योजना के बारे मे भी नियोजन-समिति और चरखा-सघ के बीच ऐसा ही कुछ विचारो का अतर रहा। फिर भी सरकार अपनी है, इस खयाल से चरखा-सघ लगातार यह विचार करता रहा कि जहाँ तक हो-सके, सरकार को खादी-काम मे उसकी मदद रहे। इस दृष्टि से चरखा-सघ सोचने लगा कि एक ओर से मिलो का आधार छोडने की बात लोगो को समझाने के लिए मिल-वस्तु-बहिष्कार का आन्दोलन देश मे चलाया जाय और खादी के हक मे मिलो पर पाबदी लगाने के लिए सरकार की शक्ति बढे, ऐसा अनुकूल वायुमण्डल पैदा किया जाय। दूसरी ओर से सरकार जो पचवर्षीय योजना बना रही है, उसमे खादी के कदम किसी तरह पीछे न पडे, इसकी सावधानी रखते हुए सघ का अधिक-से-अधिक सहयोग सरकार को दिया जाय। यह विचार लेकर चरखा-सघ ने ऊपर लिखे देहली के प्रस्ताव की नीति को आवश्यक मानते हुए भी शर्त के रूप मे फिलहाल उसका आग्रह न रखना ही ठीक समझा और इस वर्ष ऊपर लिखे अनुसार जो विचार-विनिमय हुआ, उस पर से पचवर्षीय-योजना समिति के सदस्यो के सामने अपने कुछ नये सुझावो को रखा, जिन्हे चरखा-सघ खादी-योजना के आरभ की प्राथमिक आवश्यकता मानता था। ये सुझाव नीचे लिखे अनुसार हैं :

१. ग्रामो मे जो कच्चा माल उपलब्ध है, उसका पक्का माल, जिसकी गॉव मे जरूरत है, गॉव मे ही बनाया जाय। इस दृष्टि से गॉव का कपडा, जो गॉव की अन्न के बाद की मुख्य आवश्यकता है, गॉव मे चरखे के जरिये पूरा करना चाहिए—ऐसी राज्यनीति सरकार जाहिर

करे और उसके लिए जैसे सब लोगों को साक्षर बनाना सरकार अपना कर्तव्य समझती है, वैसे ही सब लोगों को चरखा सिखाना वह अपना कर्तव्य समझे।

२ खादी के लिबास को ही देश की सभ्य पोशाक के तौर पर मान्य करके सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों को, कम-से-कम जब वे काम पर रहे, खादी ही पहनना लाजिमी किया जाय।

३ सरकार अपने सभी विभागों मे खादी का ही कपड़ा इस्तेमाल करे। फौज और सिपाही की पोशाक के लिए फिलहाल अपवाद हो सकता है।

४ सरकार यह आश्वासन दे कि जो कताई करना चाहेगा, उसके सूत की खपत कर देने की जिम्मेवारी सरकार लेगी, बशर्ते कातनेवाले खुद भी अपने व्यवहार मे क्रमशः खादी का ही कपड़ा इस्तेमाल करें।

५ सभी प्राथमिक व मिडिल स्कूलों मे कताई का विषय और उसकी परीक्षा अनिवार्य का जाय।

६. हरएक गाँव को अधिकार दिया जाय कि वह यानी गाँव की ग्राम-पचायत चाहे तो अपने गाँव के उद्योगों के सरक्षण के लिए बाहर से आनेवाला कपड़ा, तेल, शक्कर आदि किसी भी सामान पर चुगी (Cess) लगा कर उसका विनियोग उन उद्योगों के सरक्षण के लिए कर सके या उन चीजों पर रोक लगा सके।

७ मिल-कपड़े पर चुगी बैठाने मे विलब न किया जाय। प्लानिग-कमीशन के मसविदे मे लिखा गया है कि पहले अन्य मार्गों को आजमाने के बाद ही जरूरत पड़े तो चुगी लगायी जाय। लेकिन हमारी राय मे ऐसा न करते हुए अभी से मिल-कपड़े पर चुगी बैठा कर उसकी आमदनी मे से खादी-काम बढ़ाने की योजना की जाय।

८ इस तरह केवल सबसीडी देकर खादी का कपड़ा मिल-कपड़े के भाव से बेचने का विचार न किया जाय, लेकिन चरखा-सघ की योजनाओं के अनुसार खादी के बढ़ावे की अन्य योजनाओं पर

जोर दिया जाय। ऐसी जो योजनाएँ बनेगी, वे और सरकार हाथ-कता सूत खरीदेगी। वे योजनाएँ भी चरखा-सघ की दरो और नीति के अनुसार सघ के माध्यम से चलायी जायँ।

९ चुगी की आमद मे से गाँवो मे खास खादी सेवक वेतन देकर बैठाये जायँ, जो कि खुद कपास से लेकर कपडे तक पूरी प्रक्रियाएँ जानते हो और उस काम का प्रचार और शिक्षा दे सकते हो।

१०. ऐसे खादी-सेवक, पाठशाला के खादी-शिक्षक तथा दूसरे ग्राम योजना मे लगाये जानेवाले कार्यकर्ता चरखा सघ की खादी-परीक्षा या 'सेवा-प्रवेश' पास हो, तो उन्हे प्राथमिकता दी जाय।

११. चरखा-सघ अगर इस काम मे शामिल होता है, तो उसे काम करने मे स्वतन्त्रता रहनी चाहिए और सरकारी विभागो की रूटिन के कारण जो रुकावटें आती या तकलीफे खडी होती हैं, वे न होनी चाहिए, ऐसा कुछ प्रबन्ध सोचा जाय।

इन धाराओ मे मिल कपडे पर चुगी बैठाने की धारा चरखा-सघ ने बहुत ही आवश्यक मानी, क्योकि प्रत्यक्ष पाबन्दियाँ न होने पर भी धीरे-धीरे लोगो को मिल-कपडे से परावृत्त करके खादी की ओर ले जाने की नीति का स्वीकार उसमे अन्तर्भूत था। अगर अभी सरकार खादी के लिए इतना भी कर सके, तो यह आशा रखी जा सकती थी कि मौका पाकर खादी के लिए वह और भी सुविधाएँ कर सकेगी।

इसके अनुसार सरकार व चरखा-सघ दोनो की शक्ति लगा कर खादी-काम किया जाय, तो पाँच साल मे वह किन-किन दिशाओ मे करना चाहिए, किन लक्ष्यो को लेकर करना चाहिए और कितना काम हो सकेगा, इसका मोटा अन्दाज चरखा सघ ने किया। उस अन्दाज की जानकारी भी खादी-प्रेमी जनता व खादी-काम करनेवाले कार्यकर्ता जानने की इच्छा रखेंगे, ऐसा मान कर थोडे मे यहाँ दी जाती है।

खादी-काम के कई पहलू हैं। जैसे कि बेकारी-निवारण, फुरसत के समय का उपयोग, सहायक उद्योग, वस्त्र-पूर्ति, ग्राम-स्वावलबन और

अकाल या युद्ध जैसी आकस्मिक हालत में संकट-निवारण। इनमें ग्राम-स्वावलम्बन के पहलू को चरखा-संघ ने स्वराज्य मिल जाने के बाद का खादी का प्रमुख हेतु माना था। दूसरे पहलू ग्राम-स्वावलम्बन में अंतर्भूत हो ही जाते हैं। सरकारी पंचवर्षीय योजना हमारे देश के पुनरुत्थान के लिए है। गाँवों को ऊपर उठा कर ही देश की हालत सुधर सकती है। अहिंसक तरीके से और शोषण के बिना गाँवों का विकास साधना हो, तो जीवन की प्राथमिक जरूरतों के लिए उन्हें आत्म-निर्भर बनना होगा। इस हेतु को नजर में रख कर गाँव अपनी निजी जनशक्ति के भरोसे कपड़े के लिए आत्म-निर्भर एवं स्वयंपूर्ण बनें, यही पंचवर्षीय योजना का भी मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। सरकारों को भी खादी-काम में इसी मूल हेतु को प्राधान्य देना चाहिए। यह प्राधान्य देते हुए खादी-योजना के अंतर्गत विविध दिशाओं में खादी-काम चलाया जाना चाहिए। चरखा-संघ ने सोचा है कि निम्नलिखित दिशाओं में यह काम चले :

१ वस्त्र-स्वावलंबन : इसमें अपने ही गाँव में कपास उपजाने से लेकर कपड़े की बुनाई तक की सारी प्रक्रियाएँ समाविष्ट समझनी चाहिए। बालक से लेकर बूढ़े तक हर कोई कताई करे व दूसरी प्रक्रियाएँ, जो कातनेवाला स्वयं न करे, वह गाँव में ही हों। इसके लिए मिल-वस्त्र का बहिष्कार करने की आवश्यकता लोगों को समझाना और अपना कपड़ा बना लेने की कला लोगों को सिखाना।

२ खादी की बिक्री और उत्पत्ति : कोई भी गरजमन्द व्यक्ति अगर रोजी के लिए सूत कताई या खादी पैदा करने का काम करना चाहे, तो उससे वह खरीद कर बेचने का प्रबन्ध। इसमें जीवन-वेतन, प्रादेशिक स्वयंपूर्णता, सहकारी पद्धति का अवलम्बन, व्यक्तिगत स्वार्थ या मुनाफाखोरी न करना और कारीगर खुद खादी पहने—इन सिद्धान्तों का आग्रह रखा जाय।

३ कताई-शिक्षा : पाठशालाओं में कताई दाखिल करवाना, प्रौढ़ों

को कताई सिखलाने के लिए शिविर या घूमते वर्ग की आयोजना और परिश्रमालयो का संचालन।

४. **खादी-कार्यकर्ता तैयार करना :** इसके लिए खादी-विद्यालय चला कर निश्चित परीक्षाएँ जारी करना।

५. **खादी सरजाम .** खुद के लिए जरूरी सरजाम सम्भव हो, उतना हर देहात मे बने—ऐसी शिक्षा देना व जो सामान किसी केन्द्रित जगह बनाना लाजिमी हो, वह वैसी जगहो पर बनवा कर मुहैया करना।

६. **सशोधन (रिसर्च) :** प्रयोगशालाओ का सचालन, खादी-सरजाम मे सुधार, खादी के अनुकूल कपास की जातियो का सशोधन और खादी की विविध प्रक्रियाओ की शास्त्रीय तुलना करना।

७. **खादी-साहित्य :** खादी की सैद्धान्तिक दृष्टि, योजनासम्बन्धी व्यावहारिक जानकारी व खादी-शास्त्रसम्बन्धी साहित्य निर्माण करना तथा उसका प्रचार करना।

अब तक जो खादी-काम होता रहा, उसकी प्रगति का माप सामान्यत. कारीगरो को सालभर मे कितने रुपये मजदूरी के रूप मे बाँटे गये या कितने वर्ग-गज खादी पैदा हुई या कितने रुपये की खादी बिकी, उस पर निकालने की परिपाटी चलती आयी थी। लेकिन पचवर्षीय खादी-योजना के जरिये देश मे जो मौलिक शक्ति पैदा करने की तैयारी करने का सोचा था, उन मूल्यो की दृष्टि से ऊपर लिखे ऑकडो के अलावा मुख्य कसौटी यह हो सकती थी कि देश मे कताई के जानकारो की सख्या कितनी बढी और कितने देहातो मे चरखे ने प्रवेश किया। मुमकिन है कि मिल का कपडा मौजूद होने के कारण कताई की जानकारी रखते हुए भी खादी की प्रत्यक्ष उत्पत्ति तुलनात्मक दृष्टि से योजना-काल मे कम हो। लेकिन युद्ध आदि के कारण मौका आये या लोग खादी का महत्त्व समझने लगे, तो प्रत्यक्ष उत्पादन के कई गुना ज्यादा खादी पैदा कर सकने की शक्ति देश मे आ जानी चाहिए, ऐसा सोचा गया। अभी जो खादी-काम देश मे चल रहा था, वह बहुत अल्प था। बडे

पैमाने पर खादी-योजना के लिए यह जरूरी था कि एक साल प्रारम्भिक तैयारी का रहे। उस तैयारी के बाद पाँच साल खादी-योजना नीचे लिखे परिणामों की दृष्टि से चलायी जाय।

योजना का प्रारूप ज्यों का त्यों नीचे दिया जा रहा है.

१. पाँच वर्ष के अन्त में देश में कताई के जानकारों की संख्या कम-से-कम ७५ लाख की हो।

२ कातनेवालों की यह संख्या अगर पूरा वक्त कताई करे, तो साल भर में १५० करोड़ वर्गगज खादी-उत्पादन करने की शक्ति रखेगी। सिर्फ एक घण्टा रोज का औसत काम करे, तो भी २० करोड़ वर्ग-गज खादी सालभर में पैदा होगी।

३. योजना के अन्त तक १ लाख देहातों में चरखे का प्रवेश हुआ होगा।

४. चरखे की शिक्षा ४५००० पाठशालाओं में शुरू हो सकेगी।

५. देहातों में ७००० खादी-सेवक फैले होंगे, जिनका मुख्य काम खादी का विचार प्रचार और खादी की शिक्षा लोगों को देना रहेगा। साथ ही वे ग्रामोद्योग की विचारधारा का प्रचार भी करेंगे।

६ प्रत्यक्ष खादी-उत्पादन और बिक्री के काम में योजना के वर्ष में ऊपर लिखे प्रसारकों के अलावा पचास से साठ हजार कार्यकर्ता लगे होंगे।

७ योजना की तैयारी के बाद पहले वर्ष में पाँच करोड़ रुपये की और क्रमशः हर साल पाँच करोड़ रुपये की वृद्धि होते हुए योजना के आखिरी साल में २५ करोड़ रुपये की खादी पैदा होगी।

८ योजना के प्रथम वर्ष में सरकारी कर्मचारियों में एक करोड़ रुपये की खादी बिकनी चाहिए। यह आँकड़ा योजना के आखिरी साल में चार से पाँच करोड़ रुपयों तक पहुँचना चाहिए।

९ सरकारी विभागों में पहले साल एक करोड़ रुपये की खादी का इस्तेमाल होगा और आगे चल कर पौने दो करोड़ का।

१०. खादी बनानेवाले कारीगरो मे खादी के कुछ उत्पादन की कम-से-कम १/८ और ज्यादा-से-ज्यादा ३/४ खादी खपेगी। नयी-नयी जगहो मे काम खडा होगा, वहॉ यह अनुपात पहले थोडा कम रख कर धीरे-धीरे बढाना होगा। अन्दाजा यह है कि पहले साल करीब ६२ लाख रुपये की और पॉचवे साल ४ से ५ करोड रुपये की खादी कारीगरो मे बिकेगी।

११. इस तरह योजना की तैयारी के बाद पहले वर्ष मे आम जनता मे करीब ढाई करोड रुपयो की खादी बेचनी पडेगी और आखिरी वर्ष मे १२½ करोड की।

१२ वर्ग-गजो मे ५ करोड रुपये की करीब ३ करोड वर्ग-गज खादी बनेगी। इसमे ऊनी और रेशमी खादी भी शामिल है। इसमे दो-सूती और बटे हुए सूत की कुछ विशेष मजबूत खादी भी होगी। करीब १५ से १६ करोड गुण्डियॉ इसके लिए कातना जरूरी होगा, यानी रोजाना औसत ४ से ५ लाख गुण्डी की कताई और बुनाई का इन्तजाम हमे करना होगा।

१३ तैयारी के बाद के पहले वर्ष मे १० से १२ प्रतिशत सूत-पाठशालाओ मे और स्वावलबी कातनेवालो की मार्फत कतेगा, ऐसा मानकर बाकी सूत कातने मे पूरे वक्त के करीब डेढ लाख कातनेवालो को या पूरक धधे के रूप मे करीब ४ लाख कातनेवालो को और बुनाई मे करीब ५० हजार व्यक्तियो को काम मिल सकेगा, यानी पॉचवें साल के अन्त मे करीब २५ लाख व्यक्तियो को पूरक और पूर्ण धधे के रूप मे कताई व बुनाई के जरिये काम मिल सकेगा।

१४. क्षमतापूर्वक काम करनेवाले कारीगरो की कताई मे फी घटा डेढ आना और बुनाई मे औसत फी घटा तीन आने मजदूरी पडे, ऐसी दरे रहनी चाहिए। अनुभव यह है कि अधिकतर कारीगर कुशल काम की मुकर्रर दर के ३/४ जितनी ही प्राप्ति कर सकते ह।

१५. शुरू मे पूॅजी ३ करोड रुपये और पॉचवें साल १५ करोड

रुपये की मानी गयी है। आज गैर-सरकारी पूँजी से जो खादी-काम चल रहा है, उसीमें एक करोड़ रुपये पूँजी की सहूलियत करने से खादी-काम दुगुना बढ़ सकता है।

१६ सबसिडी के तौर पर तैयारी के बाद पहले वर्ष में एक करोड़ रुपये और पाँचवें वर्ष में ५ करोड़ रुपये खर्च की जरूरत रहेगी। शिक्षण, प्रचार और तैयारी के लिए क्रमशः दूसरा डेढ़ करोड़ और ८½ करोड़ खर्च होगा यानी कुल मिलाकर तैयारी के बाद के पहले वर्ष में करीब ढाई करोड़ और पाँचवें साल में साढ़े-तेरह करोड़ रुपया खर्च होगा।

१७ खादी की बिक्री-कीमत कृत्रिम रूप से मिल कपड़े की बराबरी में नहीं रखी जायगी। लेकिन रूई के दाम तथा कताई-बुनाई के पूरे दाम लगाकर खादी बेची जायगी। उत्पत्ति और बिक्री में लगनेवाला पूरा व्यवस्था खर्च सबसिडी के रूप में करना होगा यानी खादी पर वह खर्च नहीं चढ़ाया जायगा।

१८ सबसिडी का तथा दूसरा सारा खर्च मिल-कपड़े पर चुंगी लगाकर उससे प्राप्त रकम में से किया जाय। इस तरह मिल-कपड़े के दाम कुछ बढ़ेंगे। मिल-कपड़े के भाव से खादी के दाम करीब दो से ढाई गुना रहेंगे। प्लानिंग-कमीशन ने जो हिसाब लगाया है, उस हिसाब से 'फाइन' व 'सुपर फाइन' कपड़े पर एक पैसा चुंगी बैठाने से करीब दो करोड़ रुपये की आमदनी होती है। इस पर से यह दीखता है कि पाँचवें वर्ष भी चुंगी का मान बढ़ाना तो पड़ेगा, पर बहुत ज्यादा नहीं।

अन्त में यहाँ पर दो-एक बातें स्पष्ट कर देना उचित होगा। यह साफ है कि मिल के कपड़े की अपेक्षा खादी का कपड़ा महँगा ही रहेगा। मिल-कपड़ा रहते हुए अगर खादी को बढ़ावा देना है, तो उसे संरक्षण और सबसिडी की जरूरत रहेगी। यह सबसिडी किस हद तक दी जाय, यह बहुत विवेकपूर्वक तय करना होगा। ऊपर की मदों में यह बताया गया है कि खादी मिल-कपड़े के भाव से बिक सके, उसे उतनी सबसिडी न दी जाय। यह बात सही है कि अगर खादी को उतनी सबसिडी दी जाय और मिल-

कपडे के भाव मे वह वेची जाय, तो फिर खादी वेचने की समस्या बहुत-कुछ हल हो जायगी, फिर ज्यादा शक्ति उसके उत्पादन के लिए ही हम लगा सकेंगे। लेकिन वैसा करने से कपडे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए मिल-आधारित व्यवस्था को ही सदा आवश्यक व अनिवार्य मानना दृढतर होता जायगा। आज तक खादी ने एक नया आर्थिक दृष्टिकोण और भावना पैदा की है, वह मिट जायगी। यह मिटने पर खादी एक बोझ ही मालूम पडेगी, और उस दशा मे नवसमाज-निर्मिति की ओर जाने की खादी की शक्ति खतम हो जायगी। अगर आखिर मे मिल का आधार न रखना पडे, इस हेतु से खादी को चलाना है, तो खादी का विक्री-भाव कृत्रिम रूप से न घटाकर उसकी स्वाभाविक दरो पर ही वह वेचने की नीति रखना उचित होगा। उससे वस्त्र-स्वावलबन के काम को भी पोपण मिलेगा। स्वाभाविक दरो मे हम व्यवस्था-खर्च को नही जाडते हैं। आज मिल-सूत की मिलावट न हो, इसीकी देखभाल मे खादी-उत्पादन मे ४ से ५ प्रतिशत व्यवस्था-खर्च हो जाता है। अलावा इसके खादी जहाँ बने, वही बिके और वही बने, ऐसी आखिरी हालत हमने मानी है। वैसी परिस्थिति मे आज का दूर-दूर खादी भेजकर वेचने का व्यवस्था-खर्च भी नही होगा। यह व्यवस्था-खर्च दरअसल कृत्रिमता के कारण खादी पर लग जाता है। इस खर्च जितनी सबसिडी देकर खादी के भाव उतने सस्ते रखकर वेचना हानिकारक नहीं होगा। ढुलाई आदि मिला कर यह व्यवस्था खर्च उत्पत्ति से लेकर बिक्री तक २० फी सदी के करीब होता है। इसलिए इस मद मे खादी-बिक्री पर २० फी सदी सबसिडी दी जाय, ऐसा विचार किया गया है। नया खादी-काम खडा करने पर जो खादी बनेगी, वह सारी-की-सारी स्टैंडर्ड किस्म की न बन पाये, ऐसी सभावना है। अतः भाव घटाकर वेचने के लिए कुछ मदद देना जरूरी रहेगा। उसके लिए पहले साल १८ लाख रुपया और पाँचवे साल ८० लाख रुपये खर्च आँका गया है।

उपसंहार

इस तरह विवरण काल में खादी-कार्य अनेकविध पहलुओं से विविध दिशा में चलाने की संघ ने कोशिश की। संघ की खुद की खादी की व्यापारी-उत्पत्ति जो पहले १९४८–४९ में करीब ५५ लाख रुपये और ३२ लाख वर्ग-गज तक पहुँची थी, वह कुछ घटकर सन् १९५०–५१ में करीब ४५ लाख रुपये और २५ लाख वर्ग-गज तक आ गयी। पर प्रमाणित खादी-उत्पत्ति जो पहले १९४८–४९ में करीब ४९॥ लाख रुपये तथा ३७॥ लाख वर्ग-गज थी, वह बढ़कर १९५०–५१ में ८२॥। लाख रुपये तथा ४८ लाख वर्ग-गज तक पहुँची। संघ ने अब अपनी शक्ति वस्त्र-स्वावलम्बन के काम में लगायी। उसके लिए अब प्रचार, शिक्षण और वस्त्र स्वावलम्बन कारीगरी की अभिवृद्धि इन तीन तरह से संघ का काम बढ़ने लगा। संघ का व्यापारी-काम तो आर्थिक हानि के बिना चलता था पर प्रचार, शिक्षण और वस्त्र-स्वावलम्बन के काम में संघ को अब करीब दो लाख रुपये सालाना घाटा माना गया था। फिर भी केवल कुछ गरीबों को राहत देने का ही संघ का लक्ष्य नहीं था। इसलिए सामाजिक व आर्थिक समस्याओं का अपना मूल लक्ष्य सामने रखकर संघ ने यह खर्च करने का तय किया और नीचे लिखे नीति-मूल्यों की प्रस्थापना के लिए खादी-कार्य चले, ऐसा आग्रह रखा

१ हर गाँव में स्थानीय प्रेरणा, नेतृत्व व सहकार पैदा होकर उसीके बल पर गाँव का काम चलना चाहिए। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए

(अ) आर्थिक शोषण दूर करने के लिए हरएक को सर्वरूपेण राष्ट्रीय उत्पादक परिश्रम करना चाहिए।

(आ) शोषित न होने के लिए व्यक्तियों तथा गाँवों को अपनी जिन्दगी के आधार-रूप अन्न-वस्त्र में स्वावलम्बी बनना चाहिए।

(इ) श्रम का मूल्यांकन पैसे के जरिये नहीं करना चाहिए। करना ही पड़े, तो वहाँ जीवन-वेतन का आग्रह रखना चाहिए।

(ई) जिस यान्त्रिक पद्धति से मूलभूत स्वावलम्बन टूटता है, उस तरह से बननेवाली याने बड़े-बड़े कारखानों में बननेवाली अन्न-वस्त्रसम्बन्धी चीजों का बहिष्कार करना चाहिए।

२ जहाँ आज खादी का काम वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से या राहत की खादी की दृष्टि से चल रहा है, वहाँ :

(अ) खादी-प्रक्रियाओं का बँटवारा न करके सब जगह सारी क्रियाएँ होनी चाहिए।

(आ) खादी-काम में व्यक्तिगत मालिकी नहीं रहनी चाहिए और न नफाखोरी ही होनी चाहिए। और

(इ) जहाँ तक हो सके, वहाँ तक व्यक्ति-स्वावलम्बन तथा क्षेत्र-स्वावलम्बन की दिशा में खादी का काम चलना चाहिए।

आज की सारी सामाजिक व आर्थिक रचना इन मूल्यों के विरोध में खड़ी है। ऐसी हालत में चरखा-संघ के काम में इन मूल्यों की प्रतिष्ठा में सहज सफलता की आशा रखना गलत होता। लेकिन सावधानीपूर्वक यह खयाल रखा गया था कि राहत की खादी के नाम पर इन मूल्यों को तोड़ने का काम न हो।

● ● ●

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ में विलयन

चाण्डील सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर ता० ११ मार्च '५३ को अ० भा० चरखा-संघ को अ० भा० सर्व-सेवा-संघ मे विलीन करने के सम्बन्ध मे यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

"सन् १९४४ मे जब से पूज्य गांधीजी ने चरखा-संघ के नव-संस्करण की बात बतायी, तभी से विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं को समग्र सेवा की दृष्टि से एक साथ मिलाकर काम करने का विचार होता रहा है। गांधी-जी के निधन के बाद यह विचार निश्चित रूप से रचनात्मक कार्यकर्ताओं के मन मे आया और सर्व-सेवा-संघ का निर्माण हुआ। परन्तु बापूजी से प्रेरणा पाकर तथा उनके द्वारा भिन्न-भिन्न विशिष्ट रचनात्मक काम करनेवाले संघ, अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रखकर सर्व-सेवा संघ से जुड़ी हुई संस्था के रूप मे रहें या अपना स्वतन्त्र अस्तित्व मिटाकर सर्व सेवा संघ मे पूर्णरूप से विलीन हो जायँ, यह प्रश्न आज तक बार-बार तीव्र चर्चा का विषय रहा। दो संस्थाओं — गोसेवा-संघ और ग्रामोद्योग-संघ, ने विलीन होने का निश्चय कर लिया तथा वे विलीन भी हो गयीं। भूमिदान-आंदोलन के विस्तार के साथ साथ देश मे जो वातावरण पैदा हुआ और हो रहा है, उसे देखते हुए चरखा-संघ का ट्रस्टी-मण्डल इसकी अनिवार्य आवश्यकता महसूस करता है कि अब समय आ गया है कि जब रचनात्मक कार्य करनेवाले ये संघ तथा संस्थाएँ अलग-अलग रहकर प्रभावशाली काम नहीं कर सकतीं और न हमारा कार्यक्रम एकांगी रहकर प्राणवान् ही हो सकता है। साथ ही जनता को अहिंसक सामाजिक क्रांति के लक्ष्य की ओर ले जाने की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि हमारा कार्यक्रम समग्र दृष्टि को लिये हुए हो तथा उसमे एकरसता हो। इसलिए ट्रस्टी-मण्डल सभी ट्रस्टियों की उपस्थिति मे एकमत होकर निश्चय करता है कि अ० भा० चरखा-संघ (आल इण्डिया स्पिनर्स असोसियेशन) को भी सर्व सेवा-संघ मे मिला दिया जाय। ट्रस्टी मण्डल का दृढ विश्वास है कि इस निर्णय से गांधीजी के चरखा-संघ को दिये हुए अंतिम आदेश की पूर्ति हो रही है और दरिद्र नारायण की समग्र सेवा करने के जिस महान् उद्देश्य से गांधीजी ने चरखा-संघ की स्थापना की थी, उसे सफल बनाने की दिशा मे यह सही और समयानुकूल कदम है।"

० ० ०

परिशिष्ट : १

कुछ महत्त्व के प्रस्ताव

१ पाठशालाओ के लिए बॉस-चरखा (ता० ४ सितम्बर १९५१)

देश के विभिन्न राज्यो मे कही-कहीं पाठशालाओ मे कताई दाखिल की गयी है और सभी जगहो से सघ के पास सरजाम समस्यासम्बन्धी सूचनाएँ तथा सवाल आते रहते हैं । इस पर चर्चा होकर निश्चित हुआ कि पाठशालाओ के लिए बास-चरखे का ही इस्तेमाल होना चाहिए, ऐसा सुझाव सघ की ओर से जाहिर किया जाय, क्योकि सघ की राय मे पाठशालाओ मे हर दृष्टि से इस चरखे का इस्तेमाल वाछनीय है । ये चरखे बना लेने का काम भी पाठशालाओ मे ही होना चाहिए ।

२. सरजाम-कार्यालयो मे बॉस-चरखा (ता० ४ सितम्बर १९५१)

सघ की मौजूदा नीति के अनुसार सरजाम-कार्यकर्ताओ की शक्ति व्यापारी काम मे से अधिक-से-अधिक निकाल कर प्रयोग, स्वावलचन तथा सरजाम-शिक्षण के काम मे लगायी जाय, जिसकी आवश्यकता सघ महसूस करता है । अब तक के अनुभव से पूँजी की बचत, सरंजाम-स्वावलम्बन तथा कातने की गति मे बॉस-चरखा श्रेष्ठ पाया गया है । इस हाल्त मे सघ के सरजाम-कार्यालयो मे पेटी व किसान-चरखे के उत्पादन तथा बिक्री का जो काम बडे पैमाने पर होता है, वह जारी रखना कहाँ तक ठीक है, इस पर चर्चा होकर तय किया गया कि ऐसे उत्पादन का काम घटा दिया जाय और हर जगह बॉस-चरखे स्थानीय बनने लगे, ऐसी कोशिश की जाय ।

३ चरखा-संशोधनसम्बन्धी प्रस्ताव (ता० ७ और ८ जनवरी '५१)

"मदुरा सरजाम सम्मेलन का नीचे लिखा प्रस्ताव ट्रस्टी-मडल की सभा में पेश किया गया :

१. "यह सम्मेलन इस बात पर सन्तोष जाहिर करता है कि घर-घर और गॉव-गॉव कपडा बना लेने के उद्देश्य को सफल बनाने के लिए अच्छा और ज्यादा सूत कत सके, ऐसे सुधार चरखे मे करने की कोशिश प्रयोगकारो ने की है। इस तरह के जो चरखे यहाँ आये हैं, वे प्रयोगावस्था मे ही हैं। मगर इन प्रयोगो को आगे बढाने के साथ साथ विभिन्न मर्यादाएँ क्या-क्या रहनी चाहिए, उसका साफ चित्र प्रयोगकारों के सामने आना जरूरी है। इस सम्मेलन मे आये हुए प्रयोगकार चरखा सघ से अनुरोध करते हैं कि इस बार मे अधिक साफ मार्गदर्शन करे।"

इस विषय के सिलसिले मे नीचे लिखे विचार उपस्थित होते हैं

कताई दो उद्देश्यो से होती है : (१) वस्त्र स्वावलबन के लिए और (२) रोजी कमाने के लिए। हमारे कृषि प्रधान देश की आज की दशा मे दोनो काम फुरसत के समय मे ही करने के हैं।

वस्त्र-स्वावलबन मे भी दो वर्ग पाये जाते हैं। एक वर्ग ऐसा है, जो वस्त्र-स्वावलबन के उद्देश्य से ही कताई करता है, और दूसरा वर्ग ऐसा है, जो वस्त्र स्वावलबन के साथ आर्थिक बचत की भी अपेक्षा रखता है।

और एक वर्ग ऐसा है, जो चरखे द्वारा रोजी की भी अपेक्षा रखता है।

चरखा-सघ की राय है कि सरजाम-स्वावलबन, सबके हथियाने लायक सरलता, काम करने मे मानसिक शाति, सहज व्यक्तिविकास और कम से-कम कीमत में प्राप्त होना, इन दृष्टियो से मौजूदा चरखा ही उत्तम है। अधिक उत्पत्ति की दृष्टि से नया चरखा कैसा भी बनाया जाय, तो भी जहाँ पैसे की आमद की दृष्टि बदलती नहीं है, वहाँ नये चरखे के प्रलोभन मे आज के चरखे का अवलबन कदापि कम न किया जाय।

जिनको वस्त्र-स्वावलबन के साथ-साथ पैसे की बचत की जरूरत है उनके लिए ऐसे चरखे का सशोधन आवश्यक है, जिसमे आज के चरखे अधिक-से-अधिक गुण कायम रहते हुए उत्पत्ति मे थोडी ही क्यो न हो, वृद्धि हो सके।

जिनको चरखे द्वारा रोजी कमानी है, उनके लिए तो ऐसे चरखे की

आवश्यकता है, जो आज के चरखे की अपेक्षा कई गुना अधिक सूत दे सके, ताकि बाजार मे उस सूत के दाम मिल-सूत की कीमत के आस-पास पहुँच सके।

इसलिए ऊपर लिखे अनुसार सब बातो का खयाल रखते हुए नये चरखे ईजाद करने के प्रयोग चलने चाहिए।

रोजी की दृष्टि से अधिक उत्पादन के चरखे मे नीचे लिखी मर्यादाएँ आवश्यक मानी जायँ :

(क) चरखा मानव शक्ति से चल सकना चाहिए, और दूसरी शक्ति से चले तो वह मानव-शक्ति की कताई का भागी न बने।

(ख) उसके पुरजे अपने देश मे आज की हालत मे भी बन सकने चाहिए, भले ही वे कारखानो मे बनने लायक हो।

(ग) आज की ग्रामीण जनता उसे चला सके तथा मामूली बिगाड का सुधार करने की तालीम आसानी से हासिल कर सके।

(घ) वह घरेलू कताई का साधन रहे, अर्थात् वह वैसा न हो कि धनी आदमी पूँजी के बल पर या कारखानो के बल पर उसे चला कर प्रतियोगिता या शोषण कर सके। चरखा-सघ को ऐसा होने का पूरा भय है। इस दिशा मे सरकार के कानून की मदद की जरूरत होगी। वह हरएक घर की इकाई मे बैठने लायक साधन हो, न कि घानी की तरह ग्राम इकाई के लायक साधन हो।

(ङ) उसकी घिसाई, उसमे लगी पूँजी पर व्याज तथा चालू खर्च सब मिलकर मध्याक के एक पौण्ड सूत के पीछे दो आने से ज्यादा खर्च न होने पाये।

(च) धुनाई से लेकर कताई तक फी घण्टा दो गुडी देनेवाले चरखे की कीमत ज्यादा-से-ज्यादा १५० रुपये हो तथा एक गुडी देनेवाले की ज्यादा से-ज्यादा ५० रुपये तक हो। यह गति चरखे की साफ सफाई, माल आदि ठीक करने का वक्त मिलाकर समझी जाय।

(छ) इस चरखे पर कते सूत के दाम मिल-सूत की कीमत के आस-पास रह सकें।

४ प्रमाणितों को सूत-शर्त से बरी करने का प्रस्ताव (२६ मार्च '४८)

काग्रेस पंचायत के उम्मीदवारों के लिए खादी पहनना लाजमी करके काग्रेस ने एक भारी कदम उठाया है ऐसा चरखा-संघ महसूस करता है। इसलिए सबको सहूलियत से खादी मुहैया हो, ऐसे खयाल से खादी को प्रमाणित करने की शर्तों में से सूत शर्त को चरखा-संघ उठा लेता है। प्रमाणित करने की बाकी शर्तें, जो कि खादी और मजदूरों के हित में हैं, रहेंगी। इतना करने के उपरान्त चरखा-संघ अपना पूरा ध्यान इसके आगे वस्त्र-स्वावलम्बन के काम पर देगा, याने उत्पत्ति-बिक्री का काम केवल उत्पत्ति बिक्री के लिए वह नहीं करेगा। वस्त्र-स्वावलम्बी लोगों की पूर्ति में अगर कुछ खादी वह दे सका, तो कुछ समय के लिए देने की कोशिश करेगा। चरखा संघ को इस तरह अपने को परिवर्तित करने में जो समय लगेगा, उस दरमियान उसके द्वारा जो बिक्री होगी वह उसी तरह सूत-शर्त से होगी, जैसी अभी हो रही है।

५. शरीर-श्रम करने बाबत प्रस्ताव (८ सितम्बर १९५१)

चरखा संघ के कार्यक्रम में शोषणहीन समाज-रचना के हेतु जब तबदीली करना मंजूर कर लिया, तब हमारी दृष्टि अर्थ-प्रधान व्यापार-मूलक कार्य से हटकर स्वावलम्बन की तरफ विशेष रूप से आगे बढ़ना स्वाभाविक ही है। परिणामतः श्रमनिष्ठा या उत्पादक-परिश्रम की बात ज्यादा महत्त्व की हो गयी है। उसी हेतु अनेकविध कार्यक्रम हाथ में लिये जा रहे हैं, जिनका लक्ष्य वर्ग-विहीन साम्यवाद या सर्वोदय है। संघ यह महसूस करता है कि वह तभी हो सकेगा, जब कि मनुष्यमात्र उत्पादक परिश्रम के तत्त्व को कार्यान्वित करने पर उद्युक्त हो।

अतएव चरखा-संघ कार्यकर्ताओं से यह अपेक्षा रखता है कि वे अपने यहाँ चलनेवाले शरीर-श्रम के काम न श्रमिक-वर्ग के साथ निग्रह पूर्वक और वर्ग-विहीनता के विचार से समरस होने का आग्रह रखें और सम्भव हो तो संस्था के बाहर दूसरे लोगों के यहाँ भी उसी दृष्टि से प्रत्यक्ष मजदूरी कमाने का कार्य महीने में कम-से-कम २४ घण्टे किया करें और उसकी वाजिब मजदूरी संघ में जमा करें। अपने अपने केन्द्र में काम करने के बजाय बाहर जाकर मजदूरी का काम करने से वर्ग विषमता दूर करने की दिशा में हम अधिक आगे बढ़ सकेंगे।

परिशिष्ट : २

सिप्पिपारै-शिविर के निर्णय

[तमिलनाड व केरल शाखा के चुने हुए करीब ५० कार्यकताओ का पन्द्रह दिन का एक शिविर मई-जून १९५१ मे सिप्पिपारै नामक तमिल्नाड के कोविलपट्टी विभाग के एक छोटे से गॉव मे हुआ। चरखा-सघ का खादी की उत्पत्ति-बिक्री का पुराना काम वस्त्र-स्वावलम्बन और क्षेत्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से बदलने के बारे मे शिविर मे बहुत तफसील से चर्चा और विचार-विनिमय हुआ। शिविर के अन्त मे प्रत्यक्ष अमल मे लाने के कार्यक्रम के रूप मे कार्यकर्ताओ ने तय की हुई बाते साराश रूप मे यहॉ दी गयी हैं।]

१. चरखा सघ का मुख्य लक्ष्य चरखे के जरिये केवल वस्त्र-समस्या को हल करने का नही, बल्कि सर्वोदयी समाज-रचना को नजदीक लानेवाली वस्त्रोत्पादन-पद्धति को प्रस्थापित करने का है। यह पद्धति 'वस्त्र-स्वावलम्बन-प्राधान्य पद्धति' ही हो सकती है। याने जिसमे वस्त्र-स्वावलम्बन की मौलिकता की समझ, प्रतिष्ठा और गुजाइश समाज मे रह सके, ऐसी वह पद्धति होनी चाहिए। इसी हेतु को सामने रखकर समझ-बूझकर किया जानेवाला वस्त्र-स्वावलम्बन देश मे बढाने का काम आइन्दा हमारा मुख्य कार्य रहेगा। इसके लिए वस्त्र-स्वावलम्बन व उसके पीछे रही हुई मूल विचारधारा का अध्ययन व प्रचार करने की ओर तथा वस्त्र-स्वावलम्बन को सरल व आकर्पक बनाने के तरीको को खुद सीख कर दूसरो को सिखलाने की ओर हम ज्यादा ध्यान देंगे व अपने केन्द्र तथा तन्त्र मे ऐसे बदल करेंगे, जो इस हेतु की पूर्ति के लिए उपयोगी हो।

२. अगले साल देशभर मे पचीस लाख वर्ग-गज वस्त्र स्वावलम्बी कपडा बने, ऐसी कोशिश करने का विचार हैदराबाद के मन्त्री व सचालको की सभा मे किया गया है। उसमे तमिल्नाड प्रदेश का हिस्सा

कितना रहेगा, इस पर विचार हुआ। आज वस्त्र-स्वावलम्बन के भी अनेक प्रकार है : (१) समझ-बूझकर और संकल्प-पूर्वक कातनेवालो का (२) मजदूरी के लिए कातनेवालो का, (३) सघ के कार्यकर्ताओ का और (४) पाठशाला तथा अन्य उसी तरह की सस्थाओ मे कते सूत का। इनमे कुछ सूत बुनवा दिया जाता है तथा कुछ के बदले मे तैयार कपडा दिया जाता है। अगर ये सब आँकडे मिलाये जायँ, तो करीब आठ लाख वर्ग-गज का वस्त्र-स्वावलम्बन-काम होगा, ऐसा अन्दाज किया गया। लेकिन हैदराबाद की सभा मे की गयी व्याख्या के अनुसार अब नये ढग से आँकडे रखने की कोशिशें करनी होगी। जिसने सम्पूर्ण खादीधारी रहने का सकल्प किया है, ऐसे समझ-बूझकर कातनेवालो के ही आँकडे उन २५ लाख वर्ग-गज मे गिने जायँ, ऐसी मर्यादा वहाँ तय हुई है। वे आँकडे अलग निकालना कहाँ तक सम्भव है, यह भी देखना होगा। वह निकालने पर भी आज की कपडा कम मिलने की हालत मे अपने कते सूत के नाम पर खरीदा सूत आने की सम्भावना सूत बुनवा देने के तरीके मे है और सूत-बदल के तरीके में भी। इन सबका विचार करते हुए तमिलनाड शाखा के लिए विभागवार लक्ष्य नीचे लिखे अनुसार तय किया गया :

विभाग	सूत बुनाई	सूत-बदल	अन्य मार्ग से	कुल वर्गगज
मद्रास	८,८००	४,८००	१,८००	१५,०००
तजावर	१०,०००	५,०००	६५,०००	८०,०००
मदुराई	४०,०००	६०,०००	१,५०,०००	२,५०,०००
तिरुनेलवेली	५,०००	३५,०००	८५,०००	१,२५,०००
तिरुप्पुर	६०,०००	९०,०००	२,००,०००	३,५०,०००
कुलवर्गगज	१,२३,८००	१,९४,८००	५०१,८००	८,२०,०००

अन्य आँकडा मे कत्तिनो के आँकडे भी लिये जायँगे, जिनन कताई-

मजदूरी काट कर दी जानेवाली खादी अभी तो कुछ दिन गिनी जायगी, मगर शीघ्र ही वह प्रथा ही न रहकर नयी प्रथा के अनुसार ऑकडे इसमें शामिल रहेंगे, जिसके अनुसार कत्तिने स्वय सूत हमारे यहाँ जमा रखकर बुनवा लेगी या सम्पूर्ण सूत के बदले मे खादी लेगी। पाठशाला आदि सस्थाओ के भी ऑकडे इसमे रहेगे।

बुनाई व सूत-बदल के ३,१८,२०० वर्ग-गजो के अन्दाज मे कार्यकर्ताओ को डर है कि कराब पॉचवॉ हिस्सा सूत खुद का या घर मे कता न होकर खरीदा हुआ हो। अब इस ओर नये सिरे से ध्यान देना है। इसलिए इस साल तो इन ऑकडो की विशुद्धता मे कुछ गडबडी रहेगी।

३ आइन्दा कपास से कपडे तक के प्रादेशिक स्वावलम्बन की ओर विशेष ध्यान दिया जायगा। इसके लिए केवल शाखा के विभागो की ही इकाई मानकर नही, बल्कि बडे-बडे उत्पत्ति-केन्द्रो की इकाई मानकर कपास, कताई, बुनाई, धुनाई रगाई व सरजाम-पूर्ति उसी इकाई मे हो, यह लक्ष्य रहेगा। हर विभाग कम-से-कम एक केन्द्र तुरन्त ही ऐसा बनाने की कोशिश करेगा।

४. कपास घरेलू तरीके से उपजाने के प्रचार के साथ-साथ कही-कही अगर जमीन मिल सकें व उस रुचि के कार्यकर्ता मिल सके, तो शरीर-परिश्रम के जरिये स्वावलम्बन पर आधारित चरखा सघ के कपास के नमूना-केन्द्र खोलना इष्ट होगा। ऐसे केन्द्र मे उस देहात के वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से कपास उपजाने की कोशिश की जाय और सम्भव हो तो बोआई, ऑकरी बिनना, चुनाई आदि मे गॉव के वस्त्र-स्वावलम्बियो की ही मदद लेकर उनके परिश्रम के बदले मे कपास ही उन्हें दिया जाय।

५ वस्त्र स्वावलम्बन को प्राधान्य देते हुए भी सघ की ओर से खादी-उत्पादन का जो कुछ काम किया जाय, वह हमारे बुनियादी सिद्धान्तो की दिशा मे आगे बढता रहना चाहिए। क्षेत्र तथा घरेलू

वस्त्र-स्वावलम्बन, जीवन-वेतन कपड़े की आयु बढ़ाने तथा असली किफायतशारी के लिए यह जरूरी है कि कपड़ा बनाने की क्रियाओं को जहाँ तक हो सके, नजदीक लाकर एक-दूसरे में जोड़ा जाय। इसके लिए कम-से-कम एक उत्पत्ति-केन्द्र ऐसा तैयार किया जाय, जहाँ कपास या रुई से कपड़े तक सारी प्रक्रियाएँ एक ही परिवार में हों।

६ वस्त्र-स्वावलम्बन तथा खादी-उद्योग को मिलों का कपड़ा हानि पहुँचाता है, इसलिए दोनों दृष्टियों से खादी काम करनेवालों को उस कपड़े का समझ-बूझकर पूर्ण रूप से त्याग करना जरूरी है। हमारे सारे उत्पत्ति-केन्द्रों में इस असली सचाई का हम जोरों से प्रचार करेंगे तथा आगामी छह मास के अन्दर सभी केन्द्रों में ये नियम लागू करेंगे :

(क) जो परिवार सपूर्ण खादीधारी बनेगा और मिल कपड़े का पूर्ण त्याग करेगा, उसीका बचत-सूत पैसे से खरीदा जायगा।

(ख) जो परिवार खादीधारी न बन सके होंगे, उनसे सूत लिया जायगा, लेकिन उसके बदले में केवल कपास, रुई, खादी या खादी-सरंजाम ही दिया जायगा, नकद पैसे नहीं। (आये हुए कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने विभाग में कहीं एक मास में, कहीं दो मास में तो कहीं छह मास में हरएक केन्द्र में यह नीति लागू करने की तारीखें भी शिविर में तफसील से तय कर ली गयी।)

७ जिस काम के लिए उत्पत्ति-केन्द्रों में 'कत्तिन-टोलियों' का संगठन किया जाय, यानी मजदूरी से कातनेवालों की टोलियाँ बनायी जायँ, वे सब आपस में खादी का ही आग्रह रखें, मिल-कपड़े का त्याग करें और संघ के नियमानुसार केवल केन्द्र के बचत-सूत की ही लेन-देन हो, आदि नीति समझने तथा संभालने की व्यवस्था का बोझ भी एक हद तक अपने पर लें।

८ इस प्रान्त के बिक्री-भंडारों में कहीं-कहीं खादी की ज्यादातर

बिक्री देहाती क्षेत्रो मे ही होती है। ऐसे भडारो को छोटा बनाकर या बद करके इर्द-गिर्द के देहातो मे वस्त्र-स्वावलबन-केन्द्र के रूप मे विभक्त कर दिया जाय। याने आस-पास के इन देहातो मे सूत-शर्त के अनुसार कातनेवाले खादीप्रेमी अधिक हो और उन देहातो मे भडार के कार्यकर्ता अलग-अलग बैठकर अपना वस्त्र-स्वावलबन केन्द्र खोले।

९. कपडे की तगी के कारण आजकल खादी की मॉग एकाएक बढ गयी है। लेकिन यह मॉग कितनी स्थिर रहेगी, इसका कोई अदाजा नही है। इसलिए हमे ऐसा कुछ नही करना चाहिए, जिससे अचानक वह मॉग गिरने से हमे अपने कारीगरो के साथ सबध एकदम से तोड देना पडे और हमारे वस्त्र-स्वावलबन के कार्यक्रम मे अभी काम बढाने के खातिर और बाद मे उन्हे घटाने से बाधा पहुँचे। लेकिन हमारे निश्चित कार्यक्रम के अनुसार कपास से कपडे तक की क्रिया करके हमारी कल्पना का जीवन-वेतन पानेवाले परिवार बढने लगे, पूर्ण खादीधारी कारीगरो का 'बचत' का सूत या कपास, रुई, खादी व सरंजाम आदि के लिए 'बदल' का सूत ज्यादा आने लगे, तो उतना उत्पादन जरूर बढने दिया जाय।

१० कुछ बिक्री-केन्द्र ऐसे खोले जायॅ, जिनमे साडी, धोती आदि कुछ खास आवश्यक किस्मे रहे, जो कि कपडे मे लगा हुआ पूर्ण सूत लेकर तथा अन्य खर्च के लिए नकद पैसे लेकर ही बेची जाय। ऐसे स्वतत्र बिक्री-केन्द्रो के उपरात हमारे चालू भडारो मे भी ऐसा एक-एक विभाग खोला जा सकता है। कताई-मडलो को भी ऐसी विशेष एजेसी के लिए प्रवृत्त किया जा सकता है। ऐसा करने से आज की कपडे की तगी मे बढी हुई मॉग के कारण नियमित कातनेवालो को खादी प्राप्त करने मे विशेष प्राथमिकता मिल सकेगी।

११ सूत बदल कर खादी लेनेवालों को उस सूत पर सूत-शर्त के अनुसार अधिक कपड़ा खरीदने के लिए कूपन देने का तरीका बंद कर दिया जाय और अपना सूत बुनवा लेनेवालों को यह अधिकार सात गुना नहीं, बल्कि केवल चार गुना दिया जाय।

अन्य छोटी-मोटी बातें तय हुई। इनमें कुछ तो पुराने निर्णय थे और कुछ नये, मगर वे रोजमर्रा की कार्यपद्धति के बारे में थे। इनमें हरएक उत्पत्ति-केन्द्र में तकुवा बन सके, मजदूरी से कातनेवाले अगर हमसे चरखा खरीदें तो उन्हें बाँस-चरखा ही बनवा दिया जाय, जहाँ तहाँ छोटी इकाई में सूत की रंगाई शुरू हो, हर केन्द्र में कम-से-कम एक करघा तुरत शुरू हो, सूत-शर्त में कई लोग खरीदा सूत लाते हैं उसे रोकने की कोशिश हो, हरएक बिक्री-भंडार हफ्ते में एक या दो दिन बंद रखकर आस-पास के देहातों में वस्त्र-स्वावलंबन का प्रचार व शिक्षण का काम किया जाय, भंगी का उपयोग हमारे केन्द्र में कहीं न हो तथा खाद्य पदार्थों में मिल से बने पदार्थों का उपयोग न हो, आदि बातें तय हुई या ताजी की गयीं। इसके उपरान्त यह भी तय हुआ कि तमिलनाड शाखा के पाँचों विभाग मिलकर कम-से-कम २० कार्यकर्ताओं की ऐसी खड़ी टोली बना ली जाय, जो शिविर चलाने और उपर्युक्त सारा नया कार्यक्रम अमल में लाने के लिए हर तरह से केन्द्रों व कार्यकर्ताओं को मदद दे सके। इसमें शाखा के कुछ जिम्मेदार कार्यकर्ता भी अन्य कामों से मुक्त करके अवश्य लिये जायँ।

ये सब निर्णय महत्त्व के हैं, कठिन भी हैं, खास कर तमिलनाड जैसी बड़ी शाखा का काम बदलने में और वह भी आज की हालत में। लेकिन शिविर में कार्यकर्ताओं के ध्यान में आया कि यही हमारा असली काम है।

परिशिष्ट

क्रियात्मक पाठ्य-क्रमों का स्थूल-

पाठ्य-क्रम का नाम	पाठ्य-क्रम की अवधि महीने-दिन	काम के दिन	पाठ के कुल घण्टे	विषय और		
				चरखा-कताई		तकली
				इकहरी गुंडी	दुबटा गुंडी	कताई गुंडी
खादी-प्रवेश	१४–२०	२९४	२०५८	६०	३६	१२
बुनाई-कार्यकर्ता	१४–२०	२९४	२०५८	–	–	–
कताई-कार्यकर्ता	७–१०	१४७	१०२९	७६	२३	१४
पाठशाला कताई-शिक्षक	७–१०	१४७	१०२९	९६	१३	१८
पाठशाला दुबटा बुनाई या दुबटा बुनाई	७–१०	१४७	१०२९	–	–	–
* पाठशाला खादी-प्रवेश	*१४–२०	२९४	२०५८	(सूचना देखिए)		।

सूचना : १ पाठशाला खादी-प्रवेश . पाठशाला कताई-शिक्षक पाठ्य-क्रम, पाठशाला दुबटा बुनाई पाठ्य-क्रम और मौलिक विषयों मे खादी-प्रवेश के सारे विषयो का अभ्यास इनको मिलाकर पूरा होता है ।

कल्पना-दर्शक विवरण-पत्रक

काम की तादाद							
धुनाई सेर	तार गज	तकुआ बनाना व दुरुस्त करना	बुनाई				आसन व तौलिया
			एक सूती		दुवटा		
			गज	पुजम्	गज	पुजम्	
धुनाई से पूनी बनाना	–	३०	–	–	३०	२२॥	२४"×२४" २ १२ गज टॉवल
–	–	–	२०२	२२९	–	–	
१३	८०	३०	–	–	–	–	–
धुनाई से पूनी बनाना	–	३०	–	–	–	–	– २४"×२४"
–	–	–	–	–	२४	५७	–
–	–	–	–	–	–	–	–

२ पाठ्य-क्रमों की तफसीलवार ज्यादा जानकारी "चरखा संघ खादी-शिक्षा समिति पाठ्य क्रम तथा नियमावली।" नामक पुस्तिका में मिलेगी।

परिशिष्ट : ४

प्रमाणित संस्थाओं को पूँजी की सहायता की योजना

(ता० ६–७ अप्रैल १९५१, प्रस्ताव-संख्या १५ से उद्धृत)

राज्य-सरकारो से हमारी सूचना है कि वे ऐसी सस्थाओ को कर्ज दे और उनके कर्ज की रकम की अदायगी अन्य जरियो के साथ-साथ निम्न प्रकार से भी हो। फिलहाल तो यही दीखता है कि सरकारो का खादी-काम मे पडने का उद्देश्य केवल यही है कि गरीब बेकार देहातियों को काम मिले, अर्थात् उन्हे कुछ आमदनी का जरिया देना। इसलिए सरकार की आर्थिक मदद मे मुख्य दृष्टि यह होनी चाहिए कि गरीब देहातियो के पास खादी-काम के द्वारा कितना पैसा पहुँचता है। आज की दशा मे सरकार की मदद इस पहुँचनेवाली राहत की दृष्टि से होना उचित समझना चाहिए। इसलिए चरखा-सघ की सूचना है कि सरकार सस्थाओ द्वारा कत्तिनो, धुनियो और बुनकरो मे बॉटी मजदूरी पर ४% मदद दे और मदद की यह रकम सरकार द्वारा दिये हुए कर्ज अदा करने मे लगे। जिनको कर्ज नहीं दिया जाता, उनको भी ऐसी मदद मिलनी चाहिए। इस प्रकार सरकार को चार प्रतिशत के हिसाब से उसी परिमाण मे मदद देनी पडेगी, जिस परिमाण मे राहत का काम होगा। धीरे-धीरे कर्ज की अदायगी भी हो जायगी। साथ ही सस्थाओ की पूँजी बढ जायगी, जिससे वे अपना काम स्थायीरूप से कर सकेगी। अगर आगे-पीछे कभी सस्थाओ को खादी-काम बद करना पडे तो कानून और सस्थाओ के नियमो के अनुसार उस पैसे का उपयोग वैसे ही काम के लिए होगा अथवा सामान्यत ग्रामोत्थान मे उपयोगी पडेगा। यह अवस्था

कारगर होने के लिए आवश्यक है कि उसके अमल के लिए कुछ उच्च नियम बनाये जायें। फिलहाल यहाँ कुछ नियम सुझाये जाते हैं जिनमें दुरुस्ती और कमी-बेशी हो सकती है।

१ संस्था सन् १८६० के कानून, नम्बर २१ के अनुसार रजिस्टर्ड होनी चाहिए या ट्रस्ट रूप से रजिस्टर्ड होनी चाहिए। उसमें एक नियम यह भी हो कि सरकार का एक प्रतिनिधि उसकी प्रबन्ध-समिति में रहे। वह प्रतिनिधि खादी प्रेमी और आदतन खादीधारी होना चाहिए। यह भी एक नियम होना चाहिए कि अगर संस्था टूटे तो उसके पैसे का उपयोग दूसरे किसी जरिये से खादी-काम के लिए और ग्रामोत्थान के काम के लिए हो।

२ संस्था की चल सपत्ति सरकार की रकम के लिए सरकार के पास गिरवी रहे, अर्थात् सरकार का उस पर पहला चार्ज रहे।

३ संस्था चरखा सघ द्वारा प्रमाणित होनी चाहिए। बिना चरखा-सघ के प्रमाण-पत्र के किसी भी संस्था को मदद देने की सरकार गलती न करे, क्योंकि केवल चरखा-सघ ऐसी संस्थाओं पर नियन्त्रण रख सकता है और उनके द्वारा खादी-काम ठीक रीति से चला सकता है। अगर कर्ज लेने के बाद संस्था अप्रमाणित हो जाय तो उसी समय उस संस्था को सरकारी कर्ज की रकम अदा कर देनी होगी और उस दशा में संस्था के प्रबन्धकारी सदस्यों की सरकार का कर्ज अदा करने में व्यक्तिगत जिम्मेदारी भी होनी चाहिए।

४ संस्था की खुद की पूँजी कम-से-कम ६,००० रुपये होनी चाहिए, जिसमें से एक पचमाश से अधिक उधारी कदापि न रहे। पदाधिकारी, मन्त्री या कार्यकर्ता की तरफ तो उधारी बिलकुल ही न रहे। पर चरखा सघ-प्रमाणित अन्य संस्थाओं को माल भेजने में कभी-कभी जो थोड़े समय उधारी रखनी पड़ती है, उसमें बाधा न समझनी चाहिए।

५. सरकार और चरखा-सघ के पास हर महीने की दसवीं तारीख

तक पिछले महीने का तलपट भेजा जाय और साल के अत मे सालाना आखिरी हिसाब के कागजात भी भेजे जायँ।

६. हर साल कामगारो की रकम और मुनाफा रिजर्व तथा अन्य रीति से सस्था की खुद की मूल पूँजी खादी के काम के लिए बढती जानी चाहिए।

७ सरकार को सस्था की चल पूँजी पर चार गुना तक रकम कर्ज रूप से देनी चाहिए। उस पर व्याज नहीं लेना चाहिए।

८. कत्तिनो, धुनियो और बुनकरो मे बॉटी गयी मजदूरी पर प्रतिशत ४ रुपये आर्थिक मदद सरकार से मिले और वह सरकारी कर्ज मे अदा हो।

९ अगर संस्था की पूँजी इस तरह बनी है कि उसके कुछ थोड़े से सदस्यो ने ही बहुत-सी रकम उस संस्था को कर्ज के रूप मे दी हो, तो सरकार की रकम के लिए ऐसे सदस्यो की व्यक्तिगत जिम्मेवारी हो।

१०. ऐसी सस्थाओ को सरकार केवल चरखा-सघ की सिफारिश पर ही कर्ज दे।

११. सरकारी काम कुछ बजट के आधार पर ही हो सकता है। इसलिए जो रकम कर्ज के रूप मे दी गयी है, उसके पेटे जो ४ प्रतिशत की सहायता दी जायगी, वह कर्ज की अदायगी होने पर बन्द हो जाय। पर जहॉ कर्ज न दिया गया हो, वहॉ सस्था की परिस्थिति देखकर उसके काम के अदाज से सालाना आर्थिक मदद की कुछ अतिम मर्यादा भी बॉधनी होगी।

अनुभव पर से नियमो मे जो बदल किये जायँगे, वे सस्थाओ पर बधनकारक रहेगे।

इस योजना को ३ वर्ष तक अमल मे लाकर फिर उसके परिणाम के बारे मे सोचा जाय और जो कुछ फर्क करना मालूम हो, तो किया जाय।

परिशिष्ट : ५

प्रमाणितों के लिए रुई-संग्रह की योजना

१. जो संस्थाएँ अपनी रुई की आवश्यकता अक्तूबर १५ तक संघ को बता देंगी और पूरी कीमत के २५% दाम पहले भेज देंगी, उनकी पूरी रुई शेष ७५ प्रतिशत दाम लगाकर चरखा-संघ खरीद करेगा।

रुई की कीमत में हेर-फेर होता रहता है। इसलिए २५ प्रतिशत दाम भेजते वक्त जो चालू भाव हो, उसीके अनुसार हिसाब करके संस्थाओं को दाम भेजना चाहिए। प्रत्यक्ष खरीद-भाव में जो अंतर रहेगा, वह हिसाब पूरा हो जाने के बाद लिया या दिया जा सकेगा।

२. यह रुई-खरीद, जहाँ चरखा संघ की सुविधा होगी, रुई की मंडी होगी तथा पक्के गोडाउन आदि की सुविधा रहेगी, वहाँ की जा सकेगी। गुजरात, मध्यप्रदेश, हैदराबाद, राजस्थान और तमिलनाड प्रदेश में संघ के कार्यकर्ताओं की मार्फत रुई खरीद हो सकेगी। परन्तु रुई खरीदनेवाले केन्द्र अपना प्रतिनिधि भेजना चाहते हों तो रुई-खरीद के वक्त वह उपस्थित हो सकेगा।

३. गुजरात का रुई-खरीद का मौसम जनवरी में शुरू होता है और अन्य जगह वह दो महीने पहले यानी नवम्बर में शुरू होता है। अतः उपर्युक्त २५ प्रतिशत रकम गुजरात की रुई के लिए जनवरी १५ तक संघ के पास आ जानी चाहिए और अन्य जगह की रुई के लिए नवम्बर १५ तक आ जानी चाहिए।

४. रुई की कीमत निम्नलिखित बातों का विचार करके हरएक साल के लिए निश्चित की जायगी :

(अ) प्रत्यक्ष रुई खरीद की कीमत।

(आ) गोडाउन-किराया।

(इ) बीमा खर्च।

(ई) संघ की जितनी रकम लगी होगी, उस पर ३ प्रतिशत ब्याज।

(उ) अन्य व्यवस्था-खर्च, जो प्रत्यक्ष में करना पड़ेगा।

५. केन्द्रों को जैसे-जैसे रुई की आवश्यकता होगी, वैसे वैसे वह भेज दी जायगी। अर्थात् जितनी रुई भेजी जायगी, उसकी ७५ प्रतिशत कीमत नकद अदा होने के बाद ही वह भेजी जायगी।

परिशिष्ट ६

शाखाओं के विभाग करने के संबंध में संघ की नीति

(ता० ७-८ जनवरी १९५१, प्रस्ताव-सख्या ३ से उद्धृत)

प्रात मे विभिन्न परिस्थिति के कारण अलग-अलग क्षेत्र रहना स्वाभाविक है, इस दृष्टि से अलग अलग क्षेत्रो के कार्यक्रम मे भी कुछ भेद रहना स्वाभाविक हो जाता है। इस विचार से अब प्रातीय शाखा की मार्फत काम चलाने के बदले विभिन्न विभागो की योजना आजमाना उचित मालूम पडता है।

इन विभागो के काम-काज के बारे मे फिलहाल नीचे लिखी पद्धति रखी गयी है :

(अ) शाखा मे जहाँ जितनी सुविधा हो, वहाँ क्षेत्रो की अनुकूलता सोचकर शाखा का मौजूदा काम विभाग-मडल मे परिवर्तित करने की दृष्टि से जहाँ सम्भव हो, वहाँ विभाग बनाना चालू किया जाय।

(आ) शाखा के विद्यमान मत्री की मियाद के बाद नये मत्री की नियुक्ति, शाखा का सपूर्ण क्षेत्र विभागों मे परिवर्तित होने पर अनिवार्य न मानी जाय और उस हालत मे मत्री का काम विभाग-मडल के संचालकगण साधिक जिम्मेदारी से सभाले।

(इ) हरएक विभाग के लिए एक सचालक की नियुक्ति की जाय, जो अपने क्षेत्र के समूचे काम-काज तथा आर्थिक व्यवस्था के लिए जिम्मेवार रहे।

(ई) हरएक विभाग अपना काम-काज चलाने मे स्वतन्त्र रहेगा। फिर भी यथासभव किसी एक शाखा या विभाग-मडल के अतर्गत रहे हुए विभागो की सर्वसाधारण नीति एक रहेगी, जो सघ के केन्द्रीय दफ्तर की मजूरी के साथ विभागों के सचालकगण मिलकर तय करेंगे।

(उ) आज जिस तरह शाखा के हिसाब की व्यवस्था है, उस तरह हरएक विभाग की अपने-अपने हिसाब की व्यवस्था स्वतन्त्र रहेगी। प्रधान कार्यालय मे हर विभाग का स्वतन्त्र खाता होगा।

हर विभाग का नफा, नुकसान, हिसाब अलग-अलग रहेगा। हर विभाग के बजट अपनी जिम्मेदारी मे विभाग सचालक बनाऍंगे। लेकिन यह बजट मजूरी के लिए प्रधान कार्यालय को भेजने के पहले विभाग-मडल के सचालको की बैठक मे मजूर करवा लेना होगा। इससे हर विभाग-मडल याने शाखा की कार्यनीति मे जरूरी समानता बनी रहने म मदद होगी।

(ऊ) विभाग सचालको मे से हर साल बारी-बारी से आमत्रक चुना जायगा।

(ए) हरएक शाखा मडल के अन्तर्गत विभाग-सचालकों की त्रैमासिक सभा हुआ करेगी, जिसमे सर्वसाधारण नीति, कार्यक्रम के बारे मे विचार और अपने-अपने अनुभव की जानकारी दी जा सकेगी। सभा का स्थान आमत्रक तय करेगा।

(ऐ) विभाग-सचालक आपसी परामर्श मे कार्यकर्ताओं की तबदीली मंडल के अन्तर्गत हो, उस मर्यादा तक कर सकेंगे।

(ओ) विभाग आपस मे एक दूसरे के हिसाब के निरीक्षण और जॉच का काम करगा, इस बारे मे सचालको की त्रैमासिक सभा मे कार्यक्रम तय किया जायगा।

(औ) त्रैमासिक सभा का विवरण तैयार करना और अपने मडल के विभाग सचालको को तथा प्रधान कार्यालय को भेजना आदि कार्य आमत्रक के जिम्मे रहेगा।

(अ) आकस्मिक विशेष घटनाओ के लिए विभाग-सचालको की सभा घटना स्थल पर बुलायी जायगी। इसकी सूचना आमत्रक घटना-स्थल के विभाग-सचालक की सुविधा से सबको देगा। विभाग-सचालक सर्वसम्मति से ऐसी घटना पर निर्णय लेंगे। सचालको की एक राय न हो, तो केन्द्रीय दफ्तर के मत्री या उनके प्रतिनिधि की राय निर्णयात्मक मानी जायगी। विभाग-सचालको की राय एक होते हुए भी यदि केन्द्रीय मत्री उचित समझे तो उस निर्णय को बदल सकेगा।

(अ) यह आवश्यक है कि हर विभाग अपने-अपने काम मे स्वतत्र रहते हुए एक दूसरे विभागो के पूरक के रूप मे काम करने का पूरा खयाल रखे। इस दृष्टि से ऊपर के नियमो मे जरूरत के अनुसार बदल किये जा सकगे।

० ०

परिशिष्ट : ७

चरखा-संघ का विलीनीकरण

१९४८ मे सर्व-सेवा-सघ बना। उसका स्वरूप गाधीजी द्वारा प्रदर्शित सभी अखिल भारतीय सस्थाओ के प्रतिनिधियो के सघ का था। यद्यपि सर्व सेवा-सघ बना, वह प्रभावकारी सघ नहीं बना, केवल एक समिति के रूप मे ही रह गया। विभिन्न संस्थाएँ अपनी-अपनी दिशा मे काम करती रहीं। उनकी दिशा भिन्न रही और सर्व-सेवा सघ के जरिये पारस्परिक सम्पर्क भी नही रहा। फलस्वरूप जिस उद्देश्य से सर्व-सेवा-सघ की कल्पना की गयी थी, वह सफल नहीं हो सका।

विनोबाजी इस स्थिति को देख रहे थे। सर्व-सेवा-सघ की हालत से वे चिन्तित रहते थे। आखिर उन्होंने यह सुझाव दिया कि जुड़ी हुई सस्थाएँ अलग न रहकर सर्व-सेवा-सघ मे विलीन हो जायँ और सब मिलकर एक सस्था बन जाय, ताकि सब एकरस होकर समग्रता का दर्शन तथा प्रदर्शन कर सके। सबसे पहले विनोबाजी का सुझाव गो-सेवा-सघ ने मान लिया और वह अपने प्रस्ताव द्वारा सघ मे मिल गया। फिर कुमारप्पाजी ग्रामोद्योग सघ को सर्व-सेवा-सघ मे विलीन करने का प्रस्ताव लाये।

निष्क्रिय विलीनीकरण

गो-सेवा-सघ के विलीन हुए कुछ महीने बीत गये थे, लेकिन उसका काम करने का ढग ऐसा नहीं था कि ऐसा लगे कि वह सर्व सेवा सघ से एकाकार हो गया है। सर्व-सेवा-सघ और गो सेवा-सघ दोनो अलग-अलग ही दीखते थे, प्रस्ताव मे भले ही दोनो एक हो गये हो। मुझे यह चीज कुछ अच्छी नहीं लगी। मुझे डर था कि यदि यही ढग जारी रहा, तो ग्रामोद्योग-सघ विलीन हो जायगा, लेकिन वह भी उसी तरह से अपना अस्तित्व बनाये रखेगा। जिस तरह जुडाव समिति के रूप मे सघ-

सेवा-संघ का उद्देश्य विफल हो रहा था, उसी तरह इस प्रकार के विलीनी-करण से कुछ निष्पत्ति नहीं निकलेगी। अतः ग्रामोद्योग-संघ की बैठक मे मैंने विलीनीकरण के खिलाफ राय दी। मेरी इस राय से साथियो को आश्चर्य हुआ, क्योंकि १९४५ मे जब से गाधीजी ने नव सस्करण की बात उठायी और चरखा-सघ द्वारा समग्र सेवा की चर्चा हो रही थी, उसी समय से मै यह राय प्रकट करता रहा था कि सब सस्थाओं को एक मे लाकर समग्र सेवा सघ बने। लेकिन गो-सेवा सघ के ढग को देखकर मैंने समझा कि विलीनीकरण की प्रक्रिया अस्वाभाविक होगी। लेकिन श्रद्धेय कुमारप्पाजी तथा अन्य साथियो के आग्रह से ग्रामोद्योग-सघ सर्व-सेवा सघ मे विलीन हो गया।

विलीनीकरण के बाद ग्रामोद्योग-सघ की भी वही स्थिति रही, जो गो-सेवा सघ की थी। वह भी पूर्ववत् अलग से और अपने ढग से चलता रहा। कागज पर गो-सेवा-विभाग और ग्रामोद्योग-विभाग लिखा जाता था, लेकिन ऊपर से नीचे तक के कार्यकर्ता गो सेवा-सघ और ग्रामोद्योग-सघ ही कहा करते थे। सर्व-सेवा सघ पूर्ववत् समिति जैसा ही बना रहा। विलीनीकरण के बाद श्री कुमारप्पाजी वर्धा के निकट सेलडो नामक गॉव मे सन्तुलित कृषि के प्रयोग करने चले गये और श्री जी० रामचन्द्रन् ने वर्धा मे ग्रामोद्योग-विभाग के मन्त्री के रूप मे मगनवाडी का काम सभाला। उन दिनों एक बार मैंने रामचन्द्रन्जी से पूछा कि उनकी राय मे विलीनीकरण से क्या फर्क पडा, तो उन्होने मुस्कराकर कहा "We have changed the letter-head only" (हम लोगों ने केवल पत्र-व्यवहार मे सस्था का नाम बदला है!)।

सर्वोदय का द्वितीय सम्मेलन उडीसा के अगुल मे होने का निश्चय हुआ। विनोबाजी के नेतृत्व मे गो-सेवा सघ तथा ग्रामोद्योग सघ के सर्व-सेवा-सघ मे विलीन होने की चर्चा फैली हुई थी। चरखा सघ के मित्रो के सामने भी यह सवाल उपस्थित हुआ। जाजूजी, कृष्णदास भाई तथा अन्य मित्रों के मन मे आया कि चरखा सघ का भी विलीनीकरण

होना चाहिए। वे सोचने लगे कि अगुल-सम्मेलन मे चरखा-संघ के विलीनीकरण की घोषणा हो।

मेरा विरोध

मै उन दिनो बीमार होकर उरली-काचन मे इलाज करा रहा था, इसलिए मित्रो की चर्चा मे शामिल नही रह सका। इसलिए मुझसे चर्चा करने के लिए कृष्णदास भाई, लेलेजी, दादाभाई नाईक तथा खादी-विद्यालय के आचार्य ल० रा० पण्डितजी उरली-काचन पहुँचे और उन्होने विलीनीकरण का प्रस्ताव रखा। मैने उनसे कहा कि अभी चरखा-सघ के विलीनीकरण से कुछ निष्पत्ति नही निकलनेवाली है। चरखा-सघ विलीन हो जायगा, साइनबोर्ड बदल जायगा, लेकिन हम सब अलग ही अलग सोचते और काम करते रहेगे। सामूहिक चिन्तन, सामूहिक कार्यक्रम तथा सबको सँभालने योग्य नेतृत्व के बिना विलोनीकरण से अलग अलग जो काम हो रहा है, वह भी नही हो सकेगा। विनोबा के सिवा दूसरा कोई सम्मिलित कार्यक्रम का नेतृत्व नही ले सकता। देश मे सामूहिक कार्यक्रम की कोई गुजाइश नही दिखाई पडती। गाधीजी के नव-सस्करण मे बताये हुए कार्यक्रम भी नही चल सके। इन तमाम कारणो से मै चरखा-सघ के विलीनीकरण की सम्मति नही दे सका। मित्रो ने काफी देर तक चर्चा की, लेकिन मुझे विलीनीकरण के लिए किसी प्रकार की प्रेरणा नही मिल रही थी।

ये लोग चर्चा करके चले गये। चलने से पहले कृष्णदासभाई ने कहा "आप इस बार के सम्मेलन मे उपस्थित नहीं रह सकेगे, लेकिन सम्मेलन के अवसर पर जो खादी-सम्मेलन होगा, उसके लिए अपना वक्तव्य लिख दीजिये।" वक्तव्य लेने के लिए वे एक दिन रुक गये और मैने अगुल-सम्मेलन के लिए अपना वक्तव्य भेज दिया। सभीको उसका पता है। चरखा-सघ ने उस वक्तव्य को 'चरखा-आदोलन की दृष्टि और योजना' के नाम से प्रकाशित भी किया था।

उरली-काचन मे कुछ स्वास्थ्य-लाभ कर मैं वर्धा पहुँचा। जब मै

मगनवाडी के मित्रों से मिलने गया, तो मिलते ही भाई रामचन्द्रनजी ने मुझसे कहा : "You alone will be held responsible for the failure of Sarva Seva Sangh" (सर्व-सेवा-संघ की असफलता के लिए केवल आप ही जिम्मेदार ठहराये जायेंगे)। मैंने उन्हें समझाया कि मेरे मन में ऐसे विचार चल रहे हैं। उन्होंने कहा कि "कोई बड़ा नेतृत्व नहीं है, तो क्या काम नहीं चलेगा? आप ही नेतृत्व कीजिये और सब मिलकर सोचें।" सामूहिक कार्यक्रम के बारे में उन्होंने कहा कि "सामूहिक कार्यक्रम रहता नहीं है, बनाया जाता है।" मैंने उनसे कहा कि "उसे बनाया नहीं जाता, उसके लिए सबके मन में स्वाभाविक प्रेरणा होनी चाहिए। और प्रेरणा परिस्थिति तथा नेतृत्व से मिलती है। वह गोष्ठी करके पैदा नहीं की जाती।" इस प्रकार उनसे काफी देर तक चर्चा हुई लेकिन मैं उनके असन्तोष का निराकरण नहीं कर सका।

श्रद्धेय कुमारप्पाजी का विलीनीकरण के विचार पर आस्था थी, उनके लिए वे व्याकुल थे। विलीनीकरण की प्रक्रिया में चरखा-संघ के शामिल न होने से उनको बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने कई बार अपना दुःख प्रकट किया, लेकिन उनकी बात मेरी समझ में नहीं आती थी इसलिए मैं उसे मान नहीं सका। बाद को वे तालीमी संघ में विलीनीकरण का प्रस्ताव लाये, लेकिन वहाँ किसीका मान्य न होने से तालीमी-संघ भी विलीन नहीं हुआ।

इस तरह सर्व-सेवा संघ तथा जुड़ी हुई संस्थाओं का काम पूर्ववत् चलता रहा तथा साथ-साथ विलीनीकरण की भी चर्चा चलती रही। ऐसी ही परिस्थिति में विनोबाजी ने तेलंगाना में भूदान आंदोलन का बिगुल बजा दिया।

विनोबा का भूदान-आन्दोलन

विनोबा की पदयात्रा से देश में एक नयी जागृति हुई तथा एक नये आन्दोलन का जन्म हुआ। पर यह आन्दोलन विनोबा का अपना था और उन लोगों का था, जिन्हें उनसे प्रेरणा मिलती थी। यह अवश्य है

होना चाहिए। वे सोचने लगे कि अगुल-सम्मेलन मे चरखा-सघ के विलीनीकरण की घोपणा हो।

मेरा विरोध

मैं उन दिनो बीमार होकर उरली-काचन मे इलाज करा रहा था, इसलिए मित्रो की चर्चा मे शामिल नही रह सका। इसलिए मुझसे चर्चा करने के लिए कृष्णदास भाई, ल्लेजी, दादाभाई नाईक तथा खादी-विद्यालय के आचार्य ल० रा० पण्डितजी उरली-काचन पहुँचे और उन्होने विलीनीकरण का प्रस्ताव रखा। मैंने उनसे कहा कि अभी चरखा-सघ के विलीनीकरण से कुछ निष्पत्ति नही निकलनेवाली है। चरखा-सघ विलीन हो जायगा, साइनबोर्ड बदल जायगा, लेकिन हम सब अलग ही अलग सोचते और काम करते रहेगे। सामूहिक चिन्तन, सामूहिक कार्यक्रम तथा सबको सँभालने योग्य नेतृत्व के बिना विलीनीकरण से अलग अलग जो काम हो रहा है, वह भी नहीं हो सकेगा। विनोबा के सिवा दूसरा कोई सम्मिलित कार्यक्रम का नेतृत्व नही ले सकता। देश मे सामूहिक कार्यक्रम की कोई गुजाइश नही दिखाई पडती। गाधीजी के नव-सस्करण मे बताये हुए कार्यक्रम भी नही चल सके। इन तमाम कारणो से मै चरखा-सघ के विलीनीकरण की सम्मति नही दे सका। मित्रो ने काफी देर तक चर्चा की, लेकिन मुझे विलीनीकरण के लिए किसी प्रकार की प्रेरणा नही मिल रही थी।

ये लोग चर्चा करके चले गये। चलने से पहले कृष्णदासभाई ने कहा "आप इस बार के सम्मेलन मे उपस्थित नहीं रह सकेगे, लेकिन सम्मेलन के अवसर पर जो खादी-सम्मेलन होगा, उसके लिए अपना वक्तव्य लिख दीजिये।" वक्तव्य लेने के लिए वे एक दिन रुक गये और मैंने अगुल-सम्मेलन के लिए अपना वक्तव्य भेज दिया। सभीको उसका पता है। चरखा-सघ ने उस वक्तव्य को 'चरखा-आदोलन की दृष्टि और योजना' के नाम से प्रकाशित भी किया था।

उरली-काचन मे कुछ स्वास्थ्य-लाभ कर मैं वर्धा पहुँचा। जब मै

मगनवाडी के मित्रों से मिलने गया, तो मिलते ही भाई रामचन्द्रजी ने मुझसे कहा : "You alone will be held responsible for the failure of Sarva Seva Sangh" (सर्व सेवा-सघ की असफलता के लिए केवल आप ही जिम्मेदार ठहराये जायँगे)। मैंने उन्हे समझाया कि मेरे मन मे कैसे विचार चल रहे है। उन्होंने कहा कि "कोई बडा नेतृत्व नही है, तो क्या काम नही चलेगा ? आप ही नेतृत्व लीजिये और सब मिलकर सोचे।" सामूहिक कार्यक्रम के बारे मे उन्होंने कहा कि "सामूहिक कार्यक्रम रहता नहीं है, बनाया जाता है।" मैने उनसे कहा कि "उसे बनाया नहीं जाता, उसके लिए सबके मन मे स्वाभाविक प्रेरणा होनी चाहिए। और प्रेरणा परिस्थिति तथा नेतृत्व से मिलती है। वह गोष्ठी करके पैदा नहीं की जाती।" इस प्रकार उनसे काफी देर तक चर्चा हुई, लेकिन मै उनके असन्तोष का निराकरण नही कर सका।

श्रद्धेय कुमारप्पाजी को विलीनीकरण के विचार पर आस्था थी, उसके लिए वे व्याकुल थे। विलीनीकरण की प्रक्रिया मे चरखा-सघ के शामिल न होने से उनको बडा दु:ख हुआ। उन्होंने कई बार अपना दु:ख प्रकट किया, लेकिन उनकी बात मेरी समझ मे नही आती थी, इसलिए मै उसे मान नही सका। बाद का व तालीमी सघ मे विलीनीकरण का प्रस्ताव लाये, लेकिन वहाँ किसीको मान्य न होने से तालीमी-सघ भी विलीन नहीं हुआ।

इस तरह सर्व-सेवा सघ तथा जुडी हुई सस्थाओ का काम पूर्ववत् चलता रहा तथा साथ-साथ विलीनीकरण की भी चर्चा चलती रही। ऐसी ही परिस्थिति मे विनोबाजी ने तेलगाना मे भूदान-आदोलन का बिगुल बजा दिया।

विनोबा का भूदान-आन्दोलन

विनोबा की पदयात्रा से देश मे एक नयी जागृति हुई तथा एक नये आन्दोलन का जन्म हुआ। पर यह आन्दोलन विनोबा का अपना था और उन लोगो का था, जिन्हे उनसे प्रेरणा मिलती थी। यह अवश्य है

कि सस्थाएँ मदद करती थी। उत्तर प्रदेश की सफलता का बहुत बडा श्रेय वहाँ के गाधी-आश्रम को था। लेकिन आदोलन किसी सस्था का नही था। किसी सस्था ने उसे चलाने की जिम्मेवारी भी नही ली थी। फिर भी वह दिन-दिन व्यापक बनता गया।

सर्व-सेवा-सघ ने जिम्मेदारी ली

ऐसी परिस्थिति मे सेवापुरी मे सर्वोदय-सम्मेलन हुआ। लगभग दस हजार व्यक्ति उसमे शामिल हुए। देश के बडे-बडे नेताओ तथा राज्याधिकारियो ने साधारण जन-समुदाय के बीच बैठकर चर्चा की। इन सब कारणो से भूदान-आदोलन ने सारे देश की दृष्टि अपनी ओर आकृष्ट कर ली। सरकार तथा जनता, दोनो पर इस सम्मेलन का गहरा असर पडा। लोग यह महसूस करने लगे कि यह एक बडा आदोलन होने जा रहा है।

सस्थाएँ इस आन्दोलन की ओर तेजी से खिच रही थी। सर्व-सेवा-सघ भी इस प्रक्रिया से बाहर नहीं रह सका, बल्कि वह तो सबसे ज्यादा इस ओर झुका। गाधीजी के विचारो के अनुसार सगठित सर्वोदय-समाज की सस्था के रूप मे इसका सगठन हुआ था। इसलिए आदोलन की जिम्मेदारी सहज ही उसके ऊपर आ गयी और सर्व-सेवा सघ ने एक प्रस्ताव द्वारा इस जिम्मेदारी को सभाल लिया।

उन दिनो श्री शकरराव देव सघ के मत्री थे। उन्होने सालभर अथक परिश्रम कर, देशभर दौरा करके हर प्रदेश मे भूदान का काम चलाने के लिए ऐसी समिति बनायी, जिसमे विभिन्न पक्षो के लोग सदस्यता के नाते एक साथ मिलकर चर्चा तथा चिन्तन करते थे। पक्षगत प्रतिद्वन्द्विता के बीच यह एक बहुत बडी बात थी। जनता महसूस करने लगी कि यह आन्दोलन रेगिस्तान मे एक नखलिस्तान है।

पचीस लाख एकड़ भूदान का निश्चय

सेवापुरी-सम्मेलन के अवसर पर जब अखिल भारतीय सर्व-सेवा-सघ ने आदोलन की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली, तो पहले प्रस्ताव से ही उसने

एक बहुत बडा संकल्प कर डाला कि अगले दो साल मे २५ लाख एकड जमीन भूदान मे लेनी है। इस प्रस्ताव ने सारे देश की दिलचस्पी बढा दी। यह जानकर कि सर्व-सेवा-संघ ने पचीस लाख एकड जमीन प्राप्त करने का संकल्प किया है, लोग आश्चर्यचकित हो गये क्योंकि उन दिनों पचीस लाख एकड जमीन प्राप्त करने की बात करनेवाला गगनविहारी ही माना जाता था। इस आकर्षण के कारण सर्व-सेवा-संघ को हर प्रान्त मे हर पक्ष का सहयोग मिला।

केन्द्रित उद्योगो का बहिष्कार

सेवापुरी-सम्मेलन ने सर्वोदय विचार-क्रांति मे एक अन्य निश्चित कदम उठाया। अपने प्रस्ताव मे उसने कहा कि चूँकि सच्चा लोकतन्त्र विकेन्द्रित अर्थनीति तथा राजनीति से ही सम्भव है, इसलिए संघ ने अपने सदस्यो और जनता का आह्वान किया कि वे कम से-कम अन्न-वस्त्र की सामग्री के लिए केन्द्रित उद्योगो का बहिष्कार करें। पिछले तीन सालो से जिस बात के लिए मै निरन्तर प्रचार करता रहा, उसे सर्व-सेवा-संघ के प्रस्ताव मे स्वीकृत कर लिया गया, यह देखकर मुझे कितना आनन्द हुआ, इसका अन्दाज आसानी से हो सकेगा।

सेवापुरी- सम्मेलन के फलस्वरूप देश में वैचारिक आंदोलन का जो नेतृत्व निर्माण हुआ, उससे मुझे अत्यन्त सन्तोष हुआ। जिन अभावो के कारण मैने मित्रों के आग्रह के खिलाफ चरखा संघ को सर्व-सेवा संघ मे विलीन नहीं होने दिया, उन अभावों का निराकरण हो गया। बापू के विचार के अनुसार जो रचनात्मक कार्यक्रम चलता था, उसका नेतृत्व विनोबा ने आंदोलन के जरिये अपने हाथ में ले लिया। देश का आकर्षण उस नेतृत्व पर केन्द्रित हुआ। एक संस्था की हैसियत से सर्व-सेवा-संघ ने भी विनोबा के मार्ग-दर्शन मे अपने कन्धो पर नेतृत्व उठा लिया। अत. सहज ही मेरे मन मे आया कि अब समय आ गया है, जब चरखा-संघ सर्व-सेवा-संघ मे विलीन हो जाना चाहिए। एक नेता तथा संस्था के नीचे

संघ के सारे रचनात्मक कामों का संचालन हो, ताकि इसमें से कुछ वास्तविक शक्ति का निर्माण हो सके।

कमर का तीव्र दर्द लेकर मैं खादी-ग्राम वापस आकर खाट पर लेट गया। मित्रों ने मान लिया कि अब मैंने बाकी जिन्दगीभर के लिए खाट पकड़ ली, क्योंकि देश के तमाम डॉक्टर मित्रों ने सभी आधुनिक औजारों से परीक्षा कर और सारे ज्ञान-विज्ञान का इस्तेमाल कर यह फैसला दे दिया था कि रीढ़ की हड्डी बढ़ने के कारण यह रोग इलाज के बाहर हो गया है। यह कभी ठीक होगा नहीं। दो, सवा दो साल खाट पर पड़े रहकर किस तरह मैं स्वस्थ हुआ, यह बात सबको मालूम है। अतः इसका वर्णन करना व्यर्थ है।

चरखा-संघ का प्रश्न

खादी-ग्राम में पड़े-पड़े चरखा-संघ के विलीनीकरण के प्रश्न पर मैं सोचता रहा। संघ के जो मित्र मुझसे मिलने आते थे, उनसे चर्चा भी करता रहा। अन्त में एक बार जब भाई राधाकृष्ण बजाज मुझसे मिलने आये, तो मैंने उन्हें अपना निर्णय सुना दिया और कहा कि चरखा-संघ के सब मित्र तैयार हों, तो अगले सम्मेलन के अवसर पर ही चरखा-संघ विलीन हो जाय, ऐसी मेरी इच्छा है। भाई राधाकृष्ण बजाज ने कहा कि "आप ही विरोध में थे और आपकी ही ओर से प्रस्ताव हुआ, तो चरखा-संघ के लोग सहमत हो जायँगे, ऐसा मेरा विश्वास है।" फिर क्या था, राधाकृष्ण बजाजजी ने विनोबा से लेकर देशभर के सभी मित्रों के कानों में मेरे ये विचार डाल दिये।

चाण्डिल-सम्मेलन

मार्च '५३ में चाण्डिल में सम्मेलन हुआ। वहाँ पर मैंने चरखा संघ के मित्रों के सामने अपना प्रस्ताव रखा। दो दिन तक खूब चर्चा चली। आखिर उसमें सबकी सहमति रही। चर्चा के दौरान में अब तक के विलीनीकरण से संघ का जो स्वरूप चल रहा था, उस पर मैंने अपने विचार प्रकट किये। मैंने कहा कि चरखा-संघ भी यदि अपनी ओर से

सर्व सेवा सघ मे विलीन हो जाय और गो-सेवा-सघ तथा ग्रामोद्योग-सघ की तरह अलग से अपने ढग से खादी का काम करता रहे, अपना कोष अलग रखे तथा अपने कार्यकर्ता अलग रखे, तो इस विलीनीकरण मे कुछ निष्पत्ति नही निकलनेवाली है। बापू ने सन् '४५ से समग्रता की जो बात की थी, उस समग्रता का चित्र सामने आना चाहिए। जिस तरह नदियाँ समुद्र मे विलीन हो जाती है तथा विलीन होने के बाद उनका अलग मे कोई चिह्न नहीं रह जाता, उसी तरह विलीन हो जाने के बाद सस्थाओं का अपना पृथक् अस्तित्व नहीं रहना चाहिए। सर्व-सेवा-सघ एक ही सस्था है, इसका हर प्रकार से दर्शन होना चाहिए। इसके लिए अलग-अलग विभाग तोडकर एक मे मिला देना चाहिए। चरखा-सघ का पैसा भी साधारण कोष मे चला जाय यह बात भी मैंने कही।

कोष के बारे मे कुछ मित्रो का कहना था कि विधान के अनुसार आप यह नहीं कर सकते। जनता ने खादी के लिए अलग से ही दिया था और उसके लिए ट्रस्ट (Trust) बना, तो आज उस पैसे को दूसरे काम मे इस्तेमाल करते हैं, तो ट्रस्ट के प्रति हमारी वफादारी नहीं रहती। मुझे इस दलील मे कुछ तथ्य नही मालूम पडता था। बापू ने जिस समय कोष इकट्ठा किया था, उस समय चरखा के सिवा दूसरा कोई कार्यक्रम नही था। वस्तुतः बापू के सर्वाङ्गीण विचार का प्रथम चरण चरखा था। आज उसीका आधुनिक चरण भू-दान है। उसमे चरखा, नयी तालीम, ग्रामोद्योग आदि सभी कार्यक्रम समा जाते है। वस्तुत बापू ने खुद ही चरखा-सघ द्वारा समग्र सेवा का प्रस्ताव स्वीकृत कराया था।

इन विचारो से प्रेरित होकर मैंने कोष का सर्व-सेवा-सघ के साधारण कोष मे विलीन करने का आग्रह रखा। सौभाग्य से मेरी बात सबने स्वीकार कर ली और विलीनीकरण का प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत

हुआ। प्रसन्नता की बात है कि यह सर्वसम्मति सम्पूर्ण थी, क्योंकि उस बैठक मे चरखा-सघ के सारे सदस्य उपस्थित थे।

विलीनीकरण की स्वीकृत

जाजूजी की इच्छा थी कि विलीनीकरण के सम्बन्ध मे मैंने जो विचार प्रकट किये हैं, उन्हे लिखित बयान के रूप मे प्रस्ताव के साथ पेश करूँ। तदनुसार मैंने भाई कृष्णदास की मदद से एक बयान तैयार करके प्रस्ताव मे सलग्न कर दिया। वह बयान सर्व-सेवा-सघ मे भेज दिया गया।

मित्रो ने मेरे बयान के उस हिस्से पर कुछ आपत्ति की, जिसमे मैंने विलीन सस्थाओ के कोष को मिला देने की बात कही थी और ग्रामोद्योग, गो-सेवा, खादी आदि को न रखने का सुझाव रखा था। उन्होने प्रश्न किया कि भिन्न-भिन्न रुचि और प्रकृति का क्या होगा? मैंने कहा कि सर्व सेवा-सघ की सारी प्रवृत्ति समग्र सेवा की होगी। विभिन्न केन्द्रो मे सचालक की रुचि और झुकाव के अनुसार विभिन्न मदो पर जोर अवश्य रहेगा, लेकिन केन्द्र की प्रवृत्ति समग्र सेवा की ही रहेगी। उदाहरणार्थ, जहाँ भाई राधाकृष्णजी बैठेंगे, निःसन्देह वहाँ गो-सेवा पर जोर रहेगा और जहाँ मै बैठूँगा, वहाँ नयी तालीम पर।

दो दिन चर्चा होने के बाद सर्व-सेवा-सघ ने मेरे वक्तव्य के साथ विलीनीकरण के प्रस्ताव को स्वीकृत कर लिया।

श्रमभारती
खादीग्राम (मुगेर)
९-७-'५८

—धीरेन्द्र मजूमदार

चरखासंघ के (प्रमाणित सहित) खादीकार्य का विकास
उत्पत्ति वर्गगज — — —
उत्पत्ति रुपये
बिक्री रुपये ———
लाख
१९५
१९०
१८५
१८०
१७५
१७०
१६५
१६०
१५५
१५०
१४५
१४०
१३५
१३०
१२५
१२०
११५
११०
१०५
१००
९५
९०
८५
८०
७५
७०
६५
६०
५५
५०
४५
४०
वर्ष